साहब
बीबी
गुलाम

विमल मित्र

पूर्वाभास

इधर बहूबाज़ार स्ट्रीट और उधर सेण्ट्रल एवेन्यू। बीच की साँप जैसी आँकी-बाँकी गली आज तक इन दो राजपथों को मिलाने का काम करती रही है। अब वैसा मुमकिन न रहा शायद। लगता है, रातों-रात यह वनमाली सरकार लेन गायब हो गई। इतनी पुरानी गली। इसी के पश्चिम गोविन्दपुर और सूतानूटी के समय से वनमाली सरकार के पुरखे राज कर गए थे। कहावत-सी चल पड़ी थी, उमीचाँद की दाढ़ी और वनमाली सरकार की 'बाड़ी'। रोब-दाब और बहार, शायद दोनों ही की एक-सी थी। उस जमाने में सद्गोप वनमाली सरकार को ईस्ट इंडिया कम्पनी से पटने की दीवानी मिली थी और कलकत्ते में मिला था कम्पनी के मातहत व्यापार करने का अधिकार। बहुत-बहुत पहले की हैं ये बातें। तब की जो कुम्हार-टोली थी, उसमें उन्होंने लाट साहब के मुकाबले का एक मकान बनवाया। उनकी देखा-देखी निमतल्ले में एक मकान बनवाया, उस समय के दूसरे एक बड़े आदमी मथुर सेन ने। मगर कहाँ वनमाली सरकार का मकान और कहाँ वह! कोई मुका-बला नहीं। उसके बाद कहाँ तो गया कुम्हारटोली का वह मकान, कहाँ गए खुद वनमाली सरकार और कहाँ गए मथुर सेन! सच ही, हैरान रह जाना पड़ता है सोचकर। वे आरमेनियन सौदागर कहाँ चले गए, जो सूत और नूटी का व्यापार करते थे! और कहाँ गये जॉब चार्नक के उत्तराधिकारी अंग्रेज, जिन्होंने पुर्तगीजों के डर से कालीकट से भागकर सूतानूटी में पनाह ली थी, और बाद में जिन्होंने कालीकट की नकल पर सूतानूटी का नाम रखा था कैलकेटा। आज तो सिर्फ कम्पनी के सिरिश्ते के कागजात, पुराने कागज-पत्तर में मुश्किल से ढूँढकर निकालना पड़ता है सूतानूटी का नाम। फिर भी वनमाली सरकार इतने दिनों तक उस गली में साँस रोके ज़िन्दा जो रह सके, सो महज कलकत्ता कारपोरेशन की गफलत से। अब वह भी गया। गोविन्दराम, उमीचाँद, हुजरीमल, नकूधर, जगत् सेठ और मथुर सेन के साथ अब इतिहास के पन्नों में एकबारगी खो गए वनमाली सरकार भी। आधा तो सेण्ट्रल एवेन्यू बनते वक्त पहले ही जा चुका था, रहा-सहा आध भी खतम!

समय पर इम्प्रूवमेण्ट ट्रस्ट का नोटिस जा धमका।

बांछा की पकौड़ी की दुकान में ज़ोरदार चर्चा चल पड़ी। चर्चा चल पड़ी इण्डिया टेलरिंग हॉल में। गुरुपदो दे के 'स्वदेशी बाज़ार' के सामने, प्रभास बाबू के 'पवित्र खादी भण्डार' के बाहर-भीतर। त्रिकालदर्शी श्रीमान् अनन्तहरि भट्टाचार्य के श्री श्रीमहाकाली आश्रम में भी आलोचना होने लगी। ज्योतिपार्णव बोले—अगले माह कर्कट राशि में राहु का प्रवेश है; मामला बड़ा टेढ़ा है; देश पर राज-रोष···। महल में भी तरह-तरह की बातें होने लगीं। इससे तो भूकम्प बेहतर था; बेहतर था इससे सन् १७३८ का आँधी-पानी, जिसमें गंगा का पानी चालीस फुट बढ़ गया था। बढ़ा भी था क्या एक ही बार! बड़े महल में जो बड़े-बूढ़े हैं, वे उन दिनों की बात जानते हैं। उस समय तुम लोगों की पैदाइश ही नहीं हुई थी भाई! और मेरा ही तब जन्म हुआ था क्या, या मेरे दादा ही पैदा हुए थे! यह देश आज का है? कितनी सदी पहले की बात है जानें! तब गंगा पद्मा से थोड़े ही मिली थी। वह नदिया और त्रिवेणी होकर सागर में जाकर मिलती थी। चेतला के पास से एक पतला-सा पनाला बहते देखते हो न, आदिगंगा वही थी, लोग उसी को बूढ़ी गंगा कहते थे। बाद में जब कोसी गंगा से आ मिली तो धारा हट गई। भगीरथ की उसी गंगा को तुम लोग हुगली कहते हो; हम लोग कहते हैं भागीरथी। तब किसे पता था हुगली का, और कौन जानता था कलकत्ता! प्लिनि साहब के ज़माने से लोग तो सिर्फ सप्तग्राम के पास की नदी को ही देवी सुरेश्वरी गंगे कहते थे! उसके बाद समय के चढ़ाव-उतार के अटूट नियम से जिस रोज़ सतगाँव का पतन हुआ, सामने आया हुगली; उसी रोज़ पुर्तगीज़ों की कृपा से भागीरथी का नाम हुआ हुगली।

किस्सा कहते हुए बूढ़े हाँफ उठते। कहते, पढ़ा नहीं?

> अजब शहर कलकत्ता
> राँड़ी, बाड़ी, जोड़ी, गाड़ी, झूठ बात अलबत्ता
> (यहां) जलते उपले, हँसता गोबर, बलिहारी एकता
> बगुले-बिल्ली ब्रह्मगियानी, बदमाशी का लत्ता।

चूड़ामणि चौधरी अलीपुर के वकील थे। बोले—अरे भाई, किपलिंग साहब ही तो लिख गए हैं—

> Thus from the midday halt of Charnock.
> Grew a city...
> Chance-directed chance-erected laid and
> Built
> On the silt
> Palace, byre, hovel, poverty and pride

Side by side...

महल के इन नये मालिकों को उन दिनों की कहानी नहीं मालूम। वारेन हेस्टिंग्स तो हम लोगों की तरह गुडगुडी पिया करता था। सुनते हैं, न्योते की चिट्ठी में खास तौर से लिखा रहता था, 'कृपा करके हुक्कावरदार के सिवा दूसरा नौकर साथ लाने का कष्ट न उठाएँ।' और वह जॉब चार्नक ? बैठकखाने के उस बड़े बरगद के नीचे बैठकर हुक्का पीता था, अड्डा जमाता था और शाम होते ही चोर-डाकू के डर से बैरकपुर भाग जाता था। और तो और, एक बाम्हन की बेटी से शादी ही कर ली! सबकी डिहि कलकत्ता, गोविन्दपुर और सूतानूटी में बसने का न्योता दे बैठा। एक दिन आ धमके पुर्तगीज। अब उन्हें मुरगीहाटा में देख पाओगे—आधा अंग्रेज, आधा पुर्तगीज। नाम पड़ा था फिरंगी। ईस्ट इण्डिया कम्पनी के शुरू के किरानी वही लोग थे। आखीर में वही हुए जाकर अंग्रेज के चपरासी, खानसामा और उनकी बीवियाँ बनी मेमों की आया। फिर आये आरमेनियन। उनमें से कुछ खुरासान, काबुल, कन्दहार होकर दिल्ली आये थे। कोई-कोई आये गुजरात, सूरत, बनारस, बिहार होकर। उसके बाद दिनों तक वे चुचड़ा रहे। अन्त में आये कलकत्ता। उनके साथ आये ग्रीक, आये यहूदी, आये हिन्दू-मुसलमान···सब आये।

इस तरह बसा कलकत्ता। यह बात सन् १६९० की है।

देखते-ही-देखते पठान और मुगलों का जमाना गुजर गया। एक सुबह को जब लोगों की आँखें खुली तो देखा, इन्द्रप्रस्थ और दिल्ली जाने कहाँ गुम हो गई। उसकी जगह सुन्दरवन की दलदल में एक और ही आस्थोपन्यास ने सिर उठाया। जादू हो गया। कलकत्ता की बात में राज्य बनता है, राज्य बिगड़ता है। जिन्दगी में तरक्की के लिए यहाँ आना पड़ता है। बीमारी से परेशानी हो तो यहाँ आना पड़ता है। पाप से स्वर्ग होने के लिए यहाँ आना पड़ता है। महाराजा और भिखमंगा होने के लिए यहाँ आना पड़ता है। इसीलिए सूतानूटी पहुँचे रायान राजवल्लभ बहादुर। दीवान रामचरण और दीवान गंगागोविन्द सिंह पहुँचे। फिर पहुँचे वारेन हेस्टिंग्स के दीवान कान्त बाबू, ह्वीलर के दीवान दर्पनारायण ठाकुर, कलकत्ता के दीवान गोविन्दराम मित्र, उमी चाँद और बनमाली सरकार। सरकार, यानी जिनके नाम की गली में बैठकर हम बातें कर रहे हैं!

चूड़ामणि चौधरी को मुवक्किल नहीं जुटते। काले कोट पर काफी कालिख पड़ चुकी है—समय की और उम्र की। हाथ में स्याही लगती कि कोट में पोंछ डालते; पता ही नहीं चलता। कचहरी जाते हैं। कीड़े जिन्हें चाट गए हैं, पुरानों की उन किताबों के पन्ने पलटते। भई, तुम लोग तो खासे मजे में हो। खाते-पीते और सिनेमा देखते हो। उन दिनों सिर उठाकर चौरंगी में चलने की मजाल भी थी किसी की? बूट की ठोकर से बच जाओ, तो पिता का पुण्य समझो। तब भी कहूँ—साहब रास्ते से जा रहा है। हाथ में है बेंत। दोनों तरफ के ?

मारता जा रहा है। गोया सब भेड़-बकरी हों। और गोरे पर नजर पड़ी नहीं कि हम सत्ताईस हाथ दूर। विवेक कहाँ उनके। आखिर नेटिव क्या आदमी नहीं ? भैया, रेल के तीसरे दर्जे के डिब्बे में पाखाना नहीं था। नागपुर से आसनसोल तक आया, पेट दबाए। एक दाना मुँह में नहीं डाला, एक बूँद पानी नहीं, कहीं···

सो चाहे जो भी हो, इससे इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट को नोटिस जारी करने में क्या रुकावट ! बड़े महल के छोटे मालिकों ने नोटिस लिया।

इधर नोटिस आया और उधर आ धमकी जंजीर, कपास, सब्बल, छेनी, हथौड़ा, फावड़ा, डिनामाइट···कुली-मजूर, लोक-लश्कर। इन सबके साथ आया भूतनाथ, ओवरसियर, भूतनाथ; भूतनाथ चक्रवर्ती—मुकाम नदिया, गाँव फतेपुर, डाकखाना गाजना।

दोपहर को उड़ता गर्द का पहाड़। टिन के छप्परों को उजाड़ने में वक्त भी क्या लगता ! भड़भूँजे की दूकान से लेकर सबुज संघ वाला मकान ढहा दिया जा चुका। सर्दियों के दिन। शाम को रस्से का छोर थामे मजूर शोर करते—

सम्हल जवान
हैंया
शाबाश जवान
हैंया
पूरी गरम
हैंया

लेकिन गरम पूरियाँ वे नहीं खाते। दोपहर को खाने के लिए घण्टे-भर की छुट्टी होती। सत्तू, हरी मिर्च और गुड़ का होता कलेवा उनका। बहू-बाज़ार स्ट्रीट में ट्राम की घड़घड़ उस समय क्षीण हो आती और उधर सेण्ट्रल एवेन्यू में उतर आती अलसाई थकावट। श्री श्रीमहाकाली आश्रम के पीपल के नीचे ज़रा लेट लगा लेते सब। बनमाली सरकार लेन की साँप जैसी शकल सीधी हो आई। टूटे मकान की समतल ज़मीन पर खड़े होकर मजूर खाक भी नहीं समझ पाते कि किस सब्बल की चोट से ज़िन्दगी के किस पर्दे का कौन-सा सुर खामोश हो गया। एक-एक ईंट गोया एक-एक कंकाल हो। टूटी ईंट के साथ इतिहास का एक-एक पन्ना चकनाचूर हो जाता और उतरंगी हवा में उड़कर आसमान को रंग देता।

कचहरी से लौटते हुए चूड़ामणि चौधरी पलटकर ग़ौर करते। लगता, आसमान लाल हो उठा है। ट्राम पर अगल-बगल बैठे रहते दूसरे मुसाफिर···सो मुँह बन्द रखते। घर लौटकर पलटने लगते इतिहास के पन्ने। कहाँ, कब सिराजुद्दौला ने शहर को फूँक डाला था। देखते-ही-देखते फिर कलकत्ता नये सिरे से बस गया। वह कलकत्ता मानो नये सिरे से बसने के लिए आज फिर जल रहा है। अच्छा ही हुआ। बेहतर ज़हर जम गया था यहाँ। कमरों में खुली हवा को घुसने

न थी। परम्परा से वडे महल की वह दशा हो गई थी कि साझेदारों का
स रहना मुहाल ! उस रोज की तो वात है, चाँदी का कोई वर्तन या पहले
उसी के लिए मुकदमे की नौवत आ गई। आज के इन लड़कों ने उस समय
देखा कहाँ ? चूड़ामणि चौधरी भी निहायत वच्चे थे। मँझली चाचीं की
या के ब्याह मे फांस से मोती के ज़ेवर आए थे। मँझले वावू के कवूतर के लिए
ठनियाँ के दत्त लोगो से हो गया मुकदमा। मुकदमा तो मुकदमा, तीन साल तक
ा। उस समय की वहुत वडी गायिका थी कज्जन वाई। होली के दिन गाने
ाई थी। तवले पर संगत की थी घमंदास वाबू ने। उस समय वडों की वैठक में
छोटों को जाने की इजाज़त न थी। दफ्तर के किवाड़ की फांक में से झाँक-झाँककर
देखा था। नाच का क्या कहना। दस साल वाद वही कज्जन वाई फिर एक वार
आई थी। रूप हवा हो चुका था। मँझली चाची से कुछ माँग ले गई थी। वहुत
हने-सुनने पर गाया। वही गीत, जो दस साल पहले सुना गई थी।

वाजूवन्द खुल खुल जाय…

भैरवी के वे मोड़ वड़े ही मीठे लगे थे। वुढ़िया के गले में तव भी जैसे
जादू भरा हो। ठुमरी की तो माहिर थी कज्जन वाई। आज के लडको को वह
गीत कहाँ नसीव !

कचहरी आते-जाते ट्राम के झरोखे से उस घर को देखा उन्होंने। एक तरफ
का सव तोड़ा जा चुका था। महल को अभी हाथ नही लगाया था, इधर साफ-
सुथरा करके उधर। चूडामणि के जी मे आता, अभी भी कुछ है। आँखें वन्द करते
ही उन्हें मानो सभी दिखाई पडता। यह आ लगी डेवढी पर पालकी। मँझली चाची
की दुलारी दाई गिरि रेशमी थान पहने आ खड़ी हुई। विरिजसिंह ने सदर फाटक
पर घण्टा वजा दिया—हटो, हटो, पालकी आ रही है। छोटा हो चाहे वडा, सभी
योग में मँझली चाची का गंगा-स्नान ज़रूरी है। उसके वाद जी मे आया, ठीक ही
हुआ। वडे महल मे एक भी नौकर न रहा। वडे वावू का खास नौकर था मधुसूदन
सभी नौकरों का सरदार। दशहरे के दिनों वह भी एक दिन अपने घर गया औ
गया सो गया।

चूड़ामणि ने आँखें जव खोली, तो ट्राम हाथीवगान के पास से गुजर
थी। भीड पतली हो आई थी। अपने काले कोट की जेवों में दोनों हाथ डा
वे चुप वैठे रहे और सोचने लगे, घर पहुँचकर कॉटन साहव वाला इतिहास
है और वसटीड की किताव, सर फिलिप फ्रांसिस से मैडम ग्रैंड की प्रेम-क
क्या मौज उड़ा गए हैं ये। सात समन्दर पार से आये जॉव चार्नक और उ
सहकारी। साथ मे सिर्फ तीन सैनिक। अकवर वादशाह भी ख्वाव में इ
सल्तनत की नहीं सोच सके थे।

पीतल की जूठी थालियों को धो-पोंछकर मजूर फिर ईंट त

मारता जा रहा है। गोया सब भेड़-बकरी हों। और गोरे पर नज़र पड़ी नहीं कि हम सत्ताईस हाथ दूर। विवेक कहाँ उनके। आखिर नेटिव क्या आदमी नहीं? भैया, रेल के तीसरे दर्जे के डिब्बे में पाखाना नहीं था। नागपुर से आसनसोल तक आया, पेट दबाए। एक दाना मुंह में नहीं डाला, एक बूंद पानी नहीं, कहीं···

सो चाहे जो भी हो, इससे इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट को नोटिस जारी करने में क्या रुकावट! बड़े महल के छोटे मालिकों ने नोटिस लिया।

इधर नोटिस आया और उधर आ धमकी जंजीर, कपास, सब्बल, छेनी, हथौड़ा, फावड़ा, डिनामाइट···कुली-मजूर, लोक-लश्कर। इन सबके साथ आया भूतनाथ, ओवरसियर, भूतनाथ; भूतनाथ चक्रवर्ती—मुकाम नदिया, गांव फतेपुर, डाकखाना गाजना।

दोपहर को उड़ता गर्द का पहाड़। टिन के छप्परों को उजाड़ने में वक्त भी क्या लगता! भड़भूंजे की दूकान से लेकर सबुज संघ वाला मकान ढहा दिया जा चुका। सर्दियों के दिन। शाम को रस्से का छोर थामे मजूर शोर करते—

सम्हल जवान
    हैंया
शाबाश जवान
    हैंया
पूरी गरम
    हैंया

लेकिन गरम पूरियाँ वे नहीं खाते। दोपहर को खाने के लिए घण्टे-भर की छुट्टी होती। सत्तू, हरी मिर्च और गुड़ का होता कलेवा उनका। बहू-बाज़ार स्ट्रीट में ट्राम की घड़घड़ उस समय क्षीण हो आती और उधर सेण्ट्रल एवेन्यू में उतर आती अलसाई थकावट। श्री श्रीमहाकाली आश्रम के पीपल के नीचे ज़रा लेट लगा लेते सब। बनमाली सरकार लेन की सांप जैसी शकल सीधी हो आई। टूटे मकान की समतल ज़मीन पर खड़े होकर मजूर खाक भी नहीं समझ पाते कि किस सब्बल की चोट से ज़िन्दगी के किस पर्दे का कौन-सा सुर खामोश हो गया। एक-एक ईंट गोया एक-एक कंकाल हो। टूटी ईंट के साथ इतिहास का एक-एक पन्ना चकनाचूर हो जाता और उतरंगी हवा में उड़कर आसमान को रंग देता।

कचहरी से लौटते हुए चूड़ामणि चौधरी पलटकर ग़ौर करते। लगता, आसमान लाल हो उठा है। ट्राम पर अगल-बगल बैठे रहते दूसरे मुसाफिर···सो मुंह बन्द रखते। घर लौटकर पलटने लगते इतिहास के पन्ने। कहाँ, कब सिराजुद्दौला ने शहर को फूंक डाला था। देखते-ही-देखते फिर कलकत्ता नये सिरे से बस गया। वह कलकत्ता मानो नये सिरे से बसने के लिए आज फिर जल रहा है। अच्छा ही हुआ। बेहतर जहर जम गया था यहाँ।· कमरों में खुली हवा को घुसने

ह न थी। परम्परा से बडे महल की वह दशा हो गई थी कि साझेदारों का
ास रहना मुहाल ! उस रोज की तो बात है, चाँदी का कोई बर्तन या पहले
उसी के लिए मुकदमे की नौबत आ गई। आज के इन लडकों ने उस समय
देखा कहाँ ? चूडामणि चौधरी भी निहायत बच्चे थे। मँझली चाची की
ह्या के ब्याह मे फ्रांस से मोती के जेवर आए थे। मँझले बाबू के कबूतर के लिए
ठनियों के दत्त लोगो से हो गया मुकदमा। मुकदमा तो मुकदमा, तीन साल तक
ला। उस समय की बहुत बडी गायिका थी कज्जन बाई। होली के दिन गाने
ाई थी। तबले पर सगत की थी घमंदास बाबू ने। उस समय बडों की बैठक में
ें को जाने की इजाजत न थी। दफ्तर के किवाड की फाँक मे से झाँक-झाँककर
। था। नाच का क्या कहना। दस साल बाद वही कज्जन बाई फिर एक बार
ई थी। रूप हवा हो चुका था। मँझली चाची से कुछ माँग ले गई थी। बहुत
हने-सुनने पर गाया। वही गीत, जो दस साल पहले सुना गई थी।

बाजूबन्द खुल खुल जाय…

भैरवी के वे मोड़ बडे ही मीठे लगे थे। बुढ़िया के गले में तब भी जैसे
जादू भरा हो। ठुमरी की तो माहिर थी कज्जन बाई। आज के लडकों को वह
गीत कहाँ नसीब !

कचहरी आते-जाते ट्राम के झरोखे से उस घर को देखा उन्होंने। एक तरफ
का सब तोडा जा चुका था। महल को अभी हाथ नही लगाया था, इधर साफ-
सुथरा करके उधर। चूडामणि के जी मे आता, अभी भी कुछ है। आँखें बन्द करते
ही उन्हें मानो सभी दिखाई पडता। यह आ लगी डेवढ़ी पर पालकी। मँझली चाची
की दुलारी दाई गिरि रेशमी थान पहने आ खडी हुई। गिरिजासिंह ने सदर फाटक
पर घण्टा बजा दिया—हटो, हटो, पालकी आ रही है। छोटा हो चाहे बडा, सभी
योग मे मँझली चाची का गगा-स्नान जरूरी है। उसके बाद जी मे आया, ठीक
हुआ। बडे महल मे एक भी नौकर न रहा। बडे बाबू का खास नौकर था मधुसूद
सभी नौकरों का सरदार। दशहरे के दिनों वह भी एक दिन अपने घर गया अ
गया सो गया।

चूडामणि ने आँखें जब खोली, तो ट्राम हाथीबगान के पास मे गुज
थी। भीड पतली हो आई थी। अपने काले कोट की जेबो मे दोनों हाथ ड
वे चुप बैठे रहे और सोचने लगे, घर पहुँचकर कॉटन साहब वाला इतिहा
है और बसटीड की किताब, सर फिलिप फ्रासिस से मैडम ग्रैंड की प्रेम-
क्या मौज उड़ा गए हैं ये। सात समन्दर पार से आये जॉब चार्नक और
सहकारी। साथ मे सिर्फ तीन सैनिक। अकबर बादशाह भी ख्वाब मे
सल्तनत की नही सोच सके थे।

पीतल की जूठी थालियों को धो-पोंछकर मजूर फिर ईंट

जा रहा है। गोया सब भेड़-बकरी हों। और गोरे पर नज़र पड़ी नहीं कि
सत्ताईस हाथ दूर। विवेक कहाँ उनके। आखिर नेटिव क्या आदमी नहीं ?
, रेल के तीसरे दर्जे के डिब्बे में पाखाना नहीं था। नागपुर से आसनसोल तक
सा, पेट दबाए। एक दाना मुंह में नहीं डाला, एक बूंद पानी नहीं, कहीं...

सो चाहे जो भी हो, इससे इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट को नोटिस जारी करने में क्या
कावट ! बड़े महल के छोटे मालिकों ने नोटिस लिया।

इधर नोटिस आया और उधर आ धमकी जंजीर, कपास, सब्बल, छेनी,
हथौड़ा, फावड़ा, डिनामाइट...कुली-मजूर, लोक-लश्कर। इन सबके साथ आया
भूतनाथ, ओवरसियर, भूतनाथ; भूतनाथ चक्रवर्ती—मुकाम नदिया, गाँव फतेपुर,
डाकखाना गाजना।

दोपहर को उड़ता गर्द का पहाड़। टिन के छप्परों को उजाड़ने में वक्त भ
क्या लगता ! भड़भूंजे की दूकान से लेकर सबुज संघ वाला मकान ढहा दिया
चुका। सर्दियों के दिन। शाम को रस्से का छोर थामे मजूर शोर करते—

सम्हल जवान
हैंया
शाबाश जवान
हैंया
पूरी गरम
हैंया

लेकिन गरम पूरियाँ वे नहीं खाते। दोपहर को खाने के लिए घण्टे-भर की
छुट्टी होती। सत्तू, हरी मिर्च और गुड़ का होता कलेवा उनका। बहू-बाज़ार स्ट्री
में ट्राम की धड़धड़ उस समय क्षीण हो आती और उधर सेण्ट्रल एवेन्यू में उ
आती अलसाई थकावट। श्री श्रीमहाकाली आश्रम के पीपल के नीचे ज़रा लेट
लेते सब। वनमाली सरकार लेन की साँप जैसी शकल सीधी हो आई। टूटे म
की समतल ज़मीन पर खड़े होकर मजूर खाक भी नहीं समझ पाते कि किस
की चोट से ज़िन्दगी के किस पर्दे का कौन-सा सुर खामोश हो गया। एक-
गोया एक-एक कंकाल हो। टूटी ईंट के साथ इतिहास का एक-एक पन्ना च
हो जाता और उमंगें हवा में उड़कर आसमान को रंग देता।

कचहरी से लौटते हुए चूड़ामणि चौधरी पलटकर गौर करते
आसमान लाल हो उठा है। ट्राम पर अगल-बगल बैठे रहते दूसरे मुसा
मुँह बन्द रखते। घर लौटकर पलटने लगते इतिहास के पन्ने। कहाँ
हुड़ोंग ने शहर को फूँक डाला था। देखते-ही-देखते फिर कलकत्ता नये
गया। वह कलकत्ता मानो नये सिर से बसने के लिए आज फिर
अच्छा ही हुआ। बेहतर शहर बन गया था यहाँ। कमरों में खुली

। परम्परा से बड़े महल की वह दशा हो गई थी कि साझेदारों का
ना मुहाल ! उस रोज की तो बात है, चाँदी का कोई बर्तन था पहले
के लिए मुकदमे की नौबत आ गई। आज के इन लडकों ने उस समय
हाँ? चूडामणि चौधरी भी निहायत बच्चे थे। मँझली चाची की
ब्याह में फाम से मोती के जेवर आए थे। मँझले बाबू के कबूतर के लिए
के दत्त लोगों से हो गया मुकदमा। मुकदमा तो मुकदमा, तीन साल तक
स समय की बहुत बडी गायिका थी कज्जन बाई। होली के दिन गाने
। तबले पर संगत की थी धर्मदास बाबू ने। उस समय बडों की बैठक में
को जाने की इजाजत न थी। दफ्तर के किवाड की फाँक में से झाँक-झाँककर
था। नाच का क्या कहना। दस साल बाद वही कज्जन बाई फिर एक बार
थी। रूप हवा हो चुका था। मँझली चाची से कुछ माँग ले गई थी। बहुत
ने-सुनने पर गाया। वही गीत, जो दस साल पहले सुना गई थी।

बाजूबन्द खुल खुल जाय···

भैरवी के वे मोड बडे ही मीठे लगे थे। बुढ़िया के गले में तब भी जैसे
जादू भरा हो। ठुमरी की तो माहिर थी कज्जन बाई। आज के लडकों को वह
गीत कहाँ नसीब।

कचहरी आते-जाते ट्राम के झरोखे से उस घर को देखा उन्होंने। एक तरफ
का सब तोडा जा चुका था। महल को अभी हाथ नहीं लगाया था, इधर साफ-
सुथरा करके उधर। चूडामणि के जी में आता, अभी भी कुछ है। आँखें बन्द करते
ही उन्हें मानो सभी दिखाई पडता। यह आ लगी डेवढी पर पालकी। मँझली चाची
की दुलारी दाई गिरि रेशमी थान पहने आ खडी हुई। बिरिजसिंह ने सदर फाटक
पर घण्टा बजा दिया—हटो, हटो, पालकी आ रही है। छोटा हो चाहे बडा, सभी
योग में मँझली चाची का गंगा-स्नान जरूरी है। उसके बाद जी में आया, ठीक ही
हुआ। बडे महल में एक भी नौकर न रहा। बडे बाबू का खास नौकर था मधुसूदन,
सभी नौकरों का सरदार। दशहरे के दिनों वह भी एक दिन अपने घर गया और
गया सो गया।

चूडामणि ने आँखें जब खोली, तो ट्राम हाथीबगान के पास से गुजर रही
थी। भीड पतली हो आई थी। अपने काले कोट की जेबों में दोनों हाथ डालकर
वे चुप बैठे रहे और सोचने लगे, घर पहुँचकर काटन साहब वाला इतिहास पढन
है और बसटीड की किताब, सर फिलिप फासिस से मैडम ग्रैंड की प्रेम-कहानी
क्या मौज उडा गए हैं ये। सात समन्दर पार से आये जॉब चार्नक और उनके
सहकारी। साथ में सिर्फ तीन सैनिक। अकबर बादशाह भी ख्वाब में इतनी
सल्तनत की नहीं सोच सके थे।

पीतल की जूठी थालियों को धो-पोछकर मजूर फिर ईंट तोडने

धप्प-धुप्प ! चूना-सुरखी की बुकनी उड़ने लगी ऊपर। गर्द से भर जाने लगा चेहरा, आँखें। ठेकेदार का आदमी फिर भी कड़ी निगाह रखता। आँखों में धूल न झोंके कोई। साहब कम्पनी ने बनाया यह शहर, बनाई सड़कें। बड़े-बड़े तालाब खुदवाए। नल लगवाए। सिर के ऊपर जलते हैं बिजली के लट्टू, घूमते हैं पंखे। सब-कुछ साहब कम्पनी ने दिया है। इस बनमाली सरकार लेन को तोड़कर भी वह देश का कोई उपकार जरूर करेगी। कौन जाने !

सलाम हुजूर—कहकर बैजू खिसककर खड़ा हो गया।

सलाम हुजूर—मुस्तैद सब्बल की चोट रोककर दुखमोचन भी अदब से खड़ा हो गया।

हर कदम पर सलाम लेता हुआ चलने लगा भूतनाथ। भूतनाथ चक्रवर्ती। वह सीधे महल के सदर दरवाजे पर जा खड़ा हुआ।

कुलियों का सरदार चरित्तर मंडल सामने आया और उसने झुककर सलाम बजाया।

भूतनाथ ने सिर नवाया; पूछा—निशान तक हो गया चरित्तर ?

चरित्तर ने सिर हिलाया—आज बड़ा निशान लगाना होगा हुजूर ! कल और भी चालीस मजदूर बढ़ा रहा हूँ। उधर का काम तो खत्म कर दिया। शाम तक सब बराबर करके ही इन्हें छुट्टी मिलेगी।

भूतनाथ ने एक बार चारों तरफ़ निगाह फैलाकर देखा। बहुत दिन पहले ही सब मिट चला था। जितना कुछ बचा-खुचा है, अब उसको भी मेट डालना है। इस खानदान में जाने कहाँ, जाने कब सनीचर की तरह कोई अभिशाप घुस गया था चुपचाप; अब जाकर अन्त हुआ उसका।

चरित्तर ने फिर पूछा—तो कल उस निशान पर हाथ लगाएँगे हुजूर ?

कभी इसी मकान में आश्रय पाकर भूतनाथ ने अपने को धन्य समझा था। सारे कलकत्ते में सिर्फ इसी घर और इसी घर के एक आदमी को उसने अपना समझा था। मगर किस्मत का कैसा कठोर मजाक !

चरित्तर ने फिर पूछा—कल किधर हाथ लगाएँ हुजूर ?

एकाएक बोल उठा भूतनाथ—नहीं-नहीं, शराब मैं नहीं पीता। और आप ही चौंक उठा। चरित्तर भी कुछ कम अचरज में न पड़ा। उसने ओवरसियर साहब पर गौर किया।

लेकिन कहने-भर में अपने को भूतनाथ ने सम्हाल लिया। यह हो क्या गया है उसे ! बोला—हाँ, शायद तुम कुछ कह रहे थे, चरित्तर !

—जी, निशान की कह रहा था। इधर का तो पूरा कर चुका, कल कहाँ से शुरू करूँ ?

ईश्वर की क्या मर्जी है, कौन जाने ! अगर वही मर्जी हो, तो बड़ी बेरहमी

ट का जूठन नसीव हो। वहूवाज़ार की किसी माँस की दुकान तक भी पहुँच
तो एकाध हड्डी मिले। मगर इसे माया कैसी यह इस डिह की ? कुत्ते की
, इसे क्या डिह और क्या माया !

—हट, दूर जा ! भूतनाथ ने लात से कुत्ते को हटा दिया। मँझले वावू के
तने-उतने प्यारे कवूतर ! एक भी न रहा। कोई-कोई मोर-सा पर फैलाए है कि
छिए मत। हाथ पकड़ लीजिए, फिर भी पर फैलाए। कवूतर तो कवूतर ही। एक
ी न रहा लेकिन।

—हट, दूर जा !

धीरे-धीरे अँधेरा हो आया। वहूवाज़ार में ट्राम की लाइन की घड़घड़ और
भी तीखी हो उठी। राहों पर दमक उठीं वत्तियाँ। मगर वनमाली सरकार लेन में
अव से न जलेगी रोशनी। लोग नहीं चलेंगे। और इतिहास से वनमाली सरकार
का नामोनिशान मिट जाएगा।

वनमाली सरकार के साथ-साथ इस घर का इतिहास भी तो खो जाएगा।
जी में यह वात आते ही भूतनाथ कैसा वेवस-सा हो गया। फिर अगल-वगल
चौकन्नी निगाह डालकर, चट-से सदर दरवाज़े होकर अन्दर घुस पड़ा। कोई कहीं
नहीं। उसे देखेगा ही कौन ? लेकिन कोई देख ही ले तो उसे शायद पागल समझे।
घड़ीघर के पास अपनी साइकिल टिकाकर वह सीधा वढ़ चला।

ख़ूब याद है, उस समय इसी घड़ीघर के घण्टे पर इस घर का सारा कारो-
वार चलता था।

सुवह छः वजे एक घण्टा वजता। व्रजराखाल उससे भी पहले उठ वैठता।
उस वक्त तक उसकी नित्य-क्रियाएँ खत्म हो चुकी होतीं। उस समय तक वह पत्थर
के वर्तन में भिगोये चने नमक और अदरक के साथ वैठा-वैठा चवाता होता। वार
वार ताकीद करता—भई भूतनाथ, उठो-उठो।

अँगड़ाई लेकर उठ वैठने में भूतनाथ को देर ही हो जाती। अस्तवल
घोड़े की मलाई की आवाज़ तव भी आती होती—छप्-छप् हिस्-हिस् क्लप्-क्ल
उधर दरवान विरिजसिंह और नत्थूसिंह की तड़प से डण्ड-वैठक की आती हुम्-
आवाज़। सामने सीमेण्ट के अँगने से दासू जमादार के वुहारू की खरखराहट।
सबसे मालूम पड़ जाता कि सवेरा हो गया। आँखें वन्द किये अव क्या पड़े रहन

डेवढ़ी को पार करके भूतनाथ और आगे वढ़ गया।

वाईं तरफ़ के इस कमरे में रहता था इब्राहीम। उसकी गलपट्टा दाढ़
भूतनाथ को आज भी याद आती है। छत के वरामदे में लकड़ी की कंघी
यासीन साईस इब्राहीम के वाल जो झाड़ रहा है सो झाड़ ही रहा है। इब्राह
मन लायक होता ही नहीं। हाथ के आईने में सिर झुकाए इब्राहीम अपने वा
वहार देखने में मगन। किसी वात का खयाल नहीं। फिर एकाएक वह उ

सरकार की नज़र ही नहीं पड़ सकती।

त्रिशूल आंक लेने के बाद विधु सरकार बक्स को खोलता। खोलकर उसके अन्दर फूल रखता। उसके बाद निकाल लाता एक छोटी-सी धूपदानी। यह अपनी धूपदानी थी उसकी। एक छोटे-से डिब्बे से निकालता, फिर धूप, कोयला और दियासलाई। दियासलाई जलाकर धूप जलाता। जलाकर पंखा झलता। जब धका-धक धुआं निकलने लगता, धुएं से उनकी नाक, आंख, चेहरा सब ढक जाता, तब एक मज़े की बात करता। आग समेत उस धूपदानी को बक्स के अन्दर डालकर धप्प से बक्स के ढक्कन को गिरा देता। झुककर बक्स पर माथा टेक देर तक नमस्कार करता और तब बक्स खोलकर अन्दर से धूपदानी को निकालता। फिर शुरू होता काम। टप्प से सामने वाले से पूछता—हां भई, अब कहो क्या है।

खजांची के काम में विधु सरकार जैसी निष्ठा भूतनाथ ने और किसी में नहीं देखी।

दो तरफ़ दो कमरे। बीच से बाहरी महल में जाने का रास्ता। रास्ते के उस तरफ़ बाहरी महल का आंगन। आंगन के दक्खिण पूजा-दालान। अब भी वैसा ही है वह; आस-पास की और-और चीज़ें बदल गई हैं। संगमरमर की टालियां सब टूट-फूट गई हैं। दुर्गापूजा शायद अब भी चल रही थी। वह नहीं बन्द हुई।

एक बार नवमी पूजा के दिन एक अजीब वाक़या गुज़रा। सुनी हुई कहानी है। वाक़या यहीं हुआ था।

पूजा हो चुकी था। प्रसाद बँट रहा था। तशर का वस्त्र पहने बुढ़िया दीदी पुरोहितजी के लिए नैवेद्य की थालियां गिन-गिनकर उठा रही थी। प्रसाद के लिए रसोई, गोला, अस्तबल, जो जहां थे, वहीं से दौड़कर आए। अन्दर महल के लिए प्रसाद भेजा गया।

और भिश्तीखाना, बावर्चीखाना, नहवतखाना, दफ्तर, गाड़ीखाना जहां से छुट्टी पाकर लोग आ नहीं सके, प्रसाद भेजा गया।

दालान, डेवढ़ी, नाचघर, स्कूल—सब लोग प्रसाद खा रहे थे। अचानक एक घटना घट गई।

—मैं नहीं खाऊंगा।

—क्यों भला?

—पूजा नहीं हुई है।

—पूजा नहीं हुई—यह कैसी बात—तू है कौन?

—मैं हूं हाबू।

—कहां का हाबू? कौन हाबू? घर कहां है तेरा?

भीड़ लग गई। सबकी ज़बान पर एक सवाल—हुआ क्या? है कौन वह? किसके घर का है? मगर शक्ल से ही तो पहचान लेना चाहिए था। पगला है

कि मझले बाबू को कुछ मज़ा आ रहा है। और दिनों से आज कुछ ज़्यादा मौज में थे भी। आज कैसा मीठा-मीठा हँस रहे थे—अच्छा तो प्राण-प्रतिष्ठा कर तू।—जब कह रहा है, तो करे।

रूपलाल ठाकुर विरोध करना चाह रहे थे, मगर बेकार। मझले बाबू पर किसी की नहीं चलती।

तब खबर चारों तरफ फैल गई। बाहरी दालान से सारे लोग बटुर आये। कोई कहने लगा, यह कोई छिपा हुआ साधु है। उससे बात करने को भी जी लल-चाने लगा। रसोई छोड़कर सारे महाराज आ जुटे। सिर्फ़ मझले बाबू के डर से आगे आने की किसी को हिम्मत नहीं पड़ रही थी। नाती-पोतों के साथ एक कोने में खड़ा था दासू मेहतर। आज चीनी सिल्क का कोट पहने था बन्द गले का। बाल-बच्चों ने भी नये-नये कपड़े पहने थे।

पगले हाबू को पूजा-मण्डप में ले जाया गया। कर, प्राण-प्रतिष्ठा कर।

—केले के बखल चाहिए।

—वह क्या होगा ?

—लाकर दो भी तो, देखो क्या करता हूँ। दक्खिन के बगीचे से लाया गया आखिर केले का बखला। मझले बाबू का हुक्म। जरा तमाशा ही देखा जाए। पूजा-वूजा में मजे उड़ाने और मज़े देखने को हों तो आना। संगमरमर की सीढ़ी पर लोग भीड़ लगाकर खड़े हो गए। उझककर पगले की तरफ देखने लगे।

पगला लेकिन कतई निर्विकार। तेज़ हँसिये से केले के बखलों को छोटा-छोटा करके काटा। उसके बाद की कहिए मत ! एक-एक टुकड़े को उठाकर ज़ोर-ज़ोर से क्या तो पढ़ने और प्रतिमा पर फेंककर मारने लगा। हाथ-पैर, आँख-नाक—सर्वांग में।

रूपलाल ठाकुर रोकने जा रहे थे, लेकिन मझले बाबू की तरफ देखकर साहस न हुआ। मझले बाबू एकटक उस पगले को देखते हुए मीठा-मीठा हँस रहे थे।

और इधर पगला प्रतिमा पर बखले फेंक रहा था और फेंक रहा था। ताकत क्या गजब की ! अचानक हैरत में आकर लोगों ने देखा, प्रतिमा के वदन से चोट की जगहों पर लहू टपक रहा है। बखले की चोट लगी और प्रतिमा के वदन से खून टपका। लोग तो दंग रह गए।

और बीच में वह थम गया। मझले बाबू से कहा—हो गई अब प्राण-प्रतिष्ठा, अब मैं प्रसाद खाऊँगा, दो।

गजब की भीड़ ! फिर भी भीड़ को चीरकर ही प्रसाद लाने के लिए आदमी गया। बात-की-बात में इस-उस घर, इस उस महल्ले में खबर फैल गई। हाटखोला और ठनठनिया के दत्त परिवार से, पोस्ता के शोभा बाजार के राजबाड़ी से, जोड़ा

उसने रास्ता छोड़ दिया।

वही सूनी सीढ़ी। वही सूना अन्दरमहल। जद्दू की माँ, कहाँ गई वह! रसोई से लगा-लगा जो छोटा-सा कमरा है, उसी में बैठी पीसती ही चली जा रही है मसाला। धनिया-हल्दी का पानी चौंतरे से होकर नाले में वह रहा है। कब सूरज डूबता और कब उगता, कब जाड़ा-वसन्त आता और चला जाता, उस बुढ़िया बेचारी को खाक भी खबर नहीं होती। जब हाथ में काम नहीं होता, दोपहर को तो दाल चुना करती। मूंग, मसूर, खिसारी, चना—और भी जाने कितनी तरह की दाल। ज़ुबान पर बात नहीं। काम कि काम। इसी व्यस्तता की फांक में से कब जो उसकी ज़िन्दगी टूट गिरी, किसी को इसकी खबर नहीं। भूतनाथ सीढ़ी पर कदम रख ही रहा था कि पीछे से फिर पुकार हुई—साले साहब!

पलटकर ताका भूतनाथ ने। शशी पुकार रहा था। साले साहब, ज़रा जल्दी आइए।

—क्यों?

—नन्हे बाबू बुला रहे हैं—आज गुसाईंजी नहीं आये—गाना-बजाना ठप पड़ गया है।

नन्हे बाबू की बैठक में आज शायद तबलची नहीं है। नन्हें बाबू छेड़ते तानपूरा और उधर काना धीरू अलापता ईमन का खयाल। तबला गोसाईंजी। सम आते-आते हा-हा का ऐसा शोर कि हाल खराब। घर टूट गिरने की नौबत। बहुत रात गए तक यह क्रम चलता रहता। किसी-किसी दिन बनता गोश्त। मुर्गी का शोरबा और परांठा। रह-रहकर एक-एक आदमी परदे के पीछे चला जाता और ज़रा देर में मुँह पोंछते हुए लौट आता।

मलमल का महीन कुरता पसीने से तरबतर हो जाता नन्हे बाबू का। ताल-ताल पर झूमता रहता सिर। गले की सोने वाली पतली जंजीर बिजली की रोशनी में झक्-झक् करती। कहते, कोई परवा नहीं भई साले साहब, तबले का भार अब से तुम उठा लो, कम्बख्त गुसाईं बेहद गरज़ू हो गया है—शशी, कल गुसाईं आए तो उसे जूते मारकर निकाल बाहर करना—देखता हूँ मैं···

लेकिन भूतनाथ को याद आ जाती ब्रजराखाल की बात। उन लोगों में ऐसा घुलना-मिलना क्यों भैया, ये बाबू लोग हैं, साहब की जात, और हम ठहरे उनके गुलाम—गुलामों से भी साहब-बीवियों का मेल बैठ सकता है! ···होशियार···

सो भूतनाथ ने कहा—नन्हे बाबू से जाकर कह दे शशी कि मुझे छोटी बहू ने बुलवा भेजा है। भूतनाथ सीढ़ियाँ चढ़ने लगा। दुतल्ले पर लम्बा बरामदा। दोई तरफ रेलिंग। चौक-सा महल। चारों तरफ रेलिंग। रेलिंग से झुककर नीचे झांकिए तो हौज़ और आँगन ही दीखता है। मँझली चाची रसोई से खाना ले जाकर इक-तल्ले के भंडार में रखती। यहाँ खड़े-खड़े यह भी दीखता कि जद्दू की माँ एक साँस

रही है मसाला रोज-रोज। उसी के पास जो खिड़की है, उसमें से नाजयर का थोड़ा-सा हिस्सा दिखाई पड़ता है और वहीं बैठी सौदामिनी तारकेश्वर बड़े-से हँसिये से तरकारी काट रही है। आलू, बैंगन, कोंहड़ा। चारों तरफ का पहाड़-सा अम्बार और उसी के बीच बैठी अकेली सौदामिनी। या तो ारी काट रही है या पान लगा रही है। या साँझ के लिए दीयों की बत्ती बना है। उसके बैठने की जगह थी खिड़की के उस तरफ। काम भी करती जा रही है ती भी चली जा रही है। किससे बतिया रही है, कौन जाने! गोया, आप-ही-ाप बके चली जा रही है—आँख गई तो तिरभुमन गया—भोला के बप्पा जमी हते थे, फूलबहू, निगाह होते हुए ही तिरभुमन को चौह्ह लो—सो न तो रहा भोला का बप्पा, न रहा भोला—अब मैं मरने को पराए दरवाजे दीया जलाती हूँ—अपने पति का घर घुपघुप अँधेरा पड़ा है।

बातें जदू की माँ के कानों जातीं। मगर वह न तो किसी के छह में, न पाँच में। मगर गिरि सुनती नहीं कि पूछ बैठती, यह बकबक किससे कर रही है री सौदी—। सौदामिनी घट चुप हो जाती।

रेलिंग के सहारे बढ चला भूतनाथ। टूटी रेलिंग। गोया, भूखे जानवर-सी हाँ किए हो। इसके दाएँ फिर बाएँ मुड़कर यह गली, वह गली पार करके उत्तर की तरफ तीन-चार धाप चढकर तब बहुओं का महल। आसमान छूती लकड़ी की झिलमिली से घिरा। उसी के सामने दक्षिण रख बहुओं के कमरे। छोटी बहू का कमरा सबसे आखिर में। दाएँ सबसे पहले पड़ता बड़ी बहू का कमरा। विधवा थीं बेचारी, कहाँ से जो आई थी इस घर की बहुएँ। मेम साहबों-सा गोरा-चिट्टा रंग। दूधिया महावर। बड़ी बहू की उम्र हो आई थी, मगर देखकर उम्र को पहचान का उपाय न था। सफेद कोर की धवधव साफ धोती।

भूतनाथ को देखकर सिधु बगल हो गई। सिधु थी बड़ी बहू की दाई।

अन्दर से आवाज आई—कौन है रे सिधु?

भूतनाथ ने सिधु को कहते सुना—जी, मास्टर साहब के साले हैं।

उसके बाद ही था मझली बहू का कमरा। पर्दा उठा हुआ था। लमहे भूतनाथ की निगाह पड़ी। मझली बहू फर्श पर तकिये के सहारे लेटी गिरि के बाघगोटी खेल रही थी। अपनी नजर उधर से खींचकर भूतनाथ एक आखिरी कमरे के सामने जाकर खड़ा हुआ।

आहट होते ही किसने तो मानो दरवाजा खोल दिया। कितने घटना है यह, लेकिन अतीत का माया-अंजन आज भी, गोया, आँखों पर ल स्मृति के पंछी की पीठ पर सवार होकर वर्तमान से बाहर भूतनाथ मानो अरण्य में जा निकला है। किवाड़ के पल्ले हटाकर छोटी बहू ने क भूतनाथ, आ जा।

अचानक छोटी बहू ने उसके दोनों हाथ थाम लिए। तुझे एक काम कर देना पड़ेगा, भैया, कहकर छोटी बहू ने अपनी काली-काली आंखें उठाकर उसे ताका। इसीलिए बुलवाया है।

—कौन-सा काम ?

—यह रुपया ले—और उसने भूतनाथ की मुट्ठी में रख दिया रुपया।

—क्या लाऊं इसका ? भूतनाथ ने पूछा।

—शराब। गर्दन झुकाकर छोटी बहू बोली।

भूतनाथ सचमुच ही चौंक उठा। शराब ? धोखा तो नहीं दे रहे हैं कान ?

—हां, शराब।

—इतनी रात को !

—हां-हां। जहां से हो, जैसे हो। उमदा शराब, खूब दामी कहने के बाद भी छोटी बहू को भरोसा न हुआ। अचानक अपने कान से हीरे का करनफूल खोल-कर उसने जबर्दस्ती भूतनाथ की मुट्ठी में भर दिया। बोली—उस रुपये से शायद काम न चले, इसीलिए इसे भी रख ले।

—यह क्या, किया क्या तुमने बहू—भूतनाथ जैसे चीख पड़ा। बगल से दौड़ी-दौड़ी आ गईं गिरि, मझली बहू, सिन्धु, बड़ी बहू। क्या हुआ ? क्या हुआ छोटी बहू ?

भूतनाथ खुद अप्रतिभ हो उठा अपनी चीख से। छोटी बहू नहीं, भूतनाथ ही मारे शर्म के गड़ा-सा खड़ा रहा। बुढ़ापे में आखिर यह किया क्या उसने ? यहां तो कहीं कोई नहीं। आज तो महज़ वही अकेला खड़ा है इस टूटे घर में। वह तो इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट का ओवरसियर भूतनाथ है : भूतनाथ चक्रवर्ती। मुकाम नदिया—गांव फतेहपुर—डाकखाना गाजना। इसमें राई-रत्ती भूल नहीं। हीरे के करनफूल को देखने के लिए उसने अपनी मुट्ठी खोली। मुट्ठी में सिर्फ साइकिल की ताली थी। अचानक उसे डर लग आया। यह घर अभिशप्त है। अच्छा ही हुआ कि इसका नाश हो रहा है। उतने ऊंचे से कूद जाने का जी होने लगा। यहां की जह-रीली आबहवा से जितनी जल्दी भाग जाया जा सके उतना ही अच्छा। कल ही चरित्तर मण्डल काम शुरू करेगा। इस गली की यादगार के साथ-ही-साथ चौधरी परिवार का इतिहास भी एकबारगी मिट जाएगा। मिट ही जाए। मिट जाना ही ठीक है।

अन्दर महल, रसोई, बाहर महल, बैठका, दफ्तर, डेवढ़ी, सब पार करके भूतनाथ झटपट अपनी साइकिल उठाने जा ही रहा था कि किसी ने मानो उसके कपड़े को खींचा। वह मारे भय के चीखना ही चाहता था। लेकिन ग़ौर करके उसने लात मारी।

—हट्, दूर जा !

वही कुत्ता था !

बहुत दिन पहले और एक रोज इसी तरह इस घर को छोड़कर जाने में बाधा दी थी छोटी बहू ने। और आज, इस कुत्ते ने रोका।

साइकिल से उस अँधेरी गली को पार करते हुए भूतनाथ को लगने लगा, उसका सारा अतीत इस कुत्ते ही की तरह मानो उसे पीछे खींचना चाह रहा है। उसका अतीत इस कुत्ते जैसा ही काला, रोगी, मरणासन्न और धुंधला है।

उसकी साइकिल का पहिया जैसे-जैसे घूमने लगा, उसकी तरंगों में भूला हुआ-सा उसका कहानी-मुखर अतीत उभर-उभर आने लगा।

कहानी

फतेहपुर से तीन कोस पैदल चलने पर पड़ता था माजदिया स्टेशन। एक दिन उसी स्टेशन से गाड़ी पर सवार होकर भूतनाथ कलकत्ते आया था।

स्यालदा स्टेशन की शकल, भीड़-भाड़, शोरगुल और बाहर का नज़ारा देख अवाक् रह गया वह। आ कहाँ निकला! कुलियों की छीना-झपटी से बचकर किसी कदर बाहर आया। जेब में दो रुपये पड़े थे, उन्हें उसने टेंट के हवाले किया। व्रजराखाल ने कहा था, होशियार, जेब में रुपये न हों, वरना छूमन्तर समझो। कलकत्ता शहर आखिर तुम्हारा फतेहपुर नहीं कि—

यह तो भूतनाथ को पता था कि कलकत्ता शहर फ़तेहपुर नहीं है। उस वार एक नाटक की किताब लेने के लिए मल्लिकों के यहाँ का तारापद्दो कलकत्ते आया था। हरिश्चन्द्र नाटक। उसी से सुन रखा था। उसने कहा था, यह जो मित्तिरों का वह बड़ा-सा चालता पेड़ है न, उससे भी हजार-हज़ार गुने ऊँचे हैं वहाँ के मकान, समझ गए चाचा—और देखता क्या हूँ उन बड़े मकानों के माथे पर खड़ी-खड़ी औरतें मजे में रास्ता देख रही हैं—

भूषण चाचा उमर वाले आदमी। अगाध रुपये। तो भी कभी कलकत्ते नहीं गये। जाने की जरूरत भी नहीं पड़ी। चाचा ने पूछा—सिर पर घूंघट-वूंघट कुछ नहीं? तारापद्दो ने कहा—आखिर घूंघट क्यों लें, किस दुःख से—अरे, उन्हें खाक देख भी पाता है कोई—मैंने रास्ते पर से देखा तो इत्ती-सी तो लग रही थीं, पांचवीं उँगली जैसी—

भूषण चाचा बोले—क्यों भई, सुना है, कलकत्ते में आजकल व्याहता औरतें सिंदूर नहीं पहनतीं—घूंघट उघारे खसम के साथ वग्गी पर हवाखोरी को निकलती हैं, ससुर-जेठ के सामने पति से बातें करती हैं?

झूठ, सरासर झूठ है चाचा—तारापद्दो सिर हिलाने लगा। ऐसा नहीं हो सकता, मैं तो अपनी आँखों सब-कुछ देख आया। समझ लो कि सुबह गाड़ी से उतरा और फिर सांझ को आने वाली गाड़ी पकड़ी—कलकत्ते का कुछ भी नहीं छोड़ा चाचा, सब देखा रानीघाट से खरीदकर ले गया था डबलरोटी और माजदिया के

—भरपेट खा लिया और एक-एक कर सब-कुछ देखा। घोड़े की ट्राम
ह जोर की चलती है कि पूछो मत चाचा ! सामने से गुजरती है तो छाती
लगती है।

—क्यों, छाती क्यों धड़कने लगती है—भूतनाथ ने पूछा था।

जवाब लेकिन चाचा ने दिया था—तू चुप भी रह भुतू, बेवकूफ जैसी बातें
र, लोग हँसेंगे।

सच ही भूतनाथ फिर न बोला। सुनता रहा।

तारापद्दो ने कहा था, जी मे आता है चाचा, इस भुतू को एक बार वहाँ
रास्ते पर छोड़ दूँ—यकीन् मानिए, यह जरूर फुक्का फाड़कर रो पड़ेगा—

भूषण चाचा ने भी तजुर्बेकार जैसा कहा था—और क्या; यह भी क्या
श्रीनाथपुर के गाजन का मेला है कि रात भी हो गई तो परवाह नहीं, चूड़ा-मुरमुरा
खाकर हलवाई की दुकान पर ही पड़ दिए।

तारापद्दो की जबानी सुनकर कलकत्ते के नाम से छुटपन से ही रोमांच हो
आता था भूतनाथ को। एक रोज़ वह मित्तिरों के चालता पेड़ की फुनगी पर तक
चढ़ गया था। उससे भी हजार गुना बड़ा। वह ऊँचाई क्या होगी—समझना
मुश्किल। फिर भी उसने दूर-दूर तक निगाह दौड़ाई। पश्चिम की तरफ तो पेड़ दिखाई
पड़े। पेड़ो के बीच-बीच से दिखाई दिए खेत। आसमान। आसमान और आसमान।
चारों तरफ फैला आसमान। साँझ को फल खाने के लिए चमगादड़ो की जमात
उड़कर उधर से इधर को आती। शहर की तरफ से। भाजदिया मे भी दूर, बहुत
दूर, कितने शहर, कितने फतेहपुर-से गाँव पार करके तब कलकत्ता। वहाँ जोरों से
चलती है घोड़ों वाली ट्रामगाड़ी—सामने से गुजर जाती है तो छाती धड़कने लगती
है। (क्यो धड़कने लगती है, पता नही) मित्तिरो के चालता गाछ से भी हजार
गुने ऊँचे हैं वहाँ के मकान। उनके माथे पर लोग दीखते हैं पाँचवीं उँगली-से।

यही सब सोचते-सोचते भूतनाथ पेड़ से उतर पड़ा।

और एक दिन का वाकया। भूतनाथ तब कुछ बड़ा हो चुका था। गज
अस्पताल के बड़े डॉक्टर का लड़का ननी स्कूल मे दाखिल हुआ। खूबसूरत-सा
लड़का। जैसा ही गोरा रग, वैसी ही काली-काली आँखें, बड़े-बड़े बाल। आगे
चलकर कई बार भूतनाथ ने सोचा, ननी गोया लड़का नही। घनिष्ठता हो जाने
बाद भी ननी के हाथ से हाथ छू जाता कहीं, तो कैसा तो सिहर उठता भूतनाथ
स्कूल से मीलो चलकर घर आते वक्त तमाम रास्ता वह ननी की ही बात सोचता
कभी-कभी जी मे आता ननी उसकी बहन हुआ होता तो अच्छा था। फिर तो
जने साथ ही रहते, एक ही बिछावन पर सोते। कितनी बार छुट्टियों मे भी
उतनी लम्बी राह पैदल चलकर स्कूल गया। जाकर छिपा-छिपा मद
पास मँडराता रहा। शायद एक निगाह ननी को देख पाए। शरम

पड़ जाए उस पर ! कहीं वह पूछ बैठे, क्यों भूतनाथ, यहाँ क्यों, तो
गा वह ?

र ननी को तो यह कहा नहीं जा सकता था कि उसी को देखने के लिए
अपनी एक किताब उसने ननी की किताबों में मिला दी थी चुपके-से ।
बहाने छुट्टी के बाद उससे दो बातें करने का मौका मिल जाए ! और
उसके स्कूल में रहा भी कितने दिन ! फिर भी कितनी ही बातें होतीं ।
ता की बदली कितनी ही जगह हुई । कितने स्कूलों के, कितने लड़कों के
।

वही ननी एक दिन चला गया । चला गया उसके सदा-सदा के सपनों का
—कलकत्ता । उसके जाने के पहले दिन कैसा खराब हो गया था जी भूतनाथ
ननी को खुशी हुई थी कि उसके पिता कलकत्ते जाएँगे । लेकिन बड़ी हिम्मत
रकर भूतनाथ ने पूछा था—तुझे बड़ी तकलीफ हो रही है ननी, क्यों ?

—क्यों, तकलीफ़ क्यों न होगी ?

यह बात ननी के दिमाग ही में न आई कि कलकत्ता जाने में तकलीफ भी
या हो सकती है ! लेकिन भूतनाथ के जी में आया था, उसे जैसी तकलीफ हो रही
है वैसी ही तकलीफ ननी को भी होती, तो अच्छा था । ननी के जी में तकलीफ
होना क्यों उचित है, शरम से इस बात को वह समझाकर न कह सका । उस रोज़
भूतनाथ की उस तकलीफ को ननी समझ नहीं सका । न समझ सकने की ही बात
थी । उसने कितने तो शहर देखे । कितना बड़ा आदमी । भूतनाथ जैसे कितने लोग
उसके जीवन में आएँगे-जाएँगे खूब याद है, उसके जाने के बाद, खंटरो दह के पास
पेड़ के नीचे किस बेतरह रोया था भूतनाथ !

एक दिन ननी की चिट्ठी आई । चिट्ठी आई खास कलकत्ता से । ज़िन्दगी
में चिट्ठी उसे यही पहली बार मिली । उस चिट्ठी को पढ़कर उस दिन उसे जैसा
आनन्द मिला, वैसा आनन्द फिर किसी दिन किसी चिट्ठी को पढ़कर नहीं मिला ।
खत को जाने कितनी बार पढ़ा उसने । दिनों तक उसे तकिए के नीचे रखकर सोता
रहा । कुरते के नीचे उसने उसे कलेजे के ऊपर रखा । गोया, कागज़ के उस छोटे-से
टुकड़े में ननी के हाथ का स्पर्श हो । लेकिन लिखा ही ऐसा क्या था उसने ! यों
कहिए तो कुछ भी नहीं लिखा था ।

प्रिय भूतनाथ,

पिछले सनीचर को हम लोग यहाँ पहुँच गए । कलकत्ता अच्छा-खासा
शहर, इतना अच्छा शहर कि कह नहीं सकता । आने के बाद से पिताजी के साथ
घूम ही रहा हूँ । बड़े-बड़े मकान, चौड़े-चौड़े रास्ते । बड़े मज़े हैं । तुम लोगों की
याद आती है । लिखना, तुम कैसे हो । ऊपर के पते पर पत्र देना ।

उसका जवाब लिखने में भूतनाथ की दस कापियों का कागज बर्बाद

जवाब लेकिन तो भी लिखा न जा सका। पसन्द ही न आया। लिखता और ढालता। लाज लगती। उस दिन कलकत्ते से ननी का खत आना ही उसे गी की सबसे बड़ी घटना मालूम हुई थी। उसका जवाब कलकत्ता भेजना है। बात उसके लिए अचरज की थी। यकीन नहीं आने लायक। अन्त में किसी ह जवाब लिखकर भेजा था उसने। फिर ज़िन्दगी-भर उसका जवाब नहीं आया। सके जीवन से ननी तो सदा के लिए खो ही गया। मगर कलकत्ते के ख्वाब को सके मन से कभी कोई नहीं मेट सका।

इसके बाद एक घटना और घटी। भूतनाथ की उम्र बारह या तेरह की रही होगी और राधा की थी ग्यारह। राधा की शादी ठीक होने लगी। कलकत्ते से उसे देखने के लिए लोग आये। गजब का रोमांच। राधा को रोमांच हुआ या नहीं, भूतनाथ को मालूम न हो सका। अगर उसे हुआ भी हो, तो भी भूतनाथ को उसमे हजार गुना हुआ था। राधा! और राधा की ससुराल होगी कलकत्ते में! रश्क हुआ उसे। गुस्सा भी हुआ। कई दिन तक तो उसने राधा से भेंट ही न की, बात तक न बोला।

एक दिन चुननवाली चादर डाले, चमकते पम्प शू पहने कलकत्ता से कुछ लोग गाँव में आये। रात-भर रहे। खूब खाया। नन्द काका ने सबको डाब का पानी पिलाया, पोखर की मछली, गाय का घी, श्रीनाथपुर के किसुन हलवाई के यहाँ का रसगुल्ला और कतरनी चावल का भात खिलाया।

रिश्ता पक्का हो गया। एक दिन दुलहा बनकर पालकी पर आया ब्रज-राखाल। वह राधा को ब्याहने के लिए कलकत्ते से आया। राधा को अपना दुलहा पसन्द आया या नहीं, पता नहीं, मगर भूतनाथ को पसन्द नहीं आया। मूँछ नहीं! यह कैसा दूल्हा! जितने भी दूल्हे गाँव में आये, सबके मूँछ थी। राधा की सहेली हरिदासी के दूल्हे को मूँछ थी। भूषण चाचा की बेटी ज्ञानदा का दूल्हा आज भी आता है, उसे भी मूँछ है। भूतनाथ को उस उमर में ऐसा लगता था कि राधा के दूल्हे को मूँछ होती तो खूब फबती। आज बेशक यह सोचकर भी हँसी आती है दूल्हे को मूँछ न होने का जो गम भूतनाथ को हुआ, वह इस बात पर जाता रहा कि उसकी ससुराल कलकत्ते में हुई।

कोहबर में दूल्हे के साथ भूतनाथ काफी रात तक बैठा था। रांगा चाची उसका परिचय कराया था—इसे देख रहे हो न, यह रिश्ते में तुम्हारा सा बड़ा—

मल्लिक के घर की अन्ना बोल उठी थी—बड़े हैं। तो फिर हम लो क्यों दुबके बैठे हैं? भूतू भैया, बाहर जाओ न तुम।

सब-के-सब हँस पड़े थे।

शरम से भूतनाथ वहाँ और न बैठ सका। चुपके-से उठकर चला आ

जराखाल से बातें करने की उसे बड़ी ख्वाहिश थी। ख्वाहिश थी कि
बारे में उससे पूछे, पूछे कि बड़े अस्पताल के डॉक्टर साहब के लड़के
ह जानता है या नहीं—आदि-इत्यादि। पर मन की मन में ही रही।
याद है, सुबह कुएँ के पास शरीफे के पेड़ की आड़ में खड़े होकर भूतनाथ
कि राधा माँ से कह रही है—माँ, भुत्तू भैया मेरे साथ चलने की कह रहे

—कहाँ ?—माँ अवाक् हो गई थी।

—मेरे साथ।

—तेरी ससुराल ? क्यों ?

—सो नहीं जानती। कह रहे थे लेकिन।

—पागल।—कहकर वह हँस पड़ी थीं। छिः, क्या सोचा होगा उन्होंने !
कौन जानता था कि राधा उनसे कह देगी ! बड़ी बेवकूफ है।

बाद में भूतनाथ को पता चला, राधा की ससुराल कलकत्ते में नहीं है। वहाँ
से बहुत दूर कामारपुकुर में है। कामारपुकुर कहाँ है, कौन जाने ! राधा वहीं रहती
है। ब्रजराखाल कलकत्ते में नौकरी करता है। हर सनीचर को घर जाता है।

पहली बार जब राधा मैके लौटी, तो पहचानना मुश्किल !

वह ठठाकर हँस पड़ी—भला भूतनाथ भैया किस कदर मेरी तरफ ताक
रहे हैं, देखो जरा—

मगर भूतनाथ कुछ और ही देख रहा था। भला इन कै दिनों में यह ऐसी
मोटी-सोटी कैसे हो गई ! रंग कुछ और निखर आया। अच्छे-अच्छे कपड़े, गहने।

मुँह बनाकर राधा ने कहा था—नहीं-नहीं, तुम मेरी तरफ इस तरह मत
ताको भैया ! डर लगता है मुझे।

भूतनाथ तो अवाक्। क्यों, डर किस बात का ?

—क्यों, नजर नहीं लगेगी—नई-नई शादी हुई है मेरी।

—पगली, नज़र भी लगती है कहीं !

—कहीं मैं नजर लगाऊँ, तो कैसा लगे तुम्हें ?

—लगा भी, जितनी लगा सके, लगा। काहे पर नज़र लगाएगी ?—
कर भूतनाथ राधा को और ग़ौर से देखने लगा।

राधा कुछ देर चुप रहकर क्या सोचती रही, वही जाने। शायद यह
कि भूतनाथ के नज़र लगाने जैसा कुछ है भी या नहीं। फिर बोली—अभी
लगती, आने दो तुम्हारी बीवी को, फिर लगाऊँगी।

वह मौका लेकिन राधा को नहीं मिला। दूसरी बार आई राधा
उसकी सूरत देख अवाक हो गया भूतनाथ—यह शकल क्या
तेरी रे ?

राधा बोली—तुम्हारी सेहत भी तो अच्छी नहीं देख रही हूँ भैया !

—मेरी हो चाहे—मगर तेरी क्यों खराब होगी ?

राधा कुछ गम्भीर-सी। बोली नहीं। सिर झुकाए रही। भूतनाथ बोला—पिछली बार मैंने नजर लगाई थी, इसीलिए क्यों ?

—धत्, उससे क्यों···चुप हो गई वह। बाद में अन्ना से पता चला। वह बोली—पता है भुत्तू भैया, राधा जीजी के लड़का होगा।

यह खबर सुनकर उस रोज भूतनाथ इस कदर चौंक क्यों उठा था, कौन जाने ! इस चौंकने का अन्त जाकर उस दिन हुआ जब पेट मे शिशु लिये ही राधा चल बसी। कैसे क्या हुआ, आज सब याद नही आता। लेकिन इतना याद है, ब्रज-राखाल अन्तिम बार उसे देखने आया था। गम्भीर आदमी। ज्यादा रोया नही। राधा के गहने भी उसने नहीं लिये। नन्द काका की इकलौती लड़की। उनके शोक का क्या कहना ! फिर भी गहनों के लिए उन्होने बार-बार कहा।

ब्रजराखाल बोला—वही जब न रही, तो ये गहने···

नन्द काका आदमी यों मजबूत दिल के थे। बोले—तुम फिर ब्याह करना बेटे—मैं कहता हूँ।

उसी बार भूतनाथ ने ब्रजराखाल से पहले-पहल दो-चार बातें कीं।

ब्रजराखाल ने कहा—कलकत्ता ? मैं तो रहता ही हूँ वहाँ—बेशक दिखाऊँगा तुम्हें। यह क्या बड़ी बात है—इतनी ललक है कलकत्ता देखने की !

भूतनाथ ने उसका पता ले लिया। तै पाया, चिट्ठी लिखने पर ब्रजराखाल सारा इन्तजाम कर देगा। जी चाहे जितने दिन उसके डेरे रहो और कलकत्ता देखो।

दूसरे ही दिन ब्रजराखाल चला गया था। फिर न आया। उसके बाद ही भूतनाथ के सिर पर आ रहा इम्तहान। एक दिन सदर में एंट्रेंस का इम्तहान दे भी आया। रात-दिन कैसे कटने लगे, कौन कहे ! इस बीच विधवा फूफी उसकी पड़ी बीमार। माँ बराबर थी फूफी। सख्त बीमार पड़ी। कई महीने भुगती रही।

फूफी अक्सर कहा करती, सब लोग यही कामना करो कि मैं भुत्तू के [illegible] बन जाने पर मरूँ।

लोग कहते—तुम अपने परलोक की सोचो। लड़का है [illegible] निबेड़ लेगा।

फूफी कहती—मैंने [illegible] ही नहीं [illegible] है [illegible]

माँ-बाप की जानना क्या है—मेरे [illegible] आने पर [illegible]

फूफी महल्ले की बहुओं से [illegible] करती और [illegible]

इसकी माँ के बच्चा बचता ही नहीं था। [illegible]

पंचानन की [illegible]—और [illegible]

इसका नाम अतुल रखो। मैंने कहा, जब शिव की किरपा से पूरी है मनोकामना, तो इसका नाम भूतनाथ रहे। सो भूतनाथ तो भूतनाथ ही है—भोलानाथ। पढ़ रहा है तो पढ़ ही रहा है—सो रहा है तो सो ही रहा है। खाना भी भूल जाए, ऐसा भी लड़का देखा है कहीं। तुम्हीं बताओ, इसका करूँ क्या मैं?

और वह फूफी भी एक दिन गुज़र गई।

फूफी की ससुराल से हर माह पांच रुपये परवरिश के आते थे। वह भी बन्द हो गए। कहीं कुछ नहीं। भूतनाथ ने टोले के सार्वजनिक स्थान में अड्डा गाड़ दिया जाकर। अड्डा कहिए चाहे यात्रा[1] का चक्का।

एक बार उसने 'नल-दमयन्ती' में प्रतिहारी की भूमिका की। रंगमंच पर जाते ही वह हौलदिल हो गया। पांव कांपने लगे। गला सूखने लगा। भूषण चाचा बोले—भई तारापद्दो, इस कम्बख्त भुत्तू को क्यों उतारा तुमने—कौड़ी काम का नहीं है, पढ़-लिख लिया तो क्या, दिमाग में गोबर भरा है।

लेकिन भूतनाथ के तबले पर सब दंग। मास्टर रसिक कहने लगे—हाथ तो छोरे का खासा है—

कुछ रोज़ भूतनाथ तबले के ही पीछे पड़ गया। बड़ी दूर से सुनी जाती उसकी थाप। रात के सन्नाटे में वह रियाज़ करता। बोल रटता—तागे ना धिन, नागे धिन।

ता धिन
ता ता धिन
धिन तिरकिट तिरकिट ताक
धिन्…

लेकिन तबले से भी चैन न मिली उसे। फूफी के मर जाने से एकाएक उसके जीवन का एक अध्याय ही खत्म हो गया। बेपनाह हो गया। आज इसके घर तो कल उसके। एक दिन पराए टुकड़ों पर पलने की ग्लानि भूत-सी सवार हो गई उसके सिर। तबला लौटा आया वह, और फिर कभी संग में न गया।

छुटपन में भूतनाथ ने एक जंगली नेवला पाला था। बड़ा पालतू हो गया था। लेकिन दुनिया में जो पोस मानते हैं, वही ज्यादा तकलीफ़ पाते हैं। एक रोज भूतनाथ की ही ज्यादती से वह मर गया। नेवले और फूफी की मौत—शोक के पहले और अन्तिम छोर के बीच ननी का बिछुड़न और राधा की मृत्यु—इन सबको मिलाकर बेचारा भूतनाथ कैसा तो बुझा-बुझा-सा हो गया।

ऐसे ही समय आई ब्रजराखाल की चिट्ठी। राधा का पति ब्रजराखाल। उसे भूतनाथ का खत बड़ी देर से मिला, चूंकि पता बदल गया था।

भूतनाथ पास कर गया है, ब्रजराखाल को खुशी हुई। उसने लिखा है,

१. बिना पर्दों के खेला जाने वाला नाटक।

कोशिश करने पर नौकरी मिल सकती है, मगर पहले बता सकना कठिन है। कुछ दिन ठहरना होगा, खाक छाननी पड़ेगी। अन्त में लिखा, चले आओ। जैसे-जैसे बताया है, वैसे ही आना। निवास और खान-पान का जिम्मा मेरा रहा। यह शहर कलकत्ता है, ट्रेन और ट्राम पर खूब होशियार। उचक्कों को कहीं पता चल गया कि आदमी नया है, तो···इत्यादि।

फूफीवाला पीतल का लोटा और चाँदी का कमरबन्द उसने ग्वालिन के यहाँ गिरवी रखा और रात रहते ही पैदल निकल पड़ा। सुबह पहुँचा कलकत्ता। टिकट के दाम चुकाकर दो रुपये रहे। रुपयों को टेंट में सँभालकर वह स्यालदा स्टेशन के बाहर निकला।

सन् १६६० जॉब चार्नकवाला कलकत्ता नहीं। बीसवीं सदी भी शुरू नहीं हुई। उस कलकत्ते की तस्वीर भूतनाथ ने बड़े महल की लाइब्रेरी में देखी है। सन् १७८७ की चौरंगी। चारों तरफ गन्दे-भद्दे पोखरे। चौरंगी से चल रही हैं टप्पर-वाली बैलगाड़ियाँ। ऊँट की पीठ पर जा रहे हैं लोग। और उसी के अगल-बगल संगीन ऊँची किए परेड करते जा रहे हैं सिपाही। अब सोचने से भी हँसी आती है।

पहली बार भूतनाथ जब ट्रेन से उतरा, तब के स्यालदा से भी आज के स्यालदा की कोई तुलना नहीं। याद है, स्टेशन से बाहर आकर वह बैठकखाना बाजार के फुटपाथ पर खड़ा सोचने लगा। कहाँ जाया जाए? व्रजराखाल ने सीधे पश्चिम जाने को लिखा था। पश्चिम को ही चल पड़ा।

मगर क्या पता कि वह ठीक ही जा रहा है। जिन्दगी में एक साथ इतने आदमियों को उसने कभी नहीं देखा। घोड़ा-गाड़ियों का क्या कहना! घोड़े की कनपटियों पर झालरें। किसी-किसी घोड़े के गले में लाल-लाल टुन टुन बजती घण्टियाँ। दौड़ रही है गाड़ी। दाएँ-बाएँ। मनमाना। एक कोई पड़ गया सामने। गाड़ीवान ने उसे बेंत लगाए और ओझल हो गया।

भूतनाथ काँप उठा। उसे भी मार बैठे कोई। वह राह के किनारे आ गया।

दो बग्घियों में होड़ लग गई थी। लगाम थामे दोनों गाड़ीवान चिल्ला रहे थे—उ-उ-उ-उ।

बार-बार लगता, लगा ट्राम से धक्का। नहीं लगा मगर। दोनों खड़े-खड़े गाड़ी हाँक रहे थे···उ-उ-उ। कौन आगे निकले—

उसी तरफ टकटकी लगाए चलते-चलते एक बार वह धड़ाम से गिर पड़ा। कूड़े का ढेर लगा था। उसी पर जा रहा। फिर खड़ा हुआ। सब उसे देखने लगे। उसने नजर झुका ली। सब कोई शायद यही समझ रहे थे कि नया-नया आया है। बड़ी शर्म लगी। लोगों की नजर बचाने के लिए वह पास की एक

कान में गरम-गरम जलेबियाँ निकल रही थीं। खड़ा-खड़ा देखता
ी वनाने वाले को उसने देखा। वड़े चूल्हे पर वहुत वड़ा कड़ाहा।
यल के पेंदे की सूराख से वह अपने हाथ को अजीव ढंग से घुमा-घुमा-
आ वेसन छोड़ रहा था और गरम घी पर पीली-पीली जलेवियाँ तैरती
।

उस आदमी ने पूछा—ऐसे देख क्या रहे हो छोकरे ?

—तुम्हारा जलेवी वनाना देख रहा हूँ।—वह वोला।

—यों नज़र गड़ाकर मत देखो, जो वेचारे खाएँगे उनका पेट दुखेगा।
पड़ो भैया, गाँठ में पैसे हैं ?

—पैसे की कै देते हो ?—पूछा उसने। भूख भी खासी लग आई थी।
से की चार जलेवियाँ लीं उसने। हो चार—आखिर यह फतेपुर तो है नहीं—
ी जगह। कहा, एक पैसे की और देना भई !

खाते-खाते परिचय हो गया। फतेपुर के पास ही ममारखपुर में उसकी वहन
ससुराल है। आदमी वेचारा भला था। हलवाई! जाति-व्यवसाय शुरू कर दिया
ा। वोला—मैं भी भैया ठीक तुम्हारी ही तरह एक दिन कलकत्ते आया था।
आकर यही शुरू किया। नौकरी मुझे देता भी कौन—पढ़ा-लिखा तो कुछ हूँ नहीं।
तुम्हारी तरह लिखना-पढ़ना आता होता, तो दस-वारह रुपए की, नौकरी जुटा
लेता। पाँच रुपए में अपना गुजारा चलाता और पाँच भेजता घर।

पेट भरकर उसने पानी पिया।

हलवाई ने कहा—वनमाली सरकार लेन ? वड़े महल में जाना है—तो
फिर इस वड़े रास्ते से नाक की सीध में चले जाओ, इसके वाद वाएँ, फिर दाएँ,
जो रास्ता सवसे पहले मिले···

भूतनाथ उठ खड़ा हुआ। पूछा—तुम्हारा नाम भैया ?

—परकाश और तुम्हारा ?

—भूतनाथ चक्रवर्ती—वाम्हनगाछी के पंचानन की कृपा से पैदा हुआ,
फूफी ने इसीलिए यह नाम रखा। खैर, फिर मिलूँगा।

इतने वड़े कलकत्ते में मानो एकाएक उसे एक आश्रय मिल गया। कहीं
व्रजराखाल का पता नहीं चल सके, तो यहीं पनाह ली जाएगी। ममारखपुर में
वहन की ससुराल है, फिर तो अपना-सा ही हुआ। उसने सन्तोष की साँस ली।
भगवान् मददगार हो तो नरक में भी फिक्र नहीं, यह वात भूषण चाचा कहा करते
आज कलकत्ते में उसकी सचाई सावित हुई।

चलते-चलते अचानक मन में आया—एकाएक ननी से मुलाकात हो जा
कहीं। यों इतने वड़े शहर में ढूँढ़ निकालना तो कठिन ही है। फिर भी आज न

मल, एक-न-एक दिन उससे भेंट होगी ही।

बहूबाजार के बनमाली सरकार लेन के प्रवेश-पथ पर खड़ा था एक बड़ा-सा बरगद। काफ़ी छाया फैली थी नीचे। काला-काला-सा एक ठिगना आदमी बैठा था। बोला—आइए बाबू!

पहली ही बार किसी ने भूतनाथ को बाबू कहा शायद। लगा, हाव-भाव से वह ताड़ गया कि यह आदमी गाँव से नया-नया आया है।

—आपकी मनोकामना पूरी होगी बाबू—और पूछे-पाछे बिना ही उसने उँगली से भूतनाथ के कपाल पर सिन्दूर का टीका लगा दिया। कहा—सिद्धिदाता गणेश को कुछ प्रणामी दीजिए—इच्छा पूरी होगी।

अब भूतनाथ ने ग़ौर किया। पेड़ तले ईंटों की वेदी बनी थी। वेदी पर चीन्हे-अनचीन्हे बहुतेरे देवी-देवताओं की मूर्तियाँ बिखरी पड़ी थीं। न केवल सिद्धिदाता गणेश, बल्कि काली, दुर्गा, शिव, जगद्धात्री···खिलौनों के आकार की। चारों तरफ़ फूल, बेल के पत्ते, धेले-पैसे बिखरे।

वह आदमी फिर से बोला—लिलार में राजटीका है, बड़ा धन होगा, अपार सुख। तीन शादियाँ होंगी।

एक साँस में इतने शुभ-समाचार सुना गया वह। भूतनाथ को हँसी आई। तीन शादियाँ। गई जान। नौकरी का ठिकाना नहीं। खिलाऊँगा क्या? वह कतराकर चलने लगा। बेला चढ़ चुकी थी। अब तक नहाना-खाना नहीं हुआ था। नींद नहीं आई थी। भाँ-भाँ कर रहा था माथा।

—प्रणामी देते जाइए बाबू—टीका लगाया और दक्षिणा न दी—बड़ा पाप होगा, शाप पड़ेगा।

पुजारी शायद बिगड़ उठा। भूतनाथ ने एक धेला निकालकर चढ़ाया। वेदी पर माथा टेककर प्रणाम किया। देवता की राम जानें, पर पुजारी प्रसन्न हो गया।

हाथ मे एक फूल देकर बोला—बोलो, नमामि। हाथ जोड़कर भूतनाथ ने भी कहा—नमामि

—सर्वसिद्धिदाता

—सर्वसिद्धिदाता

—विनायकम्

जानें और क्या-क्या कहा, याद नहीं। श्लोक एक बड़ा-सा। जान छुड़ाकर भूतनाथ चल पड़ा। मकानों के नम्बर देखता चला। अपनी जेब से उसने ब्रजराखाल की चिट्ठी निकाली। पाँच नम्बर, बनमाली सरकार लेन। एक-दो—इस तरह नम्बर पाँचवाले मकान को देखकर वह चौंक उठा। इतना बड़ा मकान! इस छोर से उस छोर तक एक बार वह घूम गया। पाँच ही नम्बर है। फिर भी शुबहा हुआ,

इसमें, इतने बड़े मकान में व्रजराखाल !

लोहे का फाटक खुला था, लेकिन यमदूत-जैसा एक दरवान मुस्तैद था बन्दूक लिये। माला-जैसी छाती पर सजी थीं गोलियाँ।

अन्दर झाँकने में डर लगा। बिना कहे-सुने अन्दर कैसे जाये। गली के इस किनारे दूसरे-दूसरे मकान। एक के सामने सीमेण्ट का चौंतरा था। उसी पर जा बैठा। सुबह से ही चल रहा है। पैर नहीं दुखता ! दीवार से ओठंग गये ज़रा। गली बहुत बड़ी न थी। ट्राम नहीं चलती। लोगों का आमद-रफ्त काफी है। धीरे-धीरे दोपहर ढल गई। गली कुछ सूनी हो आई। भूतनाथ का सर्वांग मानो थकावट से अवश हो आया। एक बार मन में हुआ—जलेबी की उस दुकान में ही लौट जाए। कम-से-कम एक रात तो कट जाएगी। फिर कल उसे साथ लेकर आऊँगा। आदमी बेचारा अच्छा है। बहनोई के इलाके का आदमी है, जलेबी का दाम नहीं लिया उसने।

घड़-घड़ की आवाज़ से भूतनाथ की नींद खुल गई। पता नहीं, कब उस सख्त चौंतरे पर सो गया। देखा, सामने से एक गाड़ी जा रही है। घोड़े खींच रहे थे। चिपटी शकल की गाड़ी। और पीछे एक अनगिनती छेदवाले नल से झिरझिर पानी बह रहा था। छिड़काव हो रहा था कि गर्द न उड़े। पर गिट्टियों की सड़क पर लोहे के पहियों की विकट आवाज़ हो रही थी।

भूतनाथ उठ बैठा। आखिर जलेबी की दुकान को ही लौटना पड़ा। प्रकाश को ब्राह्मण पर भक्ति है। चावल और पानी डालकर वह हांडी को चूल्हे पर चढ़ा देगा, उबल जाने पर मैं उतार लूंगा। सो जिस रास्ते वह आया था, उसी पर चलने को तैयार हुआ।

—अरे, भाई साहब !

पहचानी हुई आवाज़। भूतनाथ ने आगे-पीछे, दाएँ-बाएँ देखा। चीन्ही सूरत कोई न थी वहां। फिर पुकारा किसने ! लेकिन यह कौन कहता कि बड़ी-बड़ी दाढ़ी-मूंछवाला वह आदमी ही व्रजराखाल है !

व्रजराखाल ने पूछा—कब आये ?

—सुबह।

—गजब है, सुबह से शाम तक रास्ते पर ही रह गए ? अरे, आने के पहले एक खत डाल दिया होता···दिन-भर भोजन भी नसीब न हुआ होगा··· और यह कपाल पर ?

कपाल पर हाथ ले जाते ही भूतनाथ की हथेली पर सिन्दूर लग गया। बोला—गणेशजी का टीका।

—ओ, नरहरि ने लगा दिया होगा—ख़ैर चलो—भूतनाथ का हाथ पकड़कर व्रजराखाल अन्दर ले गया।

गिरिजासिंह ने टोका नहीं। विशाल मकान। किधर कौन रहता है, कहाँ बनती है रसोई, कहाँ कौन खाता है। अनगिनती लोग घूम-फिर रहे थे। क्यों; कौन जाने!

ब्रजराखाल सीधा चला। खास बड़े मकान को दाहिने छोड़कर पीछे के पूरब-पश्चिमवाले घर के नीचे खड़ा हुआ। नीचे करीने से रखी थीं तीन पालकियाँ, उसके बाद बग्घी। उसके बाद कई घोड़े। रस्सी से घोड़ों के थूथने बँधे। खड़े-खड़े पक्के फर्श पर रह-रहकर पैर पीट रहे थे घोड़े। उसी के बगल में सँकरी-सी सीढ़ी। उसी पर भूतनाथ ब्रजराखाल के पीछे-पीछे चला।

ऊपर दाईं तरफ कमरों की कतार। नौकर-चाकर इधर-उधर आ-जा रहे थे। फर्श पर एक के बाद दूसरा—इस तरह मैले बिछावन मुड़े पड़े थे। लंगोट पहने नत्थूसिंह अपने कमरे के अन्दर पीतल की थाली में आटा गूँध रहा था।

पूरब की तरफ सबसे आखिर में जो कमरा था, ब्रजराखाल ने उसका ताला खोला। अन्दर गया। बोला, यह रहा मेरा कमरा। बगलवाला कमरा भी दिखा दूँ। पास के दूसरे कमरे को खोला। यह भी अपना ही है। मगर अपना है ही कौन! यों ही पड़ा रहता है, दुनिया-भर का कूड़ा-कतवार जमा रहता है। न हो तो तुम्हीं इस कमरे में रहना।

फिर कहा—लगता है, बिस्तर-विस्तर कुछ लाए नहीं हो। कोई हर्ज नहीं। तुम भाई साहब ठहरे। जरा अच्छी तरह आवभगत न करूँगा, तो लोग क्या कहेंगे···है न?

तो उसने अपना ही बिस्तर उसे लगा दिया। बोला—मेरी फिक्र मत करो, मैं संन्यासी ठहरा, बिस्तर की जरूरत ही नहीं होती।

ब्रजराखाल सच ही सन्यासी बन गया था। दफ्तर के कपड़े बदलकर उसने एक गेरुआ धोती पहनी, बदन पर फतुआ डाला गेरुआ रंग का। इतने में दीवार पर भूतनाथ की नजर पड़ी। वहाँ किसी साधु की बड़ी-सी तस्वीर टँगी थी। तस्वीर पर पड़ी थी फूलों की माला। ताखे पर गीता जैसी कई किताबें। पूछा—यह तस्वीर किसकी है?

—प्रणाम करो। ब्रजराखाल ने खुद श्रद्धा से हाथ जोड़े। बोला—मेरे गुरुदेव, परमहंसदेव—अब देह रखी···।

जरा देर रुककर बोला—खाना तो आज नसीब न हुआ होगा—रात क्या बने, मैं तो मांस-मछली नहीं खाता—चावल और अरहर की दाल, गिरिजासिंह के घर का घी है गाय का—आलू का दम, क्यों?

भूतनाथ को याद है, तीसरे पहर ब्रजराखाल ने रसोई चढ़ा दी। घंटे-भर में पका चुका और खा-पीकर बोला—अब सो रहो मजे में, मैं जरा [illegible] पढ़ा आऊँ।

व्रजराखाल चला गया। भूतनाथ बिस्तर पर पड़ा-पड़ा ऊटपटाँग सोचने लगा। वही व्रजराखाल, दूल्हा बनकर गया था, अचानक क्या बन गया! वैष्णवी खाना। किस साधु का चेला! कहाँ के कौन परमहंस देव! कौन! आखिर यह नौकरी क्यों कर रहा है, किसके लिए? सोए-सोए वह कितनी तरह की आवाज़ सुनने लगा। घोड़ों के पैर ठोंकने की आवाज़। घड़ीघर का घण्टा। अगल-बगल के कमरों में नौकरों की चीख-पुकार। कहीं चल रहा था ईमन कल्याण का खयाल। तबला। राधा की याद आ गई। गिरस्ती तो उसी की है यह। नसीब। उसी के गुज़र जाने से व्रजराखाल ऐसा विरागी हो गया है शायद। ननी से एक बार भेंट की जाती तो अच्छा होता। चौंक पड़ता वह। जाने किस कॉलेज में दाखिल हुआ है! प्रकाश जलेबी खूब बनाता है। सबसे जलेबी नहीं बन सकती। जो हो, ब्राह्मण पर भक्ति है। जो दिन-काल है, इसमें दो पैसे कौन छोड़ सकता है! बहुत रात बीतने पर नींद में उसे लगा, गेट खुलने की आवाज़ हुई। घोड़े की टाप सुनाई पड़ी—लगा, नीचे कोई गाड़ी आकर खड़ी हुई। बातचीत। नौकरों की दौड़-धूप।

भूतनाथ को डर-सा लगने लगा। नई जगह, नया बिछौना, कैसी बेचैनी-सी होने लगी। उठ बैठा। गला सूखने लगा मानो। व्रजराखाल को पुकारे। बाहर चाँदनी छिटकी थी। अन्दर आ रही थी चाँदी-सी रोशनी। फतेपुर की याद आ गई। कल वह वहीं था, आज यहाँ आ पहुँचा। आज वहाँ भी ऐसी ही चाँदनी खिली होगी। नदी-किनारे झाड़ियों में रह-रहकर डैनों की फड़फड़ाहट। मल्लिकों के बगीचे में आम चुनने के लिए आधी ही रात को जग पड़ी होगी ग्वालिन की बिटिया बिन्दी। बेहुला के प्रतिमा-विसर्जन के ढोल की आवाज़ मानो तिरकर आने लगी धीमे-धीमे। कितने देश, कैसे-कैसे अनोखे लोग—एक से दूसरे देश का कोई मेल नहीं—लेकिन आसमान एक ही। जो आसमान यहाँ कलकत्ता में है, वही फतेपुर के भी माथे पर है—तमाम है। सौ साल पहले भी यह आसमान था और सौ साल बाद भी रहेगा।

भूषण चाचा इसे कहा करते—भैया भुनू, तू रुक भी—कैसे-कैसे अजीबो-गरीब खयाल···।

तारापद्दो कहता—लगता है, यह कवियाल[1] होगा काका—यात्रा का गीत लिखेगा, मधु लुहार की तरह।

लेकिन भूतनाथ कवियाल न बन सका—बना ओवरसियर! खैर। आधी रात को व्रजराखाल को पुकारने लगा भूतनाथ—व्रजराखाल, ओ भई व्रजराखाल, यह आवाज़ कैसी है? कोई जवाब नहीं। बीच के किवाड़ के पल्ले हटाते ही नज़र आया व्रजराखाल। योगासन पर बैठा है। तन्मय। बाहर का कोई ज्ञान नहीं। दीवार पर सामने झूल रही थी साधु की वही तस्वीर। तनी हुई रीढ़, आँखें मुँदी,

१. गँवई कवि।

धड़कन भी बन्द हो जैसे। भूतनाथ ने फिर आवाज़ दी—व्रजराखाल···।

इस बार भी जवाब नहीं। भूतनाथ को लगा, यह अब मामूली गोप नहीं रहा व्रज का, मथुरा का राजा बन बैठा—राधा की पहुँच से बाहर। फतेपुर के नन्द चाचा की ग्यारह साल की वह बेचारी लड़की राधा!

●

सुबह व्रजराखाल की पुकार से आँख खुली। यह तब तक नहा-धोकर तैयार हो चुका था। बोला—भाई, इतनी देर किए काम नहीं चलने का, यहाँ घड़ी की सुई के हिसाब पर चलना पड़ता है। कलकत्ता है यह, फतेपुर नहीं।

कितनी रात गए व्रजराखाल सोया, कब उसे नींद आई और कब जग पड़ा, कौन जाने। जगकर उसने देखा तो व्रजराखाल रसोई में जुट पड़ा था। भूतनाथ ने एक निगाह घर के चारों तरफ देखा। दक्खिन तरफ खिड़की से एक बहुत बड़ा बगीचा दिखाई पड़ रहा था, बीच में एक पोखरा।

अचानक व्रजराखाल पास आया, कहा—भैया, चटपट इसे खा जाओ तो।

बड़े-से कटोरे में माड़ और भात। वह बोला—देखो भी खाकर। शुद्ध घी डाला है—तुम्हारे फतेपुर के घी से बढ़िया।

उसके अपनेपन से भूतनाथ दंग रह गया। कहाँ के कौन तो हुए नन्दा चाचा—उनकी बेटी राधा और वह राधा भी दुनिया में न रही···रिश्ता ही ऐसा क्या, फिर भी एक पराए आदमी को इतना अपना बना सकता है व्रजराखाल! भूतनाथ ने पूछा—और तुम?

—मेरा भोजन तैयार है। बस, नौ का घण्टा बजा ही समझो। बजा और मैं निकला दफ्तर को। पैदल चलकर दस बजे ऑफिस जा ही रहूँगा। लौटने में फिर वही···।

थोड़ी ही देर में व्रजराखाल खा-पीकर तैयार हो गया। वही धोती, वही काला कोट। जाते-जाते बोला—ज़रा यह पुड़िया तो रख लो भाई साहब!

क्या है यह?

होम्योपैथिक दवा है। कोई माँगे आकर, तो दे देना। बंशी को कह दिया है मैंने कि साले साहब के पास रख जाऊँगा।

भूतनाथ की आँखों में अचरज देखकर व्रजराखाल ठठाकर हँस पड़ा। कहा—देख क्या रहे हो, डॉक्टरी भी जानता हूँ मैं। एक तुम्हारी बहन को ही मौत के मुँह से न निकाल सका—मेरे रोगियों में एक वही गुज़र गई···वरना आस-पास में अपनी खासी खोज-पूछ है—और, झटपट निकल गया व्रजराखाल। ज़रा ही देर में फिर लौटा। एक बात कहना भूल गया था। निकलना हो तो दूर मत जाना। भटक जाओगे। और नौकरी की फिक्र मत करना, कोशिश कर रहा हूँ—समय बड़ा वैसा है न!

चला गया वह। एक नया ही आदमी हो, गोया। कब उसने अपने हाथों रसोई बनाई, कब खाया—नौ का घण्टा बजा नहीं कि दफ्तर को भी रवाना हो गया। काम का आदमी है पक्का। भूतनाथ कमरे से बाहर आकर खड़ा हुआ। कितना बड़ा है मकान! यहाँ से मकान के बाहर का कुछ भी नजर नहीं आता। बाहर से भी यह समझना मुश्किल कि अन्दर भी लोग रहते हैं। देखते-सुनते ही बेला चढ़ आई। वह रसोई की तरफ बढ़ा। बगल से सीढ़ी उतरी थी। नीचे नहाने की जगह। नये पानी में नहाना ठीक न होगा। मुंह-हाथ धोकर वह रसोई में दाखिल हुआ। भोजन सहेजकर रख गया था ब्रजराखाल। चावल, दाल, सब्जी।

ले-देकर खाने बैठा ही था कि किसी ने अन्दर झाँका।

—कौन? दरवाजे की तरफ मुंह बढ़ाकर भूतनाथ ने पूछा। वह आदमी सामने न आया। बोला—आप भोजन कर लें, मैं फिर आऊँगा।

और वह बाद में आया। इतने में भूतनाथ खा-पीकर बर्तन-बासन माँज चुका था, रसोईघर को धो चुका था।

उसने पूछा—आप मास्टर साहब के साले हैं?

दुबला-दुबला-सा आदमी। बालों में तेल चुपड़ा। टेढ़ा-सँवरा बाल। अध-मैली धोती। छोर कमर में खोंसा हुआ। बोला—मैं बंशी हूँ।

भूतनाथ ने उसे दवा की पुड़िया दी। पूछा—कौन बीमार है?

—जी, चिन्ता।

—चिन्ता कौन?

—छोटी मालकिन की दाई।

—क्या बीमारी है?

—मलेरिया है। कविराज बाबू तो यही कहते हैं—ले आई जाकर मुलुक से। बहन है मेरी। इत्ती-सी थी, जभी से कलकत्ते है, सो गाँव-घर का पानी बर्दाश्त ही नहीं होता। उस बार गाँव गई मेरे ब्याह में, लाख मने करते रहा, ज्यादा पानी-वानी मत पीज, मगर सुने कौन! छोटी मालकिन के लाड़ से सिर पर चढ़ गई है। हुजूर—अब मेरी गत है, छोटी मालकिन की गत। मास्टर साहब की गत। अब पानी भी छोटी मालकिन को खुद ढालकर पीना पड़ता है।

जाते-जाते बंशी रुक गया—छोटी मालकिन कहती हैं—बंशी, एक माँ के पेट की बहन है तेरी, तू जरा वह बाजार के शशी डॉक्टर को दिखा। मैं कहता हूँ—रहने दीजिए—अपने मास्टर साहब कोई ऐसे-वैसे डॉक्टर थोड़े ही हैं, उनकी दया से सभी तो अच्छे हो रहे हैं; मगर उन्हें कहाँ चैन! साबूदाना ला, मिसरी ला, फल-वल ला, यह ला और वह ला—खर्च तो सब उन्हीं का होता है।

बंशी ने जरा गर्दन झुका ली—इस घर के सभी लोग हम दोनों से जलते हैं—फूटी आँखों हम नहीं सुहाते किसी को।

भूतनाथ ने पूछा—जलना किस बात का ?

—यह जो मधुसूदन है।

—कौन मधुसूदन ? दरअसल भूतनाथ अभी किसी को भी नहीं जानता।

वंशी बोला—सब नौकरों का सरदार है, हमारे गाँव के पास ही घर पड़ता है उसका, कहें तो यकीन न होगा आपको, मेरी फूफी का रिश्ते मे जेठ होता है, और उसकी ऐसी करतूत।

—क्या करतूत ?

—वह लम्बी दास्तान है···लम्बी। वंशी बैठ गया। किवाड़ के पल्ले भिड़का दिए और आवाज धीमी कर ली।

शिकायतें उसकी बहुत थीं। इतना बड़ा सम्पन्न परिवार जानें कितनी पुश्तों से, कितने नौकर-नौकरानी, लोग-बाग यहाँ आते-जाते रहे हैं। इस परिवार के दान-ध्यान, यज्ञ-याजन पर कितने परिवारों की रोटी चलती रही है। गाँव-का-गाँव बटुरकर आया है और यहीं रहा है। मधुसूदन आज तो सरदार है। जाने उसका कौन पुरखा कब किस तरह यहाँ रह गया था। उसके बाद यह संसार फैला, आय बढ़ी, आयोजन बढ़ा। धन-जन, यश-मान में आज यह परिवार यहाँ पहुँचा। इनके साथ ही अपने-सगे, दोस्त-अहबाब, दास-दासी, मुसाहब-खानसामों की भी जरूरत बढ़ी। सुदूर बालासोर, कटक, वारिपादा जिले से इसके पुरखों के रिश्तेदार यहाँ आये। एक-एक काम का जिम्मा लेकर रह गए। भिश्तीखाना, रसोई, कचहरी, बैठका, सिरिश्ता सम्हाला। परिवार के एक सदस्य के ही समान पूजा-पाठ, उत्सव-समारोह में साथ दिया। घर गये, ब्याह-शादी रचाई, फिर लौट आये। रुपये भेजते रहे। उनके बिना इस परिवार का और इस परिवार के बिना उनका काम नहीं चल सकता। यहाँ कोई पराया नहीं। कोई भी पर्व-त्यौहार हो, उन्हें कपड़े मिले हैं, उन्हीं का क्या कुत्ता-बिल्ली का भी वाजिब हक है इस घर पर। यहाँ कोई विराना नहीं।

लेकिन वह दिन जाता रहा—वंशी ने आवाज धीमी कर ली—लेकिन वह दिन जाता रहा हुजूर ! अब यह रवैया है कि जिसके नौकरी लगेगी, उसे मधुसूदन को रिश्वत में पाँच रुपये देने पड़ेंगे। और जब तक नौकरी ठीक नहीं हो जाती तब तक सालाना एक रुपया। मेरी शादी जो हुई, शादी की दस्तूरी देनी पड़ी दस रुपये—यों समझिये कि हम दोनों प्राणियों मे झगड़ा हो जाए और मधुसूदन उसका निपटारा कर दे, तो उसे चार आने देने पड़ेंगे। दो आने मैं दूंगा, दो आने देगी जदू की माँ। लड़का हो तो उसे सवा सौ पान और पौने पाँच गण्डे सुपारियाँ देनी होगी। और यह कम्बख्त इतना बड़ा पिशाच है कि जब तक मेरी नौकरी नहीं लगी थी तब तक का पावना वह तनख्वाह से एक-एक रुपया करके [illegible] रहा। मास्टर साहब से पता चला, आप अभी रहेंगे। [illegible]

सुनाऊँगा आपको। मैं मर्द हूँ, अपनी नहीं सोचता, काम कोड़कर रिन-करज चुका दूँगा—फिक्र तो चिन्ता की है।

भूतनाथ ने पूछा—क्यों ?

—जी, गरीब ठहरी, मिहनत-मसक्कत किए बिना खिलाए कौन ? खसम भी होता, तो खिदमत कराके रोटी देता। सो खसम तो खा बैठी है, अब सहारा है छोटी मालकिन, वही बिचारी क्या-क्या देखें।

भूतनाथ ने पूछा—तुम्हारी छोटी मालकिन चिन्ता को खूब मानती हैं, क्यों ?

—मानने से क्या हुआ, उन्हें तो अपनी ही पड़ी है।

—अपनी क्या पड़ी है ?

—बहुत बातें हैं। बताऊँगा आपको। वह मानती हैं, इसीलिए तो मधुसूदन जलता है। वही क्यों, उसके दल का कोई भी हमें देखना नहीं चाहता, वह चाहे गिरि हो, सिन्धु हो, सौदामिन हो—कोई नहीं। और तो और, वेणी तक नहीं।

—वेणी कौन ? भूतनाथ ने पूछा।

—जी, वेणी, मझले बाबू का नौकर है। मजा यह कि हम सभी एक ही जगह के हैं, ज्यादातर अपने ही गाँव के हैं लोग।

आश्चर्य ! भूतनाथ भी अचम्भे में आ गया।

—बुढ़िया दीदी को आपने देखा नहीं है।

—कौन-सी बुढ़िया दीदी ?

—भण्डार उसी के जिम्मे है। मधुसूदन की बुढ़िया दीदी लगती है। कल जाकर कहा उससे—थोड़ा-सा साबूदाना दे दो। कहा नहीं कि सवालों की झड़ी। कौन खाएगा, क्यों खाएगा—यह-वह। मैंने कहा, छोटी मालकिन का हुक्म है। वह बोली—क्या वह अपनी दाई नहीं भेज सकती थी कि तुमसे मँगवाया ? मैंने कहा—चिन्ता तो बुखार में पड़ी है। उठ-बैठ नहीं सकती। इस पर बोली—तो छोटी मालकिन से चिट लिखा ला। मैंने जाकर कहा उनसे। वह बोलीं—रहने भी दे बंशी, ले, बाजार से ले आ। उन्होंने मुझे रुपया दिया।—लेकिन वही बुढ़िया मझली मालकिन की दाई के लिए एकादशी-पूनिया को फल-मिठाई, सब-कुछ देती है। छोटी मालकिन भली है। दुनिया में भला होना भी बुरा है साले साहब !

बंशी की बातों का अन्त कहाँ ? फिर भी वह उठा। कहा—चलूँ अब, शायद छोटे बाबू जगें—जगकर कहीं ऊपर पहुँच जाएँ तो आफत।

भूतनाथ ताज्जुब में पड़ गया। बोला—इस समय ? बारह बजे ?

बंशी ने कहा—जी, उन्हें कभी-कभी दो भी बज जाता जगने में। फिर खाने में साँझ के पाँच बज जाते हैं। खैर। चलूँ अब। काफ़ी बैठ गया। तीसरे पहर आज दालान में राच्छस देखने भी जाना है।

—राक्षस ? भूतनाथ ने जैसे गलत सुना।

—जी हाँ, नर-राक्षस। एक ज़िन्दा बकरा खाएगा। कल खुद ही सरकार बाबू हाथीबगान से बकरा खरीद लाए हैं। खिड़की से झाँककर देख लीजिए, पोखरे के बाँध पर चर रहा है। कोमल-सा है। सींग भी नहीं निकले···काला रंग···।

भूतनाथ को आँखें फाड़कर ताकते देख बंशी ने कहा—यह सब मझले बाबू का काम है—बड़े मौजी जीव हैं मझले बाबू। उस रोज़ सुलचर का एक आदमी पाँच रुपए की शर्त पर दस सेर रसगुल्ले चट कर गया। भैरव बाबू भी साहस कर रहे थे, तीन ही सेर में हिचकी आने लगी। कम्बख्त ने दस सेर रसगुल्ले उड़ाए, पाँच रुपये भी लिया, ऊपर से खुश होकर मझले बाबू ने एक रेशमी चादर भी दी।

अकेले-अकेले ऊब उठा भूतनाथ। जी में आया, बाज़ार चले। लेकिन राह-बाट चीन्ही-जानी तो है नहीं। कहीं भूल-भटक जाए। खैर। एक दिन ब्रजराखाल के साथ ही जाया जाए।

उसने खिड़की से फिर दक्खिन को झाँका। बकरा बँधा था। बेख़ौफ़ चर रहा था। बगीचे में माली निराई कर रहा था। कोने में जो मेहतरों के घर थे, वहाँ के बच्चे रास्ते पर खेल-कूद रहे थे। उसके बाद शायद धोबियों के घर पड़ते थे। टँगी हुई रस्सी में कपड़े सूख रहे थे अनगिनती।

अचानक भूतनाथ की निगाह दीवार के ताखे पर पड़ी। पुराने कागज़ों से दबा पड़ा था बायाँ-तबला। किसका था, राम जानें। ब्रजराखाल को इसका भी शौक है ! गर्द से लद गया था। बहुत दिनों से किसी ने हाथ नहीं लगाया, लगता है। गाँव की बात याद आई। तभी तबले पर कितना दिमाग खपाया था उसने। सात मात्रा की गत् और फिर आठ मात्रा की गत्। विलम्बित लय की कव्वाली और एक ताल। दून, चौगुन, तिहाई। रसिक मास्टर ने कहा था—तबले पर खासा हाथ है छोरे का।

बजाने की इच्छा हो आई। डर लगा, कोई टोके। पराए घर का रहना। ब्रजराखाल का अपना घर थोड़े ही है। सो तबले पर हाथ फेरकर दो-एक टोकी लगाई। फिर रख दिया। घाट बँधे नहीं थे। मरी-सी आवाज़ निकली। फेरीवाले की आवाज़ सामने के रास्ते से आई—बर्तन-बासन, काँसा-पीतल !

काँसा पीटता हुआ बेचता चल रहा था। सामने अस्तबल। उसके किनारे बैठी थी एक चील। 'ची ही ई' करके वह तेज़ी से उड़ भागी। कैसी अजीब-सी चीख लगाता कोई दूसरा फेरीवाला जा रहा था। शुरू में बात समझ में न आई। ध्यान से सुनने पर पता चला, कह रहा था—कुएँ से लोटा निकल···वा···लो···ओ···

आज भी भूतनाथ को याद है, कलकत्ते की यह पहली दोपहरी जितनी रोमांचमय लगी थी, उतनी फिर कभी नहीं लगी। अपने

देखे कलकत्ते की उसने तुलना करनी चाही थी। मकान और मकान। तारापद के देखे हुए कलकत्ते से इसका मेल है कहीं ? फूफी जिन्दा होतीं तो मारे डर के उसे नींद ही नहीं आती। इतने बड़े कलकत्ते में उसका भूतनाथ जाने कहाँ खो गया, कि किसी गाड़ी के नीचे आ गया···।

तीसरे पहर को देर थी काफ़ी। उसने कमरे में ताला लगाया और धीरे-धीरे रास्ते पर निकल पड़ा।

त्रिरिजसिंह बन्दूक लिए पहरा दे रहा था। कुछ बोला नहीं।

गिट्टी की सड़क। ऊँची-नीची। उस गली में उस समय तक पिच नहीं पड़ी थी। दोपहर। रास्ता सूना पड़ा था। रास्ता पार करके मोड़ पर पहुँचते ही उसे नरहरि की याद आ गई। भूतनाथ ने पेड़-तले झाँका। कोई नहीं था। मूर्तियाँ वैसी ही सजी पड़ी थीं। फूल-पत्ते सूखकर सोंठ हो गए थे। चावल के दाने जहाँ-तहाँ बिखरे। नरहरि नहीं था, लेकिन जाने किस देवता के प्रति प्रणाम किया भूतनाथ ने। वेदी के पास खड़े होकर दोनों हाथ जोड़े। फतेपुर की मंगल चण्डी को प्रणाम करके वह जैसी प्रार्थना करता था, वैसी ही की—मंगल करो भगवान् ! मन में और कोई प्रश्न न आया। किसका मंगल, क्या मंगल ? सबका मंगल हो—उसका अपना, ब्रजराखाल का, भूषण चाचा का, ननी का, राधा की आत्मा का। वंशी, उसकी बहन चिन्ता, उसकी छोटी मालकिन, मधुसूदन—सबका मंगल !

राजपथ पर जाते भय लगा। कल ही की तरह दौड़ रही थी ट्रामगाड़ी। बग्गीवाले बेतहाशा हाँक रहे थे घोड़े को। कहीं उ-उ-उ तो कहीं ढि-ढि-ढि।

थोड़ा हटकर एक मकान में घण्टी बजी। बच्चों का स्कूल था। पढ़ा उसने। बंगाल सेमिनरी। स्कूल के सामने मखमल की बंडी और सलवार पहने कई आगे बैठे थे। फल बेच रहे थे। एक फैले कपड़े पर बिदाना, बादाम, अंगूर।

गंज के स्कूल की याद आई। दुतल्ला नहीं था वह। बड़ा-सा मिट्टी का मकान। हितोपदेश पढ़ाते थे शरद् पंडितजी। सुंघनी लेते थे। हरदम बुआर मछली-सी लाल-लाल आँखें। चुटिया में बँधा फूल। भूतनाथ उनसे बेहद डरता था। धातु-रूप मुखस्थ न रहा, तो माथे पर चपत मारते-मारते धप् से पीठ पर मुक्का जमा देते थे। बिगड़ने पर जोर से चिल्लाते थे—गर्दभ···।

गट्टा ही उनका हथियार था।

गणित के मास्टर हरनाथ बाबू का हथियार कलम था। दो उँगलियों के बीच डालकर इस बेरहमी से दबाते थे कि बिच्छू के डंक मारने का मज़ा।

हेडमास्टर अपनी बाबू बेंत रखते थे। सत्यनारायण दरबान बेंतों का भण्डारी था। बड़ा, मझोला, छोटा, हर आकार का बेंत बाँस की नल में सजाया रहता। चिल्लाकर कहते···मेरा केन···।

केन यानी बेंत।

हिन्दी में बेंत नहीं कहते थे वे। मजा की सख्ती बताने के लिए शायद अंग्रेजी शब्द का इस्तेमाल करते थे। मानो बेंत की चोट कम और केन की ज्यादा लगती हो। हुक्म मिलते ही सत्यनारायण सभी बेंत लाकर हाजिर कर देता।

जैसा अपराध, वैसे ही बेंत का चुनाव होता। यानी इम्तहान में देखकर चोरी की हो, तो बड़ा बेंत। पिछली बेंच पर बैठकर मेढक बोलने से मझोला बेंत और सत्यनारायण से उधार पापड़ी खाकर पैसा न चुकाने पर छोटा बेंत।

पचानन पर तीनों ही तरह के बेंत पड़ते।

वही पंचानन! इतने दिनों के बाद भूतनाथ को फिर पंचानन की याद आई। अचानक एक दिन उसे पुलिस पकड़ ले गई, मजिस्ट्रेट के बाग से फूल चुराने में पकड़ा गया था। तीन महीने की सजा हो गई। जेल से छूटकर फिर वह गाँव वापस नहीं आया। कहाँ गया, कोई नहीं जानता।

स्कूल के सामने कुछ शोर-गुल होने लगा। उधर लड़कों की चीख-पुकार, इधर आगों की कहा-सुनी। अजब भाषा। कुछ शब्द ही सुने जाते, अर्थ समझ में नहीं आता। लडको ने ढेले फेंकने शुरू किए। इन्हें हाथ के पास कुछ नहीं मिला, सो बिदाने फेंकने लगे।

सड़क पर बिछ गए बिदाने, अगूर, नासपाती, अनार। भीड़ जमा हो गई। चार-पाँच आगे पागल-जैसे इधर-से-उधर दौड़ने लगे। स्कूल की किवाड़-खिड़कियाँ धड़ाके से बन्द हो गईं। स्कूल के साइनबोर्ड को तोड़ फेंका।

भूतनाथ को हैरत हुई। अचानक यह मार-पीट कैसी! जरा देर पहले तक कुछ बात न थी। बच्चे फल खरीद रहे थे।

—क्या है, बात क्या हुई?

जिससे जहाँ बना, उठाकर दो-चार बिदाने अपनी जेब में दाखिल किए। एक ने कहा—गलती लडकों की है।

—क्यों?

—उन्होंने इनको बेईमान कहा।

—बेईमान! बेईमान कहना इतना बड़ा कसूर है। भूतनाथ भीड़ में से निकल आया। तब तक लाल चमड़े वाले कई साहब सिपाही आ धमके। जिसकी जिधर सींक समाई, भाग खड़ा हुआ। कहीं पीटना न शुरू कर दें। बेहद पीटने हैं ये। गोरों की ताकत भी कम नहीं। आते ही चारों-पाँचों आगों को पकड़ लिया और स्कूल के बन्द गेट पर दे लात। रास्ते की गाड़ियाँ रुक गईं, ट्राम थम गई। लोगों का चलना बन्द हो गया।

भूतनाथ फिर वनमाली सरकार लेन में घुस पड़ा। छाती [illegible] रही थी। बेईमान का आखिर मानी क्या है?

याद था, एक बार पचानन हेडमास्टर से खूब पिटा था। ह

हो गई थीं। बाहर निकलकर उसने कहा था—ज़रा किताबों को थाम ले तो भैया, लगता है, बुख़ार आ रहा है।

उसके कपाल पर हाथ रखकर भूतनाथ चौंक पड़ा था। तत्ते तवे-सी तप रही थी देह। बुख़ार की तेज़ी से सड़क पर ही सो पड़ा था पंचानन।

याद है, बुख़ार में ही उसने कहा था—साला हेडमास्टर बेईमान है।

इस बात का माने तब नहीं समझा था भूतनाथ ने। उस दिन बंगाल सेमिनरी के लड़कों के यही कहने पर आगों के गुस्से का भी कारण नहीं समझा था उसने। किन्तु इसका मानें उसने उस दिन समझा, जब छोटी बहू ने कहा था—भूतनाथ, तू इतना बड़ा बेईमान है।

हेडमास्टर की बेईमानी समझने की उमर तब नहीं थी उसकी। आगों की बेईमानी का अर्थ भी उस रोज़ ढूँढ़े न मिला था। लेकिन भूतनाथ बेईमान कैसे हुआ यह सवाल···पर छोटी बहू उस समय आपे में न थी। भूतनाथ ने उसे बेशक माफ़ कर दिया था। उसे वह पहचान सका था, इसीलिए माफ़ कर सका था।

उस रोज़ ब्रजराखाल हाथ में बड़ा-सा बण्डल लिये दफ़्तर से लौटा। बोला—तुम्हारे इन कपड़ों से काम नहीं चलने का भाई साहब! भले समाज में नौकरी करनी है, तो ज़रा भलेमानस-सा रहना चाहिए।

बना-बनाया कुरता लाया था। एक जोड़ा धोती, लट्ठू मार्का।

—ये रहे जूते। यह फतेपुर नहीं है। गिट्टी की सड़क। नंगे पैरों चलने से पांव की गत बन जाएगी।

भूतनाथ ने जूते पैर में डाले। ब्रजराखाल ने अपने हाथों फीते कस दिए। कहा—आया पसन्द, टेरिटी बाजार से लिया है, खास चीनी दुकान से।

उसे धोती-कुरता और जूते पहनाकर घुमा-फिराकर देखा ब्रजराखाल ने। बोला—अब रख दो सब उतारकर। परसों मेरी छुट्टी है। उस रोज़ पहनना होगा।

क्यों?

ब्रजराखाल ने कोई जवाब नहीं दिया। खाने बैठा, तो बोला—कभी की तो नहीं है नौकरी तुमने—नौकरी की जिल्लतें हज़ार हैं। कभी-कभी जी में आता है—मारूं गोली इसे। आख़िर मुझे पड़ी क्या है? न मां-बाप हैं, न बीवी-बच्चे—लेकिन अपने गुरुदेव कहते थे—

—गुरुदेव कौन?

—रामकृष्ण परमहंस देव—गँवई भूत। तुमने नाम नहीं सुना उनका? मैं कहे देता हूं, देख लेना—एक दिन घर-घर इनकी तस्वीर होगी। इन्होंने मेरी आँखें खोल दी हैं। जब तुम्हारी बहन चल बसीं, तो बड़ी तकलीफ़ में दिन कटने

लगे—ऐसी तकलीफ कि क्या कहूँ तुम्हें ! बड़ा प्यार करता था मैं उसे—व्रज-राखाल खाते-खाते ज़ोरों में हँस पड़ा।

वह हँसा या रोया, यह देखने के लिए भूतनाथ ने उसकी तरफ ताका। मगर व्रजराखाल मानो कहीं देख नहीं रहा था।

व्रजराखाल ने फिर कहा—तुम्हारी बहन ने एक दिन मुझसे क्या कहा था, जानते हो ?

—क्या ?

—बीमार होने से कुछ रोज पहले, सनीचर को मैं घर गया। राधा बोली, तुमसे एक बात कहनी है। मैंने कहा, क्या कहना है कहो। बोली, मेरे भूतनाथ भैया को कलकत्ता देखने की बड़ी इच्छा है। मुझसे बहुत बार कहा है—तुम यहाँ काम करते हो, एक बार उसे कलकत्ता नहीं दिखा सकते ? मैंने कहा, क्यों नहीं ? कहा तो मैंने, पर कुछ ही दिन बाद वह चल बसी। समझ ही सकते हो मेरे मन का हाल—मैंने लम्बी छुट्टी ले ली और रात-दिन दक्षिणेश्वर में परमहंस देव के पास पड़ा रहता। बड़ा अच्छा लगता। सोचा, अब यहाँ से लौटकर नहीं जाऊँगा। मगर फिर आना पड़ा। उन्होंने ही मुझे लौटाया, कैसे लौटाया, बता दूँ ?

जिस दिन की बात है, सभी भक्त उन्हें घेरे बैठे थे। नरेन लाटू, शायद गिरीश भी था। मैंने कहा—ठाकुर, अब मैं दुनियादारी में नहीं पड़ना चाहता।

उन्हें सारी बातों का पता था। राधा के मरने की खबर सुनकर खूब रोये थे। जानते थे कि दुनिया में मेरा कोई नहीं। एक पेट के लिए क्या हाय-हाय ? वे सुनते रहे। बोले—एक कहानी कहूँ। नारद को इस बात का बड़ा गुमान था कि उनके जैसा भक्त त्रिभुवन में और कोई नहीं। विष्णु ने उनसे कहा, तुमसे भी बड़ा एक भक्त मेरा है। एक खेतिहर। उसे तुम देख आओ। नारद गये। गरीब खेतिहर बेचारा ! तमाम दिन खेत और खलियान—मरने की फ़ुरसत नहीं। सुबह जगने के बाद और रात सोने से पहले बस दो बार भगवान् का नाम लेता। नारद ने कुछ न समझा। लौटे विष्णु के पास। बोले—देख आया आपके भक्त को। ऐसी क्या भक्ति है कि पुल बाँध दिया तारीफ का आपने ! विष्णु ने तेल से लबालब भरा एक कटोरा नारद को दिया। कहा, हाथ में लिये एक बार शहर का चक्कर काट आओ, मगर देखना, एक बूँद भी तेल न गिरे। नारद तेल-भरा कटोरा लिये शहर का चक्कर काट आये। विष्णु ने पूछा—अब बताओ, कै बार तुमने मेरा नाम लिया ? नारद बोले—नाम ? नाम लेने का मौका ही कहाँ मिला ! मैं तो आपके तेल को बचाने की मुसीबत में रहा। तब विष्णु ने बताया, हजारों काम करते हुए भी खेतिहर दो बार मेरा नाम लेता है, वह तुमसे बड़ा भक्त नहीं ?

एक के बाद दूसरा किस्सा सुनाते गए। मैं चुप रहा। विश्वास नहीं हुआ। ठाकुर ने इसे समझा। हँसे। कहा गिरीश से पूछ देख। शुरू-शुरू जब [illegible]

वह, मैंने महज़ दो वार नाम लेने को कहा था, खाने के पहले और सोने से पहले। उससे बना तो तुझसे क्यों न बनेगा भला! इससे ज्यादा माँ तुझसे कुछ चाहती भी नहीं रे बेवकूफ! फिर हँसना रोककर नरेन की तरफ देखते हुए बोले—नरेन, व्रजराखाल को यकीन नहीं आ रहा है। अरे, इस दुनिया में जितने मत हैं, उतने ही पथ हैं। कोई भी मत पूर्ण नहीं। सो उससे तुझे मतलब भी क्या? जो तेरा काम है, किए जा। संसार के सब जीव में शिव को पाएगा। न भी पाए तो क्या हुआ—माँ तो तेरे मन की जानती है। हर कोई यही समझता है कि उसकी घड़ी ठीक है, मगर किसी की घड़ी किसी से नहीं मिलती। सो ठीक समय का पता किसी को नहीं। न जाने, कुछ हर्ज होता है किसी का?

बातों में कब खाना खत्म हो गया, पता नहीं। भूतनाथ ध्यान से व्रजराखाल को सुन रहा था। अचानक व्रजराखाल आपे में आया। बोला—राधा को मैंने वचन दिया था कि तुम्हारे भूतनाथ भैया को कलकत्ते की सैर करा दूंगा। भूल बैठा था, तुम्हारी चिट्ठी जो आई, याद आ गई।

रात को भूतनाथ ने पूछा—यह तबला किसका है?

बिस्तर लगाते हुए व्रजराखाल बोला—मेरा ही है, कभी बजाता था। अब दक्षिणेश्वर में खोल[1] बजाता हूं, तबला जँचता ही नहीं।

सोने से पहले व्रजराखाल ने कहा—परमहंस को न देखा, तो कलकत्ते का कुछ भी नहीं देखा भाई साहब! तो परसों जाना है, याद रहे। छुट्टी है मेरी।

—कहाँ?—भूतनाथ ने पूछा।

—भूल भी बैठे। अरे भई, नौकरी पर। फिलहाल सात रुपए माहवार मिलेंगे, एक शाम का खाना। सुविनय बाबू धार्मिक आदमी हैं—ब्राह्म हैं नवविधान सभा के...।

—यह क्या होता है?

—अभी समझ में नहीं आएगा।—व्रजराखाल ने बगल के कमरे का किवाड़ बन्द कर दिया।

भूतनाथ को देर तक नींद न आई। कभी घोड़ों के पैर पीटने की आवाज़, कभी गीत की किसी कड़ी के साथ तबले का ठेका...बहुत रात गए लोहे का फाटक खुलने की आवाज़...और...।

आख़िर काम लग गया। सात रुपये माहवार और एक शाम भोजन। सात ही रुपये क्या कम!

व्रजराखाल ने कहा—सात रुपये ही क्या कम हैं? मैं एल० ए० पास करके दस रुपये माहवार पर भर्ती हुआ था। लिखे-पढ़े आदमी हो, सात का सत्रह होते देर न लगेगी। फिक्र न करो।

---

१. मृदंग।

फिक्र क्या उसे ! मकान का किराया नहीं लगता, एक जून का भोजन मिल ही जाएगा, ऊपर से हर महीने सात रुपए नकद। जलपान, कपड़े-लत्ते में बहुत तो तीन रुपए लगेंगे। चार रुपए महीने की बचत। जितना मौज करना है, करो !

और व्रजराखाल के दिये नए जूते-कपड़े पहनकर वह उसके साथ निकल पड़ा। रास्ते में व्रजराखाल ने कहा, काम लेकिन खूब जी लगाकर करना। मेरी बदनामी न हो। आखिर वह ब्रह्मसमाजी हैं।

—ब्रह्मसमाजी माने ! भूतनाथ ने पूछा।

—तुम जैसे हिन्दू हो···वैसे ही वे हैं ब्रह्मसमाजी, यानी दुर्गा, काली, गणेश—देवी-देवताओं की पूजा-वूजा नहीं करते। कहते हैं, ये पुतले हैं। मगर इसका तुम्हें क्या करना ? तुम अपना काम करो, बस।

भूतनाथ ने पूछा—कहीं मुझे अपना धर्म छोड़ने को कहें ?

—सो तो कहेंगे ही।

—फिर ?

—तुम मत छोड़ना।

—कहीं नौकरी चली जाए ?

—जाए तो जाए। मगर रातों-रात कोई अपना मजहब कैसे बदल सकता है ? मजहब अपने मन के विश्वास की बात है। लेकिन कहीं तुम्हें सात रुपल्लियाँ ही ज्यादा प्यारी हों, तो बन जाना ब्रह्मसमाजी, दीक्षा ले लेना।

भूतनाथ बोला नहीं। चुप सोचता रहा। ज़रा देर बाद बोला—मैं पूछता हूँ, इस काम में तुम्हारी राय तो है ? तुम न चाहो, तो मुझे नहीं चाहिए यह नौकरी।

व्रजराखाल बोला—अरे, डरने की बात नहीं। सुविनय बाबू आदमी बड़े भले हैं। कट्टर हैं ज़रा। मगर तुम्हारा क्या है। उनका विश्वास है, केशव बाबू जो कुछ कहते हैं, वही सत्य है, वही ध्रुव है, बाकी किसी का कहा कुछ नहीं। कहे, उससे मेरा-तुम्हारा क्या आता-जाता है !

भूतनाथ की समझ में कुछ न आया।

व्रजराखाल कहता ही गया—मगर भाई साहब, अपने परमहंस देव कहा करते थे, हिन्दू धर्म की कहो चाहे इस्लाम और ईसाई मजहब की, सबको देखा, दरअसल पुकारते सब एक ही ईश्वर को हैं—जुदा-जुदा नाम से लेकिन। तालाब के घाट कई होते हैं। एक घाट से हिन्दू भरते हैं जल, दूसरे से मुसलमान भरते हैं पानी और तीसरे से ईसाई भरते हैं 'वाटर'। लक्ष्य सबका एक ही होता है—पानी। मारपीट होती है महज़ नाम पर।

पहुँचने में घण्टा-भर लग गया।

मकान के सामने बहुत बड़े साइनबोर्ड पर लिखा था—'मोहिनी सिन्दूर कार्यालय'।

दरवाजा खुला था। अन्दर दफ्तर-जैसा है। कुरसी-टेबिल। करीने से रखे
ाज़-पत्तर।

एक कोई आया। बोला—बाबू ने बैठने को कहा है—आप लोग बनमाली
रकार लेन से आ रहे हैं न ?

जरा ही देर में वह आदमी फिर आया। ब्रजराखाल से कहा—बाबू
आपको ऊपर बुला रहे हैं।

भूतनाथ को वहीं बिठाकर ब्रजराखाल ऊपर चला गया। भूतनाथ ने कमरे
के चारों तरफ़ ग़ौर किया। दफ्तर था। दीवार पर बहुत-सी तस्वीरें, सुनहरे फ्रेम
में बँधी। सामने दरवाज़े के ऊपर दीवार पर बड़े-बड़े हरफ़ों में लिखा था—ब्रह्म-
कृपा हि केवलम्।

कमरे में सन्नाटा। भूतनाथ देर तक चुपचाप बैठा रहा। कहीं से गीत का
स्वर उड़कर आया :

धन्य धन्य तुम हे वरेण्य प्रणमूं जग-वन्दन
मेटो कलुष प्रणत जन का प्रभु काटो बंधन
सत्यसार तुम निर्विकार सिरजन के कारण
जीवन-मरण मसान-भवन—सबमें अवलम्बन
पूरण परम अनादि अनन्त ज्ञान वर लोचन
ओतप्रोत तुमहीं में चित, जगती-मनरंजन।
अगम दया के सागर दुख दरिद्रता भंजन।
पापविनाशन प्रभो पवित्र पतित जन पावन।।

कोई नारी-कण्ठ। मुग्ध-सा सुनता रहा भूतनाथ। फिर सब चुपचाप
अकेले बैठे-बैठे ऊब आने लगी।

जरा देर बाद फिर वह आदमी आया। बोला—बाबू आपको ऊपर बु
रहे हैं।

उनके पीछे-पीछे भूतनाथ अन्दर के बरामदे में से होकर ऊपर पहुँ
उसने दरवाज़ा खोलकर कहा—अन्दर जाइए।

बड़ा-सा कमरा। बीच में एक गोल मेज़, चारों ओर कुरसियों पर स
थे। ब्रजराखाल के सिवा सभी शकलें अनचीन्ही।

अपने बगल की कुरसी पर भूतनाथ को बिठाते हुए ब्रजराखाल ने क
मेरे भाई साहब। अब इनका भार आप पर रहा। निहायत गँवार हैं, शहर
अभी लगी नहीं।

भर-मुँह मूँछ-दाढ़ी वाले सज्जन हँसने लगे—हा-हा-हा। बोले
नाम तो बड़ा अच्छा है। भूतनाथ। कई बार नाम लिया। कहने लगे, शि
दूसरा नाम भूतनाथ है। उपनिषद् में पढ़ा है—न वित्तेन तर्पणीयो मनु

के वित्त नहीं, वैभव नहीं—बिलकुल भोलानाथ।

भूतनाथ ने कहा—चूंकि मेरी पैदाइश वामुनगाछी के पंचानन की कृपा से हुई, इसलिए फूफी ने नाम रखा भूतनाथ।

बगल से दबी हँसी की आवाज़ आई।

उन सज्जन ने कहा—छि: बिटिया, हँसा नहीं करते। यह तुम्हारी चंचलता की निशानी है। उन्होंने ठीक ही तो कहा—ब्रह्म के अनेक नाम है—पंचानन भी उनका एक नाम है—क्यों ब्रजराखाल बाबू!

ब्रजराखाल ने क्या कहा—इसकी तरफ ध्यान न देकर भूतनाथ ने देखा, हँसने वाली एक लड़की थी। राधा की हमउम्र। कुछ बड़ी हो शायद। देखने मे लेकिन बहुत ही खूबसूरत। हँसी तब भी उसके होंठों से लगी थी। भूतनाथ से नज़र मिलते ही वह बेताब हँसी से उबली पड़ रही थी मानो, लेकिन शायद पिताजी पर नजर पड़ने से अपने को जब्त कर गई वह। लड़की के पास बैठी थी एक महिला। उसकी माँ होंगी। बैठी-बैठी बुनाई मे लीन। कभी-कभी सुविनय बाबू को देख लेतीं।

—मेरे पिता कट्टर हिन्दू थे, समझ गए ब्रजराखाल बाबू!

दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए कहने लगे—बड़े ही कट्टर। काली के भक्त। हर सनीचर की आधी रात तक करते पूजा और इतवार को दाना-पानी। बिटिया जब पैदा हुई, तो उन्होंने इसका नाम रखा जवामयी—काली का प्यारा फूल। वैसा ही प्यारा फूल है शिव का धतूरा। हँसती हो बिटिया, मुझे लेकिन भूतनाथ नाम खूब पसन्द आया। अच्छा वह गीत गाओ तो ज़रा।

बुनाई रोककर अबकी उस महिला ने निगाह उठाई।—दया करके उसे गाने को न कहो कहीं आज ही अपनी आवाज बैठा ले तो सनीचर को बिलकुल गा ही न सकेगी।

ब्रजराखाल ने पूछा—सनीचर को गाना-वाना है? सुविनय बाबू बोले—हाँ सनीचर को जवा का जन्म-दिन है, खैर वह हो, असल मे इसके मुँह में यह गीत बड़ा मीठा लगता है, जैजैवंती का ध्रुपद—गाओ बेटी, हाथों से ताल देते हुए सुविनय बाबू ने खुद शुरू कर दिया—नाथ तुम्ही ब्रह्म, तुम विष्णु, तुम ईश, तुम महेश।

रुककर ब्रजराखाल बाबू से बोले—चौताल मे ताल देते जाइए तो, और फिर गाने लगे:

नाथ, तुम ब्रह्म, तुम विष्णु, तुम ईश, तुम महेश,
तुम आदि, तुम अन्त, तुम अनादि, तुम अशेष।

भूतनाथ को अचानक ऐसा लगा कि दुनिया की सारी कोयलें एक साथ गा उठीं। आकाश, वायु, अन्तरिक्ष के मारे अनमुने सुर गूंज रहे। मधुर स्वर

की यात्रा-पार्टी में श्रीकण्ठ हाजरा भी शायद ऐसा नहीं गा सकता। हैरत में आकर भूतनाथ ने देखा, पिता के साथ जवा भी स्वर मिलाकर गाने लगी, उसके होंठों पर व्यंग्य की वह हँसी नहीं, आँखें अधमुंदी। स्थिर चेहरे से छिटकी पड़ रही है, एक अपूर्व जोत। जवा और भी सुन्दर दीखने लगी :

जल स्थल मरुत् व्योम पशु मनुष्य देवलोक
तुम सबों के सृजनहार, हृदयाधार त्रिभुवनेश।
तुम एक, तुम पुराण, तुम अनन्त सुख-सोपान
तुम ज्ञान, तुम प्राण, तुम मोक्षधाम।

भूतनाथ ने व्रजराखाल को देखा। ताल दे रहा था वह। घने बालों वाला सिर नशेबाजों-सा झूम रहा था। आँखों से जारी था आँसू। लेकिन जवा की माँ अपनी बुनाई में वैसी ही तल्लीन। पता नहीं, संगीत उसके कानों तक जा भी रहा था या नहीं।

आखिर गीत बन्द हुआ। सब-के-सब चुप।

सुविनय बाबू बोल उठे—ताल कट तो नहीं गई। व्रजराखाल बाबू—? आप कुशल मृदंग बजाने वाले हैं और मैं, सच पूछिए तो चौताल का ठीक-ठीक अन्दाज भी नहीं कर पाता। सुर का खयाल रखता हूँ, तो ताल में गड़बड़ी हो जाती है। फिर जवा से कहा उन्होंने—देखा बिटिया, भूतनाथ का नाम सुनकर तुम हँस पड़ीं—दरअसल, जो भूतनाथ है, वही ब्रह्म है, वही विष्णु है—सब वही एक ध्रुव, निर्विकार, अनन्त, ज्ञानस्वरूप परमात्मा है—उपनिषद् की वाणी है—एकं रूपं बहुधा यः करोति—जो एक के अनेक रूप करते हैं।

महिला ने अबकी फिर सिर उठाकर कहा—पता नहीं, क्यों तुम जवा को बार-बार झिड़क रहे हो—वह हँसी कहाँ ?

जवा बोली—हाँ पिताजी, मैं हँसी थी।

दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए सुविनय बाबू बोले—आखिर हँसी क्यों बिटिया, भूतनाथ बाबू को देखकर ? बताओ।

भूतनाथ बोल उठा—हँसी तो क्या हुआ, मैंने बुरा थोड़े ही माना ! राधा भी इसी तरह हँसती थी।

—कौन राधा ?—सुविनय बाबू ने पूछा।

भूतनाथ बोला—नन्द चाचा की बेटी।

व्रजराखाल ने समझा दिया, वह मेरी स्वर्गीय स्त्री की बात कह रहा है।

—राधा हँसती थी, उसकी सहेली हरिदासी हँसती थी, हरिदासी का दूल्हा हँसता था। राधा की शादी के समय मेरा बड़ा मजाक उड़ाया था सबने। याद है व्रजराखाल ? हँसा करे, मेरा क्या जाता-आता है ?—वह खुद हँस पड़ा।

उसकी बात पर सभी हँस पड़े। जवा की माँ हँसीं या नहीं, पता न चला।

वह बुनती रही बैठी-बैठी।

हँसकर सुविनय बाबू बोले—भाई ब्रजराखाल, आपके भूतनाथ आदमी खासे हैं, मुझे तो खूब जँचे।

बात बहुत दिनों की हो गई। आज ठीक-ठीक सब याद नहीं, फिर भी इतना खयाल आता है, सुविनय बाबू के यहाँ से निकलने पर ब्रजराखाल से उसने कहा था—तुम तो कह रहे थे वे सब ब्रह्मसमाजी हैं—बड़े अच्छे तो हैं।

—मैंने आदमी बुरा कब कहा था! बड़े अच्छे आदमी हैं, मौजी जीव, अपनी सभा के निष्ठावान् सदस्य भी हैं, रुपया भी बहुत है, मगर मन में उनके शान्ति नहीं।

—क्यों?

—बीच-बीच में उनकी बीबी का दिमाग खराब हो जाता है। वैसे में उन्हें कमरे में बन्द रखना पड़ता है। जब ठीक रहती हैं तो अपनी धुन में बुनती रहती हैं कुछ। मगर तुम्हें इन बातों में क्या, अपना काम ठीक से करना।

रास्ते-भर भूतनाथ यही सोचता आया कि इस कदर जी खोलकर हँस कैसे लेते हैं सुविनय बाबू!

'मोहिनी सिंदूर' के दफ्तर में भूतनाथ की नौकरी हो गई।

ब्रजराखाल के यहाँ रहना और सुबह नहा-धोकर थोड़ा-सा नाश्ता करके पाँव-पयादे चलकर दफ्तर पहुँचना। घण्टा-भर लग जाता। सुबह से ही शुरू हो जाता काम। बारह बजे के करीब रसोई में ठाकुर आकर आवाज देता—बाबू, खाना तैयार है।

झटपट हाथ-मुँह धोकर खाने के लिए चल देता। मकान का सारा पिछला हिस्सा रसोई में पड़ता था। उसी के किसी किनारे ठाकुर उसका आसन लगा देता, पानी का गिलास रख देता। कलछुल से परोस देता केले के पत्ते पर गरम-गरम भात। कहना, भात को हाथ से बीच में जरा दबा दीजिये, उसी पर दाल दे दूँ।

गरम भात के ऊपर गरम दाल। आलू और कोंहड़े की तरकारी। कभी-कभी साग।

बिना मछली के भूतनाथ छुटपन में खाता ही न था। मगर पराया घर ठहरा। यों ही खाते शरम आती है। माँगता कौन है?

भात थोड़ा-सा और मिलता, तो अच्छा था। लेकिन ठाकुर ऐसी जल्दी करता कि लाज लगती। एक दिन किन्तु पूछ बैठा था भूतनाथ—क्यों ठाकुर, मछली नहीं है।

ठाकुर ने कहा—गिनी-गुंथी मछलियाँ, सब ऊपर भेज दी गईं—हाँ, जरा जल्दी कीजिए बाबू, हाबू की माँ आई कि जूठन को फेंक-फाँक…।

सो जैसे-तैसे कौर गले से उतारकर लौट आना पड़ता। काम भी क्या? सिंदूर के बेशुमार खाली डब्बे। उनमें सिंदूर भरकर लेबिल लगाना। एक-एक डब्बे का दाम ढाई रुपया। दूर-दूर भेजा जाता। कहाँ राजसाही, तो कहाँ चटगाँव, सिंहाचलम्, पेनांग, अन्नामलाई, जावा, बोर्निओ।

फलाहारी पाठक डब्बों में सिंदूर भरा करता, लेबिल लगाता। भूतनाथ करता खत-किताबत। कोई मनिआर्डर आता तो भेज दिया करता सुविनय बाबू के पास। माल वी० पी० से भेजा जाता। एजेंटों के पास हैंडबिल भेजा जाता। जाने कितनी भाषाओं में था हैंडबिल! लिखा होता—

'अजीब बिजली की ताकत है इस सिंदूर में। इसके गुणों पर लट्टू होकर हजारों-हजार लोगों ने तारीफ लिख भेजी है। जीवन से हताश होकर कोई मरने पर आमादा हों, तो मोहिनी सिंदूर का एक पैकेट लेकर आज़माएँ। जो अपने प्रियतम या प्रियतमा की मुहब्बत पाना चाहते हैं, उन्हें अपनी मुट्ठी में करना चाहते हैं, कब्ज़े में रखना चाहते हैं, या जो औरत आपसे नफरत करती है, हिकारत से दूर रहती है, उसे अगर हृदय की रानी बनाकर रखना चाहते हों, तो हमारे मोहिनी सिंदूर की करामात आज़माएँ। पति-पत्नी, मालिक-नौकर, बाप-बेटा, शिक्षक-छात्र, गुरु-चेला, सबके लिए समान ज़रूरी। रोज़ हज़ारों लोग इसकी कृपा से विष-जर्जर जीवन में अपार शान्ति पा रहे हैं। इसके सिवा मुकदमे में जीत, असाध्य रोग से मुक्ति, खोये हुए अपने का पाना—आदि-आदि अनेक काम हासिल होते हैं। इसी सिंदूर के बल पर एक स्त्री ने अपने बेहद शराबी पति को संसारी बनाया, एक-दूसरे बदनसीब ने इससे बीस हज़ारी लाटरी जीती और चैन से ज़िन्दगी गुज़ार रहा है···एक आदमी···सही न हो तो दाम वापस—शान्ति, सौभाग्य, सुख-समृद्धि के लिए अद्वितीय।'

पत्रों में विज्ञापन दिया जाता। देश-विदेश। बँगला, अंग्रेजी, जर्मन, चीनी, जापानी, हिन्दी, गुजराती, गुरुमुखी, पश्तो—सभी भाषाओं में, सब जगह मोहिनी सिन्दूर का विज्ञापन।

मोहिनी सिन्दूर के अलावा दो और नियामतें थीं सुविनय बाबू की। एक मोहिनी अँगूठी, दूसरा मोहिनी आईना।

फायदे सबके लगभग एक ही। मगर इन तीनों में चलती ज्यादा मोहिनी सिन्दूर की ही थी। 'मोहिनी-सिन्दूर' के खत लिखते-लिखते ही उसका हाथ दुख जाता।

दफ्तर के पीछे की तरफ गुदाम में फलाहारी पाठक का कारखाना था। फलाहारी हेड था, दस उसके सहायक थे। छुट्टी होने पर जब सब निकलते, तो एड़ी से चोटी तक रँगे होते सब।

सिन्दूर की पैकिंग, लेबिल लगाना और पार्सल बनाकर डाकघर भेजना—

यह सारा कुछ फलाहारी पाठक के जिम्मे था। भूतनाथ को लेकिन इसकी देख-रेख करनी पड़ती थी। कब कहाँ का आर्डर आया, उसे बही में दर्ज करना और कब कहाँ माल गया, यह भी लिख रखना। एजेण्टों को चिट्ठियाँ लिखना, वी० पी० के फार्म भरना।

कभी-कभी सवेरे सुविनय बाबू निगरानी के लिए आते। पूछते—काम-काज कैसा चल रहा है भूतनाथ?

काली चपकन, पायजामा, छाती पर कूम-जैसी झूलती चूननवाली चादर। पाँवों में कभी चप्पल, कभी अलबर्ट। इधर-उधर एक निगाह देखते। कहते, वाह, मजे में चल रहा है भूतनाथ बाबू! और फिर चले जाते। हँसमुख। भोलाबाला-से। रुपए-पैसे की बात आती, तो ऊपर जाना पड़ता। उसी कमरे में वे बैठे होते। कभी उनके आगे होता दफ्तर का कागज-पत्तर, कभी कोई किताब। कभी लेटे-लेटे अखबार पढ़ते होते। ऐसे में आमतौर से कोई वहाँ नहीं होता।

कागज पर सही बनाने के पहले पूछ लेते—इसे ठीक से देख तो लिया है आपने?—कहकर फिर किताब में आँखें गड़ाते। अलमारी में जिल्दवाली मोटी-मोटी किताबें करीने से सजी। 'दुर्गेशनन्दिनी', 'कामिनी-कुमार', 'हसरूपी राजपुत्र', 'विजय वसन्त'···और भी अनेक किताबें। 'सोमप्रकाश', 'विविधार्थ संग्रह', 'रहस्य-सन्दर्भ', 'ब्रह्मिकों को उपदेश', 'ब्रह्मसंगीत' और 'सकीर्तन'।

उनके पास ज्यादा रुकना नहीं पड़ता। गया और आया। उसके बाद आ पड़ता ठाकुर—रसोई तैयार, खाने चलिए।

वैसा ही गरम भात के ऊपर दाल, तरकारी। दफ्तर के रोज-रोज के कामों में यह भोजन शान्ति जैसा असह्य हो उठा।

फलाहारी पाठक और उसके संगी-साथियों का इन्तजाम और था। दोपहर को कारखाने में ही काँसे-पीतल की थालियाँ निकलतीं। टोगों में वे सत्तू साथ लाया करते। उसे थाली में डालते और ऊपर से डालते पानी। बड़ा ही आसान तरीका। झमेला नहीं। खा चुकने के बाद बायें हाथ से उठाकर पानी के लोटे को मुँह में उलट देते। मशक्कत भी खूब करते हैं ये। सिन्दूर से सुर्ख हो उठता चेहरा, लाल हो आतीं आँखें, मगर थकावट का नाम नहीं। तनख्वाह पाँच रुपए। हर महीने उन्हीं रुपयों में से तीन अपने घर भेज देते।

उस रोज ठाकुर ने उसके पत्तल पर दाल-भात परोसकर कहा, आज यही खाना है। तरकारी नहीं बनी है।

सिर उठाकर भूतनाथ ने पूछा—क्यों?

—सामान चुक गया है। मुझे मिले ही कम तो मैं क्या कर सकता। भण्डार तो मेरे हाथ में नहीं है।

भूतनाथ ने पूछा—भण्डार किसके जिम्मे है?

—जी सामान तो दीदी भिजवाती हैं, हाबू की माँ से।

भूतनाथ ने कहा—ज़रा बुलाओ तो हाबू की माँ को।

वह आई। थोड़ा-सा घूंघट काढ़कर दरवाज़े के पास खड़ी हुई। ठाकुर कहा—आ गई वह। पूछ देखिए।

भूतनाथ ने पूछा—हम लोगों के लिए चावल-सब्ज़ी तुम्हें नहीं मिली थी

घूंघट के अन्दर से क्या जवाब मिला, समझ में नहीं आया। ठाकुर ने दुबार समझाया—किरानी बाबू पूछ रहे हैं, तुम्हें चावल-सब्जी आज नहीं मिल देने को?

—जी हाँ, मिली थी।

भूतनाथ ने पूछा—आज कम मिली थी?

—जैसी मिला करती है, मिली थी।

—किस हिसाब से मिलती है?

—मैं लिखना-पढ़ना तो नहीं जानती, जो मिल जाता है, ले आती हूँ।

ऐसा लगा कि उस औरत से इस प्रश्न का हल नहीं मिलने का।

भूतनाथ ने ठाकुर से कहा—सुनो, तुम मालिक से कह दो, सामान बढ़ा दें। जो आता है, उससे सबका पेट नहीं भरता। दिन-भर की मिहनत-मशक्कत—भोजन भी न मिले तो काम कैसे बनेगा—आखिर तुम्हें भी तो फाके की नौबत आएगी।

ठाकुर ने कहा—बात तो ठीक है बाबू, मगर मैं मालिक से यह न कह सकूँगा।

—कह क्यों नहीं सकोगे, किसको खाना मिलता है, किसको नहीं, यह देखना आखिर तुम्हारा ही तो काम है।

ठाकुर से पता चला, फिहरिस्त देखकर हिसाब से जबा एक ही बार सारा सामान भण्डार से निकालकर दे देती है। घर के लोगों के अलावा, दाई, नौकर, किरानी, गाय-घोड़ा-चिड़िया—सबका सामान निकाल देती है। यहाँ तक कि नौकरों का तम्बाकू भी। सब नाप-जोखकर। कम क्यों होने लगा?

इस बात के लिए सुविनय बाबू जैसे सज्जन को तंग करना कैसा तो लगा। ब्रजराखाल को कहा जा सकता है। मगर वह भी क्या सोचेगा? ऐसा न हो कि अन्त तक सारे रास्ते ही बन्द हो जाएँ। इस मुसीबत से मिली नौकरी।

लौटने पर ब्रजराखाल ने पूछा—क्यों भाई साहब, हाल क्या हैं तुम्हारी नौकरी के—तकलीफ तो नहीं कोई?

—नहीं-नहीं, तकलीफ क्या! खोलकर कहते जुबान रुक जाती। आखिर एक दिन कही बैठा वह। कहा—आज ज़रा ज्यादा पकाना।

—क्यों, पेट नहीं भरता है शायद?

—भरता है।

—फिर ?

भूतनाथ बोला—आज जरा सवेरे ही खाना हो गया। भूख ज़ोरों की लगी है।

फूफी की तरह सामने बैठकर उसे खिलाये भी कौन अब ! फूफी तो कपड़ा हटाकर पेट देख लेती, तब छुट्टी देती। ज़रा-सा दूध ले-ले बेटे ! नई गाय का दूध दे गई है ग्वालिन। कित्ती मलाई पड़ी है, देखो ! मलाई भर तो लो। अचार ला देती हूँ। अब उतना-सा चावल क्या छोड़ रहे हो ! कटहल ला देती हूँ—कितना जतन, कितना प्यार !

साँझ को अपने कमरे मे भूतनाथ पिछली बातें बिसूरता। ब्रजराखाल लड़कों को पढ़ाने गया होता। दायें वाले मकान के बरामदे पर कोई न होता। इब्राहिम कोचवान और यासीन सईस, दोनो गाड़ी लेकर जा चुके होते। कमरे के अन्दर टिमटिमाती होती बत्ती। बुरकावाली दो-एक बुतें कभी-कभी छत पर दिखाई पड़ जाती। दक्खिन तरफ से उड़-उड़कर आती दासू मेहनत के ढोल पर चोटों की आवाज़। उत्तर तरफ सदर दरवाज़े के दोनो ओर रेंडी के तेल की बत्तियाँ—झक-मक। इस वक्त बिरिजसिंह की ड्यूटी नही रहती—बन्दूक लिए कभी खड़े-खड़े कभी बैठकर पहरा देता नत्थूसिंह।

बायाँ तबला लेकर भूतनाथ बैठ गया। शाम को अकेले-अकेले करे भी क्या ? पहले धीरे-धीरे फिर लय में मस्त हो जाने पर कहीं की सुध-बुध नहीं। चाँदनी रात होती तो खिड़की में से छनकर दूधिया रोशनी अन्दर आती। बगीचे के फूलों की खुशबू से कमरा मह-मह। उधर छोटे बाबू की तरफ महफिल जम जाती। तबले पर रह-रहकर पड़ती थाप। तानपूरे के सुर मे तबले का घाट मिला लिया जाता। कभी महफिल शुरू होती खयाल से, कभी नही भी होती। लेकिन बैठक जमती ठुमरी या टप्पा से। यह लेकिन ज्यादा रात जगने पर सुनने मे आता। कभी-कभी और ज्यादा जग जाने पर मझले बाबू की गाड़ी के आने का पता चलता। सभी सो चुके होते। दूर से ही इब्राहिम घण्टी बजाता आता। गाड़ी की चाल धीमी होती जाती। बिरिजसिंह गेट खोल देता। गाड़ी खजांचीखाना और बैठक के बीच खड़ी हो जाती। मझले बाबू का नौकर दौड़ा-दौड़ा नीचे आता। दरवाज़ा खोलता। पकड़कर लिवा जाना पड़ता उन्हें। कभी-कभी बेतरह डगमगाते पाँव। [illegible] के कन्धे का सहारा लेकर चलते। महल में नहीं जाते। बाहर के ही [illegible] पर तकिया लगाकर सो रहते। भूले-भटके कभी मझली बहू के [illegible] मगर उनकी नींद ऐसी गजब की, कि सो जाने पर किसकी [illegible]

बंसी कहता, दरवाज़े पर बाबू ज़ोर-ज़ोर से लात [illegible] उनकी दाईं गिरि बेखबर।

किसी कदर गिरि की नींद टूटती। लम्बा घूँघट काढ़कर वह दरवाज़ा खोल देती और अपना बिस्तर समेटकर बाहर आकर सो रहती।

छोटे बाबू और भी ज्यादा रात करके लौटते—लगभग रात खत्म होने पर। उस समय कोई जगा नहीं रहता। किसी को पता भी नहीं चलता। बिरिज-सिंह ऊँघता। गेट के सामने लैंडोलेट के दोनों उजले घोड़ों की टाप। घंटी। अन्दर जगे छोटे बाबू। बोलते कम। गाड़ी आकर खड़ी होतीं। बंशी दरवाजा खोल देता। कमरे की रोशनी जला देता। कुरता, जूता उतार देता। हीरे की अँगूठी खोल देता। दूसरी धुली धोती देता। उसी को पहनकर सोते।

बंशी की जुबानी यह सब मालूम हुआ। प्रायः यही होता।

लेकिन भूतनाथ वाले घर की छत पर जाया जाए, तो नजर आए कि अन्दर महल की सारी बत्तियाँ गुल हैं। बहुतों के कमरों के बाहर बरामदे पर धीमी-धीमी जलती है झाड़ की बत्ती। छोटी बहू के कमरे में सबसे तेज बत्ती।

बंशी कहता—छोटी मालकिन तो सोती नहीं। लगभग तमाम रात जगी रहती हैं।

भूतनाथ पूछता है—सोती नहीं, तो करती क्या हैं?

—छोटी मालकिन लिखना-पढ़ना जानती हैं, सो या तो किताबें पढ़ती रहती हैं या चिन्ता से बैठ कर बातें करती हैं या गुड़ियों के कपड़े सीती हैं। चिन्ता की गुड़ियों से उनकी गुड़ियों का ब्याह होता है। हमें चकाचक खाने को मिलता है। या फिर यशोदादुलाल की पूजा करती हैं।

—रात-भर? भूतनाथ पूछता।

—जी हाँ, कभी-कभी रात-भर।

छोटे बाबू के लौटने की खबर मिलने पर उनके कमरे की बत्ती बुझती है। चिन्ता कमरे को अन्दर से बन्द कर लेती है और फर्श पर उनके पास सो जाती है। ये घटनाएँ बहुत दिनों की हैं, पर तीज के चाँद की तरह आज भी सारा कुछ अंकित है उसके मन में।

मोहिनी सिन्दूर कार्यालय में कदम रखते ही खाने की बात पर कैसी तो नफरत हो आती भूतनाथ को। जरा खाऊ आदमी वह है। शुरू से ही अच्छी चीज़ों पर लोभ। ब्रजराखाल का वैष्णवी भोजन वैसा जँचता नहीं। फिर उस बेचारे को अपने हाथों ही पकाना पड़ता। बाज़ार करने तक की तो फुरसत नहीं मिलती। और वह सदा रिपुओं को दबाने में ही परेशान। काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य—एक को भी तरजीह देने को तैयार नहीं। साधना की राह में बाधा है ये।

लेकिन कालीघाट में बलि चढ़ाने के लिए जिस दिन पीछे के बगीचे में लाया हुआ बकरा बांधा जाता—रात-दिन किस बुरी तरह चीखता रहता वह। उफ्! कभी-कभी रसोई की आबरू पार करके मांस और गरम मसाले की तीखी बू

आती। तमाम घर उस गन्ध से गमगमा उठता।

व्रजराखाल को भी बू लगती। धोती के छोर से वह अपनी नाक दबाता। कहता, किया तंग कम्बख्तों ने!

भूतनाथ कहता—अच्छी नहीं लगती यह गन्ध तुम्हें, क्यों? प्याज, लहसुन···।

व्रजराखाल कहता—रखो भी अपने प्याज-लहसुन को, इतना मसाला कहीं शरीर के लिए ठीक होता है? यह सब तामसिक भोजन···तमोगुण बढ़ाता है···।

भूतनाथ के लिए लोभ सँभालना कठिन नहीं पड़ता किन्तु। व्रजराखाल कहता, रात का खाना तुम्हारे मन मुताबिक नहीं होता, मगर दिन को सुविनय बाबू के यहाँ तो अच्छा ही खाते होंगे।

कुछ कहते लेकिन भूतनाथ को संकोच होता।

उस दिन सुबह अपने दफ्तर जा रहा था कि वंशी ने उसे पुकारा—साले साहब!

धोती-कुरता पहन चुका था वह। जूते पैरों में डालकर बस निकला।

वंशी ने बाहर से फिर आवाज दी—साले साहब!

—क्या है वंशी?

भूतनाथ बाहर निकला कि वंशी उसके करीब आ गया। चारों ओर एक बार देख लिया और धीरे-धीरे बोला—आपसे कुछ कहना है।

—मुझसे? क्या कहना है वंशी? उत्कण्ठा हुई।

आगा-पीछा करके वह बोला—आपको छोटी मालकिन ने जरा बुलाया है।

—छोटी मालकिन? छोटी मालकिन कौन? छोटी मालकिन यहाँ एक ही तो थीं। फिर भी पता नहीं क्यों, भूतनाथ ने पूछा—छोटी मालकिन कौन?

—जी, छोटे बाबू की स्त्री। इस घर की छोटी बहू।

भूतनाथ ने साफ सुना, पर यकीन न हुआ। पूछा—मुझे या मास्टर साहब को?

—जी आपको। मैंने ठीक सुना है।

इतने लोगों के होते छोटी बहू उसे क्यों बुलायेंगी, यह भूतनाथ समझ नहीं सका। ऐसा परदा। इतने दिन हो गए रहते हुए, घर की किसी बहू को देखने का सौभाग्य नहीं हुआ कभी। जिधर देखो, झिलमिली, परदा, चिक। बाहरी लोगों का घर में प्रवेश तक निषेध। और उसी घर की बहू बुला रही है उसे! अजीब बात! लोगों से छोटी बहू का जिक्र जरूर सुनता रहा है। उन बातों से इनके बारे में थोड़ी-बहुत धारणा भी हुई है। लेकिन एक बाहरी आदमी को बुलाकर छोटी बहू मिलना चाहती हैं, यह कैसी बात! यह घर भी तो [illegible]
वे लोग ब्रह्मसमाजी हैं। जवामयी भूतना···

शायद कोई एतराज़ नहीं—लेकिन बड़े घर की छोटी बहू···।

भूतनाथ ने पूछा—छोटी मालकिन ने कुछ कारण भी बताया है ?

—जी नहीं तो।

क्या जवाब दे, भूतनाथ सोच नहीं सका। जाने से पहले ब्रजराखाल से पूछ लेना चाहिए।

वंशी ने कहा—तो शाम को मैं आपको बुला ले जाऊंगा, क्यों ?

'अच्छा' कहकर भूतनाथ चला गया।

ठीक समय पर उस रोज़ भी ठाकुर ने बुलाया—बाबू रसोई तैयार।

उस रोज़ खास कोई गड़बड़ी न हुई। पत्तल पर सब्ज़ी भी आई थोड़ी-सी। इधर कई रोज़ से जैसा बर्ताव कर रहा था वह, कम-से-कम आज वैसा न था। भूतनाथ मन-ही-मन थोड़ा शर्मिन्दा हुआ। शायद बेचारे ठाकुर का कोई हाथ न हो उसमें। जवा ही सामान कम देती होगी। उसके मिज़ाज का परिचय तो पहले ही दिन उसे मिल चुका था। बाप-मां, फूफी—इन्हीं का दिया हुआ तो रहता है नाम सबका। खुद जवा का नाम भी तो उसके काली भक्त दादा ने रखा था। अपने नाम के लिए हर किसी को दूसरे पर ही निर्भर करना पड़ता है। फिर भूतनाथ, नाम में हँसने लायक क्या है ऐसा ? सृष्टिस्थिति और प्रलय के देवता का एक नाम है। स्वयं सुविनय बाबू के पिताजी का नाम है राम हरि। रामहरि भट्टाचार्य। सो।

उस रोज़ सुविनय बाबू ने किस्सा कहना शुरू किया—शुरू दिन दीक्षा जो ली, क्या बताऊँ भूतनाथ बाबू, सुन ही लीजिए।

जवा उनके पके बाल बीन रही थी। बोली—यह किस्सा मैं कोई दस बार सुन चुकी हूँ बाबूजी !

—तुमने सुना है, मगर भूतनाथ बाबू ने तो नहीं सुना क्यों ? ? जवाब का इन्तज़ार किये बिना ही बोल उठे—और अच्छी बात दस बार सुनना भी अच्छा—सुविनय बाबू ने शुरू कर दी कहानी।

मोहिनी सिन्दूर का यह कारोबार मेरे पिताजी का किया हुआ है। वे कट्टर हिन्दू थे। काली के पक्के भक्त। याद आता है, घर की काली प्रतिमा के सामने बैठकर वे घण्टों ध्यान करते—त्वमेकं जगत् कारणं विश्वरूपं—जाप करते-करते ध्यान में ही उन्हें यह मन्त्र मिला था। उसी-मन्त्र से चला यह मोहिनी सिन्दूर। बेहद गरीब थे पिताजी, पूजा-पाठ लिए पड़े रहते थे, शायद उसी गरीबी से पिघलकर मां काली ने मन्त्र का यह सहारा दिया ताकि गिरस्ती की यह चर-मराती गाड़ी चल सके, हमें दो मुट्ठी अनाज मयस्सर हो। छुटपन में पिताजी हमें सिखाया करते थे, खूब याद है—बेटे, तुम्हारी जात ? फिर खुद ही कहते, कहो, हम ब्राह्मण हैं।

फिर पूछते—किस श्रेणी के ब्राह्मण ? और खुद ही फिर जवाब देते, बोलो, दाक्षिणात्य वैदिक श्रेणी का ब्राह्मण। रोज पुरखों के नाम रटाया करते।

—तुम्हारा नाम ?

—तुम्हारे पिता का नाम ?

—तुम्हारे पिता के पिता का नाम ?

दादा, परदादा, उनके पिता-दादा सबका नाम रटाते। आँखें बन्द करने पर आज भी देख पाता हूँ उन्हें, समझ गए भूतनाथ बाबू। याद है, बचपन में हुक्का-चिलम से खेलना मुझे भाता था। दिन-भर दस-बारह चिलम तोड़ डालता। और पिताजी रोज मेरे लिए अपने हाथ से मिट्टी के चिलम बनाकर आग मे पकाया करते थे। उस जमाने में चिलम पैसे के आठ मिलते। मगर इतनी भी जुर्रत न थी कि चिलम खरीदें।

समय ने पलटा खाया। मोहिनी सिन्दूर की कृपा से मिट्टी का घर पक्का बना, दुमंजिला हुआ, माँ के बदन पर जेवर आया—। मैं पढ़ने के लिए कलकत्ता पहुँचा। पढ़ना ही मेरा काल बन गया। मैंने सदा के लिए अपने पिताजी को खो दिया—कहते-कहते सहसा रुक गए वे।

जवा ने कहा—थम क्यों गए, कहिए ?

सुविनय बाबू उसी तरह आँखें बन्द किए सिर हिलाने लगे—उँहूँ, नहीं कहूँगा, मेरी कहानी तुम लोगों को अच्छी नहीं लगती।

—अच्छी लगती है बाबूजी, खूब अच्छी लगती है—कहिए न आप—नेह से वह पिता की देह पर लोट पड़ी।

—आपको अच्छी लगती है ? उन्होंने भूतनाथ की तरफ ताका। भूतनाथ बोला—आप मुझे आप कहते हैं, मैं शरम से गड़ जाता हूँ।

—खैर, अब से न कहूँगा—हाँ, तुम जरा खिड़की से झाँककर देख तो लो बिटिया, तुम्हारी माँ खा चुकी कि नहीं।

जवा चली गई।

सुविनय बाबू कहने लगे—डायमण्ड हारबर में जिस साल आँधी आई थी, उसी साल मैं पैदा हुआ—१८३३ साल होगा शायद। कयामत की आँधी। कलकत्ते में वही पहला प्लेग शुरू हुआ। आँधी के लग्न मे पैदा हुआ, आँधी-सी ही गुजर गई सारी जिन्दगी—मैंने दीक्षा ली, जनेऊ उतार फेंका। खत में पिताजी को [illegible] कुछ लिखा। वे तुरन्त आ धमके। मुझे लिवा गए और बन्द कर दिया। [illegible] मैं उस कैद से निकल ही न पाया।

जवा ने आकर बताया—माँ ने खाना नहीं खाया है—[illegible] [illegible]ऊँगा, कह रही हैं।

—अच्छा तो बेटे, मैं जरा उन्हें खिला आऊँ। [illegible]

हर्गिज नहीं मानेंगी।

भूतनाथ की आँखों में अचरज देखकर बोले—कल से उनकी बीमारी फिर बढ़ गई है, कभी-कभी तो बहुत ही ठीक रहती है···लेकिन फिर···।

सुविनय बाबू चल दिए। कह गए, तुम बैठो बिटिया, भूतनाथ बाबू से बातें करो, मैं इतने में उन्हें खिला आऊँ—

भूतनाथ कैसा तो सकपका गया। फिर भी उसने बोलने की कोशिश की। पूछा—तुम्हारी माँ की यह बीमारी कितने दिनों की है ?

जवा सिर झुकाए बैठी थी। भूतनाथ की तरफ आड़े से ताका। बोली—आप मुझसे बात कर रहे हैं।

—क्यों ? अवाक् हो गया भूतनाथ। क्यों ? जवा से बात न करने की कोई शर्त थी क्या ?

—कहीं मैं फिर हँस पड़ूँ ? पता है आपको, उस दिन सुनीति-क्लास में पिताजी ने शिकायत कर दी।

—सुनीति-क्लास ? यह फिर कहाँ है ?

—नहीं मालूम आपको ? जहाँ हर इतवार को जाया करती हूँ मैं।

इस हफ्ते में और सबकी रिपोर्ट तो ठीक रही, सुजाता, स्मृति दीदी को very good मिला, सरला, सुवल, ननीगोपाल···

—ननीगोपाल ? यह कौन ? कैसी शकल है बताओ तो जरा ? वह उद्ग्रीव हो उठा। कहीं वही ननीगोपाल हो।

—पहचानते हैं क्या उसको आप ? नम्बरी शरारती है। माँ या बाबूजी मुझे पैसे देते हैं। छीन लेता है वह। सिर्फ लेमनचूस खाता है। कहीं मालूम हो गया मिस पिग्ट को, तो खैरियत नहीं, नाम काट देंगी।

भूतनाथ ने कहा, तुम्हारे क्लास में कभी जाऊँगा। देखूँगा, वही है या और कोई।

—आपको वहाँ जाने की इजाजत क्यों मिलेगी ?

—तुम कहना, मेरे भैया हैं।

—आप तो हिन्दू हैं। मेरे भैया कैसे होंगे ! वहाँ तो सिर्फ ब्राह्मणों को ही जाने की इजाजत है।

—क्या सिखाया जाता है ?

—नीति। सच बोलो, गुरुजनों की भक्ति करो, परमेश्वर की उपासना करो और ब्रह्मसंगीत।

—तुम्हारा गीत मुझे बहुत अच्छा लगता है—उस रोज सुना था।

—मैं खाना भी पका सकती हूँ। जन्मदिन की जिस दिन दावत थी, मुर्गी पकाई थी···सब···।

—तुम लोग मुर्गी खाती हो ?

—रोज खाती हूँ।

—पकाता कौन है ?

—ठाकुर, रसोइया जो है—

—वह तो हिन्दू है—

—उससे क्या ? आप मुर्गी नही खाते ? पिताजी कहते हैं, मुर्गी खाने से तन्दुरुस्ती ठीक रहती है।

भूतनाथ को घिन हो आई। मगर उपाय क्या था, नौकरी सलामत रखनी हो तो इन जुल्मो को सहना ही पड़ेगा। भूतनाथ ने पूछा—अच्छा भण्डार से रोज़ सामान कौन दिया करता है ?

—मैं देती हूँ। क्यों ? माँ के ही समय से सारा कुछ बँधा है। उसी हिसाब से निकाल देती हूँ मैं। पहले खुद माँ दिया करती थीं। मेरे भाई के मर जाने के बाद से उनकी तबीयत खराब रहने लगी। तब से यह जिम्मेदारी मुझ पर आई। मगर आप पूछ क्यों रहे हैं यह ?

जवाब दे या न दे, भूतनाथ इसी उधेड़-बुन मे था कि सुविनय बाबू आ पहुँचे। बोले—तुम्हारी माँ को मैं सुला आया—खैर, मैं कह रहा था भूतनाथ बाबू··· कहानी फिर शुरू हो गई। पुराने दिनों की बात। आँधी के लगन की पैदाइश। कमरे में बैठा रहता। आस-पास की औरतें खिडकी से उझककर झाँका करतीं कि कैसा अजीबोगरीब जीव है यह ! जनेऊ उतार फेंका, धरम को छोड़ दिया। कोई-कोई माँ से पूछती—हाँ माँजी, बात करते हैं ये ? मुझे मुरमुरे खाते देख सब दंग रह जातीं—अरे, यह तो हम लोगों ही जैसा खाता है।

खाने बैठा, तो भूतनाथ को यही बातें याद आने लगीं। हाथ-मुँह धोकर जब वह जाने लगा, तो ठाकुर सामने आया। बाबू···

—कहो।

ठाकुर की दोनों आँखें अंगारे-सी सुलग रही थीं। लाल। देखकर डर होता। गाँजा-वाँजा तो नहीं पीता ?

भूतनाथ को एक बार एड़ी से चोटी तक देखकर वह बोला, आपने बाबू से मेरी शिकायत की है ?

—शिकायत ! अवाक् रह गया भूतनाथ।

—हाँ, शिकायत ! मगर यह भी गाँठ बाँध रखिए, हम लोगों से आपका यह रवैया रहा तो आप यहाँ टिक नहीं सकेंगे।

—कह क्या रहे हो तुम, ठाकुर ?

—ठीक कह रहा हूँ। आप-जैसे कितने किरानियों को देखा। भला

हैं तो समझ-बूझकर चलें—और हनहनाता हुआ ठाकुर चला गया।

मिनट-भर का वाक़या। घबराहट हुई ज़रा। मगर वह पल-भर में पल्ला झाड़कर खड़ा हो गया। आखिर उपाय क्या है ? मेज़ पर जाकर काम करने लगा। नौकरी के लिए ही आज उसे सारा अपमान पी जाना पड़ा।

अचानक सुविनय बाबू कमरे में दाखिल हुए।

चार आंखें होगई। कुशल-क्षेम पूछकर ही वे जाने लगे। भूतनाथ पीछे हो लिया—सर, आपसे कुछ कहना है।

वे ठिठक गए। ऐसा तो कहा नहीं भूतनाथ ने कभी ! पूछा—खूब जरूरी बात है ? ऐसे घबराये-से क्यों ?

—जी, मैं कल से यहां भोजन न करूँगा। मेरे हिस्से का सामान देना बन्द कर दें···।

भूतनाथ को महज़ एक बार देख लिया उन्होंने। बोले—नहीं। मूंछ-दाढ़ी में उनके चेहरे का परिवर्तन देखा नहीं जा सका। 'अच्छा' कहकर वे जीने से ऊपर चले गए।

मेज़ पर आ. बैठा भूतनाथ। जी उचट गया काम से। उसके बाद फिर व्रजराखाल का सहारा। उसे मुक्ति न दे सका। किसी दूसरी नौकरी की तलाश करनी पड़ेगी। व्रजराखाल भी कोशिश करे, मैं भी करूँ। फिर होना होगा सो होगा।

दफ्तर से निकलने के पहले ही बुलाहट हुई। फलाहारी पाठक ने आकर कहा—मालिक आपको याद कर रहे हैं।

पूछा—बात क्या है ?

फलाहारी ने कहा—आप अपनी ही आंखों देखें जाकर।

वह चला। ऊपर न जाना पड़ा। रसोई में से ही सुविनय बाबू की आवाज़ आ रही थी। देखकर भूतनाथ और भी दंग रह गया कि बगल में उनके जवा भी खड़ी थी। गरजकर कह रहे थे—बस, फ़ौरन चला जा यहां से, तुरत···।

ठाकुर सामने खड़ा-खड़ा कांप रहा था।

सुविनय बाबू फिर गरज उठे—अब घड़ी-भर को भी तेरे लिए यहां जगह नहीं—अभी, अभी, तुरत निकल···।

इतने में भूतनाथ पर उनकी नज़र पड़ी। कहा—भूतनाथ, कहो तो, ठाकुर ने तुमसे क्या कहा ? यहां आओ, सामने।

भूतनाथ किंकर्त्तव्यविमूढ़-सा हो गया। सुविनय बाबू की यह मूर्ति इसके पहले उसने कभी नहीं देखी। कहा—जी, ठाकुर ने ऐसी कोई बात तो नहीं कही··· आप···।

जूता समेत पांव को जोर से ज़मीन पर ठोंकते हुए वे बोले—आह, जो

बोला है, वही बताओ। फिजूल की बात मैं नहीं सुनना चाहता।

—जी, उसने महज इतना कहा कि अगर उसके साथ मेरा ऐसा रवैया रहा, तो मैं यहाँ टिक न सकूँगा, बस अपमान नहीं किया है।

सुविनय बाबू बोले— तो उसने कहने को बाकी ही क्या रखा ? और क्या, दो जूते लगाता तुम्हें ? ठाकुर की तरफ पलटकर बोले—तू यहाँ से चला जा। तेरी नौकरी गई। यहाँ तेरी न बन सकी···गांव में भी तू टिक सकेगा या नहीं, यह बात मैं फिर सोचूंगा···।

जो कहा, वही हुआ। तुरत ठाकुर को अपने कपड़े-लत्तों की पोटली दबाए चोर की तरह दूसरे दरवाजे से चल देना पड़ा।

इस वारदात से कैसा तो मायूस हो गया भूतनाथ। सुविनय बाबू ने कहा था, तुम जवानों की यह पीढ़ी बड़ी दब्बू है भूतनाथ, इसीलिए जो चाहता है, वही तुम्हारी तौहीन करता है। एक तरफ तो तुम लोगों ने गुण्डों के डर से औरतों को परदे में छिपा रखा है, और दूसरी तरफ गोरों के डर से तेंतीस करोड़ लोगों ने देश को गुलाम बना रखा है—तुम लोगों को चुल्लू-भर पानी नहीं जुटता डूब मरने को।

भूतनाथ को उनसे ऐसी बातों की उम्मीद नहीं थी। वह सकपकाकर बोला—मैं लेकिन समझ नहीं सका···।

सुविनय बाबू और भी बिगड़ उठे—यानी तुम यह कहना चाहते हो कि बिटिया ने झूठ कहा है।

जवा पर भूतनाथ की निगाह पड़ते ही वह बोल उठी—मैंने अपने कानों सुना है भूतनाथ बाबू, आप बताएँ तो सही कि उसने धमकी दी थी कि नहीं ?

भूतनाथ बोला—उसकी वजह और थी।

—कौन-सी वजह, कहें—जवा जवाब का इन्तजार करने लगी।

क्या कहे, कुछ समझ न सका भूतनाथ। कुछ सोचकर बोला—ठाकुर कह रहा था कि मैंने आपसे यह शिकायत की है कि मुझे भरपेट खाने को नहीं मिलता।

सुविनय बाबू बोले—मैं भी वही कहना चाहता हूँ, तुमने आखिर इतने दिनों तक यह बात कही क्यों नहीं ?

जवा ने कहा—शायद इनका यह खयाल था कि मैं कम सामान दिया करती हूँ।

सुविनय बाबू ने पूछा—क्यों, भूतनाथ ?

जवा पहले ही टपक पड़ी—असल में भूतनाथ बाबू वैसे आदमी नहीं हैं, जैसा कि आपने सोचा था। ब्रजराखाल बाबू ने कहा था सीधा-सादा-सा है, अब समझिए मजा—भला आपको कम खाने को दूँ, ऐसी इच्छा मेरी क्यों हो ? आपसे वास्ता मुझे ? आप अपना काम करेंगे, तनखा लेंगे, खाएँगे। कोई कोर-कसर हो शिकायत करें।

—क्या कहती है जवा ? तुमने अब तक शिकायत क्यों नहीं की ?

जवा उसी रुखाई से कहती चली गई—दरअसल, ठाकुर के कहे को ही लाह की लकीर समझ बैठे थे वे और मुझी को चोर समझ बैठे थे। पूछ देखें आप, है या नहीं !

—भूतनाथ बाबू, यही बात है ?

जवा बोली—गनीमत कहिए कि अपने कानों सुना मैंने। आवेश में जवा जाने और क्या-क्या कह गई। ले-देकर बात यहाँ तक आई, मानो कसूरवार भूतनाथ ही है। सारी साज़िश उसी की है। बाप-बेटी मिलकर गोया उसी मुजरिम का फ़ैसला करने लगे हैं। उसका दिमाग़ जैसे चकराने लगा।

जब होश-सा आया तो सुविनय बाबू की बातें कानों में पहुँचीं। कह रहे थे, अन्याय करने वालों का अपराध जितना है, चुपचाप उसे बरदाश्त करने वालों का अपराध क्या उससे कम है ? सुरेन बनर्जी की सोच देखो, बेकसूर ही नौकरी गई। गोरों के जुल्मों की सोचो, गाँठ के पैसे देने पर भी साहबों के साथ में रेल पर सफर करना गुनाह, सच कहो तो राजद्रोह ! जूतों की ठोकरों से पेट फट भी जाए, तो चाय-बगान के कुलियों का चूं करना जुर्म—यों कब तक बर्दाश्त करते रहोगे भूतनाथ बाबू ? एक ओर कट्टर-पन्थियों का जुल्म, विलायत गये, मुरगी खाई कि जात गई। और इधर साहबों की लात—हम तो पके आम हैं—तुम्हीं नौजवानों का भरोसा है।

खोया-खोया-सा भूतनाथ कब चल पड़ा, पता नहीं। गोल दीघी के पास खुली हवा के लगने से उसकी नसें सजीव हो आईं। उसे लगा जरा देर पहले किसी ने उसे भरपूर बेंत लगाए हैं। बदन में अभी भी दर्द था। आते वक्त सुविनय बाबू से वह कुछ कह भी नहीं आया। सफाई दे सकता था या माफी माँग सकता था। वास्तव में जवा को नीचा दिखाने की उसकी नीयत नहीं थी।

वह फिर लौट पड़ा। चारों ओर अँधेरा हो चुका था। हो अँधेरा, जाकर उसे माफी माँग ही लेनी है।

पास ही थी शराब की दुकान। तीखी गन्ध लगी। बाहर-भीतर भीड़। ज़मीन पर ही कुल्हड़ लिये लोग जम गए थे। धुंधलके में भी वह चौंका—अरे ठाकुर !

गौर करने की हिम्मत न पड़ी। अभी-अभी इसकी नौकरी छूटी और अब पहुँचा भट्टी में। वह जल्दी से आगे बढ़ा। ठाकुर की निगाह न पड़े, वही ठीक।

आधे घण्टे में अपने दफ्तर पहुँचा। सदर दरवाज़ा बन्द हो चुका था। दरबान ने खोल दिया। पूछा—फिर लौट आए ?

भूतनाथ ने पूछा—बाबू कहाँ हैं ?

—ऊपर।

ऊपर गया। बड़े कमरे में कोई न था। इधर-उधर देखा। ऊपर जाए कि न जाए, इसी उधेड़-बुन में था कि हाबू की माँ मिल गई—कहा, बाबू मालकिन को खिला रहे हैं।

—और दीदीजी?

—नीचे हैं। रसोई में।

वह बेरंग नीचे उतरा और सीधे रसोई में पहुँचा। वह रसोई कर रही थी, चार जने उसे मदद दे रहे थे। घर के और लोगों के लिए यह नजारा कुछ नया न था, मगर भूतनाथ को अजीब लगा। वह पीछे से कुछ देर तक जवा को देखता रहा। उसे लगा, घर की मालकिन तो यही है।

घूमकर कुछ लेने जा रही थी कि जवा की नजर पड़ी। अवाक् रह गई। अरे आप फिर लौट आए? बाबूजी ऊपर हैं—

पहले तो भूतनाथ काठ का मारा-सा रहा, फिर बोला—तुमसे ही कुछ कहना था। सच ही, मुझसे कसूर बन पड़ा है। पिताजी से कहना, मुझे माफ कर देंगे।

जवा हँस पड़ी। ताज्जुब। यही कहने के लिए आप लौटे? भूतनाथ को जवाब न सूझा।

जवा ज़ोरों से हँस पड़ी। बोली—जिन्होंने आपका नाम रखा था, उनकी सूझ की तारीफ करती हूँ मैं। फिर जरा रुककर बोली—मगर क्यों? आप क्षमा क्यों माँग रहे हैं?

भूतनाथ कुछ आगा-पीछा करके बोला—आखिर मेरी ही वजह से तो तुम्हें रसोई की बला उठानी पड़ी······ठाकुर को ··।

जवा ने कहा—रसोई से मैं डरती नहीं हूँ—बाबूजी जिस-तिस का पकाया खाते नहीं, मगर ठाकुर अपने ही गाँव का था इसलिए···मगर मैं और ही कुछ सोच रही हूँ, आप खूब डर गए हैं, है न?

भूतनाथ समझ न सका। बोला—डर कैसा?

—जात गँवाने का।

—क्यों?

—क्योंकि अब से तो मैं ही पकाया करूँगी। भूल क्यों जाते हैं आप, मैं तो म्लेच्छ हूँ।

सोचने की बात थी। भूतनाथ जवाब न दे सका।

जवा ने कहा—आज जाकर तमाम रात पहले इसी को सोच देखें, फिर कल जो कहेंगे, वही इन्तजाम करूँगी। रात हो गई। अभी बल्कि आप जाएँ—और उसने चूल्हे पर दूसरा बर्तन चढ़ा दिया।

निर्बोध-सा वह चला जा रहा था। जवा ने शायद पुकारा, सुनिए।

वह लौट पड़ा।

जवा ने कहा—बैजू को साथ ले जाइए। रास्ता इधर का अच्छा नहीं है। पहुँचा आएगा आपको।

भूतनाथ ने जवा की आँखों को देखा। बात में व्यंग्य-सा था। लेकिन अँधेरे में उसका चेहरा दीखा नहीं।

वक्त बर्बाद न करके वह निकल पड़ा। नाहक ही फिर लौटा था वह। माफी भी किससे माँगी! किसे पता है, किस समाज के लोग हैं ये! राधा, अन्ना, हरिदासी—इनमें से कोई तो ऐसा नहीं कहती थीं। शहर की लड़कियाँ ही क्या ऐसी होती हैं? या सिर्फ ब्रह्मसमाज की लड़कियाँ ऐसी होती हैं!

जाते-जाते भूतनाथ बोला—किसी के साथ जाने की ज़रूरत नहीं। मैं औरत नहीं हूँ।

बनमाली सरकार लेन में जैसे ही वह मकान के पास पहुँचा कि नज़र पड़ते ही बिरिजसिंह ने आवाज़ दी—साले साहब, सुनिए।

भूतनाथ अवाक् रह गया। भला दरवान उसे क्यों पुकार रहा है! पूछा—क्यों भई, क्या बात है?

—आपको नन्हे बाबू बुला रहे हैं।

और भी अवाक् रह गया भूतनाथ। नन्हे बाबू! उन्होंने कैसे पहचाना! महल में उसे चीन्हता ही कौन है! शाम हुए सबके अजानते आता और सुबह निकल पड़ता दफ्तर को। किसी से जान-पहचान करने की हिम्मत भी न होती। हाँ, बंशी जब-तब आ जाता है। अपने ही मसलों से परेशान। उसी से उसने घर के और-और लोगों का नाम जाना है। नहाते वक्त भिस्तीखाने में किसी-किसी से बातें ज़रूर हुई हैं, मगर नाम को।

एक दिन भिस्तीखाने के पास से गुज़रते समय लोचन ने पकड़ा उसे कदम के फूल-जैसी काँटेदार दाढ़ी। गले में कंठी की दो लड़ी। ऐंचा-ताना। बुड्ढा आदमी।

उसे ऑफ़िस जाने की हड़बड़ी थी। किसी कदर दो लोटा पानी बदन पर उँडेलकर चल देना था। लेकिन पानी चुक गया था। श्यामसुन्दर पानी भर रहा था। सवेरे यहाँ वैसी भीड़ नहीं रहती। मालिक लोग देर से जगते, सो कामों का दबाव इस समय ज्यादा पड़ता।

लोचन ने उसे बुलाकर बेंच पर बिठाया। कहा, गुलाम का नाम लोचनदास है।

चारों तरफ हुक्का, गुड़गुड़ी और तम्बाकू। दीवारों पर नरचों की पाँत। रंगीन रेशमी काम। लोहे की सींक डालकर हुक्का साफ करते हुए लोचन ने कहा

—तम्बाकू की ख्वाहिश—।

यहाँ हर कोई उसे साले साहब के नाम से ही जानता और सुविनय बाबू के यहाँ किरानी बाबू के नाम से।

भूतनाथ बोला—मैं तम्बाकू नहीं पीता हूँ।

सुनकर लोचन जरा देर भूतनाथ को देखता रहा। बोला—लेकिन तम्बाकू शुरू करने की यही तो उम्र है। कर दीजिए शुरू, देर न कीजिए।

भूतनाथ अवाक्-सा हो रहा। भूषण चाचा तम्बाकू पीते थे। राधा के पिता भी पीते थे। और वलद के यात्रादल के छोटे-बड़े सभी कम-ज्यादा पीते थे तम्बाकू। कोई बिलकुल आमने-सामने—कोई छिपकर मल्लिक के यहाँ का तारा-पदो 'बर्ड्स आइ' पीता था। भूतनाथ ने एक बार यात्रा-घर में लगभग ठण्डे पड़े हुक्के में दम लगाया भी था। लेकिन तुरत पकड़ लिया गया था। बाहर से आ रहा था रसिक मास्टर। अन्दर आते ही बोल उठा—यह खाँस कौन रहा है?

भूतनाथ पर निगाह पड़ गई। बोला—ओ, यही शुरू किया है—शुरू में तो ऐसा ही होगा। जरा पानी पी लो। हिचकी बन्द हो जाएगी।

हिचकी के चलते फिर पीना न हो सका। बाद में आ गया कलकत्ते। यहाँ तो रात-दिन व्रजराखाल का साथ। व्रजराखाल को किसी भी नशे की आदत नहीं। सुविनय बाबू के यहाँ तो नाम भी नहीं, ब्रह्मसमाजी ठहरे। फलाहारी पाठक वगैरा बीड़ी जरूर पीते, लेकिन कारखाने के अन्दर नहीं। बाहर जाकर।

लोचन ने कहा—तेल लगा लेने के बाद खूब जमता है तम्बाकू। चढ़ा दूँ चिलम—और वह सचमुच ही चिलम भरने लगा। कहा—जो तम्बाकू मझले बाबू खाने के पहले पीते हैं, आपको वही दे रहा हूँ—देखिएगा, भूख लगेगी, रात को अच्छी नींद आएगी।

भूतनाथ बोला—यह आदत तो न ही लगाओ मुझे। गरीब आदमी ठहरा। आखिर···

लोचन ने कहा—इसमें लागत कहाँ लगती है आपको! ये आपके वैष्णव बाबू पीते हैं। घर में तम्बाकू नहीं रखते। रोज एक पैसा मुझे दे देते हैं और जो चाहे जितनी बार पी जाते हैं। उनका हुक्का मैं किसी को नहीं छूने देता हूँ।

चिलम भरते-भरते लोचन ने कहा—इस घर में किसी चीज़ का हिसाब तो नहीं है, बाबुओं को पचास तरह की लत है···इसी में जितनी देर के लिए घर रहते हैं उतनी देर में जितना पी सकें—नन्हे बाबू को देखा है न?

भूतनाथ बोला—क्यों नहीं, संगीत-गोष्ठी जो करते हैं।

—जी हाँ, उन्हें तो मैंने ही तम्बाकू की लत लगाई। सिगरेट पर झुकाव ज्यादा—दस पैसे की आती है डिब्बी और फबती भी है खूब। मैंने एक दिन बड़ी मालकिन से जाकर कहा—छोटे बाबू की अब उम्र हो रही है—तम्बाकू की

डाल दूं ? बड़ी मालकिन ने कहा—तम्बाकू की लत लगाओगे, इसमें मेरी इजाजत की क्या—।

बड़ी मालकिन जो हैं, जरा गम्भीर-सी हैं। मुन्ने के जन्म के बाद ही विधवा हो गईं—छः-पांच में नहीं रहतीं। और देखने में, छछात भगवती !

मैंने हँसकर कहा—भला यह भी हो सकता है मांजी, जब तक आप हैं, आपका हुक्म लिये बिना कुछ कर सकता हूँ मैं !

लोचन कहता गया—बस, हुक्के का कर दिया इन्तजाम। खजांची सरकार बाबू से जाकर कहा कि बड़ी मालकिन की इजाजत हो गई। चितपुर के नये बाजार से चाँदी की गुड़गुड़ी और नल लाई गई, बाम्हन देवता से दिन-तिथि निकलवाई। चिलम फूंकते हुए वह बोला—काशी के चिलम में जतन से तवा देकर भरा बाला-खाना तम्बाकू, दिया गुलाबजल उसमें—छोटे बाबू ने कश लगाया तो खिल पड़े, बेहद खुश हुए। न जरा भी खाँसी, न हिचकी। शायद आपको यकीन न आये—तुरत एक रुपया इनाम दिया और खजांची बाबू को मेरे लिए एक लँगोछे की फर-माइश कर दी।

इसके बाद कौड़ी बँधे एक हुक्के पर चिलम रखकर उसने भूतनाथ की तरफ बढ़ाया। यह हुक्का बाह्मनों का है, तारक बाबू, मोती बाबू, सब इसी में पीते हैं—

—भूतनाथ बोला—मुझे नाहक तंग करना, मैं नहीं पीता—

—भला यह कैसी बात है !

लोचन मायूस-सा हो गया। फिर इस तरह बोला, गोया एक बहुत बड़े मसले का हल निकाल लिया हो—गोली मारिए, आप न हो तो एक धेला ही दिया कीजिएगा रोज··जी चाहे जब पी जाया करियेगा। इस घर में आज जन-जन के होठों से हुक्का लगा देखते हैं न आप, यह इसी खाकसार की बदौलत, वरना हुक्के का नाम यहां से कब का मिट गया होता। और तम्बाकू का रिवाज ही न रहता तो इस गरीब की नौकरी कैसे बचती ! जिन्दगी-भर भरता रहा चिलम, अब इस उमर में मुसाहबी तो नहीं बन सकती।

भूतनाथ बोला—जमाने से यहां यही करते रहे हो, जवाब भी तुरत कैसे मिल सकता है ?

—सब-कुछ हो सकता है हुजूर ! सुनते हैं, बाबू लोग अब मोटर खरीदेंगे। फिर इब्राहिम की नौकरी कैसे बचेगी ! मैंने कभी यहीं पांच-पांच पालकियां देखी हैं। अभी जहां दासू जमादार रहता है, पालकी ढोने वाले कहार वहीं रहते थे। आज जाने कहाँ हैं वे ! बाबू लोग चुरट-सिगरेट पीना शुरू कर दें तो हुक्का कौन पिएगा भला !

लोचन और भी बोला—इसी उमर में क्या-क्या न देखा, घोड़े की ट्राम

थी, कल की ट्राम हो गई—कल की गाड़ी भी चलेगी···मगर सोचकर क्या करना, वह भी दिन शायद आए कि हुक्का कोई छुए ही नहीं···लेकिन ईश्वर करे, वैसा दिन आने के पहले ही उठ जाऊँ—लीजिए, सुलग गया···तो यही तै रहा—आप एक धेला ही दिया करेंगे—

लेकिन भूतनाथ को हुक्का लेने की नौबत न आई। बाधा पड़ गई—यही तो, भैरव बाबू आ गए।

लोचन जल्दी-जल्दी उनके लिए हुक्का लाने को अन्दर चला गया। भूतनाथ ने गौर किया, बेशक बाबू हैं भैरव बाबू। लहर खिलाए बाल, तिरछी माँग, काली कोर की महीन धोती, चमकती बनियान, गले में चुननवाली बारीक सूत की चादर, पैरों में बगलसवाला चीना बाजार का जूता—

हुक्का उनकी तरफ बढ़ाकर लोचन बोला—आज इतनी सवेरे!

—आज छेनी दत्त से कबूतरों की लड़ाई है। सुना नहीं तुमने? पिछली बार मझले बाबू ने शिकस्त खाई थी; अबकी पछाँह से कबूतर मँगवाया है, अब छेनी दत्त की ऐंठ तोड़ता हूँ, गेहूँ का दाना चुगाया जा रहा है कबूतर को। देख लेना तीन बार चक्कर खाकर छेनी दत्त का कबूतर टें बोल जाएगा। ठनठनिया का दत्त मझले बाबू की बराबरी करने चला है।

भैरव बाबू गुड़-गुड़ करके हुक्के में कश खींचने लगे।

लोचन ने कहा—एक बात पूछूँ हुजूर—

—क्या?

—सुना है, छेनी दत्त ने अपनी रखैल के लिए हाटखोला में पक्के का मकान बनवा दिया है—

—सुना तुमने ठीक ही है, मगर वह मकान तीन-तीन बार तो गिरवी रहा और अब उनकी रखैल सहित वह मल्लिकों के कब्जे में जा पड़ा है। इस महँगी में रखैल रखना छेनी दत्त के बस की बात नहीं। हाँ, इधर चुँचुड़ा के बगीचे में भी गया था क्या?

—जी नहीं।

—जाकर देख आना कभी। उस रोज खड़दा के रामलीला-मेले में मझले बाबू तीनों ही औरतों को लेकर गये थे। कनखियों से घूर रहा था छेनी दत्त। मझले बाबू ने मने कर दिया, नहीं तो साले को···

अचानक भूतनाथ पर नजर पड़ी। पूछा—यह कौन लोचन?

—जी, ये अपने मास्टर साहब के साले हैं। यहीं रहते हैं।

हुक्का पीना छोड़कर पूछा—अच्छा। क्यों भैया, नाम?

भूतनाथ बेंच पर से उठ खड़ा हुआ। बोला—भूतनाथ चक्रवर्ती।

घर?

—फतेपुर—नदिया।

—यहाँ ?

—मोहिनी-सिन्दूर कार्यालय में नौकरी करता हूँ।

—तनख्वाह क्या मिलती है ?

—नक़द सात रुपए और एक जून खाना।

—ऊपरी आमदनी, कुछ नहीं ? मुश्किल है तब तो, नशा-वशा करना हो तो कुछ ले-दे करना ही पड़ता है। कहूँ तो विश्वास न होगा लोचन, पहले एक बोतल का दाम था सिर्फ चार आना। क्या गांजा और क्या चरस, दाम बढ़ता जा रहा है। इस कदर दाम बढ़ेगा तो काम कैसे चलेगा ? लोचन ने कहा—तम्बाकू तो ये पीते ही नहीं, तो बोतल···

भैरव बाबू बोले—सो तम्बाकू पियो, न पियो,···नए-नए आये हो गाँव से, हितू की तरह सलाह दूँ कि वह पिया करो। नहीं तो इस लोने पानी से कहीं पेट बिगड़ा तो···भैरव बाबू ने कश खींचा। मझले बाबू तो पढ़े-लिखे आदमी हैं। वे तो झूठ न कहेंगे। उन्हीं से मैंने सुना है कि उस ज़माने के एक बहुत बड़े आदमी राम-मोहन रम पीया करते थे और बुला-बुलाकर लोगों को पिलाया करते थे। राज-नारायण बसु पीते थे, मधुसूदन दत्त पीते थे। राममोहन राय तो पीना सिखाने के गुरु ही थे। फिर एक कश खींचकर बोले—आज देखते हो न यह सेहत मेरी, पहले सींकिया पहलवान-सा था। मझले बाबू ने कहा—भई, पीना चाहिए तुम्हें। मैंने शुरू कर दिया और जो असर नीलू कविराज के सालसे का न हुआ था, वही पीने का हुआ। अब जो भी खा लेता हूँ, सब हजम। अगर यह चीज़ बुरी होती, तो ये कम्बख्त गोरे सात समन्दर तेरह नदी पार करके यहाँ राज्य कर सकते ?

बात पर विश्वास किये बिना उपाय क्या था ?

भैरव बाबू ने कहा—लोचन, ज़रा पता तो लगाओ कि मझले बाबू जगे या नहीं। जेब से ताँबे का एक पैसा निकालकर बोले—अपनी दस्तूरी ले लो तुम।

लोचन ने पैसों को टेंट में रख लिया।

उस रोज़ यहीं तक रहा। अब उसे इस घर के रवैये से अचरज नहीं होता। रविवार को छुट्टी रहती। उस रोज़ ब्रजराखाल सुबह ही बरा नगर चल देता। वहाँ परमहंस देव के चेले रहा करते थे। तमाम दिन जाने क्या करता! रात गए लौटता।

कभी-कभी मझले बाबू दीख जाते। रविवार को इब्राहिम गाड़ी ले आता। दूसरी दो गाड़ियों पर होती उनके मुसाहबों की जमात। सबके चुननदार चादर, तिरछी माँग, बाबरी बाल। इब्राहिम की गाड़ी के अन्दर होती मझले बाबू की रखैल। ठीक-ठीक दिखाई नहीं पड़ती। साफ-सुन्दर शकल। चेहरे पर घूंघट नहीं। नाक में लौंग। हाथ में पान का डब्बा लिए गाड़ी से उतरती कभी-कभी।

मझले बाबू का नौकर बेनी कहता—साले साहब, यहाँ से खिसक जाइये। मझले बाबू देख लें, तो बिगड़ेंगे।

पूरी जमात निकल पड़ती। कभी बगीचे को। कभी गंगा मे नौका-विहार को, कभी खड़दा के मेले में। बायाँ-तबला, घुंघरू साथ मे रहता। बोतलें लुढ़की पड़ी होती।

बेनी कहता—उस कमसिन औरत को देखा न आपने…वह नाचती है कि पूछिए मत…

उस कमसिन का नाम था हासिनी। जितना ही अच्छा नाचती उतना ही अच्छा गाती। एक बार उसकी माँ होली के मौके पर काशी से यहाँ महफिल मे आई थी। यह हासिनी उसके साथ आई थी। तब उसकी उमर रही होगी आठ-दस साल। मझले बाबू को जँच गई। बस, माँ-बेटी को काशी लौटने की नौबत आई। किराए का मकान ले दिया। सामान आए—नौकर-दरबानों की बहाली हो गई। हासिनी धीरे-धीरे बड़ी हो गई और उधर चल बसी उसकी बुढ़िया अम्मा। हासिनी अब मझले बाबू की जायदाद है।

पहले यही एक थी। फिर दो हुई, अब हो गई तीन। मझले बाबू की शान-शौकत देख कलकत्ते के बाबू लोग हैरान हैं।

भूतनाथ ने पूछा—मझली बहू को इन बातों का पता है?

बेनी ने कहा—मझली मालकिन बडे घर की बेटी हैं—सब सह सकती हैं। मझले बाबू के ससुर थुल-थुल बुड्ढे हैं, मगर आज भी इतवार की रात वे घर मे नही बिताते—रखैल है। मझली मालकिन उन्हें भी माँ ही कहती हैं। मौके पर उनके यहाँ भी न्योता जाता है। एक बार का जिक्र है, मझली मालकिन बीमार पड़ीं। वह आई और सात दिन उनका सेवा-जतन करती रही। सगी माँ भी ऐसी सेवा नही कर सकती किसी की। अहा हा! क्या रूप…अब तो खैर मझले बाबू रात को घर लौट आते हैं—पहले?

—पहले वही पडे रहते थे। खजांची बाबू जरूरी कागजात मुझे देते थे, मैं उसी रखैल के घर जाकर उन्हें दिखा लाता था। पीने के बाद उन्हें होशोहवाश नही रहता था: कपड़े नही सम्हाल सकते थे। मैं गया नही कि जूतों की मार पड़ती। पीने-वीने से मनई के गियान-बुद्धि खाक नही रहती। मैं तो महज हँसता, मगर माँजी खूब झिड़का करती उन्हें। कहती—पी है, ठीक है, मगर एकबारगी अकल बेच खाई है। बेनी, तू कुछ खयाल मत करना, यह लो चार आने, मिठाई खाना।

बेनी ने कहा—हाथ मे पान का डब्बा लिए जिस बूढ़ी-सी औरत को आपने देखा, वही हैं बड़ी माँ। मझले बाबू उनसे बेतरह डरते हैं। कही वे कह दें, पीना बन्द रहेगा तो बन्द रहेगा। वह चाहे मझली मालकिन हों चाहें छोटी, बडी

माँ ने अगर कभी ना कह दिया तो हाँ कराने की मजाल किसी की नहीं।

इतवार का दिन। मुसाहबों और उन औरतों के साथ मझले बाबू चल दिए। शायद गंगा के उस पार डोंगी पर खान-पान का इन्तज़ाम था। बड़ी माँ अपने हाथों उन्हें अन्दाज़ से शराब डालकर देंगी। पूजा-पाठ, व्रत-त्योहार करती हैं। सो हर बार उनका साथ नहीं दे सकतीं। दिन-खेन देखकर, पुनमासी, अमौसिया समझकर चलती हैं। सब बातों में बड़ा विचार करती हैं। बासी कपड़ों शराब नहीं पीतीं। गीले कपड़ों ही पूजाघर में जाती हैं।

और मझली मालकिन?

उनका हाल देखिए—तिमंजिले पलंग पर बैठी सिन्धु के साथ बाघगोटी खेल रही हैं—रोज नये गहने। कभी कमर की करधनी तुड़ाकर बिछवा बनवाती हैं, तो कभी उसके बदले अनन्त और अनन्त के पुराना पड़ जाने पर चूड़ा। इस बार पूजा के मौके पर बनी हीरे का कील नाक की, तो दीवाली में बना चुन्नी का करण-फूल। या कि मुक्ताहार या पन्ना-जड़ा चन्द्रहार।

मझले बाबू की गाड़ी निकल गई। भूतनाथ चुप खड़ा देर तक सोचता रहा। फूफी की याद आ गई। उनकी ससुराल से पाँच रुपये का मनीआर्डर आया करता था। उन्हीं पाँच रुपयों से माह-भर चलाना। कितनी फिक्र रहती थी फूफी को उन पाँच रुपयों की! भूतनाथ डाकघर की खाक छाना करता। कभी पोस्ट-मास्टर नहीं मिलते। कभी वे बीमार होते। कहते, भई, आज तो अब नहीं हो सकेगा। बूढ़े आदमी। कभी-कभी गाय-गोरू की सानी लगाते होते। कह देते, इस वक्त तो माफ ही करो भैया, उस बेला ज़रा जल्दी आ जाना।

उस बेला ही जाता भूतनाथ। पोस्टमास्टर साहब फरमाते—जा ही तो रहे हो, ज़रा उधर की चिट्ठियाँ भी लेते जाओ। डाकिए को आज फुरसत नहीं, उसे बैंगन के लिए पैंठ भेज दिया है।

फूफी रुपयों को जतन से जुगोती, सम्हलकर खरचती। भूतनाथ कभी-कभी कहता—एक धेला मुझे दो न फूफी।

मगर फूफी धेला नहीं देती—कहती—तेरे लिए तो हैं सब। मेरे मरने के बाद सब ले लेना।

मगर सारी जमा-पूंजी उसकी बीमारी में ही निकल गई। और इस घर का रवैया। कौन कहाँ से कमाकर पैसा लाता है, कौन जाने। ये तो सोकर ही उठते हैं दिन के एक बजे। कोई किसी दफ्तर में नहीं जाता, कोई कारोबार नहीं—इतने-इतने आदमी—सब बैठे-बिठाए ही खाते हैं।

आमद के ज़रियों का तो पता नहीं चलता, लेकिन खजांची के पास जाते ही खर्च का अन्दाज़ा होता है।

बीच में उकड़ूँ बैठे विधु सरकार, अगल-बगल ढलवें बक्स पर बैठे चार-पाँच आदमी खरचे की बहियों में लिख रहे थे। कान पर कलम रखे विधु सरकार कहता—जरा पट्टा-बही देना तो केशो !

बही उसकी तरफ बढ़ाकर केशो फिर लिखने लगा।

भूतनाथ वहीं खड़ा-खड़ा देख रहा था। मोटी बही पर बड़े-बड़े हरफों में लिखा था—पट्टा नकल बही, श्रीयुत मिस्टर विलियम फैंकलैण्ड साहब, सन्···

चीखकर विधु सरकार ने केशव से कहा—मैं कहता हूँ···तुम लिखो—अरकूली सिमला मछलन्दपुर गाँव में तालाब खोदने के लिए धोमाराम बसाक को तीस बीघे जमीन लाखराज दी गई। श्रामापद सेन सुनार के पोते क्षमापद सेन, उसकीअट्ठारह कट्ठे की घरबाड़ी अट्ठारह सौ सिक्कों में तारापदो मुंशी के हाथ बेची गई—अचानक सिर जो उठाया तो भूतनाथ पर नजर पड़ी। बोला—तुम्हारा क्या है ?

भूतनाथ ने अपने हाथ की चिट उसकी तरफ बढ़ा दी। कहा—मैं उसका साला हूँ, उनकी इस माह की तनखा···

—ठहरो जरा। विधु सरकार ने शुरू से अखीर तक सब पढ़ा और कहा—यह दस्तखत किसका है।

—जी, व्रजराखाल बाबू का।

—महज व्रजराखाल कहने से तो काम नहीं चलता। व्रजराखाल क्या ? दास कि रुईदास, ब्राह्मण कि कायस्थ, वल्द, मुकाम···और फिर तुम ? सिर्फ भूतनाथ चक्रवर्ती कहने से कैसे होगा ? किसका बेटा, कहाँ घर···यह आखिर डाकघर नहीं है जनाब, जमींदारी का काम वैसा आसान नहीं होता···सही-भर मिल गया कि झंझट खत्म—यह दफ्तरों में होता है। यहाँ भी होता तो आज तक विधु सरकार ने बाबुओं की जमींदारी बेच खाई होती। खैर, वे खुद क्यों नही आये ?

—जी, वे वरानगर चले गए हैं।

—फिर मैं तो न दे सकूँगा रुपये। हथकड़ी पहनने का काम मैं नहीं कर सकता···हाँ भई, तेरा क्या है ?

वह आदमी समीप आ गया। बोला—जी, मेरे रुपये·

—अबे, काहे के रुपये, बता भी ! तू क्या मेरे बाप का सम्बन्धी है कि तुझे जानता-चीह्नता हूँ ? लाखों का कारोबार होता है यहाँ, हजारों प्रजा का नाम भी कोई जुबान पर रख सकता है ?

—जी, बर्फ का दाम, चार-चार महीने की कीमत बाकी पड़ गई—

—ठहरो ! जरा रोजमर्रा खर्च की बही देना तो केशो !

था। लाट साहब हो गए।

विधु सरकार बोला—अरे, मझले बाबू ने कहा तो क्या हुआ, जुबानी काम नहीं चलता यहां, यहां लिखा-पढ़ी, सही-सबूत चाहिए। उनके हाथ का लिखा दिखा, फौरन गिन देता हूँ रुपये। मैं तो हुक्म का बन्दा-भर हूँ—हिसाब लिख रखूंगा, आना-पैसा, गण्डा-कौड़ी का ठीक-ठीक हिसाब। यह तुम्हारे रोज़गार की बात नहीं, ज़मींदारी है। हर ऐरा-गैरा इसका हिसाब नहीं रख सकता। किसी से कहा, भई यह डाकघर नहीं कि पांच बजे और ताला बन्द। बचपन से यही कर रहा हूँ, पर आज तक थाह नहीं मिली इसकी। रोज नया। फूटी पाई की गड़बड़ी हुई कि नायब-गुमाश्ते की गर्दन पर सवार। बाबुओं का धर्म का पैसा है—विधु सरकार और चाहे सब कर ले, अधर्म नहीं सह सकता। उसके बाद फिर भूतनाथ की तरफ़ मुड़कर बोला—तुम खड़े क्यों हो छोकरे, कह तो दिया मैंने कि काम करते वक्त तंग न करो मुझे···लिखो केशों—शेख आसानुल्ला के बेटे शेख जैनुद्दीन को मौरूसी मुकर्ररी···।

भूतनाथ लौट आया।

ब्रजराखाल ने लौटकर सब सुना। सुनकर बोला—ठीक ही तो किया है। रुपयों का मामला। समझ-बूझकर ही देना ठीक है। विधु सरकार आदमी बड़ा होशियार है। फिर तुम्हें पहचानता नहीं। जान-चीन्ह ले फिर तो···

नन्हे बाबू ने क्यों बुलवा भेजा है, समझ में न आया।

वह कमरे में अपने दफ्तर के कपड़े बदल रहा था कि शशी ने आकर कहा—साले साहब, नन्हे बाबू याद कर रहे हैं।

शशी नन्हे बाबू का नौकर है।

भूतनाथ ने पूछा—क्यों भला!

शशी बोला—मैंने बिरिजसिंह से कह रखा था कि आते ही आपको खबर कर दे। कहा नहीं उसने?

भूतनाथ बोला—कहा तो है, पर पता नहीं, किसलिए बुलाया है। तुझे खबर है कुछ!

शशी ने कहा—मुझसे वे पूछ रहे थे, मास्टर के कमरे में तबला कौन बजाता है शशी! मैंने बताया—मास्टर साहब के साले बजाते हैं। वे बोले—हाथ अच्छा है। बुलाना तो जरा।

—अच्छा कह दे जाकर, अभी आया मैं। जल्दी से भोजन करके वह उनकी बैठक में गया था। बहुत दिनों की बात है। स्मृति के मणि-मन्दिर में सब बातें संजोने-जैसी जगह नहीं रही। मगर छोटे बाबू को कभी भुलाया नहीं जा सकता। बड़ी बहू का इकलौता लड़का। कार्तिक जैसा सुन्दर देखने में। उतनी

अच्छी सेहत। लेकिन जिस खानदान की रग-रग मे सनीचर पैठ गया है, उसे बचा कौन सकता है ?

बद्री बाबू की एक बात उसे बारम्बार याद आती है। वे कहते थे, दुनिया में जिसे जुआ खेलना आता है, वह फूटी हुई पाई लेकर भी खेल सकता है। जो भला होना और रहना चाहता है, उसके लिए सभी रास्ते खुले हैं।

वास्तव में यही होता है।

वरना नन्हे बाबू ऐसे क्यों होते ?

देखते ही नन्हे बाबू बोल उठे—अरे, आइए-आइए साहब, आपके तबले की रोज थाप सुनता हूँ और सोचता हूँ कि हाय पेशेवर का है। ऐसी टांकी तो पहले सुनी नही मैंने। किसी उस्ताद से गण्डा बँधवाया था, क्यों ?

कमरा उनका दोस्तों से भरा था। किसी के हाथ मे तानपूरा तो किसी के हारमोनियम। सबके बाल एक-से छँटे। चूननवाली चादर, धोती। सारा फर्श काफी मोटी गद्दी मे ढँका। सुफ़ेद जाजिम। तकिये के सहारे लेटे थे नन्हे बाबू और पसीने से तर हो रहे थे। पनडब्बा, तम्बाकू की डिबिया, सिगरेट।

ठुमरी की तान पर रह-रहकर नन्हे बाबू चीख उठते—क्या कहने, क्या कहने···

सम पर ज्यो ही तबले की ताल से गीत का मुँह मिल जाता, बोल उठते—सुभान अल्लाह, सुभान अल्लाह।

दिनों से रियाज़ छूट गया था भूतनाथ का। गाँव के उस्ताद से सीखा था। दादरा, कहरवा और इकताले से भी ज्यादा सरोकार था। कभी-कभी यत्। दशहरे के समय रसिक मास्टर के यार-दोस्त आ जुटते तो ठुमरी-टप्पा चलता। यात्रा मे खेमटा ही ज्यादा होता।

नन्हे बाबू ने चिल्लाकर कहा—ठुमरी अब जँच नही रही है, गज़ल हो··· गा विशू···

हुक्म। गज़ल शुरू हो गई। विशु यानी विश्वम्भर। आवाज़ अच्छी थी। शुरू की कि जम गई।

भूतनाथ का चलने लगा कव्वाली का ठेका।

नन्हे बाबू से न रहा गया। खड़े हो गए। कहा, जम गई गज़ल। वे परदा हटाकर अन्दर गए और जरा ही देर मे धोती की कोर से मुँह पोछते हुए आये। तकिये के सहारे बैठ गए। गीत और भी जम गया। पसीने से और भी तर होने लगे वे। लय बढ़ने लगी। भूतनाथ की कलाई दुखने लगी।

विश्वम्भर झूम रहा था। आँखें बन्द। मस्त होकर गा रहा था—जख्मी दिल को न मेरे दुखाया करो···

सम आया। हो-हो करके लुढ़क पड़े नन्हे बाबू। एक-एक कर सभी परदे के

पीछे जाने और लौट आने लगे। आँखें सुर्ख।

नशे में नन्हे बाबू भूतनाथ का पैर छूने के लिए लपके।

—अरे रे, कर क्या रहे हैं आप—भूतनाथ उछल पड़ा।

पैर छूने की कोशिश करते हुए नन्हे बाबू पट पड़ गए। बोले—घर ही में ऐसे उस्ताद के होते—तुम लोग गोसाईंजी के पैरों तेल लगाते हो, खबरदार जो ···अबे शशी !

शशी परदे के अन्दर से निकला।

नन्हे बाबू ने कहा—सुन ले, कल से गोसाईंजी को अन्दर कदम रखने दिया, तो तेरा खून कर दूंगा— बिरिजसिंह का भी गला घोंट दूंगा—उसके बाद श्रद्धा और भक्ति से मुंह के पास मुंह ले जाकर कहा—काफ़ी मिहनत पड़ी है आपको—थोड़ी-सी चलेगी ?

भूतनाथ कुछ समझ नहीं सका। उनके मुंह से शराब की बू ज़रूर आ रही थी। फिर भी पूछा—जी ?

खासी अच्छी है···ठर्रा नहीं। ज़रा-सा शैम्पेन···।

भूतनाथ को अजीब-सा लगा।

जमात के एक ने कहा—नन्हे बाबू प्रेम से दे रहे हैं—इनकार न करें।

नन्हे बाबू बोले—अच्छा, न हो तो भंग थोड़ी-सी···शशी···ज़रा पिस्ता-बिस्ता डालकर···परदे के अन्दर चले जाइए—कोई देखेगा नहीं।

रात के बारह बजे तक उस रोज ऐसा ही चलता रहा। गज़ल के बाद टप्पा। उसके बाद 'चमेली फूले चम्पा···'

बैठक टूटी, तो नन्हे बाबू में उठने की भी ताकत नहीं रह गई थी। तकिये के सहारे चित पड़े रहे। घर-भर में सन्नाटा। भूतनाथ को भी अभी तक होश न था। उस वातावरण में वह खो-सा गया था।

बाहर निकलने पर उसने बिशू बाबू से कहा—आपका गाना आज खूब जमा।

विश्वम्भर ने कहा—आपने संगत खूब की···।

सभी थोड़ा-बहुत नशे में थे। परेश ने कहा—हम सबने अमृत पिया, आप ही निरम्बु रहे—एक सफर के दो नतीजे।

कान्तिधर ने कहा—भैया, तू बड़ी जल्दी बेताब हो जाता है—आज पहला दिन है। नन्हे बाबू ही क्या शुरू में पी रहे थे, किस मुश्किल से चाट लगाई है। और अब···।

भूतनाथ ने सबको दरवाज़े तक पहुँचाकर अपनी सीढ़ी पर कदम रखे। जान तो नहीं लिया ब्रजराखाल ने ? जाते वक्त उससे पूछा भी नहीं। यहाँ उसका

सुनाम है; ऐसा कोई काम न बन पड़े कि उसकी मर्यादा को आंच आए। ताला खोलते समय वह सहसा क्यों तो ठिठककर खड़ा हो गया।

लगा, गाड़ी-बरामदे की राह से कोई निकला। धुंधली एक मूर्ति। कोई औरत थी शायद। चारों ओर सन्नाटा। तमाम बत्तियां गुल हो चुकी थीं। इब्राहिम की छत पर रेंडी के तेल की बत्ती जल रही थी। ईंटों से बेंधे ड्योढ़ी पर रोशनी की कुछ लकीरें पड़ रही थीं। कहीं कोई नहीं। पहरे पर बैठा बिरिजसिंह ऊंघ रहा था। ऐसे में बाहर कौन जा रही है?

भूतनाथ को उत्सुकता हुई।

पहले कभी ऐसा नजारा देखना नसीब न हुआ था। आंगन पार करते समय छिटकी रोशनी पड़ते ही वह मूर्ति चीन्ही-चीन्ही-सी लगी। वह मूर्ति नन्हे बाबू की बैठक के सामने जाकर खड़ी हुई।

खड़ा होना था कि अन्दर से किसी ने दरवाजे की कुण्डी खोल दी। अन्दर की रोशनी में दीखा, वह दासी थी। और वह नारी-मूर्ति भी भूतनाथ की पहचान में आ गई।

गिरि थी—मझली बहू की नौकरानी।

लमहे में दरवाजा बन्द हो गया। फिर सब अंधेरा। कैसे तो एक बुरे कौतूहल ने भूतनाथ के जी को गंदला कर दिया। बाबू लोग अभी लौटे नहीं थे। तारों से भूतनाथ ने जानने की कोशिश की, रात कितनी हुई। दूसरा पहर बीत रहा था। मझले बाबू नहीं आये थे। नन्हे बाबू लौटेंगे भी या नहीं, कुछ ठीक नहीं। बन्द कमरे में दो जने, दासी और नन्हे बाबू। इन दोनों में कौन?

नींद से पलकें झुकती आ रही थीं, फिर भी न सो सका।

सुबह ब्रजराखाल ने पूछा—कल कहां रहे? सारा किस्सा सुना और कहा—ठीक है, मगर जरा सोच-समझकर।

—क्यों? भूतनाथ ने अचरज से पूछा।

ब्रजराखाल ने कहा—अभी तो दफ्तर का समय हो रहा है, लेकिन इतना कहूं, परमहंस देव कहते थे, रोने से खुद ही कुम्भक होता है। गाना-बजाना बेशक अच्छी बात है, मगर कभी-कभी रोना भाई साहब।

—फ़िजूल का रोऊं क्यों?

—कहूं तो बहुत कहना होगा। आज जल्दी है और लौटने में भी कुछ देर होगी मुझे। जल्द ही नरेन लौट रहा है, तैयारियां करनी हैं।

—नरेन कौन?

—नरेन यानी विवेकानन्द। परमहंस देव कहा करते थे, नरेन एक दिन सारी पृथ्वी को हिला देगा। सो अमरीका में उसने भूकम्प मचा दिया। प्रताप मजूमदार, एनी बेसेण्ट, सब हक्का-बक्का हैं। कल का छोकरा—देख

साहब, एक दिन यह नरेन ही सारे देश को उबारेगा। अनेक सन्त आये, पादरी आये, निराकार ब्रह्म की उपासना भी बहुत हुई, लेकिन दरिद्रनारायणों के बारे में किसी ने ऐसी बात नहीं कही।

भूतनाथ खड़ा-खड़ा सुनता रहा।

दफ्तर को देर हो रही थी, फिर भी ब्रजराखाल कह रहा था—नरेन ने हमारी आँखें खोल दी हैं। कहता है—सात सौ साल की मुसलमानी सल्तनत में छः करोड़ लोग मुसलमान बने और सौ साल के अंग्रेजी राज में छत्तीस लाख ईसाई—ऐसा क्यों? पहले यह किसी को न सूझा—नरेन ने मद्रास के भाषण में बहुत-कुछ बताया। गुलामी बड़ी बुरी चीज है।

ऑफ़िस की जल्दी में और किसी बात का खयाल नहीं रहता। कुछ दूर जाकर ब्रजराखाल फिर लौट आया। पूछा—तनखाह मिली? मिली है सुनकर कहा—तो एक रुपया दो।

—क्यों, तनख़ाह तो कल तुम्हें भी मिली है?

—मिली है···लेकिन; ब्रजराखाल हँसा। बरानगर में मेरे गुरु-भाइयों को फ़ाके की नौबत—परमहंस देव के बाद उन्हें बड़ा ही कष्ट है। भीख पर गुज़ारा। कल गया, तो देखा, रसोई का जुगाड़ नहीं हो सका है। सिर्फ़ वेदान्त पढ़ने से पेट तो नहीं भरने का। अमेरिका से नरेन ने कुछ भेजा था और मैं भी अपनी सारी तनख़ाह दे आया।

भूतनाथ ने एक रुपया उसे दिया। कहा—अभी तो सारा माह पड़ा है?

ब्रजराखाल हँसने लगा। बोला—फ़िक्र न करो, तुम्हें फाका न करने दूँगा। फिर बोला—परमहंस देव कहते थे, कामिनी और कंचन, इन दोनों को त्यागे बिना भजन-साधन नहीं हो सकता। सो तुम्हारी बहन बेचारी ने मरकर एक से तो मुझे बचा दिया, अब रुपयों का क्या करूँ? नौकरी छोड़ दूँ तो कल से ही कई परिवार भूखों मरने लगेंगे। एक रुपये ग्यारह आने का एक जोड़ा मिलता है कपड़ा—फिर भी बहुत-सी अभागिनें एक कपड़े में साल निकालती हैं।

समय नहीं था। ब्रजराखाल चला गया।

उस रोज अपने दफ्तर से लौटते समय भूतनाथ को यही याद आया। फतेपुर में तो ऐसी ग़रीबी कभी नजर नहीं आती थी। यहां तो इन्हीं कई महीनों में उसकी निगाह खुल गई। चारों तरफ़ अभाव। हाहाकार। एक धेले के लिए भिखमंगा बड़ा बाजार से माधव बाबू के बाज़ार तक पीछे लगा आता है—अधेला दो बाबू, एक धेला।

भूतनाथ ने पूछा—घर कहां है?

बुड्ढा आदमी। गांठ बांध-बांधकर किसी तरह कपड़े को कमर से लगाए था। कहा—बाढ़ से हमारे गांव बह गए, किसी कदर जिन्दा हूँ, दो दिन से दाने

नही नसीब हुए···एक घेला।

और भी एक दिन जब शिव ठाकुर की गली से आ रहा था, तो एक ने घ के अन्दर से आवाज दी थी—सुन लो भैया···ओ भैया···!

साँझ हो चली थी। रास्ते पर कोई नही। नारी-कण्ठ।

—यहाँ भैया, मैं किवाड़ की फाँक मे से बोल रही हूँ।

—दरवाजा खोलिए···हुआ क्या है आपको?

—कुछ और न सोचो भैया, तुम मेरे लडके के बराबर हो, चिथड़ा भी नही कि लपेटकर बाहर निकलूँ—ये दो पैसे लो और कुछ मुरमुरे खरीदकर खिडकी मे से मेरे लिए अन्दर डाल दो।

कहाँ आई बाढ फरीदपुर में, अकाल पड़ा मेदिनीपुर में—लगता है, वहाँ के सब यहीं आ जुटे हैं। और इधर बड़े महल में पडे हैं इतने-इतने लोग, बेवजह इतनी फिजूलखर्ची होती है, कोई देखना भी नही। विलायत से चीजें आती हैं। झाड़-फानूस। एक बार श्वेत मर्मर की बनी उडती परी आई। नगी। हाथ में लिपटा एक साँप। मझले बाबू के नाचघर मे सजाई गई। हाथीबगान से तीन सौ रुपये पर भैरव बाबू एक चीनी आर्किड का पौधा ले आए। कलकत्ता क्यों, देश-भर में कहीं यह पेड़ मिलना मुश्किल है। बहुत-से खरीदार आये—लाट साहब का साहब माली तक। बोली बढते-बढते तीन सौ रुपये पर खत्म हुई। सबको हराकर भैरव बाबू छोटी फुलाए पौधे को ले आए। मझली बहू ने उस पौधे को देखना चाहा···तीन सौ रुपया दाम। सोना नही है, कुत्ता-बिल्ली नही···महज एक पेड। मर गया कि गया।

वह जो भी हो, भैरव बाबू ने मूँछों पर ताव देकर कहा—बाबू तो बस मझले बाबू हैं—छेनी दत्त को पता ही नही कि वह किसे बाबूगिरी दिखाने चला है।

उस पौधे की बदस्तूर प्रतिष्ठा की गई। इसके लिए घर तैयार कराया गया। मझले बाबू खुद निगरानी कर गए।

इधर यह खबर लाट साहब तक पहुँची। उन्होंने कहला भेजा कि वे पेड को देखने आयेंगे, लाट साहब आयेंगे। कुछ मजाक नही। तैयारियो की धूम मच गई। नाचघर मे मखमल का फर्श बिछा। फानूसो की सफाई की गई। कमरो की पुताई हुई। बड़े आईने के ऊपर राजा-रानी की तस्वीर साफ करके लटकाई गई। उसके ऊपर लाल कपडे से लिखा गया—God save the king और, लाट साहब को बिना खिलाए कैसे लौटाया जाए! खाने का इन्तजाम हुआ। खास ग्लासों में बत्ती जलाई गई गैस की। सबके लिए नये कपडे सिलने को दिये गए। तीन सौ रुपयों के पीछे ज्यादा नही तो तीन हजार रुपए और निकल गए।

बनमाली सरकार लेन की चौहद्दी गाडियो से भर गई। उस समय बड़े बाबू जिन्दा थे। वे सादर लाट साहब को उतार लाए—लाट साहब और उनकी मेम।

खाना-पीना चला। खाने से ज्यादा पीना।

पेड़ को देखकर लाट साहब बहुत खुश हुए। खाना खाया—महल को घूम घूमकर देखा। लखनऊ से तवायफ़ें आई थीं। उनका नाच देखा। बनारसी पा खाया।

जब जाने लगे लाट साहब, तो बड़े बाबू ने उस पेड़ को ले जाकर कहा— हुज़ूर इसे कबूल करें तो यह खानदान धन्य हो।

लाट साहब ने अपने हाथों उसे नहीं लिया। साथ के आदमी ने लिया। जि पेड़ के लिए इतनी धूमधाम हुई, वह पेड़ लाट साहब के बगीचे में जाकर शोभि हुआ।

कुछ ही सालों में उसका फल मिला। बड़े बाबू को खिताब मिला वैदूर्यमणि चौधरी, राजा बहादुर वैदूर्यमणि चौधरी हो गए।

बड़े बाबू का नाम वैदूर्यमणि चौधरी, मँझले का हिरण्यमणि चौधरी औ नन्हे का कौस्तुभमणि चौधरी। वैदूर्यमणि ने तन्दुरुस्ती के लिए बनारस क पहलवान रखा था। पहलवान-से ही थे। दो बड़े मुगदर भाँजा करते थे। ज़मींदार की देखभाल, घर के हर किसी की सुख-सुविधा का खयाल, फिर कुश्ती लड़ने क शौक। मौरूसी जायदाद को न सिर्फ बचाया उन्होंने, उसे बढ़ाया भी। उनके सम में इस घर का यह हाल न था।

ये सारे किस्से बद्री बाबू की ज़ुबानी सुने थे। जाने कहाँ तो उनके पुरख में से कौन मुर्शिदकुली खाँ का कानूनगो हुआ था···उसी के वंशधर थे बद्री बाबू।

बद्री बाबू ने कहा—जभी तो कहता हूँ, जुआ खेलना आए तो फूटी कौड़ी से भी खेला जा सकता है। बड़े बाबू राजा बहादुर हुए, धूम मची, मेम साहबों की दावत हुई। पीपों शराब पी गए सब। मैं न गया। मैंने कहा, बड़े बाबू राजा बहादुर नहीं 'राजनाग' हुए हैं। कहा सो फला। वही बड़े बाबू जब मरे, तो मरते समय बूँद-भर पानी नसीब नहीं हुआ।

भूतनाथ ने पूछा—क्यों?

बद्री बाबू बिगड़ उठे। कहा—पूछता है, क्यों? सात सौ साल की मुसलमानी सल्तनत में छः करोड़ आदमी मुसलमान बने और सौ साल के अंग्रेज़ी शासन में हुए छत्तीस लाख आदमी ईसाई—यों ही हो गए? नमकहरामी की सजा। देखना, कुछ न रहेगा। सब जाएगा—वही देखने के लिए तमाम दिन चित्त लेटा रहता हूँ और सुनता रहता हूँ घड़ी की टिक्-टिक्।

उन की बात का एक-एक हर्फ कैसे मिल गया, आज भी सोचता भूतनाथ। उस रोज़ भी दफ़्तर से आते ही ब्रिजसिंह ने कहा, आपको नन्हे बाबू ने बुलाया है।

भूतनाथ का अकेला देख वंशी आ धमका। इतवार था। बोला—आज तो आपको जाना ही पड़ेगा। छोटी मालकिन रोज ही कहती हैं मुझे, अरे अपने साले साहब को बुलाया नही तूने—मुझे मौका ही नही मिलता, आप नन्हे बाबू की महफिल में चल देते है, रात हो जाती है।

भूतनाथ ने पूछा—तुझे पता है, क्यों बुला रही हैं ?

—सो तो नही बताया उन्होंने।

—लेकिन ब्रजराखाल से पूछे बिना कैसे जाऊँ ? फिर अन्दर महल की बात, एक अजनबी मर्द, कोई कुछ कहे तो ?

—छोटी मालकिन ने बुलाया है, तो आप क्या करेंगे ? और नन्हे बाबू को पता भी क्या होगा ? वे तो शाम को निकल गए हैं—कल भोर में लौटेंगे।

—तेरे छोटे बाबू कहां जाते हैं ?

—जी उसी पिशाचिन के पास—जान बाजार। छोटी मालकिन कहती हैं, बाम्हन के सराप से ऐसा हुआ है। पिछले जन्म मे बाम्हन का अपमान किया था। इस जन्म में उसी का नतीजा।

—तूने उस औरत को देखा है वंशी ?

—भला मैं न देखूं ! छोटी मां के पैरो की धूल होने लायक भी नही है। मगर मिज़ाज का क्या कहना, अपने हाथो एक गिलास पानी ढालकर भी नही पीती। जिस रोज बाबू घर नही लौटते, छोटी मां मुझको वहां भेजती हैं। इत्ती-सी थी, तब से देखता आया हूँ। क्या थी और क्या है अब ! आजकल जद्दू की मां मसाला पीसती है न, पहले वह काम उसी की मां करती थी। हम उसे रूपा कहते थे, उसी रूपा की बेटी, चुन्नी। जब बारह की थी, तभी नन्हे बाबू की आँखों मे गड गई। नन्हे बाबू का ब्याह हुआ, तो वह तेरह की थी। जान बाजार मे उसके लिए नया मकान लिया गया। खैर, सब छोटी मां की अपनी तकदीर··· । हां तो यही तै रहा, खा-पी ले, मैं आ जाऊँगा।

सांझ हुई। छ का घंटा बजा, सात का बजा। आठ का भी बज गया। कमरे मे अकेला भूतनाथ। तरह-तरह की सोचता रहा—ब्रजराखाल को बिना जताए जाना ठीक होगा ? नन्हे बाबू की गैरहाज़िरी मे। महल की बात। इतने दिन रहते हो गए, किसी बहू की शकल नही देख पाया। औरतें पीछे के दरवाज़े से जाती-आती। हर दम ताला लगा होता। ज़रूरत पर वह ताला खुलता जब गाडी आती तब, बड़ी बहू गंगा नहाने जाती तब। मझली बहू मैके जाती या उनकी मां वगैरा आती तब।

और छोटी बहू ?

वंशी ने बताया, उन बेचारी के तो मा नही कि आयेंगी। गरीब घर की इकलौती बेटी···इनकी खूबसूरती से बडे बाबू ने यह रिश्ता किया था···सो अब

तो पिताजी भी चल बसे। थे भी जब तक, चलते-फिरते न थे, पूजा-अरचा लिये रहते।

छोटी बहू को भूतनाथ ने नहीं देखा। किसी भी बहू को नहीं देखा। लेकिन लगता है, उनमें से सब जानी-पहचानी हैं। राजा बहादुर वैदूर्यमणि चौधरी का इंतकाल हुआ जमींदारी पर। महीने में एक बार जमींदारी पर जरूर जाते। अकेले। नदी के किनारे बहुत बड़ी कचहरी। रिआया की शिकायत सुनते, लगान माफ़ करते। गाँव के पहलवानों का दंगल देखते। पहलवान जो हुआ, उसके सात खून माफ़! कभी-कभी खुद भी लड़ते। अखाड़े पर आज भी सिंदूरपुती आदमकद महावीरजी की मूर्ति पड़ी है। बद्री बाबू कहते, लेकिन मरते वक्त बूंद-भर पानी न नसीब हुआ—वह राजा बहादुर नहीं, 'राजनाग' था।

मगर उतनी रात को पानी देता भी कौन! जान भी पाता कोई! सुबह पता चला। अनादि मल्लिक तीन पुश्त के गुमाश्ता हैं। उन्हीं ने देखा। फिर दरबान, सिपाही—सबने।

वैसी भारी-भरकम लाश। नीली पड़कर आँगन में पड़ी थी। पाँव के पास एक और भी चीज थी। वह भी कम लम्बी-चौड़ी नहीं। चित पड़ी थी। दोनों मृत। अनादि मल्लिक सिहरकर पीछे हट गया। एक तो दिन सनीचर, फिर गेंहुअन।

पुरानी बातें हैं ये। नन्हे बाबू तब मुन्ने थे। बड़ी बहू बड़ी धर्मप्राण थीं। सात दिन तक पानी भी न छुआ। उसके बाद भूमिशय्या से जो उठीं। तो बिलकुल बदली हुईं। भोजन के बाद चौंसठ बार साबुन से हाथ धोये बिना चैन नहीं। सिधु साबुन के चौंसठ टुकड़े और चौंसठ लोटा पानी लेकर उनका हाथ धुलाती। देवता का प्रसाद तक धोकर खाती हैं।

वैदूर्यमणि के बाद जमींदारी की जिम्मेदारी हिरण्यमणि के कन्धों पर आई। बड़ी बहू ने छोड़ा तो छोड़ा, मझले बाबू उनको कैसे छोड़ते! सुविधा ही हो गई। दोनों के दो मकान हो गए। तब तक आई हासिनी। तब उसकी उम्र कम थी। जो भी रुपये जाते, उसके लिए कम होते।

मझले बाबू की नाव पाल खोले बरानगर की तरफ बढ़ती। रह-रहकर हवा में तैरती आतीं सुरीली तानें, घुंघरू की झुनझुन। नाव की तेज रोशनी से गंगा की गोद उजली रहती।

कौस्तुभमणि, छोटे बाबू तब कच्ची उम्र के थे। नन्हे बाबू-जैसे। तीसरे पहर गाड़ी से बाहर जाने को थे। उतर रहे थे। सीढ़ी से कि माथे पर कुछ लगा आकर जोरों से। नींबू का एक टुकड़ा सिर पर लगकर नीचे जा रहा।

पहले तो बिगड़ उठे छोटे बाबू। पूछा—कौन है रे?

मधुसूदन उसी ओर होकर जा रहा था। कहा—जी, रूपा की बेटी है, मुन्नी।

—रूपा कौन ?

—जी, वह उस कमरे में मसाला पीसती है, दाल चुनती है।

—ओ—कहकर चले गये वे। मगर मधुसूदन कब छोड़नेवाला था! रूपा पर पाँच रुपया जुर्माना। मधुसूदन का पावना होता था यह। एक ही रुपया महीना तो मिलता है रूपा को। सो चुन्नी की फजीहत-मरम्मत शुरू हो गई। रूपा ने उसका झोंटा खींचा, थप्पड़-मुक्के लगाये। दुर्गत की। और बाद में रोने बैठी—मर-कर भी चैन नहीं मुझे, अरी छोरी, तू मरेगी कब, यम क्या भूल ही गया है तुझे! पापी पेट के लिए भूत की-सी ममक्कत—फिर भी चैन नहीं।

मधुसूदन के पास अर्जी दाखिल हुई।

मधुसूदन ने कहा—मैं क्या करूँ, नन्हे बाबू का हुक्म है।

लेकिन रूपा की हिम्मत की तारीफ करनी पड़ेगी। पाँच रुपये कुछ मजाक तो नहीं। छोटे बाबू की शरण गही उसने। रोया पीटा। साथ थी बारह साल की बेटी चुन्नी। इस रोने-पीटने का नतीजा कुछ ही दिनों बाद निकला। चुन्नी को रंगीन साड़ी मिली—हाथों में कंगना। महावर लगने लगा पाँवों में। रूपा की तनखाह एक से दो रुपये हो गई। पहले जुबान हिलती न थी, वह अब तेज हो गई।

सौदामिनी ने सब देखा। उसकी जुबान चलती ही रहती, मगर वह भी चुप हो गई। स्वभाव तो मरने से भी नहीं जाता। बक-झक करती रहती—आँख गई, तो तिरभुवन गया। भोला का बप्पा यही कहता था—फूलबहू, आँखें रहते तिरभुवन देख लो···

सब पुरानी बातें। बेनी, बंशी, लोचन, शशी, सिन्धु, गिरि···ये सब जानते हैं।

आठ बज गए, बंशी का पता नहीं। वह तब आया, जब भूतनाथ नन्हे बाबू के बैठके में तबला बजा रहा था। गाना जम गया था। अचानक बंशी ने पीछे से कहा—साले साहब—

भूतनाथ ने पलटकर देखा। कहा—रुक जा।

नन्हे बाबू ने देखा। पूछा—बात क्या है बंशी ?

—जी, छोटी माँ ने जरा इन्हें बुलाया है।

—क्यों ?

—सो नहीं जानता।

नन्हे बाबू उस समय मौज में थे। बोले—हो भी आओ भाई जरा, छोटी माँ ने बुलाया है, क्या हर्ज है ?

भूतनाथ ने तबला कान्तिधर को थमाया। कहा—अभी आया।

बंशी ने कहा—आइए, रुक क्यों गए आप ? वह खाँस उठा। दुमंजिले की सीढ़ी आई। टिमटिम जल रही थी बत्ती। बरामदे पर से एक काकातुआ बोल

तो पिताजी भी चल बसे। थे भी जब तक, चलते-फिरते न थे, पूजा-अरचा लिये रहते।

छोटी बहू को भूतनाथ ने नहीं देखा। किसी भी बहू को नहीं देखा। लेकिन लगता है, उनमें से सब जानी-पहचानी हैं। राजा बहादुर वैदूर्यमणि चौधरी का इंतकाल हुआ जमींदारी पर। महीने में एक बार जमींदारी पर जरूर जाते। अकेले। नदी के किनारे बहुत बड़ी कचहरी। रिआया की शिकायत सुनते, लगान माफ करते। गाँव के पहलवानों का दंगल देखते। पहलवान जो हुआ, उसके सात खून माफ! कभी-कभी खुद भी लड़ते। अखाड़े पर आज भी सिंदूरपुती आदमकद महावीरजी की मूर्ति पड़ी है। बद्री बाबू कहते, लेकिन मरते वक्त बूंद-भर पानी न नसीब हुआ—वह राजा बहादुर नहीं, 'राजनाग' था।

मगर उतनी रात को पानी देता भी कौन! जान भी पाता कोई! सुबह पता चला। अनादि मल्लिक तीन पुश्त के गुमाश्ता हैं। उन्हीं ने देखा। फिर दरबान, सिपाही—सबने।

वैसी भारी-भरकम लाश। नीली पड़कर आँगन में पड़ी थी। पाँव के पास एक और भी चीज़ थी। वह भी कम लम्बी-चौड़ी नहीं। चित पड़ी थी। दोनों मृत। अनादि मल्लिक सिहरकर पीछे हट गया। एक तो दिन सनीचर, फिर गेंहुअन।

पुरानी बातें हैं ये। नन्हे बाबू तब मुन्ने थे। बड़ी बहू बड़ी धर्मप्राण थीं। सात दिन तक पानी भी न छुआ। उसके बाद भूमिशय्या से जो उठीं। तो बिलकुल बदली हुई। भोजन के बाद चौंसठ बार साबुन से हाथ धोये बिना चैन नहीं। सिधु साबुन के चौंसठ टुकड़े और चौंसठ लोटा पानी लेकर उनका हाथ धुलाती। देवता का प्रसाद तक धोकर खाती हैं।

वैदूर्यमणि के बाद जमींदारी की ज़िम्मेदारी हिरण्यमणि के कन्धों पर आई। बड़ी बहू ने छोड़ा तो छोड़ा, मझले बाबू उनको कैसे छोड़ते! सुविधा ही हो गई। दोनों के दो मकान हो गए। तब तक आई हासिनी। तब उसकी उम्र कम थी। जो भी रुपये जाते, उसके लिए कम होते।

मझले बाबू की नाव पाल खोले बरानगर की तरफ बढ़ती। रह-रहकर हवा में तैरती आतीं सुरीली तानें, घुंघरू की झुनझुन्। नाव की तेज रोशनी से गंगा की गोद उजली रहती।

कौस्तुभमणि, छोटे बाबू तब कच्ची उम्र के थे। नन्हे बाबू-जैसे। तीसरे पहर गाड़ी से बाहर जाने को थे। उतर रहे थे। सीढ़ी से कि माथे पर कुछ लगा आकर जोरों से। नींबू का एक टुकड़ा सिर पर लगकर नीचे जा रहा।

पहले तो बिगड़ उठे छोटे बाबू। पूछा—कौन है रे?

मधुसूदन उसी ओर होकर जा रहा था। कहा—जी, रूपा की बेटी है, मुन्नी।

— रूपा कौन ?

—जी, वह उस कमरे मे मसाला पीसती है, दाल चुनती है।

—ओ—कहकर चले गये वे। मगर मधुसूदन कब छोड़नेवाला था! रूपा पर पाँच रुपया जुर्माना। मधुसूदन का पावना होता था यह। एक ही रुपया महीना तो मिलता है रूपा को। माँ चुन्नी की फजीहत-मरम्मत शुरू हो गई। रूपा ने उसका झोंटा खींचा, थप्पड़-मुक्के लगाये। दुर्गत की। और बाद मे रोने बैठी—मर-कर भी चैन नही मुझे, अरी छोरी, तू मरेगी कब, यम क्या भूल ही गया है तुझे! पापी पेट के लिए भून की-सी ममक्कत—फिर भी चैन नही।

मधुसूदन के पास अर्जी दाखिल हुई।

मधुसूदन ने कहा—मैं क्या करूँ, नन्हे बाबू का हुक्म है!

लेकिन रूपा की हिम्मत की तारीफ करनी पड़ेगी। पाँच रुपये कुछ मजाक तो नही। छोटे बाबू की शरण गही उसने। रोया पीटा। साथ थी बारह साल की बेटी चुन्नी। इस रोने-पीटने का नतीजा कुछ ही दिनो बाद निकला। चुन्नी को रंगीन साड़ी मिली—हाथो मे कगना। महावर लगने लगा पाँवो मे। रूपा की तनखाह एक से दो रुपये हो गई। पहले जुबान हिलती न थी, वह अब तेज हो गई।

सौदामिनी ने सब देखा। उसकी जुबान चलती ही रहती, मगर वह भी चुप हो गई। स्वभाव तो मरने मे भी नही जाता। बक-बक करती रहती—आँख गई, तो तिरभुवन गया। भोला का बप्पा यही कहता था—फूलबहू, आँखे रहते तिरभुवन देख लो ··

सब पुरानी बातें। बेनी, बशी, लोचन, शशी, सिन्धु, गिरि···ये सब जानते हैं।

आठ बज गए, बशी का पता नही। वह तब आया, जब भूतनाथ नन्हे बाबू के बैठके मे तबला बजा रहा था। गाना जम गया था। अचानक बशी ने पीछे से कहा—साले साहब—

भूतनाथ ने पलटकर देखा। कहा—रुक जा।

नन्हे बाबू ने देखा। पूछा—बात क्या है बशी ?

—जी, छोटी माँ ने जरा इन्हें बुलाया है।

—क्यो ?

—सो नही जानता।

नन्हे बाबू उस समय मौज मे थे। बोले—हो भी आओ भाई जरा, छोटी माँ ने बुलाया है, क्या हर्ज है ?

भूतनाथ ने तबला कान्तिधर को थमाया। कहा—अभी आया।

बंशी ने कहा—आइए, रुक क्यो गए आप ? वह खाँस उठा। दुमंजिले की सीढ़ी आई। टिमटिम जल रही थी बत्ती। बरामदे पर से एक काकातुआ चीख

उठा। डर लगा। उसके बाद कहाँ से, कैसे, किधर से वह महल में पहुँचा, पता नहीं।

सिंधु ने आहट पाते ही पूछा—कौन ?

—मैं हूँ, वंशी।

—ज़रा रुकना पड़ेगा भैया, बड़ी माँ हाथ धो रही हैं।

वंशी ने मुड़कर कहा—ज़रा रुक जाइए साले साहब···ज़रा के माने पूरा एक घंटा। दोनों खड़े। हुआ क्या ? वंशी ने बताया—बड़ी माँ खब्ती हैं। हाथ धोने में देर होगी।

सिंधु की आवाज़ सुनाई पड़ी—बड़ी माँ, सो गई हैं आप, उठ जाइए।

देर में बड़ी माँ का स्वर सुन पड़ा। पूछा—कै बार हुआ ?

—बस तीन बार बाकी है।

सुनकर वंशी बोला—हो चला, इकसठ बार हो चुका है—तीन बाकी है।

इजाजत मिल गई। सिंधु बड़ी माँ को कमरे में ले गया। भूतनाथ तुरत आखिरी कमरे के सामने पहुँचा। वंशी ने आवाज़ दी—चिन्ता···

काला-कलूटा-सा एक मुंह झाँककर घूंघट में ढँक गया। वंशी ने पूछा—छोटी माँ क्या कर रही हैं ?

सिर झुकाकर चिन्ता क्या बोली, समझ में न आया। लेकिन अन्दर दाखिल होकर उसने दोनों को बुला लिया।

आज सोचते हुए अचरज होता है कि उस रोज छोटी बहू का चेहरा कैसे भूतनाथ को इतना अच्छा लगा था। मानो इतना रूप उसने किसी में कभी नहीं देखा था। एक ऐसा रूप होता है, जिसे देखकर आँख जुड़ाती हैं, जी ठंडा होता है—बेचैनी नहीं होती—यह वैसा ही रूप। किसी ने मानो उसके सारे बदन पर चन्दन चढ़ा दिया। आँख, नाक, मुंह की ऐसी श्री तो शायद देवताओं में भी नहीं होती। और कुल मिलाकर जिस चीज पर पहले नज़र पड़ती, वह तो छोटी बहू के चेहरे की यह-वह नहीं। भूतनाथ को ऐसा लगा था कि उन चार दीवारों में बन्द पड़ी है मानो कोटि-कोटि मनुष्य के मन की एकान्त कल्पना। लाखों-लाख युगों के सारे सौन्दर्य को निचोड़कर गोया उनकी देह में तिलोत्तमा ने रूप लिया था। वह मानो देहगत रूप नहीं, उसे मानो स्पर्श नहीं किया जा सकता, छूने-पाने की दुनिया से परे का एक अव्यक्त वाणीमय रूपक हो मानो। मानो शरीर को छूने से वह दूध के फेन से भी नरम होगा, करीब जाने से लगेगा कि वर्ण में वह इन्द्रधनुष से भी घनी है। ऐसी प्रशान्ति तो प्रशान्त महासागर में भी नहीं।

एक बार भूतनाथ की तरफ देखकर छोटी बहू ने घूंघट [illegible] आँखों के इशारे से वंशी ने बता दिया—साले साहब यही हैं।

छोटी बहू ने कहा—आओ, बैठो।

नीचे गलीचा बिछा था। भूतनाथ बैठ गया।

छोटी बहू बोली—तू जरा बाहर जाकर खडा रह वंशी, मैं बुला लूंगी। चिन्ता को भी किसी काम के बहाने बाहर भेज दिया। कैसी तो एक जबर्दस्त घुटन से पसीने-पसीने होने लगा भूतनाथ ! उनके चेहरे की तरफ टकटकी लगाने से भी तृप्ति नहीं होती। सिर झुकाए बैठा था। जी मे हो रहा था, एक नजर और देख लूं उस मुखडे को!

छोटी बहू कहने लगी—सब लोग तुम्हे साले साहब कहते हैं। नाम क्या है, कोई नहीं जानता। वंशी से पूछा, वह भी नही बता सका।

सिर झुकाए हुए ही भूतनाथ बोला—आप भी उसी नाम से पुकारा करें।

—मगर मां-बाप ने कुछ नाम तो रखा ही होगा।

—बाप-मां को तो मैंने आंखों नही देखा। मेरा नाम रखा था फूफी ने। नाम है भूतनाथ चक्रवर्ती। सबको जॅचता नही।

—ब्राह्मण हो। मैं लेकिन तुम्हे भूतनाथ कहूंगी, भला? उम्र में तुमसे छोटी होते हुए भी रिश्ते में बड़ी हूं। तुम मुझे छोटी बहू कहना।

भूतनाथ कुछ देर चुप रहा। उसके बाद गर्दन उठाकर बोला—मुझे बुलाया किस लिए था?

—बताती हूँ, लेकिन पहले कुछ नाश्ता कर लो तुम। मेरा छुआ खाने में कोई एतराज तो न होगा?

उनकी चूड़ियों और कुजियों की झनकार सुनाई पडी। धोती की कोर के नीचे जरा-सा जो हिस्सा दीख रहा था, वह शरीर का निहायत ही मामूली-सा हिस्सा। नन्हीं-नन्हीं उँगलियां महावर में बेहद खूबसूरत लगी। दूध-से सफेद नाखून—महावर से घिरे। बेर-से रस-भरे।

सादे पत्थर की रिकाबी में चिन्ता नाश्ता ले आई।

छोटी बहू ने कहा—मेरे यशोदा दुलाल का प्रसाद है। चिन्ता, पानी ले आ भूतनाथ के लिए।

उनके मुंह से अपना नाम भूतनाथ को आज बड़ा अच्छा लगा। वह एक-एक करके मिठाइयो को तश्तरी से ले-लेकर मुंह मे भरने लगा—गोया मशीन हो। उसके बाद एक बार चारो तरफ निगाह दौड़ाई। एक ओर एक पलँग था। ऊपर से लटक रही थी एक रंगीन मच्छरदानी। मोटे गद्दे पर खूब साफ चादर। दो बड़े-बड़े तकिये। दीवार पर तस्वीरें। कृष्ण का खीर-भोजन। गिरिगोवर्द्धनधारी यशोदा दुलाल। दमयन्ती के सामने नल का हंसदूत। मदनभस्म—शिव के ललाट से झाड़ की तरह छिटकी हुई चिनगारियां। कांच की एक अलमारी में खिलौने। घाघरा वाली मेम। गोरा पलटन। जूड़ा वाली कालीघाट की बहू। कोने में छो-

सी तिपाई पर धूप जल रहा था। फूल-बेल-पत्ते की भीड़ में श्रीकृष्ण की मूर्ति। सोने की मूर्ति। हाथ की मुरली भी सोने की।

—पान खाते हो?

—नहीं।

—खा लो। एक दिन खा लेने से हर्ज नहीं। छोटी बहू दे रही हैं।

पान चबाते हुए भूतनाथ सोचने लगा—अचानक यह आदर-जतन क्यों आखिर? कहीं छोटे बाबू आ धमकें! यों बंशी ने बताया तो है कि छोटे बाबू कभी भी रात को घर नहीं रहते। चुन्नी के यहाँ रहते हैं। भूतनाथ ने कहा—तो आज मैं चलूं बहूजी···

—चलूं क्या, अभी तो जो कहना था, सो तो कहा ही नहीं। बंशी कह रहा था, तुम शायद 'मोहिनी-सिंदूर के दफ्तर' में काम करते हो?

—यों ही कर रहा हूं। कहीं अच्छी जगह मिल जाएगी, तो छोड़ दूंगा। ब्रजराखाल के दफ्तर में कोई जगह···।

—मेरा वह मतलब नहीं, मैं पूछती हूँ, मोहिनी-सिंदूर से कुछ होता भी है?

अबकी भूतनाथ ने सीधे उनके मुंह की ओर ताका। पतले होंठ। होंठों से छिटकी हुई ललाई। कानों में हीरे के फूल। कपाल पर उड़ते हुए दो-एक बेवर्स बाल। उसके ठीक नीचे दो काली आँखों की सहज, लेकिन गहरी निगाह। काजल से आँखें तो नहीं आँजी हैं!

छोटी बहू ने पूछा—बंशी ने कुछ बताया नहीं तुम्हें?

भूतनाथ ने सिर्फ़ इतना ही कहा कि आपने मुझे बुलाया है। सोच-सोचकर भी आ न पाया—दफ्तर से लौटने में ही देर हो जाती है रोज़।

—बहुत काम करना पड़ता है शायद।—आवाज़ में हमदर्दी भरी।

—जी, सब-कुछ तो हम लोगों पर ही है। सुविनय बाबू सिर्फ रुपये-पैसे का हिसाब-किताब रखते हैं।

—सुविनय बाबू कौन? तुम्हारे मालिक हैं?

—जी हां, ब्राह्म हैं, मगर आदमी बड़े भले हैं। मेरे ही लिए उन्होंने अपने रसोइए को बाहर किया।

—क्यों?

भूतनाथ ने सारा किस्सा कह सुनाया। तनखाह, जबा के सलूक, जबा की माँ के पागल होने की बात—सब-कुछ। सुनाने में आज उसे अच्छा लगा। कभी किसी औरत ने इस तरह ध्यान से उसकी बात नहीं सुनी, सुनना भी नहीं चाहा। ऐसी श्रोता यहां मिलेगी, किसे पता था? दुःख की सहज-सी कहानी। सजा-गुजाकर कहना भी नहीं आता। उनकी तरफ आँख उठाकर देखने में अब संकोच न

हुआ उसे। उनके हाथ की कुञ्जियों का झब्बा रह-रहकर झनक उठता···खनखना उठती चूड़ियाँ। माँग में सिन्दूर, मानो अभी-अभी माँग भरी हो। बालों पर पानी की बूँदें—होंठों में मुस्कान। उसकी कहानी सुनते हुए रह-रहकर दाँत से अपना पतला होंठ काट लेती थी। इतना अच्छा और कभी न लगा था भूतनाथ को। वह बोला—चलूँ अब, काफी देर कर दी आपको।

जी में लेकिन खौफ हुआ, चल ही न देना पड़े कहीं।

छोटी बहू ने कहा—बलिहारी अकल तुम्हारी—जवा क्या यों ही तुम्हें बेवकूफ कहती है। इतने दिन हो गए यहाँ रहते, अब भी कुछ समझ नहीं सके? रात के बारह बजे इस घर में साँझ होती है, नहीं जानते?

भूतनाथ चुप।

छोटी बहू ने पूछा—तुम्हारे मोहिनी-सिंदूर का दाम क्या है?

—दो रुपया सवा पाँच आना। मगर रुपयों की अभी जरूरत नहीं।

—जरूरत क्यों नहीं? चोरी करोगे? नहीं-नहीं। छोटी बहू के आवाज देते ही चिन्ता आई। कहा, यह कुञ्जी रही, भूतनाथ को पाँच रुपये दे-दे निकालकर।

—पाँच रुपये क्या करूँगा मैं?

—बाकी चाहे लौटा देना—कहकर उन्होंने पाँच चमकते सिक्के भूतनाथ की मुट्ठी में रख दिए। कहा—मगर सिंदूर का हर्गिज़ किसी से ज़िक्र न करना।

भूतनाथ की वाक्‌शक्ति खत्म हो गई। लगा, छोटी बहू के हाथ में जादू है। इतना नरम! इतना स्निग्ध! वह उनके चेहरे की ओर देखने लगा। वह कुछ गम्भीर हो गई थी।

बोली—सिन्दूर का जिक्र नहीं करना है कहीं, याद रहेगा?

—आपने मना किया तो किसी से न कहूँगा।

—मना न करती तो शायद सबसे कहते फिरते? हँस पड़ी बहू।

भूतनाथ हँसी का अर्थ न समझ सका। गूँगा-सा रह गया। छोटी बहू ने कहा—देख क्या रहे हो यों? जानते नहीं कि ये बातें किसी से कहनी नहीं चाहिए।

सिन्दूर लगाने में ऐसा क्या गोपनीय रहस्य हो सकता है! भूतनाथ बोला—आप खातिर जमा रखें, मैं किसी से न कहूँगा।

—वंशी तक से नहीं।

—वादा करता हूँ, वंशी से भी न कहूँगा।

—अपने बहनोई से भी नहीं।

—वादा करता हूँ।

—जवा से भी नहीं। [illegible]

कुछ।

[छ]त पर धूप जल रहा था। फूल-बेल-पत्ते की भीड़ में श्रीकृष्ण की मूर्ति। सोने [की]। हाथ की मुरली भी सोने की।

—पान खाते हो?

—नहीं।

—खा लो। एक दिन खा लेने से हर्ज नहीं। छोटी बहू दे रही हैं।

पान चबाते हुए भूतनाथ सोचने लगा—अचानक यह आदर-जतन क्यों [आख़]िर? कहीं छोटे बाबू आ धमकें! यों बंशी ने बताया तो है कि छोटे बाबू कभी रात को घर नहीं रहते। चुन्नी के यहाँ रहते हैं। भूतनाथ ने कहा—तो आज मैं [च]लूँ बहूजी···

—चलूँ क्या, अभी तो जो कहना था, सो तो कहा ही नहीं। बंशी कह रह[ा थ]ा, तुम शायद 'मोहिनी-सिंदूर के दफ्तर' में काम करते हो?

—यों ही कर रहा हूँ। कहीं अच्छी जगह मिल जाएगी, तो छोड़ दूँगा [ब]ृजराख़ाल के दफ्तर में कोई जगह···।

—मेरा वह मतलब नहीं, मैं पूछती हूँ, मोहिनी-सिंदूर से कुछ होता भी है?

अबकी भूतनाथ ने सीधे उनके मुँह की ओर ताका। पतले होंठ। होंठों से छिटकी हुई ललाई। कानों में हीरे के फूल। कपाल पर उड़ते हुए दो-एक बेबस बाल। उसके ठीक नीचे दो काली आँखों की सहज, लेकिन गहरी निगाह। काजल से आँखें तो नहीं आँजी हैं!

छोटी बहू ने पूछा—बंशी ने कुछ बताया नहीं तुम्हें?

भूतनाथ ने सिर्फ़ इतना ही कहा कि आपने मुझे बुलाया है। सोच-सोचकर भी आ न पाया—दफ्तर से लौटने में ही देर हो जाती है रोज़।

—बहुत काम करना पड़ता है शायद।—आवाज़ में हमदर्दी भरी।

—जी, सब-कुछ तो हम लोगों पर ही है। सुविनय बाबू सिर्फ रुपये-पैसे का हिसाब-किताब रखते हैं।

—सुविनय बाबू कौन? तुम्हारे मालिक हैं?

—जी हाँ, ब्राह्म हैं, मगर आदमी बड़े भले हैं। मेरे ही लिए उन्होंने अपने रसोइए को बाहर किया।

—क्यों?

भूतनाथ ने सारा किस्सा कह सुनाया। तनख़ाह, जबा के सलूक, जबा [की] माँ के पागल होने की बात—सब-कुछ। सुनाने में आज उसे अच्छा लगा। क[भी] किसी औरत ने इस तरह ध्यान से उसकी बात नहीं सुनी, सुनना भी नहीं चा[हा]। ऐसी श्रोता यहाँ मिलेगी, किसे पता था? दुःख की सहज-सी कहानी। सजा-[सजा]कर कहना भी नहीं आता। उनकी तरफ आँख उठाकर देखने में अब संक[ोच]

हुआ उसे। उनके हाथ की कुञ्जियों का झब्बा रह-रहकर झनक उठता···खनखना उठती चूड़ियाँ। माँग में सिन्दूर, मानो अभी-अभी माँग भरी हो। बालों पर पानी की बूँदें—होठों मे मुस्कान। उसकी कहानी सुनते हुए रह-रहकर दाँत मे अपना पतला होंठ काट लेती थी। इतना अच्छा और कभी न लगा था भूतनाथ को। वह बोला—चलूँ अब, काफ़ी देर कर दी आपको।

जी मे लेकिन खौफ हुआ, चल ही न देना पड़े कही।

छोटी बहू ने कहा—बलिहारी अकल तुम्हारी—जवा क्या यो ही तुम्हें बेवकूफ कहती है। इतने दिन हो गए यहाँ रहते, अब भी कुछ समझ नही सके? रात के बारह बजे इस घर मे साँझ होती है, नही जानते?

भूतनाथ चुप।

छोटी बहू ने पूछा—तुम्हारे मोहिनी-सिंदूर का दाम क्या है?

—दो रुपया सवा पाँच आना। मगर रुपयो की अभी जरूरत नही।

—जरूरत क्यों नही? चोरी करोगे? नही-नही। छोटी बहू के आवाज देते ही चिन्ता आई। कहा, यह कुञ्जी रही, भूतनाथ को पाँच रुपये दे-दे निकालकर।

—पाँच रुपये क्या करूँगा मैं?

—बाकी चाहे लौटा देना—कहकर उन्होंने पाँच चमकते सिक्के भूतनाथ की मुट्ठी में रख दिए। कहा—मगर सिंदूर का हर्गिज किसी से जिक्र न करना।

भूतनाथ की वाक्शक्ति खत्म हो गई। लगा, छोटी बहू के हाथ मे जादू है। इतना नरम! इतना स्निग्ध! वह उनके चेहरे की ओर देखने लगा। वह कुछ गम्भीर हो गई थी।

बोली—सिन्दूर का जिक्र नही करना है कही, याद रहेगा?

—आपने मना किया तो किसी से न कहूँगा।

—मना न करती तो शायद सबसे कहते फिरते? हँस पडी वह।

भूतनाथ हँसी का अर्थ न समझ सका। गूँगा-सा रह गया। छोटी बहू ने कहा—देख क्या रहे हो यो? जानते नही कि ये बातें किसी से कहनी नही चाहिए?

सिन्दूर खरीदने मे ऐसा क्या गोपनीय रहस्य हो सकता है! भूतनाथ बोला—आप खातिर जमा रखें, मैं किसी से न कहूँगा।

—वशी तक से नही।

—वादा करता हूँ, वंशी से भी न कहूँगा।

—अपने बहनोई से भी नही।

—वादा करता हूँ।

—जवा से भी नही। वह भी नही समझेगी। शादी हुई होती तो समझती कुछ।

अपने अजानते ही पूछ बैठ..ण और कौस्तुभमणि ने ग़ौर नहीं किया। बड़े महल
—यह तुम न समझ: में तब तक पौधों की जड़ें झूलने लगीं। नाहक ही छोटी
समझतीं। पहनकर देवता का पूजा-पाठ करतीं, शृंगार करके तमाम रात
भूतनाथ ने.ठो रहतीं।
तो समझती ' इतने बड़े घर की बहू से इस तरह परिचय होगा, सोचा भी न जा सकता
.। भूतनाथ का खयाल था, वह दरवाज़े के पास खड़ा रहेगा और दाई की मार-
फत बातें होंगी। मगर यह क्या, पहले ही दिन इतना अपनापन, इतनी घनिष्ठता !
यकीन नहीं आता। हो सकता है, छोटी बहू गरीब घर की लड़की हैं, इसीलिए इस
घर में अपवाद-सी हैं।

भूतनाथ जाने लगा तो छोटी बहू ने कहा—तुमने मेरे यशोदादुलाल को प्रणाम नहीं किया भूतनाथ !

भूतनाथ मूर्ति की तरफ बढ़ा। झुककर प्रणाम किया। पर लगा, वह प्रणाम देवता के पाँवों तक नहीं पहुँचा। बाहर निकलने पर जी में आया, प्रणाम उसने किया किसको ? छोटी बहू के देवता को ? या और किसी को ? यों छोटी बहू को प्रणाम करने का कोई मतलब नहीं होता। उन्हें देखकर महज़ क्या भक्ति ही हुई ? और कुछ नहीं ?

छोटी बहू ने कहा था, सिन्दूर तुम खुद ले आना। बंशी से कहना, वह तुम्हें रास्ता दिखाते हुए साथ ले आएगा।

भूतनाथ को ऐसा लगा, छोटी बहू उसे पहले से ही पहचानती थी। मगर कैसे ? शायद बंशी ने बताया हो।

बंशी ने लेकिन कहा—नहीं साले साहब, मैं क्यों बताने लगा भला ! उन्होंने पूछा था कि आप कैसे आदमी हैं। सो मैं जो जानता था, वह बताया। आप यकीन मानें, मैंने कोई शिकायत नहीं की। वैसा आदमी मैं नहीं हूँ।

बंशी चला गया।

नन्हे बाबू की महफ़िल चल रही थी। चमेली फूली चम्पा···सम आ पहुँचा। अब क्या गाया जाए ?

तमाम सन्नाटा। इब्राहिम के घर में जल रही थी रेंड़ी के तेल की बत्ती। पहरे पर तैनात था नत्थूसिंह। कमरे में पहुँचा तो देखा, ब्रजराखाल आ चुका था। कुछ पढ़ रहा था। वह चौंक उठा। कोई बड़ा गुनाह किया हो जैसे। मुँह दिखाने में शर्म लगी।

ब्रजराखाल ने सब सुना। सुनकर कहा—छोटी बहू ने जब मना किया था, तो तुमने मुझसे कहा क्यों ?

—तुम्हें कहने में क्या हर्ज है ?

ब्रजराखाल ने कहा—किया सो किया, मगर अच्छा नहीं किया। वे हैं

जवा ने सिर नीचे करके कहा—आपकी मर्जी।

—यह कैसी बात, विवाह तुम्हारा है, सारे समारोह की केन्द्र तुम हो। न जिन्हें कहोगी, मैं उन्हीं को निमन्त्रण दूंगा और भूतनाथ बाबू तो घर के-से

—मैं भूतनाथ बाबू के लिए रसोई का इन्तज़ाम करूँ।—और वह पल-में सीढ़ी के नीचे उतर गई।

भूतनाथ ने कागज़ात पर सुविनय बाबू की सही कराई। सुविनय बाबू बोले —बैठो, तुमसे कुछ कहना है।

भूतनाथ बैठ गया।

सुविनय बाबू ने कहा—अगले इतवार को एक छोटा-मोटा उत्सव करने क इरादा है। उसी दिन जवा के ब्याह की बात पक्की होगी। सोचा, मैं अब कै दि को हूँ, और ये भी—

पास बैठी जवा की मां को दिखाकर कहने लगे—ये हैं, नहीं हैं दोनों बरा-बर। जवा विवाह के योग्य भी हो आई। लड़का भी मनलायक मिल गया है। मेधावी है। एम० ए० पास किया है। कानून पढ़ रहा है। बाप नहीं है तो क्या हुआ? इस जायदाद की ज़िम्मेदारी तो एक दिन जवा को ही लेनी है। मुझे लड़का नहीं है, न सही, दामाद को ही लड़के की तरह रखना होगा। उन्हें रोटी-कपड़े की फिक्र न करनी पड़ेगी।

भूतनाथ ने कहा—तो मैं चलूं?

—नहीं, बैठो, तुम्हें कहानी कहूँ—जिस दिन दीक्षा ली—उफ़, पूछो मत। सुन ही लो—

भूतनाथ बोला—वह कहानी सुना चुके हैं आप।

—अच्छा, कह चुका हूँ। मुझे लगता रहता है, किसी से कह नहीं सका। कोई याद भी रखेगा? दिन तो मेरे खत्म होने को आए, भागवत में रतिदेव की कहानी पढ़ी है—सारा दिन दान करते रहने के बाद जब उन्होंने अपना पीने का पानी तक एक मंगते को दे दिया और मन-ही-मन जो कहा, भागवतकार ने उसे अमृत कहा है—इदमाहामृतं वचः—उन्होंने कहा क्या? कहा, भगवान् से मैं परम-गति नहीं मांगता, आठ सिद्धियां नहीं चाहता, पुनर्जन्म भी नहीं। मैं चाहता हूँ कि मैं सारे जीवों में प्रवेश कर उनका दुःख ग्रहण कर सकूं, ताकि उन्हें दुःख न रहे।

—अहा, पिताजी को मैंने घंटों मूर्ति के सामने बैठकर ध्यान करते देखा है, त्वमेकं जगत्कारणं विश्वरूपं। बड़े गरीब थे—भजन-पूजन में ही डूबे रहते थे। याद है, छुटपन में मैं हुक्का-चिलम से खेलना पसन्द करता था। कम-से-कम दस चिलम तो रोज ही तोड़ता। पिताजी आँगन में बैठे-बैठे—अच्छी तो लग रही है भूतनाथ बाबू? ऊब जाओ तो कहना।

रोते-रोते जवा की माँ ने कहा—भूख लगी है।

—भूख लगी है? ठीक तो है, ले आता हूँ। खाओ। रोना क्या?

—लेकिन अभी ही तो खाया मैंने।—वह और ज़ोर से रोने लगीं।

—खाया तो क्या हुआ, फिर खाओ।

भूतनाथ को वहाँ रहना अजीब-सा लगने लगा। बोला—मैं जाता हूँ।

सुविनय बाबू ने मुड़कर देखा।—जाओगे? इन्हें अचानक ऐसा ही हो
ा है। लाख किया, यह बीमारी न गई। अपने मुन्ने के मर जाने के बाद से ही
ा हुआ है। खाने में तुम्हें देर हो गई। तुम जवा से नाराज़ न होना।

भूतनाथ फिर कुछ न बोला। कुरसी पर आ बैठा।

ज़रा ही देर बाद रतन बुलाने आया खाने के लिए। जवा पास ही खड़ी
ही, पर खाते वक्त कोई बात न हुई।

एक बार जवा ने कहा—चावल सब खा लेना पड़ेगा आपको।

भूतनाथ ने नज़र उठाई। कहा—गाँव के लोग खाते ज़्यादा ज़रूर हैं,
लेकिन इतना ज़्यादा?

—कहीं पेट न भरा तो?

जवा का चेहरा गम्भीर हो उठा। ज़्यादा बोलती नहीं। फिर देर तक चुप-
चाप। कैसा तो हुआ यह! रोज़-रोज़ अपने हाथ से भोजन बनाना।

थोड़ी देर बाद भूतनाथ ने छेड़ा—तुम्हारे पिताजी ने मुझे इतवार को
आने के लिए कहा है। लेकिन यह नहीं बताया कि सुबह या शाम को?

—यह आप उन्हीं से पूछिए।

—लेकिन शादी जब तुम्हारी हो रही है, तो तुम्हें भी तो कुछ ज़रूर पता
होगा। तुम्हारे सामने होते फिर···।

—शादी चूँकि अपनी है, इसीलिए आप से कुछ कहना जँचता नहीं।

—आखिर शादी कोई शर्म की बात है? समय पर सबकी शादी होगी।

—होगी? मुझे लेकिन शुबहा होता है।

भूतनाथ ने कहा—गँवई का हूँ—चावल ज़्यादा खाता हूँ। पर इसका यह
मतलब नहीं कि बात भी ज़्यादा कर सकता हूँ। इतना ही कह सकता हूँ कि सब
लड़कियाँ तुम्हारी ही जैसी नहीं।

—कितनी लड़कियों से आपका परिचय है?

भूतनाथ के जी में आया कि सबका नाम बता दे उसे—

राधा, हरिदासी, अन्ना और कल रातवाली छोटी बहू। छोटी बहू की
याद आते ही वह मानो बड़े महल के तिमंजिले वाले आखिरी कमरे में जा पहुँ
एकाएक प्रसंग बदलकर बोला—एक बात पूछूँ, इस तुम्हारे मोहिनी सिन्दू
कोई फल भी होता है?

पर ध्यान दिया। जवा भी कुछ क्षण चुप रही। बाद में बोली—देख रही हूँ, आप सिर्फ एहसान-फ़रामोश ही नहीं हैं, झूठे भी हैं।

खाते-खाते ही वह बोला—यह भी कहा है मैंने।

—यानी ?

भूतनाथ ने जवाब न दिया। उसी तरह खाता रह गया।

—चुप क्यों हो गए ? जवाब दीजिए।

भूतनाथ ने नज़र ऊपर को उठाई। देखा, जवा का चेहरा लाल हो उठा है। कहा—गँवई का आदमी ठहरा, भात जरा ज्यादा खा लेता हूँ, बना-बनाकर बोल नहीं सकता—लेकिन मान-अपमान का ज्ञान हमें भी है।

जवा ने कहा—है ही नहीं, बहुत ज्यादा है। वरना उस रोज़ एक औरत का अपमान करने में आपको हिचक होती।

भूतनाथ आबहवा को ताड़ गया। कहा—मुझसे ग़लती हो गई थी, कबूल करता हूँ, लेकिन जब मैं क्षमा माँगने के लिए लौटा, तो तुमने ही मेरी कौन-सी मर्यादा रखी !

खा चुकने के बाद हाथ धोते-धोते भूतनाथ बोला—लेकिन याद रखो, तुम खुद से अगर नहीं कहोगी, तो इतवार को मैं नहीं जाऊँगा।

जवा हँसी। बोली—उम्मीद तो आपने बड़ी बाँधी है।

भूतनाथ ने जवा के चेहरे की तरफ़ देखकर उसके मन को ताड़ने की कोशिश की, लेकिन तब तक वह जा चुकी थी।

सन् १८९७। ब्रजराखाल रात नहीं लौटा। पहले ही दिन रात को कह गया था—भाई साहब, खूब तड़के जग जाना, वरना देख ही न पाओगे। बड़ी भीड़ होगी। अब वह नरेनदत्त तो नहीं है—अब स्वामी विवेकानन्द। सुबह सात-साढ़े सात बजे तक स्पेशल गाड़ी आ लगेगी। उससे पहले ही जा पहुँचना। मैं वहीं होऊँगा।

स्वामी विवेकानन्द ! बात करते हुए ब्रजराखाल काँपने लगा। कहा, जाने से पहले नरेन ने कहा था—"I go forth to Preach a religion of which Buddhism is nothing but a rebel child and Christianity but a distant echo." वही हुआ भी।

खूब तड़के ही जगा भूतनाथ। इस घर में सबेरा जरा देर से होता है। मुँह-अँधेरे ही नहाकर उसने चादर ओढ़ ली। सरदी थी। घर के कोने-कोने की बत्तियाँ तब भी जल रही थीं। पहरे पर बैठा नत्यूसिंह थक चला था। आहट होते ही उठ खड़ा हुआ। पता नहीं, छोटी बहू क्या कर रही हैं इस समय। सो गई होंगी ज़रूर। तमाम रात जागकर जाने क्या करती हैं ! चकित रह जाता भूतनाथ।

उसके कानों में अभी भी व्रजराखाल की बातें गूंज रही थीं। अमरीका से लौटकर विवेकानन्द ने कहा—आओ, आदमी बनो, तुम्हारे सगे-सम्बन्धी रोते हैं, तो रोएँ, पीछे न ताको, बढ़ चलो। भारत माता को ऐसे हज़ारो प्राणों की बलि चाहिए। मगर आदमी की—जानवर की नही।

सात रुपल्ली के एक किरानी को पूछता कौन है? दूसरे के टुकड़ों पर पेट पालने वाला भूतनाथ। कलकत्ते में इतने दिनों रहकर देखा भी क्या उसने? आदमी भी देखा कोई! बड़े महल के लोग तो मानो हवा में उड़ते-फिरते हैं। उन पर कुछ भी असर नही पड़ता। घर में दम घुटता है जैसे। छोटी बहू ने कहा था—अजीब घर है यह, अजीब।

सचमुच अजीब है यह घर। बद्री बाबू ने भी यही कहा। कमरा शायद खुला था उनका। तख्त पर कोई जैसे चित लेटा था। अँधेरे में आवाज़ आई—कौन है?

—मैं हूं।—और वह जाने लगा।

फिर आवाज़ आई—ज़रा सुन तो जाओ।

धीरे से कमरे मे दाखिल हुआ भूतनाथ। देखा बदन पर रुई की बण्डी। मोटा-सोटा आदमी। बूढ़ा। भूतनाथ को देखकर उठ बैठा। वशी ने बताया था, यही बद्री बाबू हैं। उनकी तरफ हर्गिज़ न जाइए। नजर पड़ी नही कि पुकार। डर से कोई नही जाता उस तरफ।

लेकिन डर कैसा!

—बैठो।

भूतनाथ बैठ गया।

—नाम क्या है तुम्हारा?

और सिर्फ नाम ही नहीं—बाप का नाम। जात। पेशा। खोद-खोदकर हुलिया पूछा। सब सुन चुकने पर कहा—मगर तुमने अच्छा नही किया।

भूतनाथ कुछ समझ नही सका।

—हाँ, अच्छा नही किया। बद्री बाबू झूठ नहीं कहते। भला चाहो तो नौ-दो-ग्यारह हो जाओ, वरना गत होगी। मैं मुर्शिदकुली खाँ के ज़माने से सब-कुछ देखता आ रहा हूं। लार्ड क्लाइव को देखा, सिराजुद्दौला को देखा, इस कलकत्ते की नींव पड़ते देखी—हालसीबगान देखा। अब अन्त देखने के लिए यह घड़ी लिये बैठा हूँ—समय मिला लूंगा। फिर दीवार की तरफ उँगली से इशारा करके कहा—वह देखो, सारी जन्म-पत्री जमा है—मिलाकर देख चुका हूँ···*मिलना ही पड़ेगा।*

अचरज से भूतनाथ ने ताका। दीवार की अलमारी में करीने से सजी थी किताबें। मोटी-मोटी किताबें। सुनहरे हरूफ मे लिखे नाम-गाम।

सब देख चुका हूँ—वही होगा। न हो तो अपनी यह घड़ी झूठी है। कि की तोप से रोज़ इसे मिलाता हूँ—एक सेकण्ड भी इधर-उधर होने की गुन्जाइ नहीं। यह कहकर उन्होंने कमर से घड़ी को निकाला। उसे एक बार कान के पा ले जाकर फिर कमर में रख लिया। बोले—यह सन् १३४५ की बनी है और आ १८९७ है। यह घड़ी लगातार पाँच सौ साल से एक ही बात कहती आई है।

भूतनाथ ने पूछा—क्या कहती है?

—कहती है, सब-कुछ लाल हो जाएगा।

—लाल?

—हाँ, नीला, हरा, पीला—कुछ नहीं—सिर्फ लाल। दिल्ली के बादश... ने समझा था, रणजीतसिंह ने इसे समझा था, सिराजुद्दौला, अलीवर्दीखाँ, जगत् सेठ, मीर जाफ़र, राममोहन, बंकिम चटर्जी—सबने समझा था। समझा नहीं एक 'बंगवासी' ने।

—बंगवासी, यानी?

—बंगवासी अखबार। ऐसा न होता तो वह विवेकानन्द-जैसे को गोमांस-भक्षक और मुरगखोर कहता? सात सौ साल की मुस्लिम सल्तनत में छः करोड़ लोग मुसलमान होते और महज सौ साल के अंग्रेजी राज में छत्तीस लाख लोग ईसाई बनते? नमकहरामी की सजा तो भोगनी होगी? अबे छोकरे, भला चाहता है तो चल दे यहाँ से, वरना मरेगा। जिस दिन यह घर जमींदोज़ होगा, कुली-मजूर सब्बल से इसे तोड़ेंगे, तो दबकर मरेगा। पाँच सौ बावन साल की यह घड़ी आठों पहर यही कहती है। मैं सुनता हूँ और चित लेटा रहता हूँ।

गजब का आदमी! साइकिल से जाते हुए भूतनाथ सोचता, ज़िन्दगी में एक अजीब आदमी से भेंट हुई। इस पगले के दिमाग में इतिहास का अचूक निर्देश कैसे आ बैठा था, कौन जाने!

भूतनाथ सोचता रहा था, इस घड़ी-बाबू के कहीं-न-कहीं जख्म ज़रूर है। ऊपर से दिखाई नहीं पड़ता।

बंशी ने बताया, महल में जितनी भी घड़ियाँ देखते हैं आप, सब बद्री बाबू के जिम्मे हैं। वही उनमें चाबी देते हैं और रात के नौ बजे किले की तोप से अपनी घड़ी को मिला लेते हैं।

सत्रहवीं सदी के अन्त की बातें हैं ये।

नवाब मुर्शिदकुली खाँ को दिल्ली के बादशाह के पास कर भेजना था। उनके प्रधान कानूनगो थे दर्पनारायण मिश्र। उनकी सही के बिना बादशाह के कोषागार में रुपये जमा नहीं हो सकते थे। ज़मींदारों का खून चूसा हुआ रुपया—मारे घमण्ड के ज़मीन पर पैर नहीं पड़ते थे मुर्शिदकुली खाँ के। लगान देने में एक दिन की भी देर हो तो ज़मींदारों का वैकुण्ठवास!

दर्पनारायण अकड़ बैठे—तीन लाख रुपये चाहिए। तब सही करूँगा। मुर्शिदकुली ने कहा—सही बना दो। पावना लौटकर चुकाऊँगा।

दर्पनारायण आदमी टेढ़े थे। बोले—फिर सही भी बाद ही मे बनाऊँगा।

आखिर मुर्शिदकुली उनकी सही लिये बिना ही दिल्ली चले गये। वहाँ कुछ अमीर-उमरावों को घूस देकर उन्होंने अपना काम बना लिया। मगर यह अपमान वे न भूल सके। लौटकर गबन का इलजाम लगाकर दर्पनारायण को उन्होंने जेल मे ठूंस दिया। वहीं भूखे-प्यासे दम तोड़ा उन्होंने। इतिहास उन्हें भुला बैठा।

उन्ही दर्पनारायण के खानदान के बद्री बाबू आज बडे महल की घड़ियों की निगरानी करते हैं। शायद घड़ी की टिकटिक मे वे काल के चरणों की ध्वनि सुना करते हैं।

उसके बाद जमाना गुजरा। कितनी पीढ़ियाँ पार हो गईं। जानें कहाँ गया नज़ीर अहमद और कहाँ गुम हो गया रजा खाँ! कहाँ तो गया मधुमती-तट का सीताराम और फौजदार अबूतुरप! पीरखाँ नही रहा, नही रहा बख्श अली। लेकिन दर्पनारायण के इस अपमान का बदला अभी तक नही चुकाया जा सका। वह वंश भी मिट चला। लेकिन बड़े महल के बैठके मे बैठे बद्री बाबू इतिहास के पन्ने पलटते और श्राप दिया करते। सारी पृथ्वी को सरापते, जो कि अत्याचार करती है, आदमी को आदमी का सम्मान नही देती।

कहा—घड़ी कहती है, सब-कुछ लाल हो जाएगा। देख लेना।

पाँच सौ बावन साल पहले जो यन्त्र-युग आया, उसकी पहली भेंट है घड़ा। उसी में मानो मशीनी सभ्यता का सब-कुछ सिमटा है। सब लाल होगा। अमृतपुत्र मनुष्य की जय होगी।

बद्री बाबू बोले—देख लेना, आखिर एक दिन हमारी जीत होकर रहेगी। शायद तब मैं न रहूँ। यह महल नही रहेगा—ये मझले बाबू, छोटे बाबू, मैं-तुम—कोई न रहेंगे—छोटे लाट, बड़े लाट अँग्रेज़ी सल्तनत—कोई नही। मगर देख लेना, मेरा कहा गलत न होगा।

सरदी से ठिठुरता हुआ भूतनाथ आगे बढ़ा।

रास्ते के दोनों ओर की दूकानें बन्द थीं। धुँधलका था। धूल और गन्दगी की बू। चलते-चलते भूतनाथ ने सोचा—बद्री बाबू पागल चाहे हों, पर कहीं उनका कहा सच निकले!

स्यालदा स्टेशन मे खासी भीड़ थी। अँधेरे में साफ दीख नहीं रहा था, तो भी भूतनाथ व्रजराखाल को ढूँढने की कोशिश करने लगा। नवजवान ज्यादा जुटे थे। चारों तरफ लोग बेसब्री से इन्तज़ार कर रहे थे। इसी देश का एक सपूत आज महावाणी लेकर आ रहा है। उसने कहा है—"ससार का एक भी आदमी जब तक

भूखा है, जानो दुनिया का प्रत्येक आदमी तब तक गुनहगार है।" उसने कहा है—"आज से हर झंडे पर ये हरूफ लिख दो—लड़ाई नहीं, सहयोग; भेद-भाव नहीं—एका और शान्ति।" उसने कहा है—"तुम पापी नहीं, अमृत की सन्तान हो। दुनिया में पाप नाम की कोई चीज़ नहीं, और कुछ है तो मनुष्य को पापी कहना ही पाप है। तुम शुद्ध हो, मुक्त हो, महान् हो। जगो। 'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान् निबोधत'।"

धीरे-धीरे सवेरा हो गया। भीड़ और बढ़ गई। भूतनाथ ने नजर दौड़ाई—स्टेशन के चारों ओर नरमुंड ही दिखाई दे रहे थे। कौन हैं ये? इतने दिनों तक कहाँ थे? ये भी क्या व्रजराखाल-से भक्त हैं विवेकानन्द के?

अचानक भीड़ के उस समन्दर में हलचल पैदा हुई। इंजन की सीटी सुनाई पड़ी। 'जय, रामकृष्ण देव की जय, जय, विवेकानन्द स्वामी की जय' के नारे लगे।

जन-प्रवाह के साथ भूतनाथ भी स्टेशन में दाखिल हुआ।

गाड़ी आकर लग गई। भीड़ के नारों के बीच उस दिव्य पुरुष का आविर्भाव हुआ। गेरुआ कपड़े, माथे पर गेरुआ पगड़ी। आँखों में असाधारण चमक। भूतनाथ को लगा, मानव-समाज में एक महामानव आकर खड़े हुए। मानो सारे भारत की अन्तरात्मा को मथकर एक अनादि पुरुष ने जन्म लिया। भूतनाथ को लगा, यह कोई छोटा-सा प्लेटफार्म नहीं, विशाल वारिधि की छाती में से एक खण्ड नई भूमि निकली है। किसी बड़ी सम्भावना का संकेत लेकर मानो हिमालय का शिखर जाग पड़ा है। अब जन्म होगा मनुष्य का। उसके हृदय की धड़कन में ध्वनित होगा वही आदि-प्रश्न—मैं कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ? उसके बाद ग्रह-नक्षत्र और पृथ्वी के सम्पूर्ण संगीत को मौन करके फिर एक महावाणी गूंजेगी। फिर से नई धरती की सृष्टि होगी। उस महावाणी में मनुष्यों को अपने प्रश्नों का नया उत्तर मिलेगा—मनुष्य अमृत की सन्तान है।

इस बीच भीड़ स्टेशन के बाहर निकल गई थी। मन्त्र-परिचालित की नाईं भूतनाथ पीछे-पीछे गया। बाहर भी जन-समुद्र उमड़ रहा था। अधीर!

स्वामीजी घोड़ा-गाड़ी पर सवार हुए। चार घोड़ों की गाड़ी। अचानक युवकों ने घोड़ों को गाड़ी से खोल दिया। अपने स्वामीजी की गाड़ी को वे खुद खींचेंगे। उनका हृदय उमड़ पड़ा था—जय, स्वामी विवेकानन्द की जय!

स्टेशन के उस जय-जयकार से सारा शहर गूंज उठा। गाड़ी धीरे-धीरे एक गली के सामने जा लगी। रिपन कॉलिज में स्वामीजी को कुछ बोलना था। न कुछ तो थोड़ा विश्राम ही सही। कम-से-कम आँखें भरकर सब उन्हें देख तो लेंगे।

अचानक भूतनाथ को व्रजराखाल दीख गया। भीड़ को चीरकर जब तक वह उसके पास पहुंचे, तब तक जाने वह फिर कहाँ गायब हो गया।

किन्तु उसी क्षण अजीब ढंग से एक और आदमी से भेंट हो गई। कल्पन

भी नहीं की थी कि उससे कभी इस तरह भेंट होगी। ननीलाल!

ननी ने भी पहचान लिया। पूछा—अरे तू, यहां?

पहले तो यकीन नहीं आया। सर्वांग में बिजली दौड़ गई। एक अनोखी चेतना। ननीलाल का वह चेहरा नहीं रह गया था। वही उसका सहपाठी, डॉक्टर बाबू का लड़का ननीलाल। उससे भेंट करने के लिए कौन-सी तकलीफ़ नहीं उठाई उसने। सिगरेट पी रहा था। छोटे-बड़े बाल। दाढ़ी-मूंछ उग आई थी।

—फिर?

—यहां कैसे? स्वामीजी के दर्शन के लिए?

—धत् यह सब देखने को फुरसत कहाँ?—कहकर उसने धुआं उड़ाया। कहा—सब बेकार, बेकार की···।

भूतनाथ को उसकी बात से चोट लगी। परन्तु कुछ कह नहीं सका वह। पूछा—कर क्या रहा है आजकल?

—बी० ए० पास कर लिया है। कानून पढ़ रहा हूं और तू!

—मेरी पढ़ाई न चल सकी। फूफी चल बसी। यहाँ मेरे बहनोई हैं। उन्हीं के पास ठहरा हूँ। कोई नौकरी मिल जाए तो करूं।

—चल, चाय तो पीता है?

—नहीं अभी शुरू नहीं की है।

—गँवार ही रह गया तू।—हाथ पकड़कर खींच ले चला उसको। ननी के बदन से एसेंस की खुशबू आ रही थी। अच्छे कपड़े। उसके आगे भूतनाथ ने अपने को बड़ा गरीब अनुभव किया। लेकिन क्यों तो भूतनाथ को लगा, ननी अब वह ननी नहीं है। आँखों के नीचे स्याही पड़ गई है। आँखों की वह जोत कहाँ गई! मानो इन्हीं कँ बरसों में उसकी उम्र बहुत बढ़ गई।

वह भूतनाथ को लेकर एक दूकान में गया।

—अण्डा खाता है?

—बत्तख का न?

कलकत्ता रहकर भी तेरी बमनई नहीं गई। इसी से तो देश गया रसातल को। बदन मे ताकत कैसे होगी? साहब लोग बीफ़ खाते हैं, जभी इतनी दूर आकर हम पर राज कर रहे हैं और तू शिखा-सूत्र लिये उनकी गुलामी मे दम तोड़ रहा है। गोली मार इन सबको। मेरे साथ दो दिन रह जा, आदमी बना दूँगा। चाय का घूंट लेकर उसने दूसरी सिगरेट सुलगाई। पूछा—कहाँ ठहरा है?

बहू बाजार, बड़े महल में।

—ओ, चौधरी परिवार में? वे तो जमींदार हैं। सुना है, उनके यहाँ की बहुएं बड़ी खूबसूरत हैं, क्यों?

—तूने कैसे जाना?

कैसी रहस्यमय हँसी हँसा ननी ! बोला—रूप और पारा भी छिपाए छिपता है रे ?

न जाने क्यों भूतनाथ को लगा, ननीलाल में ऐसा परिवर्तन नहीं होना चाहिए था।

चाय की चुसकी लेकर ननी बोला—चूड़ामणि को जानता है, जिसे नन्हे बाबू कहते हैं। मेरा सहपाठी था। सेकण्ड ईयर में है—दो बार लुढ़का। उस कम्बख्त ने दाई-बाँदी किसी को न छोड़ा। हो गई बीमारी। झूठ क्या कहूँ, हम लोगों के लिए उसने बड़ा खर्च किया है। खैर, बीमारी छूटी उसकी ?

बीमारी ? भूतनाथ समझ न सका—कौन-सी बीमारी ?

ननीलाल से बीमारी का नाम सुनकर भूतनाथ सिहर उठा। भले आदमी को भी यह बीमारी होती है, नहीं जानता था वह।

सिगरेट का कश खींचता हुआ वह बोला—हो क्यों न बीमारी ? शकल देखी, क्या हो गई है ? पहले लाल लगता था। क्लास में हम उसका गाल मल दिया करते थे। इतनी दवाएँ तो निगली हैं—उसने किसी से बताया ही नहीं। आखिर बदन-भर में धब्बे-से उग आए। चलना मुश्किल हो गया। और एक मिठाई लेगा ?

—उँहूँ।

—वह जब बीमार था तो देखने गया था। मगर ऐसा घर है वह, भेंट न हो सकी। वहीं लोगों से सुना, उसकी चाचियाँ देखने में परी-जैसी हैं। देखा है ?

भूतनाथ बोला—देखा है परी-सी तो नहीं हैं।

—फिर कैसी हैं ?

—जगद्धात्री-जैसी।

ननी ठठाकर हँस पड़ा। कहा—तू भक्त कब से बन बैठा ?

भूतनाथ बोला—परी को तो देखा नहीं, जगद्धात्री को देखा है।

—क्यों, परी की तस्वीर नहीं देखी ?

भूतनाथ सोचने लगा, कहीं देखी है या नहीं।

ननीलाल बोला—देखना चाहता है तो दिखाऊँ। मेरी बिन्दी, जिसे परकटी परी कहा करती है।

—बिन्दी कौन ?

—जायेगा बिन्दी के यहाँ ? चल, तुझे परी दिखा लाऊँ। नन्हे बाबू ने एक ही रात में उस पर पाँच सौ रुपये फूंक दिए। उसी की मुट्ठी में चली जाती वह—लेकिन मेरे पिता भी निरपन हजार रुपये छोड़कर मरे थे—मेरी पूंछ कौन पकड़े ?

—तेरे पिताजी गुजर गए ?

इस आसानी से भी कोई पिता के मरने की खबर सुना सकता है, भूतनाथ को मालूम न था।

पिताजी मर गए, जभी तो जी सका मैं। नहीं तो नन्हे बाबू से होड़ लगाना मेरे बस का न था। वे क्या ऐसे-वैसे हैं। सुखचर के जमींदार हैं—प्रजा को पीटकर मिलते हैं पैसे, और यहाँ बाबू लोग औरतों पर उन्हें फूंकते हैं। सुना है, चूड़ामणि आजकल घर ही रहता है, गाने-बजाने मे मन लगाया है, पीता-वीता है। मगर कहे देता हूँ मैं, आदत कभी जाने की नही। अमृत से भी ऊब आती है भला !

ननीलाल ने और भी बहुत-कुछ कहा। मुँहचोर-सा लड़का था। लजीला। ऐसा कैसे हो गया ?

ननीलाल ने फिर कहा—अब एक ही मुराद रह गई है, कह ही दूँ तुम्हे। किसी बड़े आदमी की बेटी से ब्याह हो जाए तो फिर कोई परवाह नही। पिताजी वाली पूजी खत्म हो चली। है कोई वैसी लड़की उधर ?

उस रोज भूतनाथ जब तक ननीलाल से बातें करता रहा, तब तक सोचता ही रहा खोया-खोया-सा। आखिर जिन नौजवानो ने स्वामी विवेकानन्द की गाड़ी खीची, घण्टों सरदी में ठिठुरकर उनकी राह देखते रहे। वे कौन थे ? उनकी जाति ही क्या अलग है ?

जाते वक्त ननीलाल ने कहा—शाम को हेदुआ के पास खड़ा रहूँगा। जरूर आना। बिन्दी के यहाँ चलूंगा। लेकिन नन्हे-से मेरा जिक्र न करना।

भूतनाथ ने पूछा—क्यो ?

—बाद मे बताऊंगा। अभी क्लास है।

घुंघराले बाल, जिसके हाथ के स्पर्श से कभी भूतनाथ को रोमाच हो आता था, छुट्टी के दिन बहाने बनाकर जिसे देखने के लिए वह सात मील पैदल जाता था, वही ननीलाल।

घर लौटकर भूतनाथ ने अपना बक्सा खोला। बहुत-सी पुरानी चीजें रखी थी। फूफी की माला थी नाम लेने की। मनीआर्डर की कई रसीदें पड़ी थी। गाँव के मकान की ताली। उन्ही चीजो मे से ननी की पुरानी चिट्ठी मिली—

"प्रिय भूतनाथ,

हम पिछले शनिवार को यहाँ पहुँचे। कलकत्ता खासी जगह है। कैसी सो न बता सकूँगा। आने के बाद से ही पिताजी के साथ घूम रहा हूँ। बड़े-बड़े मकान। बड़े-बड़े रास्ते। खूब मजे हैं। तुम लोगों की याद आती है। तुम कैसे हो लिखना। ऊपर के पते पर पत्र देना।"

चिट्ठी पढ़ते-पढ़ते उसने तब के और आज के ननीलाल की तुलना की। लेकिन ऐसा क्यों हुआ ? जी में आया, फाड़ फेंके खत को। लेकिन फिर उसे बक्स में रख दिया। रहे। वह ननीलाल तो शायद मर चुका—लेकिन बचपन के उस ननीलाल की याद आजीवन अक्षय रहेगी।

तड़के ही वंशी आ धमका। कहा—कल रात आपको दो बार ढूंढ़ गया। छोटी मालकिन ने भेजा था।

भूतनाथ ने कागज में मोड़कर मोहिनी-सिंदूर का पैकेट वंशी को दिया। कहा—छोटी बहू को दे दे जाकर—और ये रुपये भी लेता जा।

वंशी बोला—उन्होंने आप ही को ले जाने के लिए कहा है। सुबह चिंता को भी भेजा था।

सुबह का वक्त। दफ्तर जाने की फ़िक्र। काम बहुत बाकी पड़ा था। ब्रजराखाल तो कई दिन से घर ही नहीं आता। गुरुभाइयों को लेकर पड़ा था। रसोई की चिन्ता। रात के जूठे बर्तन साफ करने थे। सामान के लिए बाजार भी जाना था।

भूतनाथ ने कहा—अच्छा, रात को आ जाना। मैं ही दे आऊंगा।

वंशी चला गया। दफ़्तर जाते समय भूतनाथ को याद आया, आज तो ननी के पास जाना है। इन्तजार करेगा वह। फिर सोचा, उंहूं। न जाएगा ननी के पास। अब नाता ही क्या रहा?

दफ्तर में पहुंचा तो पाठक हंसता हुआ आया। लम्बा सलाम बजाया। भूतनाथ ने पूछा—आज बड़े खिल रहे हो, क्या बात है?

फलाहारी पाठक शायद अब भी कसरत करता है। लम्बा कुरता। खासा जवान। मेहनत से थकता नहीं। जीवन का सब-कुछ महावीरजी पर छोड़कर निश्चिन्त है। मूंछों पर ताव देता।

भूतनाथ ने फिर पूछा—तनखाह बढ़ी है क्या?

पाठक ने कहा—जब तक घर में दीदीजी हैं, तनखाह बढ़ने की कोई उम्मीद नहीं। मगर महावीरजी बचाएं तो मारे कौन?

पाठकजी की उम्र ज्यादा नहीं है। लेकिन चूंकि तन्दुरुस्ती खूब है, इसलिए उम्र कुछ अधिक लगती है। कारखाने में पैकेट बनाता है और भजन गाता रहता है। बे-परवाह। किरानी जाने कितने आये-गये। वह लेकिन महावीरजी की दया से कायम है। कैसे, राम जाने। पूछने पर वह कहता—सब महावीरजी की क़िरपा है हुज़ूर!

जवानी ही भक्ति। बहुत बार भूतनाथ को ऐसा लगा है कि वह चोरी भी कर लेता है। बीबी नहीं है। कहता है, शादी नहीं की। पता चला, शादी की थी। बीबी मर गई। यहीं कोने के एक कमरे में रसोई करता। वहीं सो रहता। यहां बहुत दिनों से है।

—आखिर इतनी खुशी कैसी?

पाठक ने कारण बताया। यानी उसे भी खबर है। उसका खयाल है, ब्याह

के बाद तो दीदीजी ससुराल चली जाएंगी। तब वह बाबू से कहकर अपनी तनखाह बढ़वा लेगा।

भूतनाथ भी चुप लगा गया। बोलने से क्या लाभ? आशा बनी रहे।

—देख लीजिएगा, आपके लिए भी अच्छा ही होगा, किरानी बाबू!

सच हो शायद, कौन जाने! इतने दिनों से पाठक इन्हें देखता रहा है, जवा को शायद यह ठीक-ठीक पहचान सका हो। मगर भूतनाथ के दिमाग़ मे यह बात किसी भी तरह नही आती। उसे वह रहस्यमयी लगती। ऐसे जिसके पिता। माँ भी भली ही लगती है। कम-से-कम पागल होने के पहले तो जरूर ही ऐसी अस्थिर प्रकृति की न रही होगी। पति-पत्नी दोनों ही धीर-स्थिर हैं। आवेग है, अविचारी नहीं हैं। जवा ही के लिए वे कुछ अन्धे-से हैं। वह घर के किसी को आदमी नही समझती। सबको हुक्म का बन्दा समझती है। समझती है कि जब जिसे चाहे, बर्खास्त कर सकती है। दुनियादार है। हिसाबी बातों मे तीखापन। भूतनाथ को लगा, जितनी स्त्रियों को वह जानता है, उनमें से किसी से जवा का कोई मेल नही। राधा सीधी-सादी थी। अन्ना भोली-भाली। और हरिदासी बचपन से ही थी पुरखिन-सी। ब्याह के पहले ही वह स्त्री बन गई थी। और, छोटी बहू? उनसे महज एक दिन का परिचय। उम्र में उससे छोटी हैं। लेकिन उसे लगता, उनके महावर-लगे पाँवों पर सिर टेके रहे। वह माँ नही बनीं, यदि बनी होती तो फबती। स्त्री की मर्यादा उन्हे नही मिली, लेकिन चाहते भी तो छोटे बाबू उन्हें सहधर्मिणी नही बना सकते। उनका व्यक्तित्व मानो उनसे बहुत ऊपर है। और यह जवा! रहस्यमयी है। पकड़ मे नही आती, मगर चाहती है कि कोई पकड़े उसे। मन में आभिजात्य का भाव। स्नेहमयता, दया-दान, प्रेम-प्यार—यह सब आभिजात्य के बाद।

उस दिन काम की भीड़ से साँझ हो गइ। एक कागज पर सुविनय बाबू के हस्ताक्षर के लिए भूतनाथ को ऊपर जाना पड़ा। दाईं तरफ़ के हॉल के पास ही उसे ठिठक जाना पड़ा। जवा और सुविनय बाबू मे बातें हो रही थी।

सुविनय बाबू ने कहा—तुमने तय किया है, मैं क्या बताऊँ बेटी?

जवा ने कहा—फिर भी आप कहे, आपकी राय है या नहीं?

—मैंने तुम्हारी किसी इच्छा मे कभी अडचन नही डाली। मैं अपने पिता को सदा दुःख पहुँचाता रहा, इसलिए यह नही चाहता कि तुम्हारे लिए बाधक बनूँ। तुम्हारी माँ आपे में होती, तो उनसे पूछता, लेकिन वे तो····

जरा देर चुप रहकर जवा बोली—आपने तो उसको देखा है, पहचाना है।

—वे हमारे समाज के पुराने सदस्य हैं। मेरे खयाल मे वह आदमी धीर और बुद्धिमान् हैं। तुम्हारे जन्मदिन पर जो लोग आये थे, तुमने उनमें से उपयुक्त आदमी को चुना है। आशीर्वाद करता हूँ, तुम लोग सुखी हो।

जवा बोली—लेकिन क्यों तो मुझे डर-सा लग रहा है ? मैं आपको छोड़-
ो कैसे ?

—तुम लोग मेरे ही पास रहोगे बिटिया ! न रहोगे तो यह सब-कुछ
ा कौन ? हम अब मेहमान ही कै दिन के हैं ? जब तक जिन्दा हैं हम, हमारी
-माल तुम्हीं लोग करोगे । नहीं क्या ?

जवा चुप रही ।

सुविनय बाबू बोले—तुम लोग आजकल के ठहरे, चाहो तो मोहिनी सिंदूर
लाना, न चाहो, न सही । मैं काफ़ी पूंजी छोड़ जाऊंगा, तुम्हें कभी कमाने की
रत नहीं पड़ेगी । हाँ, बने तो दूसरा कोई कारोबार करना । नया ज़माना आ
है । मुझे न तो परम गति चाहिए, न अष्ट सिद्धि । ज़रा उस गीत को गाओ तो
ा, दिन हो गये सुने । वही, नाथ तुम ब्रह्म तुम विष्णु···जैजैवन्ती का ध्रुपद ।

जवा गाने लगी—

नाथ तुम ब्रह्म तुम विष्णु
तुम ईश तुम महेश ।
तुम्हीं आदि तुम्हीं अन्त,
तुम अनादि तुम अशेष ॥

भूतनाथ चुपचाप नीचे उतर आया । कल सवेरे सही बनवा ली जाएगी ।
मेज के पास खड़ा-खड़ा गीत सुनने लगा । गाने में जवा की मिसाल नहीं ।
कम-से-कम इस बात में वह लासानी है ।

लौटते हुए उसने समय का अन्दाज़ा लगाया । ननी निश्चय ही उसकी राह
देख रहा होगा । बाईं गली से चलने पर हेदुआ के कोने पर निकल जाएगा । गया ।
लगा दक्खिन की ओर एक रोशनी के नीचे खड़ा ननी सिगरेट पी रहा है । पास
पहुँचा तो गलती मालूम हुई । कोई और था । भैरव बाबू से मिलता-जुलता । इन्त-
ज़ार करने लगा । शायद विलम्ब देखकर लौट गया हो । अच्छा ही हुआ । जाने
क्या होता ?

घर की तरफ़ चल पड़ा । जल्दी पहुँचना था । छोटी बहू को मोहिनी सिंदूर
देना है । अचानक किसी ने पुकारा—साले साहब !

अवाक् रह गया भूतनाथ । यहाँ इतनी रात को कौन पुकार रहा है इस नाम
से ? गौर से देखा—अरे, शशी ! तू !

नन्हे बाबू का नौकर शशी था । कैसी शकल हो गई है ! इतनी रात को
यहाँ क्यों ? महफ़िल आज नहीं होगी क्या ?

शशी ने कहा—कुछ पैसे देंगे मुझे ?

पैसे ! पैसे तो पास थे नहीं भूतनाथ के । बोला—पैसे का क्या होगा ? यह
क्यों आया है ? नन्हे बाबू कहाँ हैं ?

—जी, उन्होने मुझे निकाल दिया है।

शशी के बाल बिखरे थे। दिनों से खाया न हो गोया। लेकिन कैसे खूबसूरत बाल थे उसके घुंघराले। कल ही परसो तो वह वहाँ था।

—क्यों, निकाल क्यों दिया तुझे ?

शशी पीछे हो लिया। बोला—इतने दिनो तक नन्हे बाबू की खिदमत में रहा। आपने तो अपनी आँखो देखा है, मेरे बिना महफ़िल नही लगती थी। रात के एक-एक दो-दो बजे तक भग पीसा करता था, शरबत तैयार करता था। अब मैं बीमार पड़ा कि निकाल दिया उन्होने।

भूतनाथ ने उसे एड़ी-चोटी देखा। पूछा—बीमारी क्या है ?

शशी ने उसके पाँव छूकर अपना हाथ सिर से लगाया। बोला—बराम्हन के पाँव छूकर कहता हूँ, जगन्नाथ की कसम—वैसी खोट नही है मुझमे। एक भी रात मैंने घर से बाहर नही बिताई। नशा छूता तक नही। गिरि ने झूठमूठ मुझ पर यह तोहमत लगाई है।

—गिरि ने ?

—हाँ, मझली मालकिन की दाई।

—तेरे पीछे वह क्यो पड़ेगी ?

—आपको सब पता तो नही है। महफिल जब टूट जाती है, मैं ऊँघने लगता हूँ, तब गिरि नन्हे बाबू के कमरे में आती है। वे तो नशे मे बुत्त। यह तो मैं ही हूँ कि चुपचाप सब सह लेता हूँ।

अब कुछ-कुछ समझा भूतनाथ ने। गिरि की शकल को ध्यान मे लाने की कोशिश की। नजर पड़ते ही उसका घूँघट काढ़ लेना याद आया। जब-तब झडप। जिस रोज भूतनाथ पहली बार नन्हे बाबू की महफिल मे गया था—उस दिन आधी रात की वह छायामूर्ति।

शशी ने कहा—वशी से पूछ देखिएगा, नन्हें बाबू जब बीमार पडे थे, इस शशी ने उनकी कितनी सेवा की थी। उनकी अपनी माँ तक पास न फटकी, मैंने ही खून-पीप सब किया। बाबुओं के लिए सब ठीक, जितनी बुराई सब हम नौकरों के लिए।

चलते-चलते वे घर के समीप आ चुके थे। शशी बोला—बस, अब आगे न जाऊँगा। कही मधुसूदन ने देख लिया तो आफत।

—क्यों, वह क्या करेगा तेरा ?

—जी, वह कम्बख्त कुछ कम है, कहता है, अहाते मे आया तो चाबुक से पीठ की खाल उधेड़ दूंगा। गोकि उस बुड्ढे को सब मालूम है। वह जानता है कि कसूर किसका है। पास में कौड़ी कसम को नही कि घर चला जाऊँ।

आखिर निराश ही लौट गया शशी।

वड़े महल के फाटक पर एक भले आदमी से भूतनाथ की भेंट हो गई।
होंने पूछा—यहाँ व्रजराखाल वाबू रहते हैं ?

भूतनाथ ने कहा—हाँ, रहते हैं।

—उन्हें वुला दीजिएगा ज़रा। ज़रूरी काम है।

भूतनाथ अन्दर गया। तमाम देख लिया। इससे-उससे पूछा। फिर आकर
ोला—अभी तो वे हैं नहीं। कुछ कहना है ?

भले आदमी कुछ परेशान-से हुए। कहा—तीन-चार दिनों से उनसे भेंट
हीं हुई है। हैं तो यहीं ?

—हैं तो यहीं, लेकिन रोज़ रात को आते नहीं हैं।

—अगर आज रात को लौटें तो उनसे इतना कह दीजिएगा कि मछुआ
बाज़ार वाली फूलवाला को फिर से उलटियां होने लगी हैं—कोई दवा लेकर वहाँ
ज़रूर पहुँचें। आज ही। वह आपके कौन होते हैं ?

—वहनोई।

वह वहुत परेशान थे। वोले—तो अभी चलूं मैं। भूल न जाइएगा। कह
दीजिएगा उनसे।

भूतनाथ ने पूछा—फूलवाला कहने से पहचान जाएँगे वह ? वह मुड़कर
खड़े हो गए। कहा—वेशक ! उन्होंने और विश्वनाथ शास्त्री ने ही तो उस वेचारी
को पादरियों के शिकंजे से वचाया, एक हिन्दू से उसकी शादी कराई। वेचारी
फिर से विधवा हो गई। पास में कौड़ी कफ़न को नहीं। रोज़ी की पड़ी है। व्रज-
राखाल वाबू न होते तो वह कव की ईसाई हो गई होती। अपनी तनखाह से उसकी
रोज़ी चलाते हैं और नाम भूल जाएँगे उसका ? कहीं न भी पहचान सकें, तो
कहिएगा कि कदम आया था।

—कदम ?

—हाँ, मेरा नाम है। पूरा याद रख सकें, तो कहिएगा युवक संघ का
कदमकेशर वोस। अपने युवक संघ के सभापति तो वही हैं।

भला आदमी चल दिया। वदन पर कमीज़। दाढ़ी-मूंछ कुछ-कुछ। अँधेरे
में ठीक-ठीक अन्दाज़ तो न किया जा सका, पर उमर ज़्यादा नहीं थी। वह चला
गया, तो भूतनाथ अन्दर चला गया।

उस दिन फिर।

रात ख़ासी हो चुकी थी। भूतनाथ अन्दर महल के तिमंज़िले पर पहुँचा।
आगे-आगे राह दिखाता जा रहा था वंशी—पीछे-पीछे भूतनाथ। सौदामिनी के
कमरे में अभी तक वत्ती टिमटिमा रही थी। सब्ज़ियां कूट चुकी थी वह। खिड़की
के पास वैठी पान लगा रही थी। और जद्दू की मां उतनी रात को भी मसाला

पीसती जा रही थी। सौदामिनी आप-ही-आप बक-बक करती जा रही थी—बुरा हो इस सरदी का। थोड़ा-सा तेल नही कि पैरों में लगाऊँ। फटकर चौचीर हो गया है। खून बह रहा है। भोला का बाप होता तो यह गत होती पैरों की? आप मरा, मेरे नसीब को आग लगा गया। सुद गया तो ठीक ही हुआ, एक लड़का था, उसे भी साथ ले गया। वह कहता था, फूलबहू, तिरभुवन मे अपना कोई नही।

दुमंजिले पर सीढ़ी के पास ही बाई तरफ बाबुओं के सोने के कमरे। अभी वहाँ अँधेरा था। बरामदे मे चटाई पर बैठा बंनी मझले बाबू की धोती में चून दे रहा था। वहीं से मुड़कर तिमंजिले पर जाना था।

वशी ने कहा—एक पल रुक जाएँ आप। मैं देख लूं, बड़ी मालकिन तो रास्ते पर नही हैं?

किस्मत अच्छी थी। बड़ी माँ अपने कमरे मे थीं। वशी ने कहा—चलिए।

सीधे छोटी माँ के कमरे के पास। वशी ने अन्दर जाकर खबर दी। चिन्ता बाहर निकली।

—अन्दर जाइए।

पहले दिन उसने छोटी बहू को जैसा देखा था, वैसी ही थी। वैसा ही रूप। फिर भी बहुत-कुछ न पाने की अधिकता ने मानो बहुत-कुछ पाने को मलिन कर दिया था। चूंकि भूतनाथ को छोटी बहू का किस्सा मालूम था, इसीलिए शायद ऐसा लगा। लेकिन कही अचानक उसे देखता, तो लगता, यह उसके अहकार का आत्म-प्रकाश है। प्रशान्त मन का लालित्य मिला हुआ था उस अहकार से। न पकड़ में आता, न छूने मे। सुखी है या दुखी, यह सवाल ही मन मे नही आता। उसकी दोनो आँखों की शान्त गहराई दर्शको के मन की विचार-बुद्धि को शिथिल कर देती।

लेकिन वही जब बात करती। जिसे देखने से श्रद्धा होती, शायद कुछ डर भी होता—उसी की बात सुनकर, प्यार करने को जी करता।

छोटी बहू बैठी थी। थोड़ा खिसककर बोली—आओ बैठो।

भूतनाथ बैठ गया। जेब से पैकेट निकालकर बोला—ले आया हूँ। इस्तेमाल करने के तरीके इसी मे लिखे हुए हैं।

उसके बाद पहले ही दिन की तरह चिन्ता खाना ले आई। भूतनाथ बोला—इतना मैं न खा सकूंगा।

भूख न थी, सो नही। लेकिन छोटी बहू के सामने खाने मे उसे लाज-सी लगती। मगर छोटी बहू भी नाछोड़ बन्दी। बोली—न खाओगे तो तुमसे बात न करूंगी मैं। सब खा लेना होगा।

खाना ही पड़ा। खाना खत्म हो चुकने पर छोटी बहू ने कहा—अभी आई मैं। वह बगल के कमरे मे चली गई। अब भूतनाथ की निगाह पड़ी कि बगल ही

में एक और कमरा है। उस रोज़ उसने नहीं देखा था। कमरे को उसने फिर एक बार अच्छी तरह से देखा। कांच के अन्दर अलमारी में थिर थे सारे खिलौने। उसमें से कांच का एक ख़िलौना मानो भूतनाथ को देख रहा था। सुनहली-रुपहली कोर की धोती, नकली मोती के गहने। ऐसा लगा कि खिलौना हिल उठा। गज़ब! गोया आँखों के इशारे से उसने भूतनाथ को बुलाया। उँहूँ। वह तो खिलौना ही है, निर्जीव।

छोटी बहू लौट आई। मक्खन-से मुलायम महावर-लगे पैरों को मोड़कर बैठ गई। पत्रा लिये आई थी। पन्ने पलटकर कहा—कल एकादशी है। अच्छा दिन है। कल से ही लगाऊँगी।

भूतनाथ की तरफ़ मुड़कर पूछा—इससे छोटे बाबू का कुछ बुरा तो न होगा भूतनाथ? सेहत उनकी अच्छी नहीं है। बीच-बीच में झेलते भी खूब हैं। आखिर शरीर बर्दाश्त कितना करे!

क्या कहे, सोच न सका भूतनाथ। बोला—एक दिन के बाद ही देखें, क्या होता है।

—अच्छा, वही सही।

कुछ सोचती रही वह। चिन्तित-सी। जरा देर बाद बोली—अपने जानते आज तक मैं झूठ नहीं बोली, लेकिन लगता है, अब बोलना ही पड़ेगा। मेरे यशोदादुलाल जानते हैं, मैंने किसी को कभी सताया नहीं, तकलीफ नहीं पहुँचाई। तुम ब्राह्मण हो, तुम्हारे सामने भी कबूल करती हूँ। मैंने पिताजी की आज्ञा का अक्षर-अक्षर पालन किया है—मगर स्वामी की सेवा के लिए मैं वह भी करूँगी। और उसने पुकारा—चिन्ता?

चिन्ता आई। छोटी बहू बोलीं—जरा बंशी को बुला।

बंशी आया। पूछा—छोटे बाबू आज किस समय निकले हैं बंशी?

—जी, शाम को सात बजे।

—सुन, कल दोपहर को तू छोटे बाबू को यहाँ बुला लेना। कहना उनसे, मैं बहुत बीमार हूँ, एक बार देख जाएँ। जैसे भी बने, लाना ही पड़ेगा। और चिन्ता, तू रसोई में कह दे, आज मैं खाना नहीं खाऊँगी।

बंशी ने पूछा—दोपहर को तो छोटे बाबू सो जाएँगे?

—नींद खुलने पर बुलाना। अच्छा, जा तू।

बैठने में कैसा तो लग रहा था भूतनाथ को। मौका पाकर बोला—आज अब मैं भी चलूँ?

—तुम थोड़ी देर बैठो। जल्दी क्या पड़ी है? काम है कोई?

—नहीं, काम तो नहीं है।

—फिर? शर्म आती है, क्यों उस रोज़ मँझली दीदी यही कह रही थीं।

कह रही थी कि तुम बड़े लजीले हो।

—मँझली दीदी कौन ?

—इस घर की मँझली बहू। बगल ही के कमरे में रहती है। उसी दिन उन्होंने पूछा था—तेरे कमरे में कौन आया था री छोटी ? मैंने कह दिया था—मेरा गुरुभाई था। असल में पहले यहाँ जनानखाने में बाहर के किसी मर्द को आने की इजाजत नहीं थी। अब धीरे-धीरे वह कड़ाई ढीली पड़ रही है। मँझली दीदी के पिता अन्दर आने लगे है···फिर मैं ही···

अपनी बात को अधूरी ही छोड़कर छोटी बहू ने कहा—शायद यही तुमसे मेरी आखिरी मुलाकात है। यहाँ की बहुओ से कोई बात नहीं कर सकता। मुझसे अब भेंट न होगी। लेकिन अपनी इस दीदी को याद रखना। तुम्हारे लिए मेरे योग्य कोई सेवा हो, तो बंशी से कहला भेजना।

भूतनाथ खड़ा हुआ। यशोदादुलाल के सामने झुककर उसने प्रणाम किया। बंशी उसे नीचे ले चला।

भूतनाथ के मन पर जैसे कोई बोझ पड़ गया। अब कभी भेंट न होगी। एक मामूली-से काम के लिए महज दो दिन की जान-पहचान। लेकिन इन दो ही दिनो में पटेश्वरी बहू से आत्मीयता हो गई। अपने जीवन में भूतनाथ को ऐसी स्नेह-करुण आत्मीयता कभी नहीं मिली थी। रास्ते में बंशी ने कहा—आपसे कुछ कहना है।

—मुझसे क्या कहना है, बता ?

—आप नन्हें बाबू के यहाँ तबला बजाने जाते है। उन्हे एक नौकर की जरूरत है। मेरे भाई के लिए आप अगर सिफारिश कर दें—

—क्यों, नन्हे बाबू का तो नौकर है।

—आपको शायद पता नहीं, शशी को उन्होंने निकाल दिया है।

याद आया, शाम ही को शशी से भेंट हुई थी। बोला—आज ही वह मिला था शाम को। पैसा माँग रहा था।

—अच्छा ! उसे छूइएगा भी नहीं !

—क्यों, क्या हुआ ?

—सारे बदन में पारे का जख्म। छूत की ऐसी बीमारी ! हम सब साथ ही उठते-बैठते। सबको होने की नौबत। सो लोचन ने मधुसूदन चाचा से कह दिया। मधुसूदन ने कहा नन्हे बाबू से। खजाँची बाबू ने बही में से उसका नाम काट दिया।

भूतनाथ बोला—कह रहा था, बड़े कष्ट में है। घर जाने को भी पैसे पास नहीं हैं।

—पहले तो उसने सुना ही नहीं, हम बारहा मना करते रहे। यह सब बाबुओं का ही काम है, इफरात रुपये हैं, इलाज करा सकते हैं। नन्हे बाबू को भी

हुआ था, छूट गया। लेकिन ऐसे नौकर को क्यों रखे कोई ?

कुछ क्षण रुककर वंशी ने कहा—जी, नन्हे बाबू से कहकर उस जगह पर मेरे भाई की बहाली करा दीजिए।

—अच्छा, मैं कहूँगा उनसे।—भूतनाथ अन्दर गया। व्रजराखाल अभी तक नहीं लौटा था। इधर बहुत व्यस्त है; कदमकेशर बोस आया था। फूलवाला मरणासन्न। जाने कितने काम हैं व्रजराखाल को ! स्वामी विवेकानन्द आये हैं। काम और भी बढ़ गया है। वेदान्त और अद्वैतवाद का प्रचार करना होगा। शिष्य होकर साथ आये हैं सोवियत दम्पती। साहब-मेम चले। क्यों आखिर ?

अँधेरे कमरे में वह बिस्तर पर लेट गया। अचानक महल मानो गुंजन करने लगा। भूतनाथ को लगा—जानें कब सन् १३४५ में कितने शुरू-शुरू घड़ी बनाई थी···उस घड़ी के कल-पुर्जे आज चलने लगे हैं। आज, इतने दिनों के बाद ! शायद बद्री बाबू की बात ही फले। सब लाल हो जाएगा। लेकिन क्यों ? इस महल की एक-एक ईंट को क्या इसका पता चल गया है ? मुगल बादशाहों के जमाने में इस घर के पुरखों को जमींदारी की सनद मिली थी। कत्ल करने का अधिकार मिला था। जाने कब हजारों-हजार लठैतों की मार से गाँव के लोगों ने मौत के आगे अपने-आपको सौंप दिया था। जानें कितनी स्त्रियों के रूप-लावण्य और सतीत्व से खिलवाड़ किया था इस घर के पुरखों ने ! बद्री बाबू से उस रोज भूतनाथ ने सब-कुछ सुना। और केवल यही क्यों ! कलकत्ते के सभी पुराने वंशों के पीछे जो मार्मिक विश्वासघातकता और जाति-द्रोह का कलंक छिपा है, आज रात वह सब मानो बोल उठा है। निष्क्रिय दर्शक-से बद्री बाबू की वेदना को कौन समझता है ? छोटी बहू अपने कमरे में रो रही है शायद। उस तकलीफ को कौन मेटेगा ? ननीलाल की इस जिन्दगी का कोई जिम्मेदार नहीं। सुविनय बाबू की स्त्री जिनके शाप से पागल है आज ? कभी दलदल पर जॉब चार्नक के समय में जिस शहर की नींव पड़ी थी, आज वह शहर गगनचुम्बी अट्टालिकाओं से क्या अकारण ही सज रहा है ? नन्हे बाबू के कमरे में महफ़िल जम रही थी। चमेली फूली चम्पा···का अलाप आ रहा था। दक्खिन के बगीचे में दासू जमादार का बेटा बाँसुरी फूंक रहा था। भूतनाथ को लगा, सारा कलकत्ता रो रहा है, उसी तरह, जिस तरह वह अपने पाले हुए नेवले के मरने के दिन रोया था।

बेचैनी-सी लगी। किसी भी उपाय से नींद न आ रही थी। लगा, तबला बजा पाता, तो जी कुछ हलका होता। अचानक पैरों की आहट से वह चौंक उठा—कौन ?

—मैं हूँ। अभी तक तुम सोये नहीं भाई साहब ?

—लौटने में बड़ी देरी हो गई तुम्हें। एक सज्जन ढूंढ़ने आये थे।

व्रजराखाल ने रोशनी जलाई। बड़ा थका हुआ था। पूछा—खाने को है

कुछ? आज दिन में भोजन नहीं नसीब हुआ।

—मुरमुरे हैं, दूँ? दिन में मैंने आज पकाया नहीं। बाहर ही खा लिया। कहकर भूतनाथ ने टिन के डिब्बे से मुरमुरे निकाल दिये। ब्रजराखाल ने वदन-हाथ पोंछा। कहा—आज सारा दिन दौड़ते ही बीता है। स्यालदह से रिपन कालेज गया, वहाँ से बागबाज़ार, रायबहादुर पशुपति बोस के यहाँ, वहाँ से सोवियत दम्पती को काशीपुर लिवा गया गोपाललाल शील के बगीचे में। उफ, खूब सजाया था।

भूतनाथ ने पूछा—समय निकालकर दो मुट्ठी खा क्यों नहीं लिया था?

—मौका नहीं मिला। कल फिर सुबह ही काशीपुर जाना है, शाम को आलम बाज़ार।

तेल-सने मुरमुरे का कटोरा हाथ में लेकर ब्रजराखाल ने पूछा—कौन ढूँढ़ने आया था, बता रहे थे?

—कदमकेशर बोस कोई थे। कह गए, मछुआ बाज़ार की फूलवाला को कै शुरू हो गई है। दवा ले जाने को कहा है।

—कै?—खाना पड़ा रह गया। ब्रजराखाल ने कुरता पहना, पैरों में जूते डाले।

भूतनाथ ने पूछा—फिर चल दिए क्या?

—जाना ही पड़ेगा।

—सुबह जाने से न होता?

—कल तो बेतरह काम है।—वह निकल पड़ा।

—मुरमुरे तो खा लो।

कानों तक यह बात न पहुँची। तब तक वह रास्ते पर जा रहा था। इब्राहिम की छत की टिमटिमाती बत्ती में आँगन में एक छाया-मूर्ति-सी दीखी।

कमरे को बन्द कर भूतनाथ फिर लेट गया। नन्हे बाबू की महफिल में गीत की कड़ी हवा में गूँज रही थी—चमेली फूली चम्पा। [illegible] गला। कान्तिधर का ठेका। और उधर बज रही थी दामू जमादार के बेटे की [illegible]

आज भी बखूबी याद है, शुक्रवार का दिन था। उस रोज जाने काहे की छुट्टी थी। वंशी आ पहुँचा। बोला—नन्हे बाबू अभी अकेले हैं। अभी आप मिल लें तो भाई की नौकरी लग जाए। शशी कहता था, वह आपको खूब चाहते हैं।

आखिर जाना ही पड़ा।

साँझ नहीं हुई थी। महफिल को अभी देर थी। तकिए के सहारे लेटकर नन्हे बाबू कोई किताब पढ़ रहे थे। चुननवाली धोती, बाबरी बाल।

पास में पान का डब्बा। ज़र्दे की डिबिया। सिगरेट। फ़र्श पर [illegible]

ही देर पहले जगे थे शायद ।

भूतनाथ को देखकर बोले—आइए, आइए। खबर क्या है, ज़माने से रणों को धूल नहीं पड़ी ।

भूतनाथ गद्दी पर बैठ गया ।

नन्हे बाबू ने कहा—अफ़सोस, कल नहीं पधारे आप । बनारस के उस्ताद अनवर अली साहब आये थे । क्या बताऊँ क्या गजब का गाया ! जैसा तैयार गला, वैसा ही लय का ज्ञान । तबले पर संगत कर रहा था बैजू । जो भी कहिए, बैजू का हाथ बड़ा मीठा है । रात के तीन बजे शुरू किया दरबारी कानड़ा का खयाल··· पूछिए नहीं । ज़रा रुककर बोले—छुटपन में अपने यहाँ होली पर कज्जन बाई का गाना सुना था, नाच देखा था । पिताजी के दोस्त धर्मदास बाबू ने तबला बजाया था । नाचते-नाचते बाईजी ने सोने की थाली में से सारी मुहरें होंठों से उठा लीं । बहुत दिन बाद उसे एक बार और सुना । कुछ लेने आई थी । कहने-सुनने पर सुनाया, बाज़ूबन्द खुल-खुल जाए···रे-ग-ध-नि के घुमाव में तब भी जादू । बस, वही सुना था कि कल सुना ।

किस्सा खत्म ही नहीं होना चाह रहा था । ज़रा-सा दम लिया कि वह बंशी की बात कहने जा रहा था । अचानक किसी के आने से बाधा पड़ गई । भूतनाथ अवाक् रह गया । वह ननीलाल था ।

ताज्जुब में ननीलाल भी पड़ गया । कहा—अरे, भूतनाथ ! फिर नन्
बाबू की तरफ मुखातिब होकर बोला—चूड़ामणि, एक काम से तेरे पास आ
हूँ ।

नन्हे बाबू भी खुश थे । बोले—काम फिर होगा । पहले अपना हाल ब
बिन्दी की क्या खबर है ?

—बिन्दी मज़े में है । तुझे पूछती है । मैंने कह दिया है, अब वह स
गया है । गाने-बजाने में मस्त पड़ा रहता है । मगर इन बातों का आज समय
तुरत चल देना है ।

नन्हे बाबू बोले—वाह, कैसी बात ! ज़रा बैठ तो । शराब पी ले

—माफ़ करो भैया, वह सब मैंने छोड़ दिया है ।

नन्हे बाबू को यकीन न आया—कहता क्या है तू ?

—ठीक ही कह रहा हूँ । बिन्दी के पास भी नहीं जाता ।

—क्यों ?

—शादी करनी है ।

भूतनाथ भी हैरत में आ गया । पूछा—शादी ?

नन्हे बाबू ने पूछा—ननी से आपकी कैसे जान-पहचान हुई

साथ पढ़ चुका है वह गाँव के स्कूल में ।

ननीलाल को लेकिन बातों का समय न था। बोला—इसी पास आया हूँ। ब्याह के बाद पाई-पाई चुका दूँगा। ज्यादा नही, सिर्फ पाँच हैं रुपये चाहिए।

नन्हे बाबू कुछ बोले नही। उन्होंने ननीलाल को सिगरेट दी। एक आप सुलगाई। लम्बा धुआँ उडा कर ननीलाल बोला—मज़ाक नही, रुपयों की सख्त ज़रूरत है। उन्हे तो इस बात की खबर नही कि घर गिरवी है। उन्हें पता है, मैं बड़ा आदमी हूँ। सो जो भी हो, ब्याह के बाद मैं तेरी तरह साधु बन जाऊँगा। कसम···।

नन्हे बाबू ने पूछा—वे बातें रहने दो। शादी कर कहाँ रह हो? लड़की कैसी है?

ननी बोला—लड़की का नशा अपना उतर गया है। अब तो रुपयों की फिक्र पड़ी है। रुपया चाहिए। उन लोगो के पास अगाध रुपये हैं। वहाँ शादी हो जाए तो जिन्दगी-भर के लिए रुपयो की फिक्र से बरी हो जाऊँ। पर तब तक अपने खर्च के लिए कुछ चाहिए।

नन्हे बाबू ने पूछा—शादी कर कहाँ रहे हो?

ननीलाल फौरन जवाब न दे सका। उसने एक बार भूतनाथ की तरफ ताका, मानो सकुचा रहा हो। भूतनाथ उठ खडा हुआ। कहा—मैं चलता हूँ नन्हे बाबू, फिर आऊँगा। जो कहने के लिए वह गया था, न हो सका। खैर, फिर कभी।

बाहर निकलते ही वशी ने पूछा—कह दिया हुजूर?

—नही बशी, एक आदमी आ गया कह न सका। फिर कभी।

आज वह वशी भी नही और उसके भाई की नौकरी भी न लग सकी उस दिन। लेकिन इसी निमित्त कही न गया होता उस रोज, तो ननीलाल से भेंट न होती। और सारे सर्वनाश का बीज उसी दिन बोया गया शायद। केवल भूतनाथ ही के जीवन मे क्यो? छोटी बहू, छोटे बाबू सबके जीवन पर धूमकेतु-सा ननीलाल का उदय हुआ। वह मानो उन्नीसवी सदी की वणिक सभ्यता का जहर हो। जहरीला अगूर। उस जहरीले अगूर का पौधा आज घर-घर उग आया है, लेकिन उस दिन यह दुर्घटना न घटी होती, तो इस घर का इतिहास और ही ढग से लिखा जाता।

अपने दफ़्तर से पैदल ही लौट रहा था भूतनाथ। साँझ हो आई थी। बाग-बाजार की गली से रास्ता था। चारों तरफ अँधेरा। दोनो ओर के पनालो से बच-कर बीच रास्ते से आना पडता। छिटपुट खपरैलों मे टिमटिमाती बत्ती। मोड़ पर देशी शराब की दूकान के पास आते ही पहचानी हुई बू मिली। रास्ते पर ही कुछ लोग पी रहे थे। गा रहे थे। शोर कर रहे थे। एक कोई गा रहा था—

री जलमुँही कलंकिनी राधा री
चरवाहे को पाकर भूली छिः छिः

ताजा दही फेंका, कपास खा गई

थोड़ी ~ शरम से मर जाऊँ री···

बगलवाले ने सम पर जोर से कहा—हा-हा-हा-हा···

अँधेरे में सबकी शकल नहीं दिखाई पड़ती थी। अचानक एक वारदात हो गई। उनमें से एक को भूतनाथ ने पहचाना। जबा के यहाँ का वह ठाकुर ही तो है। वह सँभल पाए, इससे पहले ही ईंट उसने भूतनाथ के माथे पर चलाई। कुछ-कुछ शब्द उसके कानों में आए साले किरानी का खातमा कर दे···

उसके बाद की कुछ भी याद नहीं उसे।

बीसवीं सदी का आरम्भ। लाट कर्ज़न का जमाना। साइकिल से जाते-जाते आज भी सब-कुछ साफ़ याद आता है। उस दिन की चोट से वह मर नहीं गया, यही ताज्जुब है। गोलदीघी के पास ही किसी घर में कोई लोग उसे उठा ले गए थे।

आँखें खुलीं तो देखा, एक पक्के का घर। मैली दीवारें। चारों तरफ़ लाल रंग से लिखा था—वन्दे मातरम्। कुछ लोगों की बातचीत। खिड़की के बाहर दीख रहा था अखाड़ा। तीसरा पहर। सारे बदन में दर्द हो रहा था। उठने की कोशिश की कि किसी ने आकर पकड़ लिया। कमीज़ पहने था। हल्की मूँछ-दाढ़ी पहचानी-पहचानी-सी शकल।

सिर थामकर बोला—अभी उठो नहीं भैया! उसके बाद आवाज़ दी—शिवनाथ, और थोड़ा-सा दूध ले आओ।

शिवनाथ दूध ले आया। उस आदमी ने कहा—इसे पी लो।

दूध पीकर भूतनाथ को फिर झपकी आ गई। तन्द्रा टूटी तो उसके कानों उनकी बातचीत पहुँची। अँधेरा हो चुका था। एक लालटेन जल रही थी। वह सोच रहा था, कहाँ आ निकला मैं! बाहर कोई कह रहा था—कदम भैया, अब उन्हें एक सबक सिखाना ही पड़ेगा। कल भी गोरों ने बूटों की ठोकरों से एक आदमी को बेहोश कर दिया है।

—यह क्या मालूम है कि इसे गोरों ने ही मारा है?

—तो क्या भूत मारेगा?

—गुण्डे भी तो हो सकते हैं। आँखों थोड़े ही देखा है! गुण्डे ही क्या कम हैं यहाँ? फिर एक गोरे को मारने से भी क्या होगा? किले से जब हज़ारों-हज़ार गोरे दौड़े आएँगे तो बंगालियों को भागने की राह न मिलेगी। एक अखाड़ा है, उसके तो सदस्य जुटते ही नहीं।

—मगर सारे भारत को जीतने के लिए कै गोरे आये थे?

कुछ देर कुछ न सुना गया। उसके बाद किसी ने कहा—तुम्हारी ग़लती है। अपने युवक-संघ का उद्देश्य ही ऐसा नहीं है। स्वामीजी ने कहा—The world

in need of those whose life is one burning love—selfless. That ve will make every word tell like a thunder-bolt. Awake, awake eat souls ! The world is burning in misery, can you sleep ? जनीति से देश का कल्याण न होगा, धर्म का डंका पीटने से भी कुछ न होगा, र्थनीति से भी अपनी कमी दूर न होगी। युवक-संघ के हम सदस्य एक ही चीज़ ाहते हैं कि देश पर, जन्मभूमि पर प्रेम हो—जीवन्त प्रेम। वह प्रेम आत्मा, म्पत्ति और सन्तान से भी बड़ा हो—जिस प्रेम से छोटे-बड़े सबको एक नजर से खा जा सके। तभी भारतवर्ष एक होगा।

अचानक अनेक गलों से एक आवाज निकली—आ गए, बड़े भैया आ गए।

आते ही बड़े भैया ने पूछा—क्या बातें हो रही थीं ?

शिवनाथ ने कहा—आज फिर गोरों ने एक आदमी को मारकर बेहोश र दिया है।

—कहाँ है ?

—कमरे में।

अन्दर जाकर ब्रजराखाल ताज्जुब में पड़ गया। भूतनाथ भी चौंक उठा। ब्रजराखाल ने पूछा—क्यों भाई साहब, यह क्या ?

भूतनाथ की आँखों से आँसू बह चले। मुँह में बोली नहीं।

उसके सिर पर हाथ फेरते हुए ब्रजराखाल ने कहा—रो क्यों रहे हो ? तुम हमारे 'युवक-संघ' में हो, कोई डर नहीं। कदम है, शिवनाथ है। फिर शिवनाथ की तरफ देखकर कहा—अरे भाई, ये तो मेरे साले हैं। कहाँ मिल गए तुम्हें ?

जाते समय ब्रजराखाल कह गया है—फिर आऊँगा। इधर कुछ दिनों तक बड़ा परेशान रहूँगा।

बहुत दिनों की बात। उसके बाद भी भूतनाथ गोलदीघी के युवक-संघ में कई बार गया। जीवन के एक सन्धि-काल में निरा बेबस-सा जिन कई दिनों तक वह वहाँ पड़ा रहा, उसकी यादगार भारत की आजादी के इतिहास के साथ जुड़ी है। पड़ा-पड़ा सब देखता रहता—नौजवान कुश्ती लड़ा करते, मुगदर भाँजते, स्वदेशी गाने गाया करते।

निवारण की भी याद आई। वह उसके सिरहाने बैठा था। साँझ हो रही थी। लोग-बाग नहीं-से थे। अखाड़ा सूना पड़ा था। भूतनाथ ने देखा, कोई उसकी तरफ देख रहा है पास बैठकर।

निवारण ने पूछा—तकलीफ़ हो रही है ?

भूतनाथ टुकुर-टुकुर ताकता रहा। बोली नहीं।

आखिर निवारण ने ही पूछा—पानी पीजिएगा ?

पानी पीने के बाद भी वह वैसे ही ताकता रहा। निवारण ने पूछा—मुझसे

कुछ कहेंगे ?

भूतनाथ ने पूछा—तुम कौन हो ?

निवारण ने बताया—मैं हूँ निवारण। आप मुझे नहीं पहचानेंगे। मैं आत्मोन्नति-समिति से आया हूँ। रात आपकी सेवा करूँगा।

भूतनाथ ने पूछा—यह आत्मोन्नति-समिति कहाँ है ?

पहले खिलात इंस्टिट्यूट में थी, अब युवक-संघ से मिल गई। जिस दिन वेलिंगडन स्क्वायर में गोरों से मार-पीट हुई, दोनों संस्थाओं को एक कर देने की बात उसी दिन तै पाई। गोरों ने बड़ा जुल्म मचा रखा है। आज उसी पर विचार के लिए बैठक थी।

—क्या तै पाया बैठक में ?

—कुछ भी तै न पा सका। बड़े भैया न आ सके।

—बड़े भैया कौन ?

—ब्रजराखाल बाबू। सभापति वही हैं।

—ब्रजराखाल ! भूतनाथ को अचरज हुआ। उसने कभी कहा तो नहीं। निवारण आप-ही-आप बोलता गया—सो कदम भाई चाहे जो कहें, हम लोगों ने तै कर लिया है कि हम भी अपना रास्ता अख्तियार करेंगे। अंगरेजी राज में इन्सानियत बचाना कठिन है।

निवारण की वे बातें आज भी याद आ रही हैं। कैसे जलते अंगारे-से नौजवान थे ! २२ जून की घटना मानो कण्ठस्थ है उसे। महारानी विक्टोरिया की डायमण्ड जुबिली। समारोह के बाद पूना में लाट साहब के घर से प्लेग कमिश्नर रॅण्ड साहब बाहर आ रहा था। बड़ा ही बदमाश था। दामोदर चाफेकर और बालकृष्ण चाफेकर—इन दो भाइयों ने सामने जाकर उसे मार डाला। शिवाजी के वंशधर थे। उसी समय से शुरुआत हुई बंगाल में क्रान्तिकारी आन्दोलन की। सन् १८९९ था वह शायद। एक दिन रात के अन्तिम पहर में दोनों भाइयों को चुपचाप फांसी दे दी गई। जिन गद्दारों ने उन दोनों भाइयों को पकड़वाया, अन्त तक वे भी न बच पाए।

निवारण जरा रुककर बोला—हम सभी क्यों पीछे रहें ? मैंने चिट्ठी दी है, चाफेकर संघ के सदस्य यहाँ आ रहे हैं। एक रॅण्ड को मारने से क्या होने का है, देश में हजारों-हजार, लाखों-लाख रॅण्ड बिखरे पड़े हैं। निलहे साहब गये और चायबगान के साहब ?

भूतनाथ ने पूछा—कौन आ रहे हैं, बताया ?

—तीन जने आ रहे हैं—यतीन बनर्जी, बारीन घोष और उनके बड़े भाई अरविन्द घोष। यहाँ बैरिस्टर पी० मित्तिर तो हैं ही। एक नई समिति कायम होगी—अनुशीलन समिति। मणिकतल्ला में माणिकदत्त के यहाँ जमघट होता है।

चलेंगे एक दिन आप ?

—मुझे वहाँ जाने क्यों देंगे ?

—आप व्रजराखाल बाबू के साले हैं, आपको कौन रोकता है ? और बात यह है कि सबकी मदद के बिना कुछ होने का भी नहीं। बोअर लड़ाई हो चुकी। अभी रूस और जापान में ठनने वाली है। ये सफेद चमड़ी वाले जरूर हारेंगे। आपने गैरीबाल्डी की जीवनी पढ़ी है ? चाहें तो किताब मैं दे सकता हूँ। वे सब भी इसी तरह से आज़ाद हुए थे। उस दिन मिस्टर निवेदिता हमें आशीर्वाद दे गईं कि तुम लोग भी स्वामीजी-जैसे बनो।

भूतनाथ की आँखें मुंद आईं। लगा, वह एक अनोखी दुनिया में आ निकला है। कलकत्ते में भारत का एक नया ही इतिहास तैयार हो रहा है। जॉब चार्नक और लार्ड क्लाइव के कलकत्ते का एक आश्चर्यजनक रूपान्तर। यह वह कलकत्तानहीं, जहाँ ननीलाल, नन्हे बाबू, छोटे बाबू, छोटी बहू, सुविनय बाबू और जवा रहते हैं।

एक दोपहर की घटना याद पड़ गई। बहू बाज़ार से वनमाली लेन घुसते ही बरगद के नीचे पक्के की वेदी—वेदी पर देवी-देवताओं की छोटी-बड़ी बेशुमार मूर्तियाँ। नरहरि ने भूतनाथ से पहले ही दिन प्रणामी वसूल की थी। उसके बाद भी जानें कितनी बार दक्षिणा अदा की। झूठ हो चाहे जो हो, आखिर तो देवता की बात है ! एक जो अलक्षित शक्ति दुनिया को चलाती है, उसे इनकार करने की ताकत भूतनाथ में कहाँ !

मगर उस दोपहर की घटना ! अप्रत्याशित।

कुछ गोरे सिपाही थे शायद। सीटी बजाते हुए उस गली से जा रहे थे। नरहरि गंगा नहा आया था। चुटिया में गेंदा का एक फूल खोसे राहगीरों की तरफ ध्यान लगाए बैठा था। रोज़ ही इसी तरह रहता। लेकिन उसे देखकर गोरों के जी में जाने क्या आया, एक ने उसकी चुटिया के फूल पर जमा दी एक छड़ी। शायद मज़ाक किया हो। पर मारे डर के नरहरि चीख उठा। चीख उठने का नतीजा उलटा निकला। एक गोरे ने लगाई बूट की ठोकर उसके चेहरे पर। नरहरि रास्ते पर छिटक गिरा और शोर करने लगा। भीड़ जमा हुई। भूतनाथ भी बाहर आया। मगर सबकी छाती में धड़कन। चूं करने की हिम्मत नहीं।

तब तक गोरों ने लातों से देवताओं की दुर्गत शुरू कर दी। मूर्तियाँ टूट-फूटकर बिखर गईं। इससे भी गोरे शान्त न हुए। लोगों पर टूटने लगे। जिसे देखें, उसी पर दौड़ें। बड़े महल के गेट पर संगीनवाली बन्दूक लिये बिरिजसिंह पहरा दे रहा था। छाती पर गोली-भरी पेटी। उसने डर से लोहे का गेट बन्द कर लिया। देखते ही-देखते आस-पास के घरों के खिड़की-किवाड़ फटाफट बन्द हो गए।

इसी समय मझले बाबू हिरण्यमणि चौधरी बाहर निकल रहे थे। कोचवान की जगह अमीरी ढंग से इब्राहिम मियाँ लगाम थामे बैठा था। सकुची मछली की

पूंछ का चाबुक बगल में खड़ा। मोम लगाकर कड़ी की हुई उसकी मूंछें बिच्छू के डंकी-सी खड़ी। बावरी बाल। बाल में काठ की कंघी खोंसी हुई। ज़री के काम वाले सादे प्लेट पर सोने की पटिया गले में। यासीन पिछले पायदान पर खड़ा चीख रहा था—होशियार···होशियार!

गेट खोलकर बिरिजसिंह अटेंशन की मुद्रा में खड़ा हो गया। आवाज़ लगाई—होशियार···होशियार!

गोरे भी ज़रा सहम-से गए।

तब तक गाड़ी सामने जा पहुँची। अन्दर भैरव बाबू बैठे थे। ज़ोर से पुकारा—इब्राहिम, गाड़ी रोक दे, मँझले बाबू कह रहे हैं, रोक दे गाड़ी।

पहले मँझले बाबू उतरे—पीछे-पीछे भैरव बाबू। मँझले बाबू ने पुकारा—इब्राहिम, ज़रा चाबुक देना तो।

इतने में गोरे भाग खड़े हुए।

मँझले बाबू नरहरि के पास जा पहुँचे—उल्लू, सूअर का बच्चा कहीं का! रो क्या रहा है? दो-एक जमा नहीं सका—बेहूदा। कहा और हंटर से उसकी खबर लेनी शुरू की। नरहरि रास्ते पर कटे बकरे-सा छटपटाने लगा। जिन लोगों ने झरोखे-दरवाज़े बन्द कर लिए थे, वे निडर-से बाहर निकल आए। नरहरि को पीटना बन्द करके मँझले बाबू चाबुक लिये लोगों की तरफ लपके—अबे, देख क्या रहा है, भाग यहां से···

फिर सारे दरवाज़े बन्द हो गए। शान्त-सलोने मँझले बाबू को बिगड़ते किसी ने नहीं देखा था। ज़रा देर में वे भैरव बाबू के साथ जोड़ी पर सवार हुए। गाड़ी गली पार कर गई।

दूसरे दिन खजांची की बुलाहट हुई। मँझले बाबू ने कहा—विधु, नकद सौ रुपये देकर नरहरि को रुखसत कर दो, और सुखचर के गुमाश्ते को लिख दो, नहर के पास की दस बीघा जमीन उसके नाम से रैयती बन्दोबस्त कर दे।

फ़ौरन हुक्म बजाया गया। नत्थूसिंह को बुलाकर कहा—देखो, अब से इस गली के अन्दर नरहरि कभी कदम न रखे। कभी नज़र पड़ गई तो गोली मार दूंगा, कह देना।

तब से भूतनाथ ने नरहरि को कभी कलकत्ते में न देखा।

निवारण को नींद आ रही थी। कमरे की रोशनी कांप रही थी। भूतनाथ की भी पलकें मुंदती आ रही थीं। और केवल वही दोनों क्यों, उस समय सारा देश तन्द्रा से चूर था। बादशाही अफीम का नशा। जागना भी चाहो, तो पलकें नहीं खुलतीं। इस सौ साल में बनने-बिगड़ने का इतिहास नहीं, राजवंशों के उत्थान-पतन का शोरगुल नहीं। सब बेफ़िक्र सोते रहे। उसी सर्वनाशक नींद में कब चुप-चाप आ गई चावल कूटनेवाली कल, जूट और आटे की मिल, कपड़े की कल, स्टीम

इंजिन, स्टीमर, छापाखाना और मिण्टघर—किसी को पता न चला। तैमूरलंग के अरबी घोड़े और नादिरशाह की तलवार ने जो न किया, वही किया सौ साल की अंग्रेजी सल्तनत ने। अन्दर-ही-अन्दर समाज की भीत धँस गई। बुद्ध, ईसा और मुहम्मद से जो न बना, भाप और भाप के इंजन ने वही किया।

निवारण की नींद टूटी।

भूतनाथ की भी।

बाहर कोई कड़े खटखटा रहा था—निवारण, ओ निवारण!

निवारण ने झट दरवाजा खोल दिया—कदम भाई!

—हाँ, जल्दी चल, बेलूड़ जाना होगा।

—क्यों? इतनी रात को?

—हाँ, स्वामीजी न रहे।

—स्वामीजी?

—हाँ, स्वामी विवेकानन्द!

नींद में कैसे रात गुजरी, भूतनाथ को पता नहीं। लेकिन सोए-सोए भी वह व्रजराखाल को सपने में देखता रहता। उसके पास जाने को जी तड़पने लगा। जाने इस समाचार से उस पर क्या गुजरेगा? बंगाल में उसके-जैसा मौन भक्त और कौन था!

सुबह दूसरी घटना और घट गई। युवक-संघ के दरवाजे पर कोई गाडी आकर लगी। घोड़े की टाप। उसके बाद ही सुनाई पड़ी सुविनय बाबू की आवाज—कहाँ, इसी घर में?

शायद सामने शिवनाथ था। कहा—भूतनाथ बाबू सो रहे हैं, आप अन्दर आइए।

सुविनय बाबू बोले—कई दिन से फिक्र थी, हुआ क्या कि भूतनाथ नहीं आता। व्रजराखाल से पूछा, उन्हें भी पता नहीं। आखिर आज सवेरे···

अचानक कमरे में पधारे। काली चपकन, उस पर तह की हुई चादर पड़ी। घनी मूँछ-दाढ़ी के बावजूद उनकी घबराहट जाहिर हो रही थी। भूतनाथ को जगा देखा तो पास गये। झुककर पूछा—कैसी तबीयत है? जरा रुककर बोले—गोरों को कुछ कहने से कोई लाभ नहीं, जान बची, यही गनीमत है। जो सब जीवों के रक्षक, सभी लोकों के मालिक, वही···।

शिवनाथ ने कहा—हमने सेवा-जतन में कुछ उठा नहीं रखा है। इलाज में कोई कमी नहीं रही।

सुविनय बाबू बोले—लेकिन मेरी बिटिया जबा बेतरह घबराई हुई है। वह बड़ी जिद्दी है। खुद आ रही थी, मैंने कहा, मैं उसे साथ ले आऊँगा। मैं उसे वचन

दे आया हूँ।

शिवनाथ ने कहा—लेकिन ब्रजराखाल बाबू से पूछे बिना ले जाना क्या अच्छा होगा?

सुविनय बाबू ने कहा—अच्छा नहीं होगा, समझता हूँ। लेकिन अपनी बिटिया से जाकर कहूँगा क्या, मैं? बेहद जिद्दी है। ब्रजराखाल बाबू को खबर नहीं दी जा सकती?

—जी, वे तो अभी बेलूड़ में हैं। आज स्वामीजी···। उनसे भेंट होना मुश्किल है।

—फिर क्या होगा?

अब भूतनाथ की जबान फूटी। बोला—मैं आपके साथ चलूंगा।

सुविनय बाबू को मानो अथाह में किनारा मिल गया। बोले—आपने मुसीबत से बचा लिया मुझे। जब से पता चला है, जबा बेचैन है।

शिवनाथ ने सहारा देकर उसे गाड़ी पर पहुँचाया। वहाँ तक साथ गया। वहाँ पाठक और उसने उसे उतारा।

जिस कमरे में उसे सुलाया गया, वह कमरा जबा की माँ का था। जबा ने कहा—बाबूजी, आप जरा सुस्ता लें, मैं सब ठीक किये लेती हूँ। जबा की माँ को बुलाकर कहा—बैजू से कह दे, डॉक्टर साहब को खबर कर दे और तू थोड़ा-सा पानी गरम करके यहाँ ले आ।

भूतनाथ थक-सा गया था। कब दिन बीत गया और साँझ हो गई, उसे कोई पता नहीं। तन्द्रा टूटी तो लगा, यह कहाँ आ गया वह! याद करने में कुछ समय लग गया। देखा, जबा बिस्तर पर उसके पास बैठी है। बहुत करीब। इतनी निकटता का सुयोग पहले कभी न मिला था। उसके शरीर की गन्ध मिल रही थी। स्पर्श से रोमांच हो रहा था। उसका उत्ताप मानो और बढ़ गया।

सुविनय बाबू कमरे में आये। वह कुछ पूछें, इसके पहले ही जबा बोल उठी—आप फिर क्यों आये बाबूजी? डॉक्टर बाबू बता गए, डर की कोई बात नहीं। बुखार भी कम है। आप बैठें जाकर।

उन्होंने पूछा—माथे के जख्म का क्या हाल है?

माथे पर पानी की पट्टी देती हुई वह बोली—डॉक्टर बाबू ने कहा, कुछ समय लगेगा। चुपचाप पड़े रहने को कहा है। जख्म भरने लगेगा तो बुखार आप ही कम हो जाएगा।

—उन नौजवानों की जरा भी इच्छा न थी कि मैं भूतनाथ को यहाँ लाऊँ। तुम्हारी खातिर ले आया···खयाल रखना।

सुविनय बाबू चले गए।

जबा ने कमरे की बत्ती गुल कर दी और फिर पास जाकर बैठी। बुखार

के नशे मे भी भूतनाथ को लगा, वह उसके बहुत ही पास बैठी है। उसके नि.श्वास की आवाज मिल रही थी। एक बिलकुल ही नई अनुभूति। इसके पहले उसके इतना करीब और कोई नही बैठी। अलबत्ता फूफी उसकी बीमारी मे ऐसे ही बैठती थी। बड़ा अच्छा लगता था भूतनाथ को। उसके चगा होने तक फूफी खा नहीं सकती। दोपहर को जैसे ही वह बैठती कि भूतनाथ ताड़ जाता और पास जा बैठता।

. फूफी कहती—तू सो रहा था, इसलिए मैं खाने बैठ गई। भूतनाथ ध्यान लगाकर देखता, फूफी किस तरह चावल मे दाल मिला रही है, कैसे कौर उठा रही है। लोभ से उसका सारा शरीर लालायित हो उठता।

पूछता—मैं भात कब खाऊँगा फूफी ?

फूफी के कौर अन्दर नही धँसता। दिलासा देती—अच्छा बता, चगा होने पर क्या-क्या खाएगा तू ?

भूतनाथ एक फेहरिस्त ही तैयार करता। कागज पर लिखता कि अच्छा होने के बाद क्या-क्या खाएगा। बेर का अचार। बरी। सहजन की तरकारी। और भी कितना क्या ! मामूली चीजें, मगर सोचने में बड़ा ही अच्छा लगता। और चंगा हुआ नही कि वही हाल।

फूफी कहती—अरे रे, दो कौर और खा ले।

—पेट भर गया।

—तूने तो कहा था, आज बहुत-सा खाएगा। तू ही न खाएगा तो इतना सारा झमेला किसके लिए ?

बीमारी मे खाने की जिसे इतनी ललक, अच्छा हो जाने पर उसी को खिलाने में ऐसी मुसीबत। शायद यही सबके साथ होता है। भूतनाथ को सब-कुछ याद आता।

जवा बीच-बीच मे पिताजी को पढ़कर सुनाया करती। रामायण-महाभारत के छन्द सुनाई पड़ते। निवारण की याद आ जाती। वह मानो किसी सुदूर का स्वप्न देखता है। देश को आजाद करने का स्वप्न। रैण्ड साहब का किस्सा याद आता। बड़े लाट के घर की सीढ़ी से उतर रहा है···आँखो के आगे नाच उठता है दृश्य। १८६६ के एक दिन की याद आती। चुपचाप चाफेकर भाइयों को फाँसी हो गई। उसी लहू का बीज ये नौजवान यहाँ बन रहे है। अकेले सोये-सोये कितना क्या याद आता !

बड़े महल की बातो का स्मरण हो आता। व्रजराखल उसे देखने भी नहीं आया। फुरसत कहाँ बेचारे को ! कहाँ फूलवाला बीमार है, कहाँ किसे दवा पहुँचानी है, आलम बाजार का मठ, दक्षिणेश्वर का मन्दिर, अपना योग-साधन—तिस पर नौकरी। नौकरी करता ही क्यो है वह ! उस बार [illegible] पड़ा, क्या पूछिए ? व्रजराखाल मुहल्लों में घूम-घूमकर बेहद काम

[सि]यालदह स्टेशन पर टिकट कटाना मुश्किल। दिन-भर काम करके जब [व]ह लौटता, क्या शकल हो जाती थी उसकी !

एक दिन भूतनाथ ने पूछा था—दफ्तर नहीं जाते हो, नौकरी बचेगी ? व्रजराखाल ने जवाब दिया था—नौकरी बड़ी है या लोगों की जान ? फिर [कहा]—अपने से अब बनता भी नहीं भाई साहब ! आज यह साहब आया, बजाओ। कल वह साहब आया, सलाम बजाओ। इसमें चूक हुई कि नौकरी मगर मैंने भी अब तै कर लिया है, अपने परमहंस देव के सिवाय किसी के सिर न झुकाऊंगा।

भूतनाथ ने कहा था—फिर तो नौकरी ही बेकार करते हो !

व्रजराखाल बोला—शौक से थोड़े ही करता हूँ।

भूतनाथ को पता था। एकाध दिन व्रजराखाल घर न आए कि पूछनेवालों [क]ा तांता लग जाता। महीने के आरम्भ में जाने कितने लोग उसका बेसब्री से [इ]न्तजार करते।

बड़े महल की याद आते ही छोटी बहू की याद आती। तिमंजिले पर का कमरा। पलंग। रंगीन मसहरी। मोटी गद्दी पर शंख-सी सफेद चादर। दीवार पर देवी-देवताओं की तसवीरें। कांच की अलमारी में खिलौने। आंख बन्द करते ही नजर आते छोटी बहू के महावर-लगे पांव बेर-सी रस-भरी उंगलियां। 'मोहिनी-सिंदूर' से कुछ लाभ भी हुआ या नहीं, क्या जाने ! दिन हो गये। छोटे बाबू क्या आज भी शाम को जोड़ी पर निकल जाते हैं ? कौड़ी-से सफ़ेद घोड़े रद-बद करते क्या आज भी सड़क पर वैसे ही दौड़ते हैं ?

उस रोज सुविनय बाबू कमरे में आये। बोले—अब कैसे हो भूतनाथ बाबू ?

भूतनाथ ने कहा—पहले से अच्छा हूं। कुछ दिनों में काम करने की सोच रहा हूं।

—कौन-सा काम ?

—दफ्तर का।—भूतनाथ ने कहा।

—किस दफ्तर का काम ?

भूतनाथ तुरंत इस बात का उत्तर न दे सका। ठहरकर बोला—आ[प] अकेले सब बनता नहीं।

—ओ···।···। अब मानो उन्होंने समझा। बोले—न-न, अब मैं [इ]... बन्द करने की सोच रहा हूँ—आत्मा को ठेस लगती है। अवपढ़ों-अपढ़ों का ... है, बिक्री अभी बढ़ रही है, बढ़ेगी ही···अपनी धन-जायदाद सब इसी की बदौ[लत] है। उपनिषद् में है—

बाधा पड़ी। जबा अन्दर आई। कहा—बाबूजी, आप आराम क[रें]...

भूतनाथ बाबू के पास हूँ।

सुविनय बाबू चले गये। भूतनाथ को लेकिन मन मे डर लगा। सच ही ये कारखाना बन्द कर दें तो मेरा क्या होगा ?

जवा भूतनाथ के पास बैठी। उसकी आँखों मे देखकर पूछा—मुझसे कुछ कहेंगे ?

बात कैसे शुरू करे, भूतनाथ सोच न सका। आखिर बोला—अभी बाबूजी जो कह गए, क्या वह ठीक है ?

—क्या कह गए बाबूजी ?

—कह रहे थे कि मोहिनी सिंदूर का कारखाना बन्द कर देंगे।

जवा बोली—उनकी बातो का आप खयाल न करें, उनका दिमाग अभी सही नही है। अभी वे हरदम यही सोच रहे हैं कि यह व्यापार केवल ठगी का है। लेकिन लोग खुद ही ठगाएँ तो अपना क्या कसूर ? मन्तर-जन्तर का देश ही है यह, अवतारवाद का पीठस्थान। इससे भी मुनाफे का व्यवसाय है दूसरा ? इसमे और पूँजी लगाई जाए तो और भी मुनाफा हो।

भूतनाथ को थोड़ा ढाढस मिला, पर निस्सन्देह न हो सका। कहा—लेकिन वे कह तो रहे थे कि यह सब चाल है।

जवा ने कहा—इन दिनों ऐसा ही सोचते हैं। दिमाग ठीक नही।

भूतनाथ को एकाएक खटका—तब तो उसने छोटी बहू को छकाया। कोई लाभ नही हुआ होगा। नाहक ही बेचारी रोज छोटे बाबू का इन्तज़ार करती होगी। अब भी शायद वह जगकर ही रात गँवाती होगी। भोर करके ही छोटे बाबू आते होंगे, वशी उनके कपडे बदलकर उन्हे दोतल्ले के कमरे मे सुला देता होगा—बदहोश। तब छोटी बहू को खबर दी जाती होगी। मानो खानदान-भर के पाप का प्रायश्चित्त अकेली छोटी बहू ही करती है।

छोटी बहू की याद आते ही उसका जी कैसा करने लगा। लगा, उसे बहुत दिनों से नही देखा है—शायद फिर भेंट न हो कभी। दौडकर अभी ही जा सके, तो अच्छा। कम-से-कम बडे महल मे भी पहुँच जाता तो कुछ राहत मिलती। करीब तो रहता। देख पाता चाहे नहीं। निकटता तो होती। एक ही घेरे मे। एक ही आबहवा। वशी के पास भी होता तो अच्छा होता। उसके मुँह से छोटी बहू की खबर मिलती। गजब का आकर्षण था यह। महज़ दो दिनों की मुलाकात। लेकिन लग रहा था, उसके पास न पहुँचने से वह मर जाएगा। एक बार, सिर्फ एक बार वह कह देगा—मोहिनी सिंदूर महज़ धोखा है, उसमे कुछ नही होता।

भूतनाथ अचानक बोल उठा—फिर मुझसे पहले क्यो नही कहा कि इसमे कोई तत्त्व नही ?

जवा भूतनाथ की इस बात से अवाक् हो गई। किन्तु दिलासा देती हुई

बोली—बाबूजी की बातों पर नाहक क्यों अपना जी खराब कर रहे हैं आप ? उनका दिमाग क्या ठिकाने पर है ? माँ के मरने के बाद से इसी तरह बक-बक करते रहते हैं।

भूतनाथ समझ नहीं सका। बोला—माँ ? तुम्हारी ?

—आपको पता नहीं ? माँ तो हमें छोड़ गईं।

—अरे, कब ? क्या हुआ था उन्हें ?

जबा ने कहा—अभी पन्द्रह दिन भी नहीं हुए। दिल की गति बन्द हो गई। इसी कमरे में सोई थीं, सोई रह गईं। सुबह पता चला। किसी को ज़रा भी तकलीफ न दी।—कहते-कहते उसकी आँखों में आँसू मचल उठे।

भूतनाथ बोला—मगर मुझे तो ख़बर तक नहीं। बाबूजी कुछ भी न बोले। अपने हाव-भाव से भी समझने का मौका न दिया।

जबा ने कहा—आपने पिताजी को पहचाना नहीं। ऐन जिस दिन माँ का देहान्त हुआ, पिताजी उस दिन भी समाज में गये, नियम से पूजा-अर्चा की, लोगों से बातें कीं। किसी को घर की इतनी बड़ी दुर्घटना की बू तक न मिल सकी। रात देखा; वे 'त्वमेकं जगत्कारणं विश्वरूपं' का जाप करते रहे। सवेरे मुझे 'नाथ तुम ब्रह्म' वाला गीत गाने को कहा, खुद हाथ पर चौताल की ताल देते रहे, साथ-साथ गाने भी लगे। बाहर से उनको देखकर कुछ समझ में नहीं आता, लेकिन अन्दर-अन्दर वे एक-बारगी बदल गए हैं। कहते हैं, इस ठगी के व्यवसाय को मैं बन्द कर दूंगा।

कहते-कहते वह मानो भूतनाथ से और भी घनिष्ठ हो गई। धीरे-धीरे भूतनाथ ने उसके हाथ को अपने हाथ में ले लिया। जबा ने एतराज़ न किया। उसके बाद जाने किस अज्ञात आकर्षण से उसने उसके हाथ को अपने होंठों से छुलाया। जबा को फिर भी कोई होश नहीं, गोया पत्थर की मूरत हो। वह देर तक उस निकटता का स्वाद लेता रहा।

अपना हाथ हटाए बिना ही जबा ने पूछा—मोहिनी-सिंदूर का कारखाना बन्द होने से डर क्यों लग रहा है आपको ? नौकरी चली जाएगी, इसलिए ?

भूतनाथ तब भी जबा के हाथ को उसी तरह पकड़े हुए था। होंठ और छाती के बीचों-बीच उसके हाथ को रखकर वह बोला—नहीं, वह बात नहीं। पहले पता होता तो कम-से-कम इस विश्वास से मैं छोटी बहू को सिन्दूर नहीं देता।

—यह छोटी बहू कौन होती है आपकी ? क्या हुआ था उसे ?

उस दिन भूतनाथ ने छोटी बहू को वचन दिया था कि यह बात वह किसी से न कहेगा, जबा से भी नहीं। लेकिन इस घड़ी वह भूल बैठा। बोला—तुमसे कहा तो है मैंने। वह बड़े महल की छोटी बहू हैं। उनके पति रात को घर नहीं

आते। उन्ही को वश में लाने के लिए सिन्दूर ले जाकर दिया था।

जवा ने जाने क्या सोचा ? पूछा—उमर क्या होगी उसकी ?

—तुमसे कुछ बड़ी, मुझसे कुछ छोटी।

जवा ने हँसकर कहा—उसके लिए आपको इतनी हमदर्दी हो, यह ठीक नही।

भूतनाथ लेकिन हँस न सका। बोला—उन्हें तुमने देखा होता, तो यह बात नही कह सकती।

जवा उसी तरह हंसकर बोली—नही देखा हो चाहे, कल्पना कर सकती हूँ।

भूतनाथ बोला—और सबकी कल्पना की जा सकती है, पर वे उसके बाहर हैं। देखे बिना उनकी कल्पना मुश्किल है। पहले तो मैंने भी ऐसा ही सोचा था।

जवा ने कहा—देख रही हूँ, बात दूर तक बढ़ गई। फिर ज़रा रुककर बोली—मैं तो जानती थी, मोहिनी-सिन्दूर कभी विफल नही होता।

—यानी ?

—यानी बड़े घर की पति-परित्यक्ता बहू, रूपवती···आपके···अचानक जवा ने अपना हाथ खीच लिया। रतन आ पहुँचा।

रतन ने कहा—दीदीजी, खोका बाबू आये हैं।

जवा बिस्तर से उठ गई। कहा—बड़े कमरे मे बैठने को कहो। चाय बना लाओ। मैं आई। और वह पल-भर मे बगल के कमरे से बाहर चली गई। भूतनाथ ठगा-सा पड़ा रहा चुपचाप बेबस, निरुपाय! आखिर यह खोका बाबू कौन ? जो भी हो चाहे, कम्बख्त को इसी वक्त आना था! जवा से अभी तो बहुत-कुछ कहने को था···रह गया।

उधर के बड़े कमरे से आवाज़ सुनी जा रही थी। बात-बात मे हँस रही थी जवा। इतना हँस सकती है वह! जी मे आया, उठकर चुपचाप देख आए। मगर आज ही तो इतने दिनों के बाद पथ्य मिला है। क्या हुआ, इतनी-सी मेहनत से कुछ न होगा। शर्म आई। शायद देख ले। अचानक उसे आवाज़ चीन्ही-चीन्ही-सी लगी। ननीलाल हो शायद। बातों का ढंग वही। देखने की बड़ी बेताबी हुई।

उठ ही रहा था वह। उझककर एक निगाह देखने जा रहा था। कोई फिर अन्दर आया। रतन। कुछ लेने के लिए आया था। भूतनाथ ने बुलाया।

रतन ने गर्दन घुमाई—मुझे पुकार रहे हैं किरानी बाबू ?

—हाँ, ज़रा सुन जाओ।

रतन करीब आया। भूतनाथ ने धीमे-से पूछा—कौन आया है ?

रतन ने कहा—खोका बाबू।

—खोका बाबू ? कौन खोका बाबू ?

—दीदीजी से उनका ब्याह होगा।

—पूरा नाम क्या है ?

—सो मैं नहीं जानता।—रतन चला गया।

रात को जवा एक बार कमरे में आई। पूछा—दवा क्यों नहीं पी ?

भूतनाथ दूसरी तरफ मुँह फेरे रहा। जवाब न दिया। जवा दवा की शीशी ले आई। कहा—बुखार उतर गया है, इसलिए दवा बन्द कर देंगे क्या ? लीजिए, पी लीजिए। हाँ, पीजिए···

भूतनाथ ने क्या जानें क्या सोचा ! दवा पी ली। जरा भी उज्र-एतराज न किया। मगर एक करतूत कर बैठा।

दवा पिलाकर जवा चली जा रही थी। भूतनाथ ने उसके अँचरे का छोर जो पकड़ लिया, सो कन्धे से साड़ी खिसक पड़ी।

लमहे-भर की बात। एक लमहे में, लेकिन दोनों अप्रतिभ हो गए। खण्ड-प्रलय-सा हो गया।

जवा का चेहरा कठोर हो उठा। नफरत से मुँह बिगाड़कर बोली—नीच कहीं के—और जल्दी से कमरे से बाहर हो गई।

दूसरे दिन तड़के ही उसकी नींद खुली, या कि रात-भर उसे नींद ही नहीं आई। रात-भर यही फिक्र होती रही, जवा को अपनी शकल कैसे दिखाऊँगा। जवा महज एक स्त्री ही तो नहीं, उसकी मालकिन भी है। सात रुपल्ली माहवार और एक जून भोजन पर वह इस घर की गुलामी करता है।

सुविनय बाबू रोज ही सवेरे एक बार आकर हाल पूछ जाया करते थे। उस रोज भी आये। खुलकर सवेरा भी न हुआ था। आकर बोले—भूतनाथ, तुम्हारी एक चिट्ठी है।

चिट्ठी ! चिट्ठी उसे शायद ही आती थी। फिर इस ठिकाने पर किसने लिखी ! सुविनय बाबू बोले—एक आदमी लेकर आया है। नीचे खड़ा है।

खोलकर पढ़ते ही उसके सर्वांग में रोमांच हो आया। छोटी बहू की चिट्ठी।

सुविनय बाबू ने कहा—रतन से कहकर उस आदमी को ऊपर भिजवा देता हूँ।—वे चले गए।

भूतनाथ का सारा शरीर काँप रहा था। खत को फिर से पढ़ा।

प्राणोपम भूतनाथ,

आज अभी वंशी से तुम्हारा समाचार मिला। अब कैसे हो ? बड़ी घबराहट हो रही है। वंशी को भेज रही हूँ। सम्भव हो तो यहाँ चले आना। पालकी जा रही है। आशीर्वाद।

—छोटी बहू।

बारम्बार पढ़कर भी उसे सन्तोष न हुआ। कल्पना भी नहीं की जा सकती कि पटेश्वरी बहू उसे चिट्ठी लिखेगी। उसके लिए कागज का एक तुच्छ टुकड़ा कीमती जायदाद हो गया पल में। ताकत रही होती, तो वह तुरत उठ बैठता और सारी दुनिया को यह चिट्ठी दिखाता।

वंशी आया। भूतनाथ को देखने की उसे भी बेहद ललक थी। आते ही कहा—साले साहब, शकल क्या हो गई है आपकी!

भूतनाथ को इतने दिनों बाद मानो अपना कोई मिला। सिर्फ इतना कहा—वंशी, तू···

वंशी बोला—कई दिनों से खोज-पूछ रहा था कि आप गायब कहाँ हो गए। छोटी माँ भी परेशान। थाना में पुछवा भेजा। नौकर-चाकर सबसे पूछा। भैरव बाबू तमाम की खाक छाना करते हैं। उनसे भी पूछा। बोले—किले के गोरों ने कहीं घायल कर दिया होगा। मधुसूदन से पूछा। वह बोला—आफत गई, जान बची।—उसे तो आपसे चिढ़ है।

—क्यों, मुझसे चिढ़ क्यों?

—क्योंकि आप हम लोगों की तरफ हैं, उसको सहूलियत नहीं होती। आपके आने के बाद से दस्तूरी उतनी मिल नहीं रही है। आपस में झगड़ा हो तो उसके दोनों हाथों लड्डू। नौकर-नौकरानी ला देगा और उनकी तनखाह से हर माह दस्तूरी काटता रहेगा।

भूतनाथ बोला—मैं तो उसकी आमदनी में हिस्सा नहीं बँटाता।

—हिस्सा क्यों लेने लगे, लेकिन आपका डर तो लगा है। आप कहीं छोटी माँ से कह दें। जानता है कि नन्हे बाबू से आपकी पटती है। कहीं उन्हें कह दें। आँखें ही उसकी छोटी-छोटी हैं, निगाह साढ़े अट्ठारह आने है।

एकाएक वंशी ने बात का सिलसिला बदल दिया। कहा—उधर एक घटना घट गई। पता नहीं न? आपको क्या पता होगा! ठनठनिया के दत्तों ने मँझले बाबू का कबूतर चुरा लिया था।

—कबूतर?

—हाँ, कबूतर। गिरहबाज कबूतर। भैरव बाबू नीलाम में पच्छिम से डेढ़ सौ का एक जोड़ा ले आए थे। तीन बार वे कबूतर लड़ने में जीत चुके थे। रोज़ की तरह मँझले बाबू ने सबेरे उन्हें उड़ा दिया। और दिन दो-तीन चक्कर काटकर लौट आते थे, नहीं लौटे। साँझ हो गई, पता न चला। मँझले बाबू का मिज़ाज कई दिनों तक बिगड़ा रहा, बेनी तक को पास जाने की हिम्मत नहीं पड़ती। आखिर छेनीदत्त की रखैल के यहाँ हाटखोला में कबूतर मिले।

—जी हाँ, साले साहब! मुकदमा हुआ। छेनीदत्त को दो सौ रुपये जुर्माने के भरने पड़े। परसों इसी खुशी में बड़ी धूमधाम हुई। बेनी को दो रुपये इनाम,

सब नौकरों को एक-एक कपड़ा। गंगा में नाव पर जशन मना। बड़ी माँ, मँझली माँ, छोटी माँ—सभी गई थीं। नाच-गीत, खाना-पीना रात-भर चला। मगर मुझे आपकी चिन्ता थी। हुआ क्या आपको ?

भूतनाथ ने पूछा—घड़ी-बाबू की क्या खबर है ?

—उनसे भी आपके बारे में पूछा था। इतनी हलचल हो गई, पर उनका वही हाल। चटाई पर चित पड़े अपने कमरे में। कहा—जान बच गई छोकरे की—बेदाग़ निकल भागा। कहकर उन्होंने कमर से घड़ी निकाली। उसे बड़ी घड़ी से मिलाया। बस। अजीब पागल हैं। लेकिन अब आप चलें, बहुत काम छोड़ आया हूँ। नन्हे बाबू की शादी की तैयारियाँ हो रही हैं।

भूतनाथ अवाक् रह गया—नन्हे बाबू की शादी ?

—जी हाँ, बड़ी माँ ज़िद ले बैठी हैं। मेरा क्या, कब चल बसूँ ! बहू को आँखों देख जाऊँगी। सिन्धु बता रही थी, अगले ही महीने होगी। तैयारियाँ तो करनी पड़ेंगी, समय कहाँ है ?

रतन अन्दर आया। कहा, दीदीजी ने कहा, दवा का वक्त हो गया।

दवा !—भूतनाथ ने पूछा—लेकिन दीदीजी कहाँ हैं ?

—भण्डार से सामान निकाल रही हैं।

—उन्हें एक बार भेज दोगे ?—फिर जाने क्या सोचकर कहा—अच्छा, रहने दो। बाबू कहाँ हैं ?

—बाबू को बुला दूं ?—कहकर रतन चला गया।

भूतनाथ ने बंशी से पूछा—और क्या खबर है वहाँ की ?

छोटी बहू के बारे में पूछते हुए उसे शर्म आई। फिर कभी उसके पास जाने का मौका भी मिलेगा या नहीं, कौन जाने ! एक बार अगर जा पाता !

बंशी ने कहा—कई दिनों से लोचन आपको ढूंढ़ रहा था।

—क्यों ?

—उसकी आमदनी घट गई है। तम्बाकू पीने वाले नहीं हैं। नन्हे बाबू की महफिल के लिए हफ्ते में तीन सेर तम्बाकू जाता था, अब बन्द हो गया। सब बीड़ी-सिगरेट पीते हैं। बेचारे का गुजारा कैसे हो ! मुझसे कह रहा था, साले साहब से तेरी इतनी बनती है, उन्हें तम्बाकू की लत लगा। महीने में दो ही चार पैसे दें मुझे। उधर इब्राहिम को भी फिक्र पड़ी है।

—काहे की ?

बंशी हँसने लगा—हरेक को अपनी-अपनी पड़ी है। मैं जैसे अपने भाई के काम के लिए परेशान हूँ, वैसे ही वह भी···।

भूतनाथ ने पूछा—वह किसके लिए परेशान है ?

—किसके लिए ? खुद ही खतरे में है। मुंह बेचारे का सूखकर सोंठ हो

गया है···वैसे शौक के बाल, दाढ़ी···अब ठीक से कघी भी नही फेरता···।

—क्यो ?

—उसे पता चल गया है, और कौन नही जानता कि बाबू लोग हवा-गाड़ी ले रहे हैं। उसे चलाने के लिए कोचवान की जरूरत नहो, न घोडे की दरकार, हवा से चलती है। ऐसी गाड़ी विलायत में चल रही है, पता नहीं आपको !

—हवा-गाड़ी ? बाबू लोग ले रहे हैं ? किससे सुना तूने ?

वंशी सकपकाया। आखिर बोला—जी, खास ही आदमी से सुना है। छोटे बाबू की रखैल···चुन्नी···

चुन्नी ! रूपा की बेटी। भूतनाथ ने पूछा—तू वहाँ गया था क्या ?

—जी, गया था। छोटी माँ ने ही भेजा था। लेकिन नही गया होता तो अच्छा था।

—क्यो ?

—उस रोज छोटी माँ का उपवास था। बीच-बीच मे पूजा-वरत तो करती ही रहती हैं। उस दिन नील का वरत था। एक बूंद पानी तक नही। दिन-भर कड़ाघूर उपवास। रूपलाल ठाकुर पूजा-पाठ करकरा गए। उनके यहाँ नैवेद्य भेजा जा रहा था। मैं शाम को पहुँचा। देखता हूँ कि छोटी माँ का चेहरा सूख गया है। हर बार होता ऐसा है कि मैं एक कटोरे मे पानी लेकर छोटे बाबू के पास जाता हूँ। उसमें वे पांव का अंगूठा छुला देते हैं और वही पानी पीकर छोटी माँ उपवास तोड़ती हैं। लेकिन उस रोज छोटे बाबू घर ही नही लौटे।

—क्यो नही लौटे घर ?

—यह मैं क्या जानूं ? या छोटी माँ को ही क्या पता है ? छोटी माँ ने कहा—वशी, कटोरे मे पानी लेकर तू जरा जानबाजार जा। देख भी लेना वे कैसे हैं। मैं अँधेरे में गया वहाँ। वहाँ गया तो दूसरी ही मुसीबत। बाबू पाँव तोडे बैठे थे। ज्यादा पी ली थी। सीढी से ऊपर चढ़ने मे पाँव फिसलकर गिर पडे। मुझे देख-कर उबल पडे—तुझे मना किया था न, फिर आया तू ?

गुस्से मे उनसे बोलना और बुरा है। ज्यादा बिगड जाते हैं। मैं चुप रहा। कटोरा उनके पैरो के पास रखा। उन्होने पाँव को हटा लिया। बोले—यहाँ आने को किसने कहा तुमसे ? निकल यहाँ से।—मैं चुप रहा। सिर झुकाए बैठा ही रहा। कुछ देर बाद बोले—जरा पाँव सहला तो।

समझ गया कि अब ये सो जाएंगे। सो गए। मैंने झट कटोरे पानी को उनके पाँव के अँगूठे से छुलाया और चल पड़ा; चला कि सामने आ गई नई माँ।

भूतनाथ ने पूछा—नई माँ कौन ?

—जी, वही चुन्नी। उसे हम सब यही कहते हैं। नई माँ ने पूछा—तू कब आया वशी ?

मैंने कहा—बाबू कल लौटे नहीं, देखने आया था।

—हाथ में वह क्या है ?

—जी, आज छोटी माँ का नील का बरत था···

नई माँ के हाथ में पान का डब्बा था। हरदम पान खाती है। ग़ौर से देखा, रंग और भी साफ हो गया है, मोटी भी हो गई है कुछ···सारे बदन पर गहना, नाक की कील झकमका रही थी।

नई माँ ने कुछ सोचकर कहा—अच्छा वंशी, तेरी छोटी माँ को मालूम हो चुका है कि हम मोटर खरीद रहे हैं ?

मैंने कहा—हवा-गाड़ी ? जी, नहीं तो।

—तेरी छोटी माँ भी मोटर लेंगी ? पता है तुझे ?

उत्तर दिए बिना ही मैं चलने लगा। भला, छोटी माँ उपवास किए बैठी हैं। चला कि नई माँ ने फिर पुकारा—जरा सुन ले।

मैं मुड़ा। नई माँ ने कहा—इसी ओर होकर तो जाएगा। ज़रा मोड़ वाली दूकान में कहते जाना कि सोडे की और पन्द्रह बोतलें भेज दे। रात का काम चल जाएगा। दो सेर बर्फ। रुपये ले जा—और उसने तीन रुपये दिये।

भूतनाथ ने कहा—पन्द्रह बोतल। इतना सोडा क्या होगा ?

वंशी हँसा। बोला—शराब पिएँगी। कभी जिसे दाना नहीं जुटता था, आज छोटे बाबू की बदौलत···

अचानक सुविनय बाबू अन्दर आये—मुझे बुला रहे थे। न-न, उठो नहीं।

भूतनाथ उठकर बैठा। कहा—अब तो मैं कुछ अच्छा हूँ। बड़े महल से पालकी भिजवाई है—सोच रहा था···

सुविनय बाबू व्यस्त हो पड़े—ठीक तो है। लेकिन बिटिया से पूछ देखो, उसकी इजाजत···अरे रतन···

उस दिन मोहिनी सिन्दूर कार्यालय से जाते समय बार-बार भूतनाथ के जी में आया, जबा जाते वक्त मिलने भी न आई। लेकिन यह सोचकर वह इस अपमान को भुला सका था कि उसने भी बड़ा असभ्य-जैसा व्यवहार किया है।

माधव बाबू के बाजार से पालकी गुज़र रही थी। आज, इतने साल बाद भी कहारों के बोल उसके कानों में गूँज रहे हैं—हिनृताल-हिनृताल-हिनृताल-हिनृताल···।

पालकी गई तो सदर ही दरवाजे से, लेकिन उसके बाद किधर से कहाँ चली, समझ में न आया। अस्तबल, रसोईघर, भिश्तीखाना सब पार करके महल के दक्खिन जाकर रुकी। उधर धोबियों का घाट था, बागीचा, तालाब। भूतनाथ पहले इधर कभी नहीं आया।

वंशी ने दरवाजे का मखमली परदा हटाया। कहा—साले साहब, यहीं

उतरना होगा।

कमजोरी तब भी थी। ज्यादा खड़ा रहने से चक्कर आने लगता। वंशी बगल मे आ गया। बोला—मेरे कन्धे का सहारा लेकर चलें।

सीढ़ी के मुंह पर अँधेरा। छोटी-छोटी सीढ़ी। अन्दर साफ़-सुथरा। वशी ने ले जाकर एक कमरे में उसे सुला दिया। छोटा-सा कमरा। पहले सजा-सँवारा रहा होगा। अभी भी एक पलंग पड़ा है। दीवार में काम। उड़ती हुई परी—अस्त-व्यस्त पहनावा। चिड़िया उड़ रही है—मुँह मे एक चिट्ठी है। और भी कितनी तस्वीरें। जगह-जगह दीवार का पलस्तर उखड गया है।

वशी ने बताया—आपके लिए छोटी माँ ने यही कमरा ठीक किया है। कोई असुविधा तो न होगी।

भूतनाथ ने कहा—लेकिन व्रजराखाल ढूंढ़े तो?

तुम्हारे मास्टर साहब। वंशी ने कहा—मास्टर साहब, वे तो अब आते ही नही।

—क्यों? कहाँ गये?

—जी, सो तो नही मालूम। काफी दिनो से नही आ रहे हैं। यहाँ की नौकरी छोड़ दी है उन्होने।

—अच्छा!

भूतनाथ मानो आकाश पर से गिर पडा। उसी के नाते तो भूतनाथ का इस घर से नाता है। वही चला गया, तो वह किस हक से यहाँ रहे! और कही मोहिनी सिन्दूर का कारखाना भी बन्द हो जाए तो बिलकुल बेपनाह। अपने को उसने बड़ा असहाय माना। फिर क्या गाँव ही लौट जाना पड़ेगा? वही कहाँ रहेगा, क्या खाएगा? जाने घर अब किस हालत मे है! जगल हो गया होगा। जानवर और साँप-बिच्छू का अड्डा। फूफी का उतना प्यारा घर! खैर। लेकिन उसे छोड़कर व्रजराखाल गया कहाँ? क्यो गया आखिर! वशी को भी कुछ पता नही।

दिन-भर उसी कमरे में बीता।

कोई डॉक्टर देख गया। कोट-टोपी वाला डॉक्टर। वशी कोई दवा भी ले आया शायद। कहा—पी तो जाइए, ज्यादा कड़वी हो तो ये फल खा लीजिएगा। एक तश्तरी मे वह अंगूर, बिदाना वगैरा ले आया था। कहा—मुझे तो आपके लिए छोटी माँ की झिड़की खानी पड़ी।

—क्यों?

वशी ने कहा—अपनी तो फज़ीहत जानिए। चिन्ता कुछ चूक करेगी, तो वह भी मेरे ही मत्थे। आप बीमार हैं। वह फल भी चुनकर नहीं रख सकती। भण्डार में जाकर उस बुड्ढी से कहूँ, तो सौ सवाल—कौन खायेगा, क्य साले साहब तुम्हारी छोटी मालकिन के कौन होते हैं...यह-वह। ह

चिन्ता से फल चुन देने को कहा था। काम भी क्या है उसे! मेरी तरह करना पड़ता तो जाने क्या होता! खसम भी होता तो क्या बिठाकर खिलाता? आप ही कहें, छोटी माँ ने क्या गलत कहा!

दवा को घोंटकर ही भूतनाथ ने मुँह बनाया। कहा—बड़ी कड़वी है वंशी!

—जी, असली दवा है। कड़वी तो होगी ही। शशी डॉक्टर की दवा असली होती है। छोटी माँ ने कहा है, रुपया: चाहे जो लगे, बीमारी छूट जानी चाहिए। कई दिनों से छोटी माँ की भी तबियत ठीक नहीं चल रही है।

—क्यों?

—हुजूर, छोटी माँ लिखी-पढ़ी हैं। मझली मालकिन-सी नहीं हैं कि रात-दिन बाघ-गोटी खेल रही हैं या कि बड़ी मालकिन-सी नहीं कि दिन में सत्तर बार नहा रही हैं। मगर पड़ी हैं छोटे बाबू के पाले। तकदीर का क्या कहा जाए? दिनों बाद उस रोज़ छोटी माँ के कमरे में आये। मैं ही बुला लाया। बाहर जाने को तैयार थे—मैंने धोती में चुनन डाल दी, जूते पहना दिए, रूमाल दिया, अँगूठी दी—रुपए-पैसे सहेज दिए और तब कहा—छोटी माँ ने ज़रा ऊपर बुलाया है।

खिजला उठे। फिर कहा, अच्छा चल। आये। पीछे-पीछे मैं भी पहुँचा। छिपकर सब-कुछ सुना। छोटे बाबू बोले—मुझे बुलाया था? गले में अँचरा डालकर छोटी माँ ने दण्डवत् किया। पूछा—कैसे हो?

छोटे बाबू ने पूछा—कोई जरूरत है?

—नहीं। देखने को जी चाहा। देखे बहुत दिन हो गए। आज हितसाधिनी व्रत है।

छोटे बाबू ठठाकर हँस पड़े।—फिर आडम्बर शुरू हो गया!

छोटी माँ ने कुछ न कहा। छोटे बाबू शायद नाराज़ हो गए।

बोले—बस रोना ही रोना। और बहुओं की तरह हँस नहीं सकती हो—मझली बहू को देखो, बड़ी बहू को देखो—किस तरह हैं। हँसो, गाओ, जो जी में आए, करो···।

—लेकिन हँसी आती जो नहीं है?

—क्यों नहीं आती? हुआ क्या है तुम्हें?

—तुम्हीं कब हँसते हो? गोकि सुनती हूँ, तुम बड़े मौजी जीव हो। मुझसे क्या ख़ता बन पड़ी है, बताओगे?

—इसकी क्या क़ैफ़ियत देनी पड़ेगी···मैं चला। तुम्हारी बेवकूफी की बात सुनने का समय नहीं है।—कहकर जाने लगे वे।

छोटी माँ ने झपटकर उनकी चादर का छोर थाम लिया। कहा—बिना गये न चलेगा?

छोटे बाबू को शायद देर हो रही थी। गाड़ी जुती खड़ी थी। नशे का

समय बीत रहा था। नई माँ गिलास लिये राह देख रही होगी। सो छोटे बाबू ने मुड़कर सिर्फ एक बार ताका। छोटी माँ ने कहा—आज वहाँ न भी जाएँ तो क्या हुआ ?

छोटे बाबू कुढ़े हुए तो थे ही। बोले—वहाँ न जाऊँ, यहाँ तुम्हारा दामन पकड़े बैठा रहूँ। क्यों ?

छोटी माँ ने कुछ न कहा। छोटे बाबू कहने लगे—बड़े महल के मरदों को इतना निकम्मा समझती हो तुम ?

—मगर तुम भी तो आदमी हो। तुम भी तो आदमियत···।

छोटे बाबू ने जाते-जाते इतना कहा—जो बीवी से आदमियत सीखता है, उसे चुल्लू-भर पानी में डूब मरना चाहिए।

वंशी किस्सा कहता खूब है। भूतनाथ ध्यान से सुन रहा था। एकाएक अनमना हो गया। पूछा—अच्छा, यह तो बता वंशी, छोटी बहू सिन्दूर लगाती हैं ?

—जी हाँ, लगाती हैं। रोज़ लगाती हैं।

—तो उन्हें मना कर देना। वह सिन्दूर न पहनें। बस, तू मना कर देना। वह सब चाल है। पहले पता होता तो···कहते-कहते भूतनाथ सम्हल गया। वंशी से यह सब ज़िक्र क्यों किया जाए ? सुविनय बाबू और जबा पर गुस्सा आया। सब-कुछ कर सकते हैं वे। जिनकी कोई जात नहीं, वे भगवान् का नाम बेकार ही लेते हैं। वहाँ की नौकरी छूट भी जाए, तो गम नहीं। नई ढूंढ़ ली जाएगी। तन्दुरुस्त होकर कोशिश की जाएगी। मैट्रिक पास किया है, नौकरी की क्या फिक्र ? डलहौजी स्क्वायर की तरफ़ जहाज़ कम्पनी के नए दफ्तर खुले हैं। वहाँ देखना होगा। पुरी के लिए रेल की नई लाइन खुली है। उसमें कोशिश करनी होगी। रेल की नौकरी अच्छी। शुरू ही में पन्द्रह रुपये तनखाह।

तीसरे पहर भूतनाथ बिस्तर छोड़कर उठा। पड़े-पड़े अब अच्छा नहीं लगता। महीनों से इसी तरह पड़ा है, जानें और कब तक रहना पड़े ! साल-भर तो हो चला। कमरे के बाहर ही पतली-सी राह। कोई आता-जाता नहीं। दक्खिन की तरफ वह राह सीढ़ी से नीचे को उतर गई थी। उसके बाद बगीचा, तालाब, धोबियों का घर, हीरू मेहतर का मकान। एक रास्ता सीधे उत्तर को चला गया था। वह एक दरवाज़े के पास जाकर खत्म हो गया था। दरवाजा सदा बन्द ही रहता। उसी से उस पार घर की बहुओं की बोली सुनाई पड़ती।

यह न तो दुमंज़िला था, न तिमंज़िला, न बाहर, न अन्दर-महल। जानें कब मकान-मालिक ने इस चोर कमरे में अपने रात्रि-विहार की खूराक रखी थी। सबकी नजर बचाकर रोज़ रात को शायद उनका अभिसार चलता रहा है··· आज भी टूटी दीवार में उसकी यादगार है।

वैदूर्यमणि, हिरण्यमणि और कौस्तुभमणि—ये तीनों नाती उस समय बच्चे थे। नमकमहाल का बेनियान होकर मालिक भूमिपति चौधरी यहाँ आये थे। उनके नए मकान की दीवारों पर चित्र बनाने के लिए एक इटली का चित्रकार आया था। बर्दवान के सुखचर महकमे से बाबू आये थे। कुली पास की बस्ती में रहते थे—दिन-भर यहाँ मजूरी करते। इटालियन साहब रहता था हेस्टिंग्स हाउस के पास बगीचे के बंगले में एक शाम को साहब काम करके घर वापस गया तो देखता क्या है कि बंगले पर मेम साहब अकेली नहीं हैं, उनसे सटकर बैठे बात कर रहे हैं भूमिपति चौधरी।

साहब का तो दिमाग खराब हो गया। शुबहा उसे कई रोजों से हो रहा था। लगता था, मेम साहब बनती-ठनती कुछ ज्यादा हैं, जब-तब गुनगुनाती हैं। कुछ-कुछ अनमनी-सी। आज रँगे हाथों पकड़ी गईं।

मेम साहब साहब को देखकर चौंकीं। भूमिपति चौधरी भी कुछ कम नहीं चौंके। आमतौर से ऐसे वक्त साहब लौटता नहीं था।

साहब से रहा नहीं गया। उसने पिस्तौल निकाली और दोनों को निशाना बनाकर गोली दाग दी। भूमिपति चौधरी तो बाल-बाल बच गए, मगर मेम साहब पर निशाना अचूक बैठा। लुढ़क पड़ी वह।

इतने में भूमिपति ने अपने को सम्हाल लिया। उठे और पलक मारने की देर में झपटकर साहब का गट्टा पकड़ लिया।

डर से साहब भी सन्न। गिड़गिड़ाकर बोला···लेट मी गो बाबू, लेट मी गो···छोड़ दो मुझे।

साहब ने क्षमा माँगी। छुटकारा मिल गया। पिस्तौल लेकिन भूमिपति चौधरी ने छीन ली। कहा—तुमने अपनी बीवी को मार डाला है। तुम्हें पुलिस के हवाले करूँगा।

हजारों मील दूर से बेचारा चित्रकार रोजी के लिए दलदल के इस देश में आया था। मेम साहब से जहाज पर भेंट हुई और शादी भी हो गई। तकदीर ने आज यह नजारा पेश किया। साहब ने मिन्नत की—फारगिव मी बाबू ! मैं किसी से कुछ न कहूँगा। मुझे अपने मुल्क को लौट जाने दो ! मैं आइन्दे कभी इस देश में कदम न रखूँगा।

भूमिपति ने उसे छोड़ दिया। साहब उसी रात जाने कहाँ गायब हो गया—फिर कभी न दीखा। जो यहाँ तसवीर बनाने आया था, अपने हृदय-पट पर कौन-सी तसवीर बना ले गया, कौन जाने !

मेम साहब में जान बाकी थी। रुपयों से साहब के नौकर-चाकरों की जुबान पर ताला लगाकर, रातों-रात, भूमिपति चौधरी पालकी पर मेम साहब को अपने यहाँ ले आए और इसी चोर कमरे में रखा। वैदजी नाड़ी देख गए। कहा—जान है, जी जाएगी।

और सच ही मेम साहब जी गईं। जख्म भर गया। नया जन्म ही हो गया मानो। उसके लिए नई बग्गी खरीदी गई। बहू-सी रहने लगी। मजे में पान खाती, तम्बाकू पीती, साग-सब्जी खाती। घर की औरतें फिर भी कोई नहीं छूती उसे। कहतीं, गाय खाने वाली हैं—मलेच्छ। घर-भर में एक भूमिपति ही सिर्फ उसे छूते। वह भी रात में। रात में भी तब, जब दीवानी झमेले चुकाकर आँखों में सुर्ख सरूर छा जाता। इकलौता लड़का सूर्यमणि चौधरी बालिग हो चुका था। उधर मेम साहब के एक लड़का हुआ। ऐन वक्त पर भूमिपति चौधरी चल बसे। धूम-धाम से श्राद्ध हुआ। मेम साहब बाद में अपनी परवरिश के नकद रुपये लेकर लड़के के साथ देश को लौट गईं। सुनते हैं, वसीयत में मेम साहब का इन्तजाम कर गये थे चौधरी।

सुबह झरोखे से लगता, दिन-दिन सूर्योदय से सूर्यास्त के दरम्यान दिन लम्बा ही होता जा रहा है। थकावट से भर आता मन। दवा और पथ्य। आराम और नींद। ये एक-से उदास दिन काटे नहीं कटते।

एक, सिर्फ एक दरवाजा। मगर भूतनाथ को क्या पता कि वह दरवाजा उसे छोटी बहू के इतना करीब पहुँचा देगा !

उसके रहने की व्यवस्था इस कमरे में क्यों की गई थी, क्या पता ! शायद हो कि यह कमरा जरा एकान्त पड़ता था। रोगी के लिए हो-हल्ला, भीड़-भड़क्का से दूर ही रहना अच्छा। उस दरवाजे को खोलने में उसे रोमांच हो आया। उसकी मानो मुमानियत हो। मानो वह अपने अधिकार की सीमा का उल्लंघन कर रहा हो।

उस पार से सिन्धु का कण्ठ-स्वर मिला—अरी ओ गिरि, हट जा वहाँ से।

गिरि ने कहा—जरा सब्र कर, हाथ का काम-भर निबटा लूँ।

सिन्धु ने तमककर कहा—तेरे हाथ के काम की ऐसी-तैसी···इधर बड़ी माँ को टट्टी में जाना है, तेरे लिए रुकी रहेंगी ? छिप जा।

मँझली बहू की आवाज मिली। खिलखिलाकर हँसती हुई बोली—गिरि, छोड़ भी सुपारी काटना। बड़ी दीदी को··

गिरि भुनभुनाकर बोली—मैं कोई मर्द सूरत हूँ कि मुझसे शरम है !

अन्दर से किल्ली खिसकाते ही दरवाजे में थोड़ी-सी फाँक हो गई। तीसरे पहर की मटमैली आभा। उसकी आँखों के सामने ही ऊपर अन्दर-महल था।

सिन्धु ने चिल्लाकर कहा—अपने कपड़े को हटा नहीं लिया गिरि, बड़ी माँ के छू जाएगा।

—लो, हटा लिया। हुआ तो ?—गिरि ने रस्सी पर से कपड़े को हटा लिया।

और भूतनाथ की आँखों के आगे एक अजीब घटना घट गई। बात-की-बात में !

शायद बड़ी बहू थीं। विधवा। बिलकुल नंगी। सारे बदन पर सूत भी नहीं। जल्दी से अपने कमरे से निकलकर टट्टी में चली गईं। पीछे-पीछे अँगोछा-साबुन लिये सिन्धु गई।

पल-भर की बात। लेकिन सब-कुछ देखने के पहले ही भूतनाथ ने चुपचाप दरवाज़ा बन्द कर लिया। छिः-छिः!

उस रोज़ छोटी बहू ने बुलवा भेजा।

बंशी ने कहा—उतना चक्कर देकर क्यों, सामने ही तो दरवाजा है!

कैसी हिचक हुई भूतनाथ को! उस रोज़ अपनी आँखों जो घिनौना दृश्य उसने देखा कि उसके बाद से दरवाज़ा खोलने की उसे हिम्मत न पड़ी। बीच में एकाध दिन बगीचे में घूमा किया। तालाब के बाँध पर टहलता रहा।

नन्हे बाबू से भेंट हो गई थी। पूछा था—खबर क्या है भूतनाथ बाबू, आपके तो दर्शन ही नहीं मिलते। उस दिन उस्ताद छोट्ट खाँ आये थे। पूरिया का वह ख़याल सुनाया कि क्या कहने! काना बादल खाँ के बाद वह पूरिया सुनना नसीब ही न हुआ था।

भूतनाथ ने पूछा—आज जमेगी महफ़िल?

—महफ़िल की न कहो। लगता है, तोड़ ही देनी पड़ेगी। पक्के गाने की कदर ही न रही—वैसे उस्ताद भी अब नहीं पैदा होते। खैर, आप पधारिए आज शाम को।

मकान में काम लगा हुआ था। नन्हे बाबू के ब्याह की तैयारियाँ जोरों से चल रही थीं।

नजर पड़ते ही लोचन ने कहा—आइए साले साहब!

भूतनाथ ने पूछा—यह सब क्या चल रहा है लोचन?

लोचन के कमरे में भी काफी रद्दोबदल हो चुका था। वह बोला—नन्हे बाबू के ब्याह की तैयारियां चल रही हैं हुजूर! सब नया साज़-सामान। गया से तम्बाकू आया। चढ़ाऊँ एक चिलम।

भूतनाथ ने कहा—अभी तक तो शुरू नहीं किया है।

—ख़ासी चीज थी हुजूर! सवा दो रुपये तोले की चीज। यहां बैठकर पीजिए और सारा हलका खुशबू से गमगमा उठेगा। मँझले बाबू की फ़रमाइश से आया है। और एक बार आया था छोटे बाबू की शादी में। नवाबी माल। धेला भी न दें न सही।

लोचन तम्बाकू में इत्र मलने लगा।

लोचन से पिण्ड छुड़ाकर भूतनाथ ने भिश्तीखाने में स्नान किया। सोचा, ब्रजराखाल के कमरे को देखता ही चलूं। खत-पत्र आया हो कोई। कैसा आदमी

है, खबर तक न दी। गया तो कमरे का ताला बन्द मिला।

बगल के कमरे मे बिरिजसिंह आटा मल रहा था। कहा—मास्टर साहब तो नही हैं साले साहब!

—तुम्हें पता है, कहाँ गये है?

—रोज ही दस-बीस आदमी पूछते हैं। लेकिन उनका पता हो तब तो।

दोपहरी भारी हो उठती। हवा मे उड़ती हुई चील की वही रूखी आवाज। कभी-कभी मजे का कटता। अन्दर गुलजार रहता। दरवाजे के पास कान लगाने से अजीब-अजीब बातें सुनने को मिलती।

मँझली बहू पूछती—अच्छा, आज तो सिन्धु ही तुम्हें खिला दे रही है बड़ी दीदी!

हाय राम!—गिरि भी गाल पर हाथ रखकर पास आ खड़ी होती।

सिन्धु कहती—बड़ी माँ के आज दोनो हाथ अशुद्ध हो गए हैं।

हँसकर मँझली पूछती—अशुद्ध हुआ कैसे बड़ी दीदी?

बड़ी बहू हँसी नही। बोली—मत पूछो, कपड़ा सुखानेवाली डोरी मे मरने को हाथ देने गई थी कि कही से मुँहजला कौआ आ बैठा।

गिरि की हँसी रोके नही रुक रही थी।

मँझली बहू ने फिर पूछा—तो यह कै दिनो तक चलेगा?

बड़ी बहू शायद गुस्सा हो गईं। बोली—हँस नही मँझली। हँसना नही चाहिए। हँसने से यह मर्ज तुझे भी होगा।

मँझली कहने लगी—बस्सो बाबा, मुझे नही चाहिए। सात जन्म मे भी अपने को ऐसी बीमारी न हो। मेरे तो खसम है। मुझे क्यो हो यह बीमारी?

बडी बहू मँझली को कोई जवाब नही देती। सिन्धु से कहती—सुन लिया न सिन्धु, खसम कही घर मे सोता होता तो जानें क्या होता!

मँझली गुस्सा नही होती। हँसते-हँसते लोट-पोट हो जाती। गहने-चूड़ियाँ झनक उठतीं। कहती—जेठजी कहाँ सोते थे, कह दूँ दीदी—कह दूँ?

भूतनाथ को कान मे उँगली डाल लेने की इच्छा होती। इतने बड़े घर की बहुएँ—इनकी ऐसी भाषा!

बड़ी बहू जोर से पुकारती—छोटी! अरी ओ छोटी!

चिन्ता निकल आती बाहर—छोटी माँ को पुकार रही हैं?

—हाँ, बुला तो जरा अपनी छोटी माँ को! आकर देखे करतूत इसकी।

—क्या हुआ है बड़ी दीदी?—छोटी बहू निकलकर मँझली से कहती—शायद तुमने बड़ी दीदी को कुछ कहा है?

—जरा रवैया तो देखो इनका? जब देखो नग-धड़ग घूम रही हैं। बदन तो हम भी खोलती हैं, मगर साड़ी तक···

बड़ी दीदी को तो बीमारी है, मगर मैंने तो तुम्हें भी देखा है। तुम्हीं क्या कम हो?

—बस-बस, ज्यादा बघारो मत। अच्छा, दस आँखें बिछाये देखता कौन है? आखिर कपड़ों की इतनी बहार कैसी, अपना खसम तो उलटकर भी नहीं ताकता!

छोटी बहू को जवाब ढूंढे न मिला। बाद में बोली—तुम दिल से चाहती हो मंझली दीदी कि घर के मर्द घर रहें?

—बड़-बड़ न कर छोटी तू! बड़े घर के मर्दों ने कब रात घर बिताई है! मैंने अपने घर भी देखा, यहां भी। तेरे नैहर की बात जुदा है।

दोपहरी निकल जाती। तीसरे पहर महावर लगाने आती नाइन। मंझली बहू महावर लगवाती, नाखून कटाती, झामे से पैर मंजवाती। अपने गोरे-गोरे पांव बढ़ाकर कहती—हां री नाइन, कल रात तेरे मुहल्ले में शंख क्यों फूंका जा रहा था?

नाइन कहती—धोबिन के लड़का हुआ है, आपको खबर नहीं?

—हे भगवान्, अभी-अभी तो उसके लड़की हुई थी। साल-साल?

बीच ही में वंशी आकर कहता—छोटे बाबू आ रहे हैं।

नाइन घूंघट काढ़ लेती। मंझली बहू बदन के कपड़े संभाल लेती। गिरि घूंघट काढ़े ओट में चली जाती।

मंझली बहू कहती—अच्छा भाई साहब! किधर सूरज उगा आज?

छोटे बाबू हनहनाते चले जाते। हवा में तीखी खुशबू भर जाती।

रोज-रोज जनानखाने में ऐसा ही कुछ होता रहता। भूतनाथ के जी में आया, इतने बड़े घर की ये बहुएं भी तो और-और मामूली घर की बहुओं-सी ही हैं! निहायत मामूली। दूर से ही रहस्य का एक पर्दा पड़ा रहता है केवल।

एक दिन जल्दी में बुलाने आ गया वंशी।—साले साहब, चलिए, मजा देखिए। गन्ध बाबा आये हैं।

—यह गन्ध बाबा क्या बला है?

—जी हां, गन्ध बाबा! जो खुशबू चाहिए, तुरत हाजिर। बाहरी दालान में भीड़ देखिए। ठसाठस।

गया भूतनाथ। गाड़ीवाले बरामदे के नीचे एक साधु, जटाधारी, ललाट पर सिन्दूर का टीका। देखने में विकट। नौकर-चाकर चारों तरफ़ से घेरे।

वानू जमादार के बच्चे भी पहुँच गए थे। इब्राहिम की छत तक पर लोग जमा थे।

डील-डौलवाला साधु कह रहा था—बहिश्त की हूर और जहन्नम की कुत्ती, इससे सब घायल होती हैं। यह पत्थर मुझे देवता, महादेवता ने अपने हाथ

से दिया है। देखो इस पत्थर को—यह ग़रीबों को धन देनेवाला, मुकदमे को जिता देने वाला है। जो माँगो, सो लो। देवता का दण्ड पांच आना···।

मधुसूदन एक तरफ खड़ा था। बोला—गन्ध बाबा, मेरे हाथ में कमल की खुशबू भर दो तो।

साधु ने उसकी हथेली पर पत्थर को रगड़ दिया। मधुसूदन ने सूंघकर देखा—वाह! कमल की खुशबू!

—देखें, जरा हम देखें।

—जरा हम।

सबने सूंघा। कमल की खुशबू! कैसे आ गई?

—अच्छा, अब मिट्टी के तेल की बू?

साधु ने पत्थर को रगड़ा। जिस हथेली में कमल की खुशबू थी, उसी में मिट्टी का तेल महकने लगा।

सब सूंघने के लिए धक्का-मुक्का करने लगे। साधु फिर वही रट लगाने लगा—बहिश्त की हूर और जन्नत की कुत्ती···।

सिर्फ पांच आने की दक्षिणा और सारी मनोकामना पूरी। इतना अच्छा मौक़ा हाथ से कौन जाने दे? बंशी ने भूतनाथ से चुपचाप पूछा, भाई की नौकरी के लिए लगाऊँ पांच आने?

मधुसूदन की भी कोई कामना थी। गांव की किसी जमीन पर बहुत दिनों से लोभ था। उसने भी पांच आने लगाए। बस, बरसने लगे पैसे। गन्ध बाबा का लटका चलता रहा—पत्थर का खेल, चमत्कार···।

एकाएक भूतनाथ को लगा, उसकी भी कोई मनोकामना है। अपने लिए नहीं, कम-से-कम छोटी बहू के लिए पांच आने पैसों पर पानी फेरा जा सकता। बेचारी सुखी हो।

गन्ध बाबा ने पूछा—तुलसी का पत्ता मिलेगा?

—मिलेगा। मिलेगा। पौधा है।

साधु ने गांजे की चिलम से थोड़ी-थोड़ी राख सबकी हथेली पर रखी। मुट्ठी बन्द करके तुलसी के बिरवे को प्रणाम करके आओ, तब मुट्ठी खोलो।

बंशी, लोचन, मधुसूदन, दासू, इब्राहिम, यासीन—सबने वैसा ही किया। तब साधु ने पत्थर को उनकी मुट्ठी से छुलाकर कहा—अब खोलो मुट्ठी।

बंशी भूतनाथ के पास ही था। मुट्ठी खोलते ही भूतनाथ ने देखा, राख के बदले नीले कागज का टुकड़ा पड़ा था। कागज पर एक त्रिभुज बना, त्रिभुज के अन्दर एक और त्रिभुज। सबकी मुट्ठी में एक ही चीज!

गन्ध बाबा ने कहा—इसका तावीज बनाकर पहनो। महीने-भर बाद मैं आऊँगा। मनोकामना पूरी न हो तो पैसे वापस।

बंशी ने कहा—साले साहब, एक जुर्माना आपका रहे।

भूतनाथ भी यही सोच रहा था। साधु अपने रुपये-पैसे बटोर रहा था और बहिश्त की हूर···भाषण दे रहा था कि एक घटना हो गई।

बद्री बाबू शोरगुल सुनकर बाहर निकले। पूछा—क्या है, शोरगुल कैसा हो रहा है ?

बड़ी-सी तोंद। रूई की बंडी। कभी निकलते नहीं थे। आज शोरगुल सुनकर निकल आये।

बंशी ने बताया—ये गन्ध बाबा हैं। जो खुशबू चाहिए, तुरन्त वही खुशबू बना देंगे।

बद्री बाबू ने सब सुना। बोले—अच्छा, मेरी हथेली पर नीम के फूल की गन्ध ला दो।

नीम के फूल की। खैर वही सही।

गन्ध बाबा ने पत्थर उनकी हथेली से छुलाया और बकने लगा···बहिश्त की हूर···जहन्नुम की कुत्ती···। देखिए तो बाबू, आ गई खुशबू !

बद्री बाबू बारम्बार हथेली को सूंघने लगे। लगा, कुछ हैरत-सी हुई है। कहा—कैसे ले आए भैया !

—यह इस पत्थर का खेल है, महादेवता का दिया पत्थर।

—जरा देखें भैया तुम्हारा पत्थर—और पत्थर को हाथ में लेकर घुमा फिराकर देखने लगे, जैसे कोई बच्चा रसगुल्ले को खोद-खोदकर देखता है। पूछा—इससे क्या होता है ?

—सब-कुछ हो सकता है बाबूजी महादेव की कृपा से।

—अमर हो सकता है कोई ?

—जी, अमर भी हो सकता है।

—तो अमर ही हो जाएँ—और आव देखा न ताव, उन्होंने पत्थर को अपने मुंह में भर लिया। गन्ध बाबा चिल्ला पड़ा—सत्यानाश हो गया···।

—ऐसी-तैसी तेरे सत्यानाश की।—उन्होंने निश्चिन्त होने की कोशिश की। मगर कुछ बेचैन-से हुए। कहा—लोचन, एक गिलास पानी तो देना।

गन्ध बाबा ने कहा—मर जाइएगा बाबूजी।

कुछ ही देर में बद्री बाबू के दम घुटने की नौबत। अकबक करने लगे आंखें उलट आईं। कई गिलास पानी पी गए। तोंद और फूल गई।

पत्थर महादेव का दिया जो था !

मौका पाकर गन्ध बाबा खिसक पड़ा। जाने से पहले कह गया—मर जाइएगा···।

मधुसूदन डर गया। लोचन भी चुपके-से चला गया। जाने क्या हो ?

कहीं मर-वर जाएं तो गवाह-सबूत, थाना-पुलिस का झमेला। मंझले बाबू ने सुन लिया तो सब पर जुर्माना होगा।

बद्री बाबू गाड़ी-बरामदे के नीचे लौट रहे थे। वशी ने कहा—चलिए साले साहब, कौन झमेले में पड़े !

भूतनाथ ने कहा—हाँ, तू चल दे वशी, कहीं छोटे बाबू सुन लें···।

—जी, मैं चलता हूं।···वशी चला गया।

भीड़ छँट गई। भूतनाथ ने झुककर बद्री बाबू के माथे पर हाथ रखा। मुर्शिदकुली खाँ के कानूनगो के अन्तिम चिराग की अन्तिम गति शायद यही हुई।

एकाएक आवाज हुई। बद्री बाबू पूछ रहे थे—क्यों छोकरे, वह कम्बख्त चला गया ?

भूतनाथ भी बड़े अचम्भे में पड़ गया। पूछा, जी कैसा है ?

आँखें टिमटिमाते हुए उन्होंने पूछा—वह कम्बख्त गया ?

—हाँ, गया। लेकिन आप कैसे हैं ?

बद्री बाबू उठ बैठे। कपड़े को सम्हालते हुए बोले—मुझे हुआ क्या है कि कैसा रहूंगा ! वे खड़े हुए। बैठके की तरफ चले।

पीछे लगा भूतनाथ गया। अपने कमरे के तख्त पर वे चित लेट गए। कमर से घड़ी को निकालकर समय देख लिया।

भूतनाथ सब देख-सुनकर अवाक् था। बोला—आप तो बेकार ही पत्थर निगलने गये—साधु-सन्यासी का पत्थर था !

—निगलने क्यों लगा भला—बद्री बाबू ने अचरज से देखा—मुझे और कोई काम नहीं पत्थर निगलने के सिवा—यह देखो—और उन्होंने टेंट में से पत्थर को निकाला।

—ताज्जुब !

—इतने दिनों से घड़ी का काँटा मिलाये बैठा हूं अकालमृत्यु ही के लिए ? आखिर सब देखना है कि नहीं। इतिहास झूठा होगा ! सब गये। ये चौधरी परिवार के लोग भी जाएँगे। यह महल भी एक दिन जाएगा। दर्पनारायण के अपमान का बदला अभी बाकी है।

क्या-से-क्या बात निकल आई !

भूतनाथ ने कहा—लेकिन गन्ध बाबा ने कौन-सा कसूर किया ?

—भैया, यह जमाना ही गन्ध-बाबाओं का है। आज तो राज ही गन्ध बाबा कर रहे हैं। उन्हें निकाल बाहर तो करना पड़ेगा। अपने मंझले बाबू, छोटे बाबू, तेरे मोहिनी सिन्दूरवाले—ये सब-के-सब गन्ध बाबा की जमात के हैं।

भूतनाथ फिर जरा भी न ठहरा। तुरत निकल पड़ा। उनकी बात का अन्त कहाँ ? बहुत-सी बातें समझ में भी नहीं आतीं। उस रोज सुविनय बाबू भी

कह रहे थे—मोहिनी-सिन्दूर धोखा है।

सांझ को वह नन्हे बाबू के कमरे में गया। पूछा—आज अभी तक कोई नहीं आया?

नन्हे बाबू महफ़िल सजाये बैठे थे। बोले—आप ही की बात सोच रहा था। कहां थे इतने दिनों? ननीलाल ढूंढ़ रहा था।

ननीलाल?—इस नाम के साथ मानो बड़ा रोमांच, बहुत स्मृतियां जुड़ी हुई हैं। बहुत समारोह, बहुत सौरभ। उसका नाम याद आते ही बचपन फिर से सजीव हो उठता। भूतनाथ ने पूछा—मुझे क्यों ढूंढ़ रहा था वह?

—उसकी अभी शादी हुई न? आपको आमन्त्रित करना चाहता था।

—शादी? हो गई?

नन्हे बाबू ने कहा—हां, हो गई शादी। खासा दांव मारा है। तीन-तीन किता मकान, सात लाख रुपये।

—अच्छा!—अवाक् हो गया भूतनाथ। अभी उस रोज की बात है, कर्ज के लिए यहां आया था। इन्हीं के दिनों में इतने-इतने रुपये का मालिक बन बैठा!

नन्हे बाबू ने फिर कहा—इस बार खूब निकल गया ननीलाल। हम तो सदा उसे टेढ़ा आदमी समझते रहे। हमारे पैसों पर सदा गुलछर्रे उड़ाता रहा और हमसे ही होड़ लेता रहा। लेकिन तारीफ़ करूंगा उसकी, कहां जाकर जमाया और अन्त तक क्या कर बैठा!

ननीलाल के लिए भूतनाथ की धारणा सदा ऊंची रही। छुटपन से ही वह भूतनाथ का आदर्श रहा। वैसा खूबसूरत चेहरा। बीच में कैसा तो लगा था। वह लुनाई नहीं थी। आंखें धंसीं। बातचीत में लज्जत नहीं। जो आदमी इतना नीचे गिर सकता है, बदचलनी की आखिरी हद पर पहुंच सकता है, वह जीवन में फिर प्रतिष्ठित कैसे होगा! सात लाख रुपये, तीन-तीन मकान का मालिक कैसे बनेगा!

नन्हे बाबू ने कहा—ऐसी कोई बीमारी नहीं, जो उसे न हुई हो। लाख कहता, उन रास्तों न चलो तो कहता, यह कुसंस्कार है। कुलमर्यादा का युग ही नहीं यह। यह युग है रुपयों का। स्वर्ग, धर्म, वंश, गोत्र, सब-कुछ है रुपया। मैं कहता, तन्दुरुस्ती ही न रहेगी, तो रुपयों का भोग कौन करेगा? वह कहता, रुपया ही न हो, तो तन्दुरुस्ती का क्या करना? कभी वह पूछ बैठता—आज के बुद्ध, ईसा, चैतन्य कौन है, जानते हो? हम तो सन्न रह जाते। ईसा, बुद्ध भी क्या हर युग में बदलते हैं? वह कहता—नहीं बता सके, क्यों? इस युग के अवतार हैं सेठ, शील और मल्लिक।

नन्हे बाबू हंसते-हंसते लोट पड़े। कहा—हमारे कॉलेज में सदर दरवाज़े पर ही लिखा था—God is Good. एक दिन कॉलेज में बड़ी हलचल मची। बड़े-

बड़े हरूफ़ में किसी ने वहाँ पर लिख दिया था,—God is money. सब अवाक्। जिस दिन अदालत के कठघरे में खड़े होकर रसिककृष्ण मल्लिक ने कहा था—'I do not believe in the holiness of the Ganges', तब भी हिन्दू समाज इतना नहीं चौंका था। सो ननी ने...

भूतनाथ ने पूछा—बीवी कैसी है?

—बीवी खूबसूरत है भूतनाथ बाबू! कल से वही तो सोच रहा हूँ। साले ने किया क्या। गाने-बजाने के लिए लोग आज आये थे। जी नहीं लगा। ननी पाँच हज़ार रुपये ले गया है, अभी वापस नहीं दे गया। माँगते भी शर्म लगेगी। सो रुपये पाँच क्या, दस हज़ार की भी नहीं सोचता। ऐसे कितने रुपये लिये उसने। लेकिन यह नहीं सोचा था कि वह मुझे ऐसा छकाएगा।

नन्हे बाबू का जी छोटा हो गया था। कहने लगे—नशे-वशे की यह आदत उसी ने लगाई, गाने-बजाने का शौक भी। कॉलेज में पढ़ता था। एक दिन दोपहर को छुट्टी हो गई। हम दोनों साथ निकले। कैसे, किधर से वह एक गली में ले गया। बोला—मेरे पीछे-पीछे आ।

मैं गया। कोठे पर गाना चल रहा था। एक लड़की गा रही थी। नाक में नथ।

ननी तकिए के सहारे बैठ गया। मुझे भी खींचकर बिठाया। उस लड़की के कानों में जाने उसने क्या कहा! उसने दोनों हाथ उठाकर सलाम किया। कहा—हुज़ूर की बड़ी मेहरबानी। फरमाएँ, क्या गाऊँ?

मेरी तो छाती धड़क रही थी। कम उम्र थी। मसें भी न भीगी थीं। फिर ऐसी जगह कभी गया न था। मैं कुछ कह न सका। गाना सुनने की ऐसे आदत थी ही अपनी। कितनी तवायफें अपने यहाँ गा गईं, नाच गईं। मगर वह और बात थी। नौकरों से सुना किया—अपने चचा रात-रात-भर उनके साथ ऐश करते रहे। नशे की भी बात सुनी, रंग-रंग की बोतलें भी देखीं। सब हुआ, पर अपना लालन-पालन इन सबसे बाहर हुआ। वह सब हमारी नजरों की ओट में चला करता था। खैर! ननी ने उस लड़की से कहा—मेरे मित्र पहले-पहल आये हैं, आज कुछ खान-पान रहे। मेरी तरफ़ देखकर बोला—तुझे तो भूख लगी होगी। बता, क्या खाएगा?

मैं तो पसीने से तर। खाऊँ क्या? उस लड़की ने किसे तो क्या कहा। जरा देर बाद ही आ पहुँची खाने की सामग्रियाँ। फल, मिठाई। मेरे लिए दूध भी आया। उस लड़की ने पूछा—आपको खूब शर्म आती है न?

मगर ननी भी कितना बड़ा शैतान था! उस लड़की से कहा—तुम तो लज्जाहरिणी हो, इसकी लाज नहीं मिटा सकोगी?

जीभ काटकर वह बोली—ऐसा गुमान तो मुझे नहीं। आप-जैसों के चरणों

की धूल अपनी कुटिया पर पड़ती है, इसीलिए धन्य हूँ।

ननी बोला—खाने को दिया, पीने को नहीं। प्यास लग रही है जो!

वह उठ खड़ी हुई। कहा—पहले ही बताना चाहिए। बनारसी ओढ़नी का घूंघट हटाकर गई। दराज खोला—मुड़कर पूछा—कड़ी पिएँगे तो आप?

उस समय मैं कड़ी-मीठी क्या जानूं? पी ही न थी कभी। उस दिन आखिर पी। कड़ी पी कि मीठी, पता नहीं। मेरी जो खातिरदारी हुई उस दिन पूछिए मत। उसके बाद शुरू हुआ गाना—जखमी दिल को न मेरे दुखाया करो।

एक तो गजल, फिर मोतिया का गला। साथ-साथ सारंगी और पेशेवर हाथ की संगत। कैसे समय बीतने लगा, खाक खबर नहीं। कोई खयाल नहीं, किसी का नहीं, कहीं का नहीं। मैं नशे में मोतिया से बार-बार यही कहने लगा—मैं तुमसे शादी करूँगा। छोड़ नहीं सकता।

सुबह जब नींद खुली, नशा जाता रहा, तो ननी आया। आते ही गाली-गलौज करने लगा—छी:-छी:; अकल बेच खाई है। ऐसे खानदान का लड़का और रात गुजारी बाईजी के घर!

मैं तो अवाक् रह गया। वही ले आया और फ़जीहत भी कर रहा है।

मुझे ओट में ले गया। चुपचाप बताया—हम भले घर के हैं। ज़रा मौज-मज़ा लिया और लौट गए। सो कहाँ कि पड़ दिए रात-भर! मैंने लाख कहा—चल। मगर कौन तो सुनता है!

उस समय मुझे भी यही लगा। यह क्या किया मैंने! ननी से कहा—चल, घर चलें।

ननी बोला—मोतिया को कुछ दे। उस बेचारी का है पेशा। इतनी मेहनत की, तमाम रात जागती रही।

ठीक ही तो! मगर साथ कुछ कहाँ है?

ननी बोला—घर से मँगवाकर दे। ऐसे वंश का है तू, कुछ न देने से कैसा लगेगा!

पूछा—क्या देना पड़ेगा?

—जो जी चाहे। वह कुछ माँगेगी नहीं। वैसी लड़की ही नहीं है यह। और कोई होती, तो हज़ार रुपये माँग बैठती। इतना खयाल रखो, यही उसकी रोजी है। अपने कुल की मर्यादा के अनुकूल ही दे।

—तू बता, क्या देना है?

आवाज़ धीमी करके ननी बोला—नवाबी दिखाकर ज्यादा न दे देना कहीं। पांच सौ देकर पिण्ड छुड़ा।

ऐसा है ननीलाल! आप सोच रहे होंगे, मोतिया को उसने पूरे पांच सौ रुपये दे दिए? आधा तो उसने ज़रूर मार लिया। बाद में एक दिन मोतिया से मैंने

[ु]छा। वह बोली—अरे, उन्होंने तो उस रोज मुझे फूटी पाई भी न दी।

ननीलाल को खूब पहचान गया हूँ। मुझसे ही क्यों, कलकत्ते के सभी धनी [ल]ोगों से उधार लिया है उसने। ठनठनिया के छेनीदत्त के लड़के से भी। और [ल]ौटाया किसी को नहीं। एक बार नहीं, बार-बार मुझसे उधार मांगा है, किसी-[न]-किसी बहाने। लेकिन एक सिफ़त है उसमे। मांगने पर कोई उसे ना नहीं कह [स]कता। ज़रा रुककर नन्हे बाबू ने कहा—थोडी-सी लेंगे आज? ज़रा-सी?

भूतनाथ ने उनके दोनो हाथ दबाकर कहा—माफ कीजिए। उस दिन तो [प]ी थी। आज रहने दीजिए।

नन्हे बाबू बोले—खैर कहते हैं तो न सही। मैं ज़रा पी आऊं। वे परदे की [आ]ड़ में चले गए और मुँह पोंछते हुए बाहर निकले। बोले—कल से यही सोच रहा [ह]ूँ—ननीलाल है बहादुर। पट्ठे ने कितने घाटों का पानी पिया है, पता नहीं। पर [प]ास भी किया। नशे की लत अपने को ही लग गई।

मौका देखकर भूतनाथ ने छेड़ दिया—वंशी को आजकल नहीं देख रहा [ह]ूँ। कहाँ गया?

—वैसों को अब नहीं रखना है भाई! गरमी थी उसे।

वंशी का कोई भाई है। वह कह रहा था—

सुनते ही नन्हे बाबू जैसे नाराज हो गए—सब-के-सब एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं भाई, किसी का एतबार नहीं, सब साले पाजी हैं। वे सब मानो मालकोस के धैवत है। जहाँ चाहे रहे, घूम-फिरकर फिर उसी धैवत पर। इम्तहान देने की सोच रहा हूँ। एक मास्टर ठीक कर लिया है। हफ्ते मे चार दिन पढ़ना-लिखना, तीन दिन सगीत। नन्हे बाबू फिर परदे की आड मे चले गए। लौटकर कहने लगे—आप ही अच्छे हैं, कोई नशा नहीं। इसकी लत लग जाने पर फिर कौन साला छुड़ाए!

बाहर छाया-सी दीखी। नन्हे बाबू ने पूछा—कौन?

—जी, मैं वशी हूँ।

—फिर बाहर क्यों खडा है, आ जा? क्या बात है?

वशी ने कहा—जी, साले साहब को बुलाने आया था।

ओ—कहकर भूतनाथ बाहर निकला।

वशी ने फुसफुसाकर कहा—कहा था आपने कि छोटी माँ के पास जाएँगे, नहीं जाना है?

भूतनाथ ने पूछा—छोटे बाबू हैं कि चले गए?

वशी ने बताया—छोटे बाबू तो बहुत बीमार है। जाने कब से [illegible] रहता है! घर ही रहते हैं।

—फिर?

—फिर क्या, मैं छोटी माँ को बुला लाऊँगा, आप बात कर लेंगे। इसमें क्या है—वह भी तो आपके बारे में बोल रही थीं।

—अच्छा तो चल।

वह नन्हे बाबू के कमरे में गया। बोला—तो आज इजाज़त दीजिए। फिर आऊँगा। बाहर आकर पूछा—किधर से चलना है वंशी?

वंशी ने कहा—वही, आपके चोर-कमरे के बरामदे से।

सांझ हो चली थी। इब्राहिम की छत पर से ज़रा-सी रोशनी पक्के आंग[illegible] पर आकर पड़ रही थी। खजांचीखाना बन्द हो चुका था। दक्खिनवाले बगीचे [illegible] दासू मेहतर का लड़का बांसुरी पर गीत की एक कड़ी फूंक रहा था। अस्तबल [illegible] छोटे बाबू के दोनों सफ़ेद घोड़े पास-पास खड़े पैर ठोंक रहे थे। बिरिजसिंह शाय[illegible] रोटी सेंक रहा था। थप-थप आवाज़ आ रही थी। नौकर-चाकरों की ताश-पचीस[illegible] जम गई थी। फुरसत थी। बाबू लोग सब बाहर निकल गए थे।

आगे-आगे वंशी। पीछे-पीछे भूतनाथ। जी में आया, जाते ही छोटी ब[illegible] से क्या कहेगा वह। काफ़ी दिनों से मन में एक बात घुमड़ रही थी कि मोहिनी सिन्दूर का धोखा उन्हें बता दे। सब झूठ है। ठगी। पहले पता होता तो लाक[illegible] देता ही नहीं।

वंशी ने पुकारा—चले आइए साले साहब!

—यह फिर कौन-सा रास्ता है वंशी?

चोर-कमरे के सामने एक दरवाज़ा। अब तक नजर नहीं पड़ी थी। इटा[illegible] लियन चित्रकार की मेम साहब। इसी चोर दरवाज़े से अभिसार चलता होगा। भूमिपति चौधरी आधी रात को यही दरवाज़ा खोल देते होंगे और मन का लेन-देन चलता होगा।

वंशी ने कहा—छोटी माँ ने इसी रास्ते से ले आने को कहा है। बिना किसी आवाज़ के दरवाजा खुल गया। भूतनाथ को लगा, भूमिपति चौधरी के बाद आज ही शायद पहली बार यह दरवाज़ा खुला। वह चुपचाप तड़पकर आ पहुँचा सत्रहवीं सदी के शेष किनारे। वह दिन मानो इसी बरामदे-सा अँधेरा था। कलकत्ता शहर उस समय बन रहा था। सूतानूटी में भरा था होगला का जंगल। उसी जंगल में छिपकर आर्मेनियन लोग औरतों का व्यापार करते और डकैत राहगीरों को छीन-छोरकर मार डाला करते और उनकी लाश को गंगा में डाल दिया करते। काली-घाट की काली के आगे नरबलि करते। उसके बाद जॉब चार्नक के समय से शुरू होकर जब वारेन हेस्टिंग्स के समय में शहर पलभर के लिए ठिठककर खड़ा हुआ तो सर फ़िलिप आये और आई मादाम ग्रैंड! संसार की श्रेष्ठ प्रेम-कहानी। जिस रात मादाम ग्रैंड के शयनकक्ष में सर फिलिप फ्रांसिस पकड़ा गया, उस समय भूमि-पति चौधरी का भी जन्म नहीं हुआ था। लेकिन ऐसा लगता है कि मादाम ग्रैंड

बार-बार जन्म लेकर संसार में आती रही है। कभी फ्रांसिस साहब को, तो कभी भूमिपति चौधरी को, तो कभी जवा का रूप धारण कर वह पुरुष-जाति को छलती रही है। ऐसे असमय में छोटी बहू के इस आकर्षण के पीछे भी मानो उसी इतिहास की पुनरावृत्ति का सम्बन्ध है। एक बहुत बड़े गुनाह का पूर्वाभास है। नहीं तो इतना आकर्षण आखिर क्यों? ब्रजराखाल ने तो आगाह कर दिया था कि भाई साहब, काम तुमने अच्छा नहीं किया। वे लोग हैं साहब-बीबी की जात और हम ठहरे गुलाम। उनसे अपना घुलना-मिलना कैसा?

उस अंधेरे और सन्नाटे में वंशी के पीछे-पीछे जाते हुए सहसा रुक गया भूतनाथ। क्यों जा रहा है? कहाँ जा रहा है वह? किसके पास? यही है कलकत्ते की सैर। जीवन में अपने पैरों खड़ा होगा, जिन्दगी बनाएगा, यह ख्वाहिश थी, फिर यह अभिसार कैसा! एक दिन जिस राह से सर फिलिप फ्रांसिस, भूमिपति चौधरी आदि गये हैं, आज भूतनाथ भी शायद उसी राह से जा रहा है।

वंशी ने पीछे मुड़कर पुकारा—क्यो, आइए साले साहब!

अचानक क्या तो आया जी में! छोटी बहू के यशोदादुलाल की याद आ गई। भूतनाथ ने कहा—चल।

दरवाजा खुलते ही सामने छोटी बहू का कमरा। एकबारगी सामने।

पहले से ही शायद सब ठीक-ठाक था। वंशी दरवाजे पर पहुँचा कि छोटी बहू बाहर निकल आईं। कमरे की रोशनी से उनके कान का हीरा झकमका उठा। पूछा—वंशी, कहाँ है भूतनाथ?

भूतनाथ ने आगे बढ़कर कहा—यह रहा मैं।

—ओ! आ गए। आओ। माथे पर का कपड़ा खिसक गया। भूतनाथ ने अब देख पाया उनका चेहरा। टकटकी-सी बँध गई। छोटी बहू की नजर पड़ी। जरा हँसकर बोलीं—आओ, अन्दर चलो।

भूतनाथ को दुविधा लगी। पूछा—छोटे बाबू कहाँ हैं?

—यहीं हैं, मगर डरने की कोई बात नहीं—चलो।

अन्दर आते ही छोटी बहू ने पूछा—कैसे हो तुम?

भूतनाथ ने एक बार भली तरह कमरे को देखा। सब-कुछ वैसा ही था। अलमारी के खिलौने उसी तरह अपलक आँखों उसे देख रहे थे। लेकिन छोटी बहू को देखकर वह ठक रह गया। लगा, अभी-अभी वह रो रही थीं। भूतनाथ को देखकर होंठों में हँसी फूट पड़ी है। वह बोली—इस तरह से देख क्या रहे हो, भाई?

भूतनाथ बोला—कुछ नहीं। मैं आपसे एक बात कहना चाहता था।

—क्या कहना चाहते थे? कहो।

—आप अब मोहिनी-सिन्दूर न लगाया करें।

—क्यों, उसने क्या बिगाड़ा भाई ! जबा से अनबन हो गई क्या ?

—मजाक नहीं, सुविनय बाबू ने खुद कहा है, यह ठगी है, धोखा।

—हो धोखा, मगर मेरा काम उससे बना है।

—बना है ?

—हाँ। मोहिनी-सिन्दूर का फल मिला है। दवा-दारू बहुत कर चुकी हूँ …जन्तर-तावीज भी। किसी से कुछ न हुआ, इसने काम किया है।

—कैसे ?

—सारी बातें तुम्हें बताई तो नहीं जा सकतीं। सुनना चाहो भी नहीं। लेकिन…।

—लेकिन क्या ?

छोटी बहू को कुछ हिचक हुई। फिर बोलीं—छोटे बाबू ने मुझसे वादा किया है कि अब वे जान बाजार न जायेंगे—रात घर ही रहा करेंगे, बशर्ते कि मैं…

—बशर्ते कि आप ?

—अभी इससे ज्यादा कुछ न सुनना चाहो। मैं कहूँगी भी नहीं।

छोटी बहू ने अपने को सँभाल लिया। वंशी को बुलाकर कहा—तू अभी जा वंशी, मैं बुलवा लूँगी।

धीमे से कहा—लेकिन तुम्हें मेरा एक काम कर देना पड़ेगा, आज ही। भूतनाथ की उत्सुक आँखों पर नजर रोपकर पूछा—करोगे ? कर सकोगे ?

—करूँगा। कौन-सा काम ?

—किसी को इसकी भनक भी न हो—वंशी को भी नहीं।

—किसी को पता न चलेगा।

—मुझे शराब ला देनी पड़ेगी।

—शराब ?

—हाँ, शराब। शराब की इस घर में कमी नहीं, हर कोई जानता है। लड़के-बूढ़े सभी पीते हैं। फिर भी जरूरत है। उम्दा शराब, ज्यादा नहीं, थोड़ी-सी। लेकिन आज ही रात को। रुपया मैं देती हूँ। वह सन्दूक में से रुपया निकाल लाई। कहा—इसीलिए बुलाया था।

भूतनाथ उठ खड़ा हुआ। छोटी बहू ने कहा—जल्दी ले आना भाई ! रास्ता तो पहचान गए ? उसी से होकर आना। कोई नहीं देखेगा।

ठगा-सा वह बाहर निकला। ऐसी नौबत आएगी, वह सोच भी न सका था। बड़े घर की बातें ही निराली हैं। किसी नियम के अन्दर नहीं आ सकतीं। इतिहास के पन्नों पर इस घर के लोग हिलते-डुलते बहुत हैं, बोलते भी शायद ज्यादा हैं, मगर अपना राज नहीं देते। यह छोटी बहू मानो काला पान की बेगम

दो—हाथ आए भी तो हाथ से निकल जाने के लिए।

वह सांझ के झुटपुटे मे गेट से बाहर निकल गया।

आज सोचते हुए भी कैसा लगता है जानें ! वे आदमी, वे दिन कहां गये ! वे हलके-फुलके दिन और रातें ! रह-ठहरकर चलना; सोचना और जीना ! अब दिन जैसे बीतते नही, रातें कटती नही। सूरज मानो आहिस्ते-आहिस्ते उगता, डूबता मानो धीरे-धीरे। समय का चक्का लुढ़कता हुआ बढ़ता। हो रहा है, होगा। जरा सुस्ता लो और। सारा दिन तो पड़ा है। जी चाहे जितना काम करना।

घटना बहुत पहले की है। अफवाह उड़ गई कि अमावस्या के दिन महा-प्रलय होगा। प्रलय यानी कयामत। कलजुग का अन्त हो जाएगा। पत्रा में लिखा है। अमावस्या को बारह बज के सात पल, तेरह दण्ड बाद घातचन्द्र दोष है।

भैरव बाबू ने आकर कहा—लोचन, जरा मजे का तम्बाकू पिला दे भैया ! बस और कै दिनों का ही तो रहा !

लोचन ने भी सुना था। पूछा—सच ही कलजुग खत्म हो जाएगा ?

—बेशक। इसके चारो चरण पूरे हो गए, खत्म न होगा तो क्या ?

लोचन ने कहा—फिर क्या होगा ?

भैरव बाबू ने कहा—सतजुग शुरू हो जाएगा।

लोचन ने कहा—हम लोग देख सकेंगे ?

—जी गया तो देखेगा। मगर बच जा तब तो ! देख, क्या होता है पहले !

लोचन को फिक्र पड़ गई। बोला—नही बचूंगा। कहते क्या हैं भैरव बाबू !

हुक्के मे दम लगाते हुए बोले—बाबू लोग ही जिन्दे रहते हैं या नही, फिर नौकर-चाकरो की क्या बात ! यह समझो कि कही सात मंजिल के मकान जितना ऊंचा पानी यहां खड़ा हो गया तो कलकत्ता बन जाएगा समुन्दर, तो फिर कहां रहेगा तू और कहां रहूंगा मैं ! मंझले बाबू तक खौफ खा गए हैं।

सारे शहर मे आतंक। जहां जाइए, वही यही चर्चा। हर बरामदे पर लोगों का जमघट।

निधा छुट्टी लेकर गांव चला गया। बोला—जिन्दगी बच गई तो फिर आऊंगा, साले साहब ! जरा जमीन-जायदाद का पावना सहेज लूं। मरने के बाद फिर कौन देता है !

लोचन कहता—भरपेट खाया कर बशी ! इस जन्म मे खाना फिर नसीब हो कि न हो।

बशी भी काफ़ी डर गया। कहता—आखिर क्या होगा साले साहब !

बहन की फिक्र हो गई है। शादी कर दी थी, आठ कोड़ी रुपये भी खर्च हुए, खसम भी ज़िन्दा न रहा। जो हो, छोटी माँ की दया से दो मुट्ठी दाना मयस्सर हो जाता था। यह क्या हो गया, कहिए तो !

एक-एक कर दिन बीतने लगे। चैत की अमावस्या करीब आने लगी। एक रोज़ मोहिनी-सिन्दूर कार्यालय में भूतनाथ ने सुविनय बाबू से ज़िक्र किया—सर, आपने कुछ सुना ?

सुविनय बाबू बोले—अन्तिम दिन के लिए इतना डर क्यों भूतनाथ बाबू ? गीत का भी तो सम होता है, छन्द की भी तो यति होती है। नदी जहाँ रुकती है, जहाँ खत्म होती है, वहाँ समुद्र रहता है। इसीलिए उसके खत्म होने से कोई नुकसान नहीं।

I have come from thee—why I know not;
But thou art, God ! what thou art;
And the sound of eternal being is the pulse
of the beating heart.

जानते हो, पक जाने पर डाल से टूट जाने में ही फल का गौरव है। लेकिन यदि वह डाल को छोड़ना दीनता समझे, तो उसके जैसा दया का पात्र दूसरा कौन है ? बातों में सुविनय बाबू को मात्रा का खयाल नहीं रहता।

आखिर अमावस्या आ पहुँची। घर-भर में कैसी तो एक उत्तेजना ! ब्रजराखाल उस समय यहीं था, मगर पता नहीं उसका। भूतनाथ ने कहा था, आज ज़रा पहले ही लौट आना भाई साहब !

—क्यों ?

—क्या-क्या तो सुन रहा हूँ ! पत्रा में लिखा है।

—तुम भी जैसे भाई साहब, पत्रा की बात पर यकीन करते हो। ज्ञान के ऊपर भी विज्ञान है। परमहंस देव कहते थे—जिसने दूध की केवल बात ही सुनी है वह अज्ञानी है, जिसने दूध को देखा है वह ज्ञानी है और जो दूध पीकर मोटा-ताजा बना है, वह है विज्ञानी। खैर।—कहकर ब्रजराखाल निकल पड़ा।

ब्रजराखाल ने इस पर विश्वास न किया, न सुविनय बाबू ने बात को महत्त्व दिया। मगर मँझले बाबू उस दिन घर से बाहर न निकले। सवेरे-सवेरे ही भोजन कर लिया और नाचघर में अड्डा जमा दिया। मूँछों पर ताव दिए भैरव बाबू आए। बगलसवाले जूते उतारकर दरवाज़े के पास रखे और फर्श पर आ बैठे। मोती बाबू आये। छाते को एक ओर रखकर चादर और धोती का कोंचा सम्हालते हुए बैठ गए। बड़ी मालकिन आईं। भारी-भरकम चेहरा। हाथ में पान का डब्बा। कलाइयों में सोने की बारह-बारह चूड़ियाँ। चौड़ी कोर की साड़ी। तिनकौड़ी आई। जवानी में खूबसूरत रही होगी। नाक में हीरे की लौंग। मुँह में पान। मोटी-

सी औरत। हासिनी के आने से पहले रानो यही थी। उसके बाद हासिनी आई। कम उम्र। एड़ी-चोटी गहने से लदी। ज्यादा बोलने वाली। चंचल। चुलबुली।

गुड़गुड़ी पीते हुए मँझले बाबू ने आवाज़ दी—बेनी···बेनी! बेनी आकर खड़ा हुआ। उन्होंने कहा—ज़रा रूपलाल ठाकुर को बुला ला।

भैरव बाबू ने कहा—जी, मैंने अपनी आँखों पत्रा देखा है। रात के बारह बजकर सात पल तेरह दण्ड पर घातचन्द्र दोष है।

—तो क्या हुआ? रूपलाल ठाकुर को आने दीजिए। अगर कयामत ही हो, तो वही क्यों जुदा रहे, सब साथ ही चलेंगे।

मोती बाबू बोले—मैं तो घर पर कह आया हूँ, सब एक कमरे में सोना। मगर नींद किसे आती है! सब जगे बैठे हैं।

भैरव बाबू ने कहा—कलजुग का अन्त हुआ, यह अच्छा ही हुआ हुजूर! जी में आया। सातवें आसमान पर चढ़ता जा रहा था छोटे लोगों का दिमाग। सतजुग आने से चीज़-बतुस की कीमत घटेगी। कपड़ा-लत्ता सस्ता होगा, आठ आने मन चावल मिलेगा···और चाहिए क्या!

मँझले बाबू ने कहा—क्या बजे हैं, देखो तो?

—बस, यही तो साँझ हुई। सात बजकर चालीस।

मँझले बाबू बोले—फिर तो बडी देर है अभी···तो···उन्होने बडी मालकिन की तरफ़ ताका।

पान लगाते-लगाते वह बोली—आज किसी का मिज़ाज ठीक नही। तुम हासिनी को गाने के लिए न कहना आज।

मँझले बाबू ने कहा—गाना न सही, मगर और सब निकालो·· बर्फ तो आ गई है।

बड़ी बहू को वह भी पसन्द न था। बोली—दिन-दिन तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हो रही है। आज जप-तप करना है कि कहाँ···

—तो भग ही रहे···उमदा शरबत···गरमी भी खूब है। पिस्ता, बादाम डालकर···ज़रा-सा लैवेंडर···क्यों भैरव बाबू?

रूपलाल ठाकुर आ पहुँचे। टूश की चादर। पांवो मे खडाऊँ। बगल के कमरे मे से सब झांक रहे थे—भूतनाथ, लोचन और सब। अचानक बशी आया। बोला—साले साहब, जल्द चलिए, उधर मुसीबत आ पडी है—और वह भूतनाथ को खीचकर ले गया।

भूतनाथ ने पूछा—क्या माजरा है?

—जी, जान बाज़ार से खबर आई है, छोटे बाबू की तबियत खराब है। छोटी माँ ने कहा, अपने साले साहब को लेकर तू जा वहाँ।

बशी के साथ अँधेरे मे ही भूतनाथ निकल पडा। बशी ने जाकर दरवाजे

का कड़ा खटखटाया—बिन्दा, बिन्दा !

वृन्दावन ने दरवाज़ा खोल दिया।

वंशी ने पूछा—छोटे बाबू की तबियत कैसी है ?

वृन्दावन ने कहा—अभी भी होश नहीं हुआ है। ऊपर जा। नई माँ वहीं हैं।

सीढ़ी से ऊपर चढ़ते हुए वंशी ने कहा—आइए साले साहब ! छोटी माँ ने कहा है, चाहे जैसे भी हो, रात के बारह बजे तक इन्हें जरूर ले चलें। फिर जाने क्या हो !

कमरे के पास जाते ही आहट पाकर कोई अन्दर से बाहर निकल आई। घूंघट काढ़ लिया। कहा—वंशी, तू आ गया ? अच्छा ही हुआ।

वंशी ने पूछा—अपने छोटे बाबू कैसे हैं नई माँ ?

—अभी भी बेहोश पड़े हैं। डॉक्टर को बुलाया था। बड़ा डर लग रहा है।

वंशी कमरे में गया। पीछे-पीछे भूतनाथ भी गया। चुन्नी पर ग़ौर किया। सुन्दरी है। थकी-सी लग रही थी लेकिन।

वृन्दावन आया, बोला—आप अब भोजन कर लीजिए। वंशी तो है।

छोटे बाबू बेबस पड़े थे—बेहोश। वंशी ने माथे पर हाथ रखा। लगा, वह उन्हें जगाना चाह रहा है। उसकी आँखें पत्थर-सी बेजान हो आईं। भूतनाथ ने वंशी का यह रूप मानो पहले कभी नहीं देखा था। उठकर छोटे बाबू उसे चाबुक मारते तो चैन पड़ती उसे। जान लौट आती शरीर में। उसी तरह से देखते-देखते अचानक वह उबल पड़ा—अच्छा, नई माँ, यह सब खाक-पत्थर आप क्यों पीती हैं ? मेरे छोटे बाबू को क्यों पिलाती हैं ?

वंशी की बात से भूतनाथ भी चौंक उठा।

चुन्नी ने कड़ी नजर से एक बार उसकी तरफ़ ताका। लगा, वंशी से ऐसी उम्मीद न थी। मगर कुछ बोली नहीं।

वंशी फिर बोल उठा—छोटे बाबू मर जाएँ, तो आप लोगों को चैन पड़े, क्यों ?

अबकी चुन्नी ने डाँटकर कहा—वंशी !

वंशी चिल्लाकर बोला—जरूर कहूँगा, हजार बार कहूँगा। तुम्हारा डर थोड़े ही पड़ा है।

चुन्नी ने धीमे से कहा—चिल्लाना है, तो बाहर जाओ।

—ओह, दर्द कितना है ! जब जहर पिलाती हो तो नहीं सोचतीं कि किसकी बदौलत रोजी चलती है ? किसकी कृपा से राजरानी बनी हो ?

अपने को जब्त करके चुन्नी बोली—बड़ी हिमाकत कर रहे हो।

वृन्दावन ने आकर वंशी का हाथ थाम लिया। कहा—वंशी, तू चुप रह।

एक तो यों ही नई माँ दिन-भर की भूखी हैं, ऊपर से तेरी ज्यादती।

वशी जैसे फफक पड़ा—नहीं खाया है तो किसका बिगड़ा? जहर पीते वक्त छोटे बाबू को मना नहीं कर सकती?

चुन्नी जैसे आप-ही-आप बोल उठी—सुन लिया वृन्दावन, जो विवाहिता पत्नी की ही नहीं सुनता है, वह मेरी सुनेगा।

वशी ने कहा—उन्हीं की बात सुनते होते, तो बेचारी छोटी माँ की यह दुर्गत क्यों होती? साले साहब गवाह हैं, जिसने मेरी छोटी माँ का नसीब फूंका है, उसका भला न होगा, हर्गिज न होगा। कहे देता हूँ।—भूतनाथ की ओर ताककर कहा—आइए, जरा पकड़िये तो।

छः फुट लम्बा शरीर। कच्चे सोने-सा रंग। सर्वांग में इत्र की भीनी-भीनी महक। वजन ही क्या कम! वृन्दावन ने भी मदद दी। तीनों जने मिलकर उन्हें सीढ़ी से नीचे ले गए और गाड़ी पर चढ़ाया।

गाड़ी खुलने के पहले वृन्दावन ने भूतनाथ से कहा—आपको जरा नई माँ बुला रही हैं।

—कहाँ?—भूतनाथ वृन्दावन के साथ अन्दर गया। दरवाजे के बगल में चुन्नी खड़ी थी। कहा—मुझे बुलाया है?

चुन्नी बोली—आप शायद बड़े महल में नये आए हैं। पहले कभी देखा नहीं आपको। खैर। आपको एक काम करना होगा।

भूतनाथ ने कहा—कहिए।

—छोटे बाबू को तो जबर्दस्ती ले चले आप लोग। उनकी तबीयत बहुत खराब है। डॉक्टर ने हिलना-डुलना मना किया था। कल जरा कह जाइएगा, कैसे हैं। आयेंगे? न आने से मुझे चैन न पड़ेगा।

क्या जवाब दे, सोच नहीं पाया भूतनाथ।

चुन्नी ने फिर कहा—यह दवा ले जाइए। डॉक्टर ने बताया था, तकलीफ बढ़ जाने पर देंगे। तो आप आ रहे हैं न कल?

भूतनाथ ने 'हाँ' कहा था, पर दूसरे दिन जाना सम्भव न हुआ। रात को वे छोटे बाबू को सीधे छोटी बहू के कमरे में ले गये। दवा की शीशी बढ़ाते हुए भूतनाथ बोला—नई माँ ने छोटे बाबू के लिए दवा दी है।

छोटी बहू ने कहा—रास्ते में फेंक दो। उसमें जहर हो सकता है।

भूतनाथ बाहर निकला। बड़ी देर तक गाड़ी-बरामदे में जाकर बैठा रहा। रास्ते में लोगों की भीड़ थी। उतनी रात को लोग गंगा नहाने जा रहे थे। प्रलय के पहले थोड़ा पुण्य कमा लिया जाए—परलोक का पाथेय। ऊपर नाचघर में मँझले बाबू की महफिल जमी थी। अन्त तक हासिनी का गीत भी हुआ, नाच भी। बाद में शायद शराब भी चली। क़यामत ही होगी, तो मन में अफ़सोस क्यों रह जाए?

ग्यारह बज गए। बंशी ने आकर खबर दी—छोटे बाबू को होश आया। होश आते ही मैं भाग आया, नहीं तो मुझे मार ही डालेंगे। मैं ही उन्हें ले आ ा हूँ न।

उसके बाद साढ़े ग्यारह बजे। पौने बारह। बारह भी बज गए। आज हर कमरे में रोशनी जल रही थी, सन्नाटा न था। अजीब इन्तजार। जानें क्या हो अब ! इसके बाद साढ़े बारह बजे। एक। दो। तीन। रात निकल गई।

कुछ भी न हुआ। रोज की तरह पुराना सूरज इब्राहिम की छत के कोने से उगा। फिर सब उसी तरह से शुरू हुआ जैसा कि रोज होता है। कहीं कोई परिवर्तन नहीं। इतना ही नया हुआ कि छोटे बाबू की लैंडोलेट गाड़ी आज रात यहीं रही। अपने ढंग की यह पहली घटना थी।

रात हो चुकी थी। इतनी रात को शराब कहाँ मिलेगी ? दूकान कहाँ है, यह भी पता नहीं। एक ही जगह है, जहाँ जाने से शायद मिले। जवा के यहाँ का रसोइया अभी ईंट बिछाकर बाहर ही चुक्कड़ लिये बैठा होगा। लेकिन इतनी रात को वहाँ जाए कैसे ! अचानक बंशी मिल गया।

बंशी ने पूछा—इतनी रात को कहाँ चले साले साहब ?

छोटी बहू ने बंशी से भी बताने को मना किया था। क्या कहे वह ? बोला—तू कहाँ जा रहा है ?

—चिन्ता को फिर बुखार आ गया है। अपने मास्टर साहब तो हैं नहीं। दाशी डॉक्टर के यहाँ गया था, लेकिन आप कहाँ चले ?

कैसी तो खीज हुई भूतनाथ को !

बंशी ने कहा—आप कहाँ जा रहे हैं, मुझे मालूम है। छोटी माँ साँझ से ही आपकी तलाश कर रही थीं। मुझे शुबहा हुआ। छोटे बाबू तो आजकल यहीं रह रहे हैं, फिर आपकी बुलाहट कैसी ?

भूतनाथ ने पूछा—छोटे बाबू आजकल घर ही रहते हैं ?

बंशी ने कहा—ताकत भी रह गई है जाने की ! किसी क़दर एक बार छोटी माँ के कमरे तक जाते हैं, फिर अपने कमरे में पड़े रहते हैं। उठने-बैठने की मनाही है। क्या शकल थी, क्या हो गई है ! देखकर आपको रोना आएगा। कसम !

—पीना छोड़ दिया है ?

—शुरू करके भी कोई छोड़ सका है इस जहर को ? समझिए कि आजकल तो खाट पर पड़े हैं। मैं ही ढालकर पिलाता हूँ। थोड़ा-थोड़ा पानी मिला देता हूँ। जी में होता है, मैं ही तो इस शख्स की जान ले रहा हूँ। डॉक्टर ने खोलकर कह दिया है, पीने से इनकी जान नहीं बचेगी; मगर कौन सुने ! पीते हैं। वह तो

ग़नीमत है कि नई माँ के यहाँ तक जाने की ही ताक़त नहो है। नहीं तो और बुरा हाल होता। ओह, दर्दमारी ने क्या जो टोना किया है···

कुछ ठहरकर बंशी ने कहा—हाँ, आपको पता है, उस रोज़ नई माँ यहाँ आई थी?

—कब आई थी? मुझे तो नहीं मालूम?

—आपको मालूम भी कैसे हो, आप सो चुके होंगे। काफ़ी रात जा चुकी थी। नत्थूसिंह ने आकर मुझे बताया। कहा—चुन्नी आई है। छोटे बाबू से मिलना चाहती है। खोल दूँ गेट?

मैंने सोचा, चूँकि बाबू कई दिनों से जा नहीं पा रहे हैं, इसीलिए वह आई है। कहीं बाद में सुनें और जुल्म ढाएँ। सो मैं सीधे छोटी माँ के पास गया। पूजा करके तुरत-तुरत उठी थी। सुनते ही आग-भभूका हो गईं। यों तो सीधी-सादी-सी हैं, बिगड़ने पर न पूछिए। उन्होंने कहा—छोटे बाबू के कोड़े से उस राक्षसी को पीट सकता है तू। न बने तो बुला नत्थूसिंह को। उसी से कहती हूँ मैं।

मुझे डर लगा। छोटी माँ ने कहा—नहीं होगा तुझसे?

मैं बोला—पता चल गया तो छोटे बाबू मेरी गर्दन न रहने देंगे।

मैं भी इस घर की छोटी बहू हूँ। जो कह रही हूँ, कर। मारे चाबुक के पीठ की खाल उधेड़कर लहूलुहान कर दे—जा।

मैंने कहा—औरत पर हाथ उठाते हिचक होती है, नहीं तो·

—उसे औरत कहता है तू? डायन है, डायन। तुझसे न बने तो बुला नत्थूसिंह को। इस घर में उनके कदम पड़े तो तुम सबकी नौकरी गई और अगर मेरा कहा कर सके, तो तुम दोनों भाई-बहन को जिन्दगी-भर खाने-पहनने की फ़िक्र न करनी पड़ेगी, कहे देती हूँ।

छोटी माँ की चीख-पुकार से मँझली और बड़ी मालकिन बाहर निकल आईं।

मँझली मालकिन ने पूछा—माजरा क्या है छोटी?

सब सुनकर वे हँस-हँसकर बेहाल। कहा—तूने तो हैरत में डाल दिया। अरी, मर्द तो सिल्क के कपड़े हैं, उनका शुद्ध और अशुद्ध क्या? तू सबमें तिल का ताड़ करती है। मैंने मँझले बाबू को भी देखा है। इतना सोचती तो फाँसी लगा लेती।

बड़ी माँ ने कहा—हर बात में तेरा यही रवैया है छोटी?

—आपको यक़ीन न आएगा साले साहब, मैं उसी घड़ी गया। नत्थूसिंह ले गया गेट के सामने। नई माँ अपनी नई मोटर से आई थी। मुझे बुलाया। पूछा—छोटे बाबू कैसे हैं बंशी?

मैंने कहा—कुछ अच्छे है।

—दवा पीते हैं न ?

—पीते हैं।

—मुझे जरा उनके पास ले चल।

मैं क्या करता, झूठ बोल गया हुजूर। कहा—छोटे बाबू ने कह रखा है, नई माँ आए तो घर में घुसने न देना। मैं उसकी शकल नहीं देखना चाहता।

नई माँ ने जानें क्या सोचा, फिर कहा—यह कहा है ?

—जी ! मैं क्या झूठ कह रहा हूँ ! झूठ से मेरा क्या लाभ !

—तो यह बात वह मेरे सामने कहें। अपने कानों सुने बिना मैं नहीं जाती। इस रास्ते पर वही तो लाए हैं मुझे।

जिस मुसीबत में पड़ा कि पूछिए न हुजूर ! थी वह रूपादासी की बेटी, बन बैठी राजरानी। वह भला इस आसानी से क्यों मानने लगी ? जॉन बाजार में मकान, चार-चार नौकरानियाँ, तीन-तीन नौकर, मोटर—हवेली पर चाँद पा गई मानो।

भूतनाथ ने पूछा—आखिर चली गई ?

—गई कि क्या हुआ, मैं थोड़े ही देखने गया। गई ही होगी। मैंने नत्थूसिंह से गेट बन्द करने को कहा। मुझे दूसरी फ़िक्र पड़ गई थी।

—फ़िक्र कैसी ?

—छोटे बाबू सुन लें तो कौन बचाएगा ! रोटी की मार। चिन्ता को लेकर फिर गाँव में भूखों मरने की नौबत। जमींदारी थोड़े ही है अपनी !

—मगर छोटी माँ तुझे छोड़ नहीं सकतीं बंशी ! उनके लिए इतना करता है तू।

—मगर उनकी सुनता कौन है ? छोटे मालिक ही नहीं सुनते तो दूसरे का क्या कहना ! इतनी रात को आप जो उनके लिए शराब लाने जा रहे हैं···

जैसे साँप पर नजर पड़ गई। भूतनाथ पीछे हट गया। कहा—यह तूने कैसे जाना ?

उसके साथ निर्विकार की नाईं चलते-चलते बंशी ने कहा—इतने दिनों से काम कर रहा हूँ, मैं सब जान सकता हूँ। नौकर-चाकर को पता न होगा, तो किसे होगा ? जो मैं जानता हूँ, वह छोटी माँ भी नहीं जानतीं, मँझली माँ भी नहीं, छोटे या मँझले बाबू भी नहीं। किस कमरे में किनकी रात कटती है, कब चुपचाप इस घर में डॉक्टर आता है, दाई आती है, दवा-दारू आती है, हम लोगों को सब खबर होती है। पिछले ही साल की तो बात है, महल के सामने भीड़ लग गई। पुलिस-प्यादा हलचल···। एक दिन एक मरा हुआ बच्चा पड़ा था। उसी दिन जन्मा था। मुझे मालूम था, किसने फेंका, किस कमरे से फेंका। मगर नौकर ठहरा, अपने को छः-पाँच से क्या मतलब ? पुलिस ने खोज-पूछ की। कह दिया, अपने को

क्या पता ! बस मामला खतम।

भूतनाथ पूछ बैठा—लेकिन छोटी बहू ने एकाएक इस जहर की फरमाइश क्यो की ?

वशी जरा देर चुप रहा। उसके बाद बोला—कसम लीजिए साले साहब, आप ब्राह्मण है। आपके पाँव छूकर कह सकता हूँ, छोटी माँ की मैं ठाकुर-देवता के समान भक्ति करता हूँ। उनके दुःख मेटने मे मैं जान तक दे सकता हूँ। उस दिन साँझ को छोटे बाबू आये। छोटी माँ के कहने पर मैं ही बुला लाया था। बाहर खडा मैं सब सुन रहा था।

छोटी माँ ने पूछा—तुम फिर वहाँ जाओगे क्या ?

उस समय छोटे बाबू ने पी नही थी। होशोहवास दुरुस्त था। बोले—जाऊँ तो तुम्हारा क्या ?

छोटी माँ ने कहा—न ही गये तो···बिना गये नही चलेगा ?

—बीबी का दामन थामे रहूँ, ऐसे खानदान मे अपना जन्म नही हुआ।

छोटी माँ ने कहा—मैं नही कहती कि दामन थामे रहो। दामन बिना थामे भी तो घर मे रहा जा सकता है।

—यही चाहती हो कि यहाँ तुम्हारा मुँह ताकता रहूँ ?

—ताकना अच्छा न लगे, न ताकना। मुँह फेरे रहना। मैं तुम्हारी सेवा करूँगी।

छोटे बाबू की मैंने हँसी सुनी। लापरवाही की हँसी। कुछ ठहरकर बोले—सेवा करना तुम्हे आता है ?

छोटी माँ बोली—एक बार देख ही लो, आता है या नही।

छोटे बाबू ने कहा—मैं तुम्हारा यशोदादुलाल तो हूँ नही, न ही सोने-रूपे का ठाकुर हूँ। मैं रक्त-मांस का मनुष्य हूँ। सोच देखो, मेरी सेवा कर सकोगी ?

छोटी माँ बोली—सोचना क्या है इसमे ? हिन्दू ललनाओ को स्वामी की सेवा करना सीखना नही पड़ता है।

छोटे बाबू लापरवाही की फिर वैसी ही हँसी हँसे। कहा—लेकिन वैसा स्वामी तो हूँ नही। बड़े महल के मर्द जन्म से पहले ही शराब पीना सीखते हैं, नौकर-दाई की गोद मे पलते है, आठ-दस साल की उमर से उनका जनानखाने मे घुसना बन्द हो जाता है, जवानी मे रखैल रखते हैं—मुसाहब पालते हैं—ऐसे स्वामी को सेवा से खुश करना तुम्हारे बूते की बात नही है।

—एक बार परखकर देख ही लो न !

छोटे बाबू ने कहा—परख करना बेकार है छोटी बहू ! पल्ले कुछ नही पड़ने का। इस घर की किसी बहू से यह आज तक न बना। इसी घर की क्यों, दत्त, मल्लिक, शील, सेठ—किसी परिवार की बहुएँ ऐसा नही कर सकी हैं। यह वे ही

औरतें कर सकती हैं···तौर-तरीके जानती हैं।

छोटी माँ रोनी-रोनी-सी आवाज़ में बोलीं—तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, तुम मौक़ा दो। किसी से न बना, मगर मैं कर सकूँगी। वे सब हैं बड़े घर की बेटी, मुझे तुम एक गरीब के घर से लाए हो। मैं कर सकूँगी। जो कहोगे, वही करूँगी। जैसे सिंगार करने को कहोगे, वैसे ही सजूँगी। जैसे बोलने को कहोगे, वैसे ही बोलूँगी। सिर दबा दूँगी, पैर दबा दूँगी।

—गीत गा सकोगी ?

छोटी माँ ने कहा—पिताजी से गीत सीखा तो था। वे गीत अगर तुम्हें रुचें, तो गाऊँगी।

—नाच ?

छोटी माँ बोलीं—नाची तो नहीं कभी, पर सिखा लो तो नाचूँगी भी। तुम्हारे लिए सब करूँगी।

छोटे बाबू ने कहा—शराब पी सकोगी, जैसे चुन्नी पीती है ?

ज़रा देर कोई बात सुन न पाया। चुपचाप। शायद छोटी माँ ने सोचा भी न था कि छोटे बाबू ऐसा भी कह सकते हैं। मैं भी गूँगा-सा हो गया। खुद का स्वामी अपनी व्याहता से ऐसी बात कह कैसे सकता है! मगर धन्य हैं छोटी माँ, अपनी-जैसी ही बात कही।

—क्या कहा ?

—कहा—पीऊँगी। अपने हाथ से तुम ज़हर भी दोगे तो पी लूँगी।

छोटे बाबू हँसे। कहा—मगर नियम ऐसा नहीं है। मैं उठाकर न दूँगा। तुम्हें ही गिलास उठाकर मुझे देना पड़ेगा।

—वही करूँगी। मेरे शराब पीने से तुम घर रहो, तो पीऊँगी।

सुनते-सुनते हिम हो गया शरीर मेरा। जी में हुआ, एक ही तो थी इस घर में जिसके पाँव छूकर प्रणाम करने से कलेजा भर आता है। अब वह भी गई। जी के अन्दर कैसा तो कट उठा। लगा, छोटी माँ को मना करूँ। मगर छोटा मुँह, बड़ी बात।

—आखिर छोटे बाबू चले गए। मैं भी अँधेरे में लौट रहा था कि छोटी माँ ने पुकारा—बंशी!

उन्होंने कहा—ज़रा अपने साले साहब को बुला लाएगा ? तुरत।

बस, मैं आपको बुलाने पहुँचा। मुझे सब पता है। आप मुझसे कुछ छिपा नहीं सकते हुज़ूर!

भूतनाथ ने कहा—मगर यह मिलती कहाँ ? क्या कीमत है, मैं तो इतन भी नहीं जानता। छोटी बहू ने मुझे दस रुपये दिये हैं।

बंशी ने कहा—छोटे बाबू की शराब की अलमारी की कुंजी तो मेरे ह

पास है। मुझे मालूम हो जाएगा, इसीलिए उन्होने आपको कहा है। अगर मैं होता तो उन्हें नहीं देता।

भूतनाथ ने पूछा—तो क्या रुपये मैं उन्हें वापस कर दूं?

—वही अच्छा होगा, मगर उसे मेरा नाम हर्गिज़ न कहिए।

भूतनाथ लौट पडा। कहा—नही-नही, तेरा नाम भला कह सकता हूं!

शहर-भर मे सन्नाटा। किन्तु बड़े महल मे तब भी सरगरमी थी। शायद नन्हे बाबू की महफिल आज फिर जमी थी। अस्तबल में और-और घोड़ो के साथ आज छोटे बाबू के घोड़े भी पैर पीट रहे थे। केवल मँझले बाबू रोज की तरह मुसाहबों के साथ निकल पड़े थे। खजान्चीखाने मे पाँच सेर वज़न का एक ताला झूल रहा था। इब्राहिम के घर से रेंड़ी के तेलवाली बत्ती की तिरछी-सी रोशनी पक्के घर के आँगन पर पड़ रही थी। यों आजकल इस घर मे बिजली-बत्ती हो गई थी, फिर भी रेंड़ी के तेल की बत्ती को बन्द करने की बात किसी को याद न आई। बद्री बाबू की खिड़की मे से छनकर रोशनी आ रही थी और दूर पर दीख रहा था व्रजराखाल का अँधेरा कमरा। इसी एक ऐसे आदमी से भूतनाथ का साक्षात्-परिचय था, जो कलकत्ता शहर में रीढ ताने चल सकता था। और वही आदमी जाने कहाँ खो गया!

बगल से श्यामसुन्दर जा रहा था। बोला—आपकी एक चिट्ठी है।

—किसने लिखी है, डाकिया दे गया?

—सो नही जानता—श्यामसुन्दर चला गया।

भूतनाथ सोचने लगा—चिट्ठी हो किसकी सकती है! हो न हो व्रजराखाल की है। उम्मीद भी थी कि चिट्ठी वह देगा। उसी के परिचय से वह इस घर में है। लेकिन कब तक रहे? लोग क्या कहेगे? चोट लगने के बाद से जो यहाँ आया है, तब से उसका भोजन रसोई से आता है। उसकी भी तो कोई हद होनी चाहिए आखिर। विधु सरकार रत्ती-रत्ती का हिसाब रखता है। भूतनाथ उसकी सूची से बाहर है। यही ताज्जुब है कि अभी तक उसकी निगाह पड़ी कैसे नही!

चिट्ठी चाहे जिसकी हो, फिर देखी जाएगी। अभी समय न था। अँधेरे में भूतनाथ चोर-कमरे के उसी दरवाज़े के सामने पहुँचा। रोज की तरह अन्दर रोशनी जल रही थी। छोटी बहू तकिए मे मुँह गाड़कर पड़ी थी। जूड़ा बिखरा पड़ा था। गले का हार बिजली की रोशनी मे चकमक कर रहा था। ठाकुर के सामने की धूप-बत्तियाँ जलकर खत्म हो रही थी। भूतनाथ ने आवाज़ दी—छोटी बहू!

छोटी बहू ने चकित हरिणी-सी गर्दन टेढी करके देखा और उठ बैठी। अपने कपड़े सम्हाले। कहा—कौन भूतनाथ? ले आये? और समीप जाकर कहा—दो'

भूतनाथ चुप खड़ा रहा।

छोटी बहू ने फिर कहा—कहाँ है, लाओ।

अबकी भूतनाथ ने साफ़ बताया—नहीं लाया।

—नहीं लाये ? क्या दूकान खुली न मिली ?

—दूकान तक गया नहीं।

—क्यों ?—छोटी बहू के अचरज की सीमा न रही।

भूतनाथ बोला—मुझसे यह न होगा। ये लो अपने रुपये। यह ज़हर लाकर मैं न दे सकूँगा।

छोटी बहू सख्त हो गई। भूतनाथ को ठीक से ताका। बोलीं—तो तुम नहीं ला सकोगे ?

भूतनाथ ने कहा—मुझे लाने को न कहो छोटी बहू।

—क्यों, एकाएक तुम्हें क्या हो गया ?

छोटी बहू ने उसके दोनों हाथ पकड़ लिये—खासे पागल हो तुम, किसी ने कुछ कहा है ?

भूतनाथ जाने कैसा तो नरम हो गया। लगा, अब रो पड़ेगा। बोला—आखिर तुम यह सब क्यों पियोगी छोटी बहू ? यह कुछ आदमी के पीने की चीज़ है ! इसे तो सिर्फ़ अभागे ही पीते हैं।

छोटी बहू ने कहा—क्यों, छोटे बाबू तो पीते हैं। कोई पीता न होता, तो दूकान चलती कैसे ?

—पीता है सो पीता है, मगर तुम्हें मैं न पीने दूँगा। हर्गिज़ नहीं। पीने से तुम बचोगी नहीं।

छोटी बहू खिलखिलाकर हँस पड़ीं। बोलीं—मरना ही मेरे लिए अच्छा है भूतनाथ ! स्वामी जिसे ताकते तक नहीं, वह जीकर भी क्या करे ! फिर भी एक बार कोशिश क्यों न कर देखूँ, स्वामी को अगर लौटा सकूँ। मैं उन सतियों की तरह तो होना नहीं चाहती, परन्तु एक बार स्वामी की बात रखकर देखूँ। पीने से कोई मरता नहीं है।

भूतनाथ ने कहा—मरने की तुम्हें बड़ी इच्छा है न ?

छोटी बहू बोलीं—नहीं भाई ! इच्छा इससे उलटी है। दुनियाँ में मेरे-जैसा इस तरह कोई जीना नहीं चाहता। लेकिन स्वामी के लिए मरने में भी मुझे हिचक नहीं। जो हो, न जिए न मरे, ऐसी हालत मुझसे अब बर्दाश्त नहीं होती।

—माना, मगर ऐसा करके भी अगर छोटे बाबू की मति न पलटी, तो ?

छोटी बहू ने कहा—फिक्र न करो। तुम्हें दोष न दूँगी। समझूँगी सारा कसूर अपनी खोटी किस्मत का है। खैर, मेरे लिए इतना सिरदर्द मोल लेने की ज़रूरत नहीं। इस घर में घोड़े की फिक्र करने वाले लोग हैं—यहाँ सबसे सस्ती

चीज वह है। वह मरेगी तो दूसरी आ जाएगी। घोड़ा खरीदने में पैसे लगेंगे।

—तो इतना वचन दो कि ज्यादा न पियोगी।

—यह कैसे कहूँ ? छोटे बाबू जितनी कहेंगे, उतनी पीऊँगी। मैंने वचन दिया है। वे जो भी कहेंगे, वही करूँगी।

ठहरकर भूतनाथ बोला—छि', वचन तुमने दिया क्यों ?

छोटी बहू हँस पड़ी। धीमी आवाज करके बोली—तुम मुझे बहुत प्यार करते हो भूतनाथ, क्यों !

मारे शरम के भूतनाथ के दोनों कान बैंगनी हो उठे। सिर झनझना गया पल में। उसने सिर झुका लिया और तुरत उठा न सका।

छोटी बहू लेकिन अप्रतिभ न हुई। कहा—पराई स्त्री को प्यार करना पाप है, जानते हो न !

भूतनाथ प्रतिवाद करने जा रहा था। छोटी बहू बोल उठी—खैर, सच ही अगर प्यार करते हो, तो वह ला दो। आज ही ला दोगे तो समझूँगी, सच ही भूतनाथ मुझे प्यार करता है।

इसके बाद भूतनाथ वहाँ बिलकुल न रुका।

आखिर उस रात भूतनाथ शराब ले ही आया था ! एक दिन जिस हाथ से उसने मोहिनी-सिन्दूर लाकर दिया था, उसी हाथ से शराब लाकर दी। आज बेशक उसके लिए अफ़सोस होता है। लेकिन इतने बरसों बाद अफसोस का कोई अर्थ नहीं होता। अर्थ हो-न-हो, उस दिन यह नहीं हुआ होता, तो इस घर का इतिहास ही शायद और कुछ होता। जो भी हो, छोटे बाबू लौटे थे, उनकी मति लौटी थी। भूतनाथ के लिए यही एक तसल्ली है।

सरदार मधुसूदन ने कहा—साले साहब, यह लीजिए आपकी चिट्ठी। कल से पड़ी है।

चिट्ठी को खोलकर वह अवाक् रह गया। सुविनय बाबू ने लिखी थी। रोशनी में उसे पढ गया। लिखा था—

भूतनाथ बाबू, प्रेममय ईश्वर की कृपा से अब तक तुम जरूर ही अच्छे हो चुके होगे। जितनी जल्दी बने, एक बार मुझसे भेंट करो। खास जरूरत से यह पत्र लिख रहा हूँ। मेरे बडे बुरे दिन जा रहे है। मै पापी हूँ, अफ़सोस की आग में रात-दिन जल रहा हूँ। तुम्हारे आने मे कुछ शान्ति पाऊँगा। इति। 'सत्य ज्ञानमनन्त।'

निवेदक

श्री············

उतनी रात को वहाँ जाने का उपाय न था। सारी रात एक तरह से जग-कर ही बिताई उसने। आधी नींद। मानो वह बिस्तर पर न हो अपने—छोटी बहू

के कमरे में जा पहुँचा हो। दोनों पास-पास बैठे हैं। छोटी बहू ने चिन्ता को कमरे से बाहर भेज दिया है। बातें हो रही हैं। छोटी बहू कह रही हैं—तुम मुझे इतना प्यार क्यों करते हो भूतनाथ ! उनकी सफेद आँखों के बीच दो काली-काली पुतलियां। टकटकी लगाए वह उसे देख रही हैं। कभी-कभी दाँतों से निचले होंठ को दबा रही हैं। ठीक दोनों कानों के नीचे गर्दन के पास के कुछ बाल उड़कर सामने आ गए हैं। ठीक उसी तरह से ताकती हुई छोटी बहू ने कहा—मैं शराब पीती हूँ, इससे तुम्हारा क्या बनता-बिगड़ता है ! आखिर मैं तुम्हारी हूँ कौन कि तुम मुझे मना करते हो। टूटी-टूटी बातें। नींद के नशे में ही उसने छोटी बहू को साफ़ देखा। वह बोतल को झुकाकर शराब ढालने लगीं।

खप् से भूतनाथ ने उनकी चूड़ी-भरी कलाई थाम ली—फिर पी रही हो छोटी बहू ?

छोटी बहू ने कड़ी निगाहों से उसे देखा। कहा—कहती हूँ, हाथ छोड़ दो !

—अभी तो पी है, फिर क्यों ?

छोटी बहू ने उसकी बात का जवाब न दिया। बोलीं—अब तुम जाओ भूतनाथ, जाओ, बहुत रात हो गई।

—पहले तुम यह कह दो कि अब न पियोगी।

वह बोली—आदत डाल लूं, नहीं तो छोटे बाबू से हार जो खानी पड़ेगी। मगर बड़ी कड़वी है भूतनाथ !

भूतनाथ ने देखा—हिचकती हुई बहू ने गिलास लेकर जीभ से छलाया। गिलास हटाकर मुंह कैसा तो बनाया। फिर छुलाया। सब पी गईं। सर्वाङ्ग सिहर-सा उठा। पान का एक बीड़ा मुंह में ठूंस लिया। पसीना चूने लगा। चेहरा लाल हो उठा। सर्वाङ्ग में एक आवेग खेल गया।

भूतनाथ ने पूछा—कैसा लग रहा है ?

छोटी बहू की दोनों आँखें मुंद आईं। बोलीं—बड़ी जलन हो रही है। थोड़ा-सा बरफ़-पानी और दो तो।

भूतनाथ ने गिलास में पानी दिया।

पानी पीकर छोटी बहू ने कहा—मेरी दादी की जो माँ थीं भूतनाथ, सुना है, वह सती हो गई थीं। बड़ी धूमधाम हुई थी। हँसते-हँसते वह चिता पर लेट गई थीं—उनको बांधना नहीं पड़ा था। धन्य-धन्य कर उठे थे लोग। और आज मैं सहमरण को चली। देख लेना, मेरे मरने पर भी लोग धन्य-धन्य कहेंगे।

भूतनाथ ने अचानक हाथ से छोटी बहू का मुंह दबाया। कहा—मरने के सिवाय कहने को और कोई बात नहीं।

इतने में अजीब घटना हो गई। छोटी बहू ने अपने को छुड़ाकर भूतनाथ के

ाल पर तमाचा मार दिया। कोमल हाथ का तमाचा, लेकिन भूतनाथ के गाल पर ंगलियों के निशान उग आए।

छोटी बहू चीख उठी—निकलो···निकलो—तुरत मेरे कमरे से निकल ाओ।

इस आकस्मिक घटना से भूतनाथ दंग रह गया। उसी क्षण ऐसा लगा कि ोटे बाबू के जूतों की आहट हुई। खड़ा रहना मुश्किल था। डर लगा। देखते-ही-ेखते सबकी नजर बचाकर चोर की नाईं भाग आया। केवल इतना मालूम हुआ क उसे डरते देख छोटी बहू हँस पड़ी। भयानक हँसी। रुकने की नहीं वह हँसी। ागल-जैसे सारे घर को हिलाती हुई हँसने लगी वह।

अचानक भूतनाथ की नींद खुल गई। पहले उसे कुछ समझ में न आया। ज़रा देर में पता चला कि वह अपने उसी चोर-कमरे में लेटा है। तुरत ऐसा लगा, होई दरवाज़े पर धक्का दे रहा है। उछलकर उसने दरवाजा खोला। वंशी था। अकेला नहीं, उसके पीछे एक चीनी और एक नूरवाला कोई आदमी। मुसलमान ूग रहा था।

वंशी ने कहा—आपकी भी नींद गजब की है। कब का दिन निकल चुका —जानें कब से पुकार रहा हूँ।

भूतनाथ कुछ शर्मिन्दा हुआ। चारों तरफ धूप फैल गई थी। छोटे कमरे की वजह से मालूम न हुआ।

वंशी ने उस चीनी से कहा—देख क्या रहे हो साहब, पाँव की नाप ले लो!

भूतनाथ ने पूछा—क्या बात है?

—जूते के लिए पाँव की नाप लेनी है। छोटी माँ का हुक्म है। नन्हे बाबू की शादी है—सबके पाँव की नाप ली जा रही है।

चीनी ने नाप ली। वंशी ने बगल के आदमी से कहा—खलीफा साहब, अब आप देर न करो। एक कोट, एक कमीज़। मुझे बहुत काम है। आज फिर छोटे बाबू घर ही पर हैं।

नाप लेकर वे दोनों चले गए। भूतनाथ बोला—वंशी, ज़रा सुन जा।

वंशी आया। बड़ा व्यस्त-सा। पूछा—वंशी, माजरा क्या है, यह मेरी नाप-जोख?

—जी, ऐसा ही रिवाज है। जब घर-भर के सभी लोगों के लिए हो रहा है, तो आपका क्यों न होगा? भैरव बाबू, मोती बाबू, तारक बाबू, ये इस घर के कौन हैं—मगर उनके लिए हुआ, बल्कि उनके बेटे-पोते तक सुबह अपनी नाप दे गए। जभी तो छोटी माँ ने कहा—

—छोटी माँ ने खुद कहा?

—खुद नहीं तो क्या मँझली माँ कहेगी? उनकी बला से!

भूतनाथ अवाक् हो गया। इधर कुछ दिनों से उसे यहाँ रहना अच्छा नहीं लग रहा था। विधु सरकार किस दिन क्या कह बैठे! भूतनाथ बोला—मैं तो यह सोच रहा था कि सरकार बाबू कुछ कह न बैठें। ब्रजराखाल यहाँ है नहीं, मैं हूँ और अन्न का श्राद्ध कर रहा हूँ···।

वंशी ने कहा—यह बात भी हो चुकी है।

—अच्छा! यह बात भी हुई है?

—जी हाँ, हुई है। मँझले बाबू के बच्चे ननिहाल गये हैं। इम्तहान हो गया है। छुट्टी है। लौटकर आएँगे तो उन्हें आप ही पढ़ाएँगे।

भूतनाथ ने पूछा—बच्चों को तो मैंने कभी देखा नहीं। कहाँ रहते हैं?

—जी, ज्यादातर तो वे अपने ननिहाल में ही रहते हैं। जब यहाँ रहते हैं तो गाड़ी से स्कूल जाते हैं। आप तो सुबह ही अपने दफ्तर चल देते हैं, शाम को लौटते हैं। शाम को वे नौकर-नौकरानियों के पास रहते हैं। पढ़ना-लिखना तो जो होता है, मालूम है। मगर आपको सरकार का डर क्या पड़ा है?

फिर जल्दी करते हुए बोला—मैं चलूँ हुजूर, आज छोटे बाबू घर ही पर हैं।

—अच्छा! रात छोटे बाबू सोए कहाँ थे?

—क्यों? छोटी माँ के कमरे में। मैं उन्हें पहुँचा आया था। कहें चाहे जो आप, आपके मोहनी सिन्दूर में सिफ़त है।—वंशी चला गया।

जल्दी-जल्दी तैयार हो गया भूतनाथ। आज मोहिनी-सिन्दूर कार्यालय में जाना था। इधर बड़े महल की पुताई खत्म हो गई। किवाड़-खिड़कियों में रंग लगाया रहा जा था। लोचन का काम बहुत बढ़ गया था। तरह-तरह के तम्बाकू जमा हुए थे, रंग-रंग के हुक्के। भूतनाथ पर नज़र पड़ते ही बोला—पालागी साले साहब!

—क्या खबर है लोचन?

—जी, मरने की फ़ुरसत नहीं। तम्बाकू का सारा झमेला अकेले अपने को ही झेलना पड़ता है। एक नया तम्बाकू मैंने बनाया है। गया के 'कड़ा-मीठा' में काशी का छटाँक-भर मिलाकर एक नया मज़ा ले आया हूँ—चढ़ा दूँ एक चिलम?

भूतनाथ का हाव-भाव देखकर बोला—आप फ़िक्र न करें। पैसा नहीं चाहिए, धेला भी नहीं। यों ही पिलाना चाहता हूँ। मोती बाबू तो परले सिरे के पारखी हैं, मगर वे भी न पहचान सके। पूछा तो बार-बार पीकर सोच-समझकर बोले—आठ आने तोले की अंबरी है—

भूतनाथ ने पूछा—फिर?

फिर क्या हुआ, यह लोचन ने न बताया। काम करने लगा। ज़रा देर में बोला—यह तो मोती बाबू, मँझले बाबू, भैरव बाबू-जैसे दो-चार जने हैं कि यह

दुनिया टिकी है, नहीं तो कब का कलजुग आ जाता।

—बेशक ! अच्छा अभी मुझे जरा जल्दी है—मैं चलूं। और वह भिस्ती-खाने में दाखिल हो गया।

निकलते-निकलते खासी वेला हो गई। माधव बाबू के बाजार के पास खासी भीड़ थी। गाड़ी, घोड़ा, पुलिस। चारों तरफ यूनियन जैक फहरा रहा था। धक्कमधुक्की से पास तक फटकना मुश्किल। सामने लाल कपड़े पर बड़े हरूफों में लिखा था—कॉनवोकेशन।

खूब याद है, शायद २१ फरवरी सन् १९०५ का साल।

भूतनाथ अपनी राह जा रहा था। अचानक हलचल-सी हुई। पुलिसवाले सजग हो गए। हटो, हटो, उल्लू कहीं के···

पास से कोई कह उठा—बड़े लाट आ रहे हैं।

बड़े लाट ! भूतनाथ रुक गया। बड़े लाट को कभी नहीं देखा था। आगे-पीछे माउण्टेड पुलिस। वे गाड़ी से उतरे। सीढ़ी से ऊपर जाने लगे।

बी० ए० पास करता तो काला चोगा पहनकर बड़े लाट के हाथ से भूतनाथ भी डिग्री लेता। उसे खड़े रहने का अवकाश न था।

—भूतनाथ भैया !

पीछे पलटकर देखा। अनचीन्हा आदमी। कन्धे पर हाथ रखकर हँस रहा था।

—पहचान नहीं पा रहे हैं ? मैं निवारण हूँ। युवक-संघ की याद है ? तब से आप लापता ही रहे। दो साल हो गए।

—ओ-हाँ-हाँ ! क्या खबर है ? अरे हाँ, व्रजराखाल कहाँ है, जानते हो ? तुम्हारे युवक-संघ के सभापति ?

—क्यों, आपको नहीं मालूम ?

—न। यही तो कै दिन हुए, निकल पा रहा हूँ। जख्म विषाक्त हो गया था। उठने-बैठने, घूमने-फिरने की मनाही थी। और भी साल-भर पड़ा रहना पड़ा। अभी भी ज्यादा मेहनत करने से सिर दुखता है।

—अभी जा कहाँ रहे हैं आप ?

—वही मोहिनी-सिन्दूर कार्यालय। जमाने से नहीं गया हूँ, नौकरी तो शायद गई। बीच में दो-तीन खत डाल दिए थे कि चंगा होने पर आऊँगा। आज बाबू ने बुलाया है।

निवारण ने कहा—बड़े भैया भी दो-एक दिन में आनेवाले हैं।

—कौन, व्रजराखाल ? इतने दिनों से कहाँ था ?

निवारण ने कहा—वे तो तभी से बाहर है। काफ़ी दिनों तक तो हमें कोई खबर ही नहीं मिली। बहुत दिनों तक अलमोड़े के आश्रम में थे। एक बार खबर

मिली, बीमार हैं। फिर पता चला, तिब्बत चले गये। अभी उस रोज मालूम हुआ, प्लेग के रोगियों की सेवा के लिए नागपुर पहुँच गए हैं। अभी सिस्टर निवेदिता ने उन्हें बुलाया है। लिखा है—मोक्ष के लिए दौड़ते फिर रहे हो ब्रजराखाल, जो उछल नहीं सकते, वे भला लंका पाएँगे! दो जने के मुँह में दाने देने की जुर्रत नहीं, दो जने मिलकर कोई अच्छा काम करते नहीं बनता और मोक्ष की तलाश! सिस्टर निवेदिता ने कहा—अहिंसा अच्छी चीज है, कोई शक नहीं, लेकिन शत्रुहीन होना और बड़ी बात है। आततायिनमायान्तं—यानी जो हत्या करने आया हो, ऐसे ब्रह्म का वध करना भी पाप नहीं। तुम्हारे मनु ही ने तो कहा है—वीरभोग्या वसुन्धरा। साम, दाम, दण्ड, भेद की नीति अपनाओ, पृथ्वी को भोगो और झाड़ू-लात खाकर जीने में तो दोनों लोक में नरक!

भूतनाथ ने पूछा—ब्रजराखाल ने इसका कोई जवाब दिया?

—दिया है। कदम भाई को लिखा है कि मैं आ रहा हूँ, तुम लोग तैयार रहो। सिस्टर निवेदिता उस रोज भी संघ में आई थीं। कह गईं, स्वामीजी कह गए हैं—अर्जुन भी इसी तमोगुण में पड़े थे, इसीलिए भगवान् ने गीता का उपदेश दिया। कहा—क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ। जैन-बौद्धों के पल्ले पड़कर हम भी तमोगुण के शिकार हो गए हैं। केवल भगवान् को पुकारते हैं। वे सुनें क्यों भला!··· हमारे संघ में रोज गीता-क्लास होता है। आइए किसी दिन।

—आऊँगा। अनुशीलन-समिति शुरू हो गई तुम लोगों की?

—हो गई। आप आइए, तो सब बताऊँगा। गाँव-गाँव में शाखाएं खुलेंगी, व्यायाम, गीता···बहुत-कुछ बताया जाएगा। बड़े भैया भी आ ही चले। खैर, मैं अभी चलूं।

भूतनाथ भी चल पड़ा।

मोहिनी-सिन्दूर कार्यालय के सामने पहुँचकर भूतनाथ अवाक् रह गया। साइनबोर्ड नहीं था। दिन को भी सामनेवाला दरवाजा बन्द। ऐसा तो नहीं होना चाहिए। दिन-भर आने-जानेवालों का तांता रहता था। ऐसा क्यों?

कड़े खटखटाते ही अन्दर से बैजू ने दरवाजा खोल दिया।

भूतनाथ ने पूछा—बाबू हैं?

—हैं। ऊपर जाइए।

भूतनाथ ने हिचकिचाते हुए पूछा—और वे लोग कहाँ हैं? पाठकजी, भरत, मिसिर···

बैजू ने बताया—पाठकजी हैं। बाकी सब चले गए।

—क्यों? आखिर सिन्दूर का पैकेट कौन बनाता है?

—सिन्दूर का कारोबार बाबू ने बन्द कर दिया।

—अच्छा!

अन्दर जाते ही जवा से सामना हो गया। भूतनाथ को देखकर मानो उसे पनाह मिल गई, इस भाव से जवा सामने आई। भूतनाथ को और भी अचरज हुआ। नज़र झुका लेनी चाही उसने। बुख़ार की झोंक में जो हरकत वह उस बार कर बैठा था, उसके बाद नज़र मिलाने का मानो उसे अधिकार नहीं।

जवा ही बोली—आप आ गए, कल से ही इन्तज़ार कर रही हूँ।

बहुत दिनों के बाद यह मुलाकात। फिर भी उसे लगा, इसी बीच जवा जैसे और बड़ी हो गई है। और भी श्रीमती, और भी प्यारमयी हो उठी है। अंगों की रेखाओं में और भी प्रखरता। आँखें चौंधिया जाती। सिर झिमझिमा उठता।

जवा ने कहा—पिताजी ने आपको चिट्ठी दी थी, मिली थी?

भूतनाथ ने कहा—बीमारी के बाद आज पहली बार इतनी दूर निकला हूँ।

जवा ने कहा—आज सुबह भी पिताजी कह रहे थे, भूतनाथ नहीं आया, जरूर उसने कुछ बुरा माना है।

—वाह, उनसे बुरा क्या मानना? कसूर तो मुझसे हुआ है। फिर जवा की तरफ़ देखते हुए कहा—अपने ही कसूर से अब तक इतना तपता रहा हूँ कि चिट्ठी पाए बिना आने की हिम्मत नहीं पड रही थी। सोचता था, इस घर का दरवाज़ा मेरे लिए सदा को बन्द हो गया है। तुम्हारे पिता के स्नेह का लाभ उठा-कर मैंने विश्वासघातकता की है।

अचानक जवा पुराने दिनों के सुर में बोली—अब कोई आपको गँवई का कहने की गलती न करेगा। केवल अपना नाम बदल डालिए।

भूतनाथ लेकिन हँस न सका। बोला—मैं सोच भी नहीं सकता था कि यहाँ से फिर मेरी बुलाहट होगी—नौकरी मुझे फिर मिल जाएगी।

जवा गम्भीर हो गई। बोली—नौकरी तो आपकी नहीं रही।

जवा मज़ाक तो नहीं कर रही, यह भाँपने के लिए उसकी ओर देखने की जरूरत पडी। जवा वैसे ही स्वर में बोली—यह नहीं कि सिर्फ़ आपकी न रही। किसी की न रही। पिताजी ने कारोबार उठा दिया।

—क्यों?

—इसी का जवाब देने के लिए शायद उन्होंने आपको बुलाया है। खुद ही जाना चाह रहे थे। मैंने ही मना किया। कहा—जो खुद से चले गए, हमारे आदर-जतन के बावजूद जिन्होंने रहना पसन्द न किया, हो सकता है, आपके जाने पर भी वे न आएँ। मगर असल बात यह भी नहीं। बुलाया है उन्होंने अपनी गरज़ से।

भूतनाथ ने कहा—मैं भी किसी के काम का आदमी हूँ। जो आज तक अपने पैरों खड़ा न हो सका, उससे भी किसी की गरज की बात आ सकती है, यही ताज्जुब है।

—ताज्जुब आपको लग सकता है, पर मेरे पिताजी ने कभी किसी को

मिली, बीमार हैं। फिर पता चला, तिब्बत चले गये। अभी उस रोज मालूम हुआ, प्लेग के रोगियों की सेवा के लिए नागपुर पहुँच गए हैं। अभी सिस्टर निवेदिता ने उन्हें बुलाया है। लिखा है—मोक्ष के लिए दौड़ते फिर रहे हो ब्रजराखाल, जो उछल नहीं सकते, वे भला लंका पाएँगे ! दो जने के मुँह में दाने देने की जुरंत नहीं, दो जने मिलकर कोई अच्छा काम करते नहीं बनता और मोक्ष की तलाश! सिस्टर निवेदिता ने कहा—अहिंसा अच्छी चीज़ है, कोई शक नहीं, लेकिन शत्रुहीन होना और बड़ी बात है। आततायिनमायान्तं—यानी जो हत्या करने आया हो, ऐसे ब्रह्म का वध करना भी पाप नहीं। तुम्हारे मनु ही ने तो कहा है—वीरभोग्या वसुन्धरा। साम, दाम, दण्ड, भेद की नीति अपनाओ, पृथ्वी को भोगो और झाड़ू-लात खाकर जीने में तो दोनों लोक में नरक !

भूतनाथ ने पूछा—ब्रजराखाल ने इसका कोई जवाब दिया ?

—दिया है। कदम भाई को लिखा है कि मैं आ रहा हूँ, तुम लोग तैयार रहो। सिस्टर निवेदिता उस रोज़ भी संघ में आई थीं। कह गईं, स्वामीजी कह गए हैं—अर्जुन भी इसी तमोगुण में पड़े थे, इसीलिए भगवान् ने गीता का उपदेश दिया। कहा—क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ। जैन-बौद्धों के पल्ले पड़कर हम भी तमो-गुण के शिकार हो गए हैं। केवल भगवान् को पुकारते हैं। वे सुनें क्यों भला !··· हमारे संघ में रोज़ गीता-क्लास होता है। आइए किसी दिन।

—आऊँगा। अनुशीलन-समिति शुरू हो गई तुम लोगों की ?

—हो गई। आप आइए, तो सब बताऊँगा। गाँव-गाँव में शाखाएँ खुलेंग व्यायाम, गीता···बहुत-कुछ बताया जाएगा। बड़े भैया भी आ ही चले। खैर, अभी चलूँ।

भूतनाथ भी चल पड़ा।

मोहिनी-सिन्दूर कार्यालय के सामने पहुँचकर भूतनाथ अवाक् रह गए साइनबोर्ड नहीं था। दिन को भी सामनेवाला दरवाजा बन्द। ऐसा तो नहीं ह चाहिए। दिन-भर आने-जानेवालों का तांता रहता था। ऐसा क्यों ?

कड़े खटखटाते ही अन्दर से बैजू ने दरवाजा खोल दिया।

भूतनाथ ने पूछा—बाबू हैं ?

—हैं। ऊपर जाइए।

भूतनाथ ने हिचकिचाते हुए पूछा—और वे लोग कहाँ हैं ? पाठ भरत, मिसिर···

बैजू ने बताया—पाठकजी हैं। बाकी सब चले गए।

—क्यों ? आखिर सिन्दूर का पैकेट कौन बनाता है ?

—सिन्दूर का कारोबार बाबू ने बन्द कर दिया।

—अच्छा !

छोटा नहीं समझा। उन्हें आप पहचान नहीं सके हैं। उस दिन अचानक उन्हें लगा, आज तक सदा गलती ही करते आए हैं, लोगों को धोखा देते आए हैं। वह सब चुकाकर फिर से नई जिन्दगी शुरू करेंगे।

—सो क्या ?

—घर आते ही साइनबोर्ड को उतरवा दिया। कर्मचारियों को रुखसत किया। हाथ जोड़कर कहा—माफ़ करना भाई! अब तक जो चलता रहा, बाजार का चलन था। बैंक के खजांची के हाथों मेरी कलई खुल गई है।

भूतनाथ ने कहा—चलो, पिताजी के पास चलें।

जबा ने कहा—चलिए।

भूतनाथ बोला—चला-चलाया इतने दिनों का व्यवसाय, एकाएक बन्द कर देना तो ठीक नहीं। इतने लोगों की रोजी-रोटी, तुम्हारा भविष्य।

जबा बिना कुछ जवाब दिए सीढ़ियाँ चढ़ती रही।

सुविनय बाबू 'संजीवनी' का अंक पढ़ रहे थे। भूतनाथ ने पाँव छूकर उन्हें प्रणाम किया।

सुविनय बाबू ने नजर उठाई। पहचानकर बोले—मेरी चिट्ठी मिल गई थी ? तुम्हारी बात मैं सोचता ही रहता हूँ। ब्रजराखाल बाबू तुम्हें मेरे हाथों सौंप गए थे। मैं तुम्हारे लिए कुछ न कर सका और जीवन में कर ही किसके लिए पाया कुछ !

भूतनाथ पास की कुरसी पर बैठ गया। जबा पिताजी की कुरसी की बाँह पर बैठ गई। उन्होंने कहा—बिटिया, तो भूतनाथ बाबू से वह बात कहो।

जबा बोली—आप ही कहिए।

सुविनय बाबू बोले—मैं ही कहूँगा। लेकिन उससे पहले तुमसे मुझे माफ़ी माँगनी चाहिए भूतनाथ बाबू ! मैं तुम्हारे लिए कुछ कर न सका—

हाथ जोड़कर भूतनाथ ने कहा—मुझे अपराधी न बनाएँ।

—तुम्हें क्या, अपराधी तो मैं हूँ। उस विश्वनियन्ता को सब मालूम है कि मैंने उनके, समाज के, सारे संसार के प्रति अन्याय किया है। मेरा अपराध मामूली नहीं, पर उसका मुझे ज्ञान न था। उस दिन मेरे पिता मुझे सचेत कर गए।

—आपके पिता !—भूतनाथ ताज्जुब में पड़ गया।

—हाँ। स्वप्न में उस दिन उन्होंने दर्शन दिया। वे कट्टर हिन्दू थे, काली के भक्त। पहले ही बता चुका हूँ। उन्होंने कहा—बेटा, मुझे मुक्ति नहीं मिल रही है। तू मुझे मुक्ति दे।

अन्तिम समय तक उन्होंने मेरा मुँह नहीं देखा, मेरे हाथ का पानी न पिया। वे बोले—प्यास से मेरी छाती फट रही है। मैं मुक्ति नहीं पा रहा हूँ—मुक्ति दे। बस। मेरी नींद खुल गई। देखा तो कहीं कोई नहीं। विद्यासागर लिख

गए हैं, सपना सच नही। मैं भी जानता हूँ, पर चैन नही पड़ी। किसी काम मे जी न लगा। जवा से ब्रह्म-सगीत सुना—शान्ति न मिली। शाम को समाज मे गया।

—फिर ?

—उस दिन आचार्य, याज्ञवल्क्य के ब्रह्मवाद पर भाषण दे रहे थे। सुनने से लगा, यह तो अपनी ही बात है। घर छोड़ते समय याज्ञवल्क्य ने अपनी दोनो स्त्रियो के बीच सम्पत्ति बाँट दी। मैत्रेयी ने कहा—येनाहं नामृत स्याम् किमहं तेन कुर्याम्—जिससे अमरत्व नही मिलेगा, उसे लेकर मैं क्या करूँगी? मैं ध्यान से सुनने लगा। अमृत मे ही सत्य है, अमृत से ही ब्रह्म का साक्षात्कार होता है, इस बात की उपलब्धि हमे कब होती है? जब किसी प्रियजन से विछोह होता है। जिसे हम चाहते हैं वह मृत्यु मे न होगा; जी इसे कबूल ही नही करता। जिसे हमने अमृतलोक में देखा, उसे मृत्यु लोक मे हम कैसे देखें! तब लगता है, प्रेम क्या सिर्फ़ हमारा ही है? किसी विश्वव्यापी प्रेम मे क्या अपना प्रेम सत्य नही है? तुम इसे न समझ सकोगे भूतनाथ बाबू, जवा भी नही।

भूतनाथ ने कहा—आप कहिए, समझने की कोशिश करूँगा।

समाज मे आचार्यदेव ने कहा था—भोग ही प्रेम का एकमात्र लक्षण नही है। उसका एक प्रधान लक्षण है कि वह आनन्द से दुःख को स्वीकार कर लेता है, क्योकि दु:ख और त्याग से ही प्रेम की सार्थकता है। यह बात मुझे और भी एक जने कह गये थे।

जवा की ओर मुखातिब होकर बोले—यह तुमने भी नही सुना है बिटिया, तुम्हारी माँ के मरने के दिन की बात। आज सुन लो।

उनकी दोनो आँखें स्थिर हो आईं। जरा देर आँखें बन्द किये रहे। फिर कहा—रात के दो बजे थे। तुम्हारी माँ की तबीयत खूब ही खराब थी। तुम बगल-वाले कमरे में सोई थी। मैं उनके पास अकेला बैठा था। अचानक लगा, उन्होने आँखें खोलकर देखा। मैंने एक खुराक दवा पिलाई। उन्होने मेरे दोनो हाथ पकड़ लिये। सदा जो उड़ी-उडी बाते करती रही थी, उस रात उन्होने जो कहा, वह बड़े ज्ञानी भी नही कह सकते। वह दृश्य मुझे आज भी याद आ रहा है।

—छाती के पास मेरा हाथ ले जाकर कहा—तुम अभी भी जाग रहे हो?

मैंने पूछा—खूब तकलीफ हो रही है?

बोली—हाँ, खूब तकलीफ हो रही है, पर अब न होगी।

—क्यों?

—अब ज्यादा देर न जिऊँगी।

मैं उनका सिर सहलाने लगा। उनकी आँखो से आँसू टपकने लगे। पूछा—जवा को बुलाऊँ?

कहा—नहीं।

मैंने कहा—फिर क्या करूँ कि तुम्हारी तकलीफ़ कम हो ?

कहा—मैं जो कहूँगी, कर सकोगे ?

मैंने कहा—कहो।

उन्होंने कहा—तुम मुझे मुक्ति दो।

मैं चौंक उठा। उस रोज़ पिताजी ने स्वप्न में जो कहा था, वही उन्होंने भी कहा। तो क्या मैंने सबको अपने पास बाँध रखा है ? जहाँ प्रेम का सहज सम्पर्क है, वहाँ बन्धन तो व्यर्थ है। प्रेम के माने ही मुक्ति है। मैंने फिर पूछा—ऐसा क्यों कह रही हो तुम ?

—इसलिए कि मुझे न दोगे, तो तुम खुद भी मुक्ति न पाओगे। मैं तुम्हारी ही मुक्ति को कह रही हूँ। जबा को भी मुक्ति दो। दे सकोगे ?

इसके बाद ही उनका हाथ झूल गया। वह चली गईं।

जबा कह उठी—पिताजी !—उसकी आँखों में आँसू भर आए।

सुविनय बाबू बोले—एक हर्फ़ भी झूठ नहीं है इसका। पहले तो समझ ही न सका कि क्या करूँ, फिर मन को मज़बूत किया। याद आया पिताजी ने कहा था—भली तरह गुज़ारा-भर चल जाए, तो धन्य समझो खुद को। खा-पहनकर जो बचता था, पिताजी सब दान कर देते थे। मोहिनी-सिन्दूर से मौज करने की उन्होंने मनाही की थी।

उसके बाद मैंने मोहिनी-सिन्दूर का साइनबोर्ड उतार फेंका। तमाम चिट्ठी लिख दी। साथ ही तुमको भी लिखा भूतनाथ बाबू ! अब मैंने तय कर लिया है, अब तक जो अन्याय करता रहा, जीवन-भर अब उसका प्रतिकार करता रहूँगा। धूल से मेरा सारा बदन मलिन हो उठा है। जबा की माँ को उपनिषद् मैंने पढ़ाई थी और वही मुझे शिक्षा दे गईं। मैंने अब समझ लिया है भूतनाथ बाबू कि मैं जो चाहता हूँ कि यह वह नहीं है। और धन चाहिए, और यश चाहिए, और शक्ति चाहिए—यही सोचते-सोचते दिन गए हैं। सो मैंने सोचा है, अपनी सारी बढ़ती सम्पत्ति मैं समाज को दे दूँगा—संचय का सारा भार सिर से उतारकर आत्म-समर्पण में अवगाहन करूँगा। सब त्यागकर शान्त हूँगा, पवित्र हूँगा।

जबा ने भूतनाथ की तरफ़ ताका।

भूतनाथ बोला—आप मोहिनी-सिन्दूर का व्यापार भी बन्द कर देंगे।

—कर दूँगा नहीं, बन्द कर दिया भूतनाथ बाबू !—उसके बाद उठ खड़े होकर कहा—ज़रा ठहरो। मैं अभी आता हूँ।—और बगल के कमरे में चले गए

भूतनाथ ने जबा से पूछा—पिताजी जो कह गए, सच है सब ?

—पिताजी झूठ नहीं कहते।

—लेकिन तुम तो रोक सकती थीं। तुम्हारा भविष्य···।

ज़रा देर चुप रहकर जबा ने कहा—भविष्य की तो दूर रही, मेरा वर्तमा

ही धुँधला होता जा रहा है। इससे बचने का कोई उपाय ही मुझे नजर नहीं आता।

—तुमने पिताजी कुछ नहीं कहा।

जवा बोली—तो आपने अब तक पिताजी को पहचाना ही नहीं। जब धर्मत्याग किया था, तो कोई प्रलोभन इन्हें रोक न सका था। आज भी जब इन्होंने सकल्प कर लिया है, तो कोई डिगा न सकेगा।

भूतनाथ ने कहा—मैं बाहरी आदमी हूँ, मेरा कुछ कहना जरूर ही न शोभा देगा···लेकिन तुम्हारी बात सोचकर ही कहता हूँ।

जवा हँसी। कहा—मेरे लिए इतना न सोचें आप।

जवाब सुनकर भूतनाथ का सिर नीचा हो गया। जवा ने क्या सोचकर यह कहा—उसे उस दिन की घटना याद आ गई। बोला—मुझे तुम क्षमा करो जवा!

जवा ने कहा—जो बात-बात मे ऐसे कसूर करते हैं, उन्हें क्या बात-बात मे क्षमा किया जा सकता है?

—मगर जानती हो, बहुत दिनों तक मैं इसका अफसोस करता रहा हूँ।

जवा बोली—नाहक़ ही अफ़सोस किया आपने, नौकरी तो आखिर चली ही गई आपकी!

—क्या समझती हो कि नौकरी ही मेरी ज़िन्दगी का एक मकसद है?

—आपकी ज़िन्दगी का क्या मकसद है, यह मैं क्यो सोचूँ? आपका शायद यह ख़याल है कि मैं बैठी-बैठी आपकी ही बात सोचा करती हूँ?

—लेकिन गुनहगार मैं चाहे जितना ही बडा होऊँ, क्या माफी माँगने का भी अधिकार मुझे नही?

जवा ने कहा—लेकिन माफी वसूल करने की ताक़त सबमे नहीं होती, भूतनाथ बाबू! होती है सबमें सब क्षमता? आप इसका गम न उठाएँ।

भूतनाथ बोला—तुम अगर मेरा ग़म समझती होती तो इतना गम मुझे नही देती।

जवा ने पूछा—यह गम प्रत्येक की जुबान पर लगा पाती हूँ। अच्छा बताइए तो, ग़म दरअसल है क्या?

इतने मे कागज़-पत्तर लिये सुविनय बाबू आ पहुँचे। कहा—यह देखो भूतनाथ बाबू! दिखाने लगे हिसाब-किताब। बहुत हिसाब है, बहुत रसीदें हैं। बहुत पावना है, बहुत देना है। लोगों का बकाया मैंने चुका दिया है। जो रह गया है, उसे भी चुका दूँगा। तुम्हारा बकाया भी मैं आज चुका देना चाहता हूँ। तुमने जान लगाकर मेहनत की है···और मैंने बहुत कम दिया है। तुमने कुल काम किया है···।

भूतनाथ मन-ही-मन कैसा तो संकुचित हो उठा। बोला—आप और एक

बार सोच देखें।

—क्या सोच देखूं ?

—इतने दिनों का कारोबार है, जवा का भविष्य पड़ा है।

—सब सोच देखा है। यह संकल्प कुछ एकाएक नहीं किया है। पन्द्रह वर्षों से इस पर सोचता आया हूँ। तब जवा इत्ती-सी थी। एक दिन जिस मन से मैंने हिन्दू धर्म छोड़ा था, आज उसी मन से सारा पार्थिव ऐश्वर्य छोड़ने चला हूँ। जवा के भविष्य की कहते हो—उन दोनों में प्रेम हुआ है। मैं धनी हूँ या ग़रीब, उस प्रेम का कुछ आता-जाता नहीं। अगर आता-जाता है, तो ज़रूर कहीं कमी है। क्यों बिटिया ?

जवा चुप बनी रही।

सुविनय बाबू ने कहा—तुमने सुपवित्र से सब कहा है ?

जवा ने सिर हिलाया—नहीं, उनसे कुछ नहीं कहा।

—तुम उससे कह देना, साधना की राह में सबसे बड़ी बाधा विश्वास की होती है, प्रेम की राह में भी। तुम एक-दूसरे को संस्कारमुक्त होकर ग्रहण करो। तुम शायद सोचो कि मैंने तुम लोगों को वंचित किया है। लेकिन मेरा आन्तरिक विश्वास है कि मैंने मोहिनी-सिन्दूर से जो पूंजी जोड़ी है, उस पर तुम्हारा या मेरा कोई हक़ नहीं। जीने के लिए जितना चाहिए, उसे छोड़कर। अब तक जिस फ़रेब का आश्रय किए था, उसके लिए मैं विश्व-पिता से बार-बार क्षमा-प्रार्थना करता हूँ। 'विश्वानि दुरितानि परासुव'—मेरा पाप, संसार के सबका पाप क्षमा करो।

भूतनाथ ने कहा—इस सिन्दूर से एक आदमी का बड़ा उपकार हुआ है, मैं जानता हूँ।

—किसका ?

—बड़े घर की छोटी बहू का।

सुविनय बाबू हँसे। कहा—क्या उपकार हुआ, पता नहीं, यहाँ कार्य-कारण का सम्बन्ध कितना-सा है, वह भी नहीं मालूम। पर मुझसे पूछो तो कहूँगा कि निष्ठा से, विश्वास से सब-कुछ हो सकता है। छोटी बहू को निष्ठा होगी, तो फल मिलेगा। जो हो, मैं अब तक व्यवसाय-बुद्धि से चलता रहा, जवा की माँ की मृत्यु से मैंने अपने चरम सत्य को समझा है, मुक्ति का स्वाद पाया है, मैं जवा को भी मुक्त कर जाऊँगा। क्यों बिटिया, कुछ कहना है ?

जवा ने कहा—आप जो अच्छा समझें, करें, मैं उसी को अच्छा समझूंगी।

सुविनय बाबू बोले—तो सुपवित्र से अब सब खोलकर कहना।

—कहूँगी।

—कहना, इतने दिनों के बाद ऐश्वर्यशाली बनी। यह कुछ अपमान नहीं, इससे मन को बल मिलेगा। अगर तुम दोनों का प्रेम सच्चा है, तो इससे वह टूट

ंही सकता। सुपवित्र कुछ नादान नहीं, वह समझेगा। और भूतनाथ बाबू !

भूतनाथ ने कहा—जी।

—तुम्हारे लिए मैं कुछ न कर सका। मैंने व्रजराखाल को भरोसा दिया ा कि तुम्हें मैं जीवन में प्रतिष्ठित करूँगा। नही कर सका। खैर मैंने अपने कई पत्रों को तुम्हारे बारे मे लिखा है, शायद वे वैसा करें। जो भी हो, आज तुम्हें यह ामूली-सा पारिश्रमिक लेना ही पड़ेगा।

उन्होने भूतनाथ को रुपयों की थैली दी।

सुविनय बाबू फिर बोले—पाँच सौ रुपए हैं। कुछ भी नही है। तो भी ुशी-खुशी इसे स्वीकार करो और मुझे मुक्ति दो। मैं एक-एक कर सबके ऋण से ुक्त होना चाहता हूँ। सबको दे-दिवाकर जो रहेगा, वह मैं समाज को दे जाऊँगा।

भूतनाथ की आँखो मे आँसू आ गए। याद आया पहले दिन जब वह ्जराखाल के साथ यहाँ आया था, तो कितनी हिचक हुई थी। सोचा था, शायद र्म को छोड़ना पड़े, जो न खाना चाहिए, वह खाना पड़े। कुछ न हुआ लेकिन। ारी आशकाएँ झूठ साबित हुईं।

देर तक सब चुपचाप। जवा चुपचाप बैठी थी। सुविनय बाबू आँखें बन्द ंकए बैठे थे। उस शान्त और पवित्र मौन को तोडने मे हिचक हुई भूतनाथ को। ्सकी हथेली पर रुपयों की थैली पड़ी थी। एकाएक वह चीख-सा उठा—ये रुपए ें नही ले सकूँगा।

सुविनय बाबू ने आँखें खोली। जवा भी देखने लगी।

—रुपए आप वापस ले लें। मैं न ले सकूँगा।

—क्यों, ले क्यो न सकोगे ?

—मुझे माफ करें, मैंने अन्याय किया है।

—तुमने ऐसा क्या किया ? कोई अन्याय नही किया है तुमने।

—किया है, जवा को मालूम है—उसने सिर झुका लिया।

—क्यों जवा, तुम्हे मालूम है ?

जवा जाने क्या कहने जा रही थी कि कमरे में कोई आया। खासा डौल-डौल, काला कोट, कम उम्र। भूतनाथ ने उसे कभी देखा न था।

सुविनय बाबू बोल उठे—सुपवित्र बाबू ! अच्छा ही हुआ, आ गए। अभी-अभी जवा से तुम्हारे बारे में पूछ रहा था। तुमसे बहुत बातें करनी हैं। अरे, उठ क्यों गए भूतनाथ बाबू, बैठो, तुम्हारे सामने बात करने में कोई हर्ज नही।

जवा ने भी कहा—आप जाइए, न बैठिए।

—बेला बहुत हो गई। और किसी दिन आऊँगा।—भूतनाथ बाहर निकल गया।

पीछे से रतन ने पुकारा—किरानी बाबू !

—क्या है रतन ?

—ज़रा सुन जाइए, दीदीजी आपको बुला रही हैं।

बाहर चिलचिलाती धूप। भूतनाथ फिर लौटा। जवा किवाड़ के पास खड़ी थी। बोली—आप चले जा रहे हैं ? रुपए नहीं ले गए ?

भूतनाथ ने कहा—इसी के लिए बुलाया था ?

—रुपए आप छोड़ गए। मैंने समझा भूल गए।

उसकी तरफ़ देखकर भूतनाथ बोला—भूला नहीं हूं।

—भूले नहीं तो छोड़ जाने का मतलब ?

—रुपये तुम्हें दिए जा रहा हूँ।

—मुझे ! क्या आप यह समझते हैं कि मुझको दान देने का अधिकार आपको है ? पिताजी ने सब-कुछ त्याग दिया, क्या इसीलिए मुझे आपके दान पर निर्भर करना पड़ेगा ?

—ऐसा मैं क्यों सोचूं, इससे सुपवित्र बाबू की तौहीन होगी, फिर मुझमें ऐसी सामर्थ्य कहाँ कि मैं, दान कर सकूं ?

—यानी सामर्थ्य होती तो इस दुर्दिन में मुझे आप एहसानमन्द करते क्यों ?

—भूतनाथ हँस उठा। कहा—बात करने की इतनी ही अक्ल होती तो कब का शिखा-सूत्र फेंककर ब्रह्मसमाजी हो गया होता। और, तुमसे तर्क करने की मुझमें ताकत भी नहीं। रुपये मैंने तुम्हें दहेज़ में दिये।

—कैसा दहेज़ ?

—तुम्हारी शादी में, यही समझो।

—आपसे दहेज़ मैं क्यों लूं ? आपसे सम्बन्ध भी क्या है ? कभी आप इस घर में नौकरी करते थे। मिताई का भी नाता नहीं या कि···।

—या कि···?

जवा हँसी—लगता है, मुझीसे कहलाए बिना आप न मानेंगे।

भूतनाथ ने कहा—कहना चाहती हो, न कहो। मगर अपना सम्बन्ध क्या ऐसा है कि उपहार भी नहीं दिया जा सकता ?

—उपहार दिया तो शायद जा सकता है, पर लेने में खटकता है। आपकी नौकरी नहीं है, पराए घर के आश्रित हैं···आपने ही तो बताया है। मुझसे, आपकी जरूरत क्या कुछ कम है ?

—रुपयों की जरूरत मुझे शायद ज्यादा ही है, शायद क्यों सचमुच ज्यादा है। लेकिन दुनिया में रुपयों से भी बड़ी चीज है।

कौतूहल से जवा का चेहरा दमक उठा। बोली—वह कौन-सी चीज है बताने में एतराज है कुछ ?

भूतनाथ कहना ही चाहता था। संकोच लगा, जाने जवा क्या समझे ! दरअसल जवा से उसका सम्बन्ध सहजबोध्य तो था नहीं—बराबरी का भी नहीं। जवाब देने में उसका चेहरा स्याह-सा हो गया। कान गरम हो गए। जवा के सामने खड़े-खड़े लगा, पाँवों तले की जमीन खिसक रही है। बोला—आज नही जवा, फिर कभी कहूँगा।

—लेकिन फिर कहने का मौका अगर न मिले ?

—मौका मैं निकाल लूँगा।

—लेकिन मुझे ही सुनने का अवकाश न हो तो ?

भूतनाथ फिर आफत मे पड़ गया। कहा—नही सुना सका तो क्या, मेरे मन की मन ही में रहे; एक दिन भूल से मैं तुम्हारा अपमान कर बैठा था, जीवन-भर उसी का प्रायश्चित्त करने दो। सात रुपये के अपने एक किरानी से इससे ज्यादा सुनना भी क्या !

—रुपये के नाम पर चिकोटी तो खूब काट सकते हैं आप। खैर, रुपये का नाता तो अब टूट चुका और उस दिन आपने दामन पकड़कर खींचा था। मानती हूँ, वह हरकत मैं सह नहीं सकी थी, पर आज तो मैं सुनूँगी ही—कहिए।

भूतनाथ ने कहा—लेकिन उधर सुपवित्र बाबू बड़ी देर से तुम्हारा इन्तजार कर रहे हैं। नाराज हों शायद।

—उनसे बडा रश्क होता है आपको, न ?

भूतनाथ गम्भीर हो गया। बोला—रास्ते पर खड़े-खड़े मिनट-भर में इसका जवाब नही दिया जा सकता जवा, दिया भी जाए तो तुम समझोगी नही, मैं समझा भी नही सकूँगा। लिहाजा ऐसी कोशिश भी न करूँगा मैं। सिर्फ एक बात पूछता हूँ। अब तो मैं इस घर का नौकर नही हूँ। शायद हो कि आइन्दा यहाँ आने का अधिकार भी न रहेगा, लेकिन मैं जो पूछूँगा, उसका ठीक-ठीक जवाब दोगी ?

जवा ने कहा—दूँगी। पूछिए।

भूतनाथ के पूछने से पहले ही हाँफता हुआ रतन आ पहुँचा—दीदीजी, बाबू कैसा तो कर रहे हैं ! तुरत चलिए।

जवा दौड़ पड़ी। पीछे-पीछे रतन गया। भूतनाथ कुछ देर वहाँ किंकर्त्तव्य-विमूढ़-सा खड़ा रहा। आगा-पीछा करता रहा। ऐसी खबर सुनकर चला कैसे जाए ! सो वह धीरे-धीरे फिर ऊपर गया। सुविनय बाबू आरामकुरसी पर जैसे बैठे थे, वैसे ही बैठे थे। आँखें बन्द। छाती मे बहुत दर्द हो रहा था। कभी-कभी छटपटा उठते थे।

झुककर सुपवित्र बाबू ने पूछा—खूब तकलीफ हो रही है बाबूजी ?

उत्तर देने की भी शक्ति नही रह गई थी सुविनय बाबू में।

सुपवित्र ने भूतनाथ से कहा—आइए तो जरा, मिल-जुलकर इन्हें लिटा दें।

दोनों मिलकर उन्हें सोने के कमरे में ले गये।

सुपवित्र ने जवा से कहा—तुम ज़रा खयाल रखो, इतने में मैं अपने डॉक्टर को ख़बर कर दूं।—सुपवित्र निकल पड़ा।

भूतनाथ निकम्मा-सा कुछ देर खड़ा रहा। उसके जी में आया, इस समय वह भी इनके किसी काम आ सकता तो अच्छा होता।

बिस्तर पर पड़े-पड़े सुविनय बाबू ने आँखें खोलीं। बेबस-से चारों तरफ़ देखने लगे। भूतनाथ से पूछा—सुपवित्र कहाँ है? चला गया?

उनके मुंह के पास झुककर जवा ने कहा—डॉक्टर के यहाँ गये हैं, अभी आ जाएँगे।

सुविनय बाबू ज़रा देर चुप रहे।

जवा ने पूछा—अब जी कैसा है?

वे हलका हँसे। मुंह ज़रा बन-सा गया। बोले—ज़रा समाज के लोगों को ख़बर कर दो, बिटिया!

जवा ने कहा—आप चंगे हो जाएँगे पिताजी, सोचिए न!

—रूपचांद बाबू को भी ख़बर दो और धर्मदास बाबू को भी।

ज़रा देर फिर चुप। तन्द्रा में ही फिर बोले—आचार्यदेव को भी।

फिर तन्द्रा। इसी दशा में कुछ देर अबस-से पड़े रहे। उसके बाद फिर आँखें खोलीं। फिर तन्द्रा। उसके बाद होश और बेहोशी में जीवन-मरण की नाव इधर-से-उधर डोलने लगी।

इसके बाद से भूतनाथ के जीवन में बड़ा हेर-फेर आ गया। कहाँ था और एक धक्के में कहाँ जा गिरा! निवारण की जमात ने मुल्क में अजीब आग सुलगाई। एक दिन ब्रजराखाल भी अचानक आ पहुँचा। और छोटी बहू! मगर··· मगर वह बात रहने ही दी जाए। पहले प्रकाश हलवाई की ही बात ले ली जाए। किस बुरी साइत में जो उस रोज उससे भेंट हो गई।

जमीन तक झुककर उसने प्रणाम किया और कहा—मुझे पहचान पा रहे हैं?

—अरे तुम! क्या ख़बर है? कई बार तुम्हारी दूकान पर जलेबी खाने गया, मगर तुम न मिले।

—जलेबी का कारोबार मैंने उठा दिया। मुनाफ़े का सारा शक्कर चींटी चाट जाती थी। कर्ज से सिर का एक-एक बाल बिकने पर आ गया। आखिर उठा दी दूकान।

—कर क्या रहे हो इन दिनों?

—कुछ दिनों तक ब्याह ठीक कराता फिरा लोगों का। कुछ मिल जाता

था, खाने का भी डौल बैठ जाता था। अभी पिछले फागुन में···

भूतनाथ ने फिर पूछा—खैर, करते क्या हो बहरहाल?

—जी, आप लोगों की दुआ से फ़िलहाल ननी बाबू के दफ्तर में एक जगह मिल गई है।

—कौन ननी बाबू?

—ननी बाबू को नहीं जानते? नया ऑफिस खोला है। करीब तीन सौ आदमी काम करते हैं। और भी बहुत-से लोग लिए जाएँगे, सुना है। पटलडांगा के सरकार-परिवार में शादी हुई है। पक्के साहब हैं, साहब। ऐसी अंग्रेजी बोलते हैं कि किसकी मजाल जो समझे! खैर, आप कहाँ हैं?

—वहो। बड़े महल में। और कहाँ जाऊँ?

प्रकाश ने पूछा—शादी-ब्याह?

—नहीं किया है।

—अरे, कहते क्या हैं आप? कुलीन ब्राह्मण। पहले की बात होती तो दस-बीस शादी हो जातीं। पेट के लिए नौकरी की नौबत न आती। कहें तो···पता है।

—खैर। फिर कभी आऊंगा। आज मुझे जरा जल्दी है।

भूतनाथ चल दिया था। नन्हे बाबू की शादी थी उस दिन। बरात में जाना था।

वंशी ने कहा था—आज जरा जल्दी लौट आइएगा। बाल-दाढी बनाने वालों का तांता लगा रहेगा। आप जिसमें पहले ही फुरसत पा सकें।

छोटी बहू ने बुलाकर पूछा था—कुरता-जूता पसन्द तो आया भूतनाथ?

तीन दिन से नौबत झर रही थी। बनारस से बजानेवाले आये थे। एक-एक राग को डेढ़-डेढ़ घटा धुनते। मीड़, गमक, मूर्च्छना से सारा बहू बाजार गूँज जाता। बनमाली सरकार लेन मे लोगों की कतार खड़ी होकर देखा करती।

बीच-बीच मे बन्दूक उठाकर बिरिजसिंह घुड़कता—भागो यहाँ से। रास्ता छोड़ दो।

हल्दी के रस्म का सामान जा रहा था। माथे पर परात, थाल, टोकरी लिये जो लोग निकलने लगे तो खत्म क्यों हों? सब का कपड़ा-कुरता नया। पुरानी दासियों के बदन पर टसर की धोती। आगे-आगे नत्थूसिंह। हाथ में पीतल से बंधी बाँस की लाठी। देखनेवालों की ताक-झांक।

शंख बजा।

विधु सरकार ने आज गले में चादर डाल रखी थी। बार-बार लोगों को ताकीद कर रहा था—कतार बांधकर चलना रास्ते के किनारे-किनारे।

पहले बर्तन। चालीस आदमियों के माथे पर। उसके बाद मसाले। उसके

बाद कपड़े। कोई पचास आदमियों के माथे पर। उसके बाद मिठाई ढोनेवालों का तो अन्त ही नहीं। उसके बाद दही के बर्तन। गहने का बक्स लिये आगे-आगे नत्थू-सिंह चल रहा था।

विधु सरकार के हाथ में फ़हरिस्त। एक-एक का नाम लिखता, तब आगे बढ़ने देता। शंख बजाते हुए बरात निकली।

रात को बहार आ गई। सजे-सजाये दुमंजिले से ऊँचे चतुर्दोल पर नन्हे बाबू। नीचे बहुरंगी गाड़ियों की कतार। सामने बाँस की मोरपंखी पर नाच। मँझले बाबू के साथ तीन-चार गाड़ियों पर मुसाहब लोग। डेढ़ मील लम्बा जुलूस। सामने रोशनचौकी। बीच-बीच में पटाखे। दोनों तरफ़ फानूसों की कतार।

अगल-बगल के मकानों के खिड़की-दरवाज़ों पर लोगों की भीड़। सारा कलकत्ता गमगमा उठा।

वंशी ने कहा—नन्हे बाबू फब खूब रहे हैं, है न साले साहब ? ...

मँझले बाबू की ख्वाहिश थी कि अपने घर से दुलहिन के घर तक रास्ते के दोनों तरफ़ गैस की रोशनी लगा दें। भैरव बाबू ने कहा—यह तो मैंने कालीकृष्ण बाबू के लड़के की शादी में देखा था—एक लाख रुपये की लागत लगी थी। आधे कोस तक बिठाई गई थी गैस की रोशनी। किन्तु इस फानूस का झमेला भी कुछ कम नहीं। इधर दूल्हा दाखिल हुआ अन्दर और इधर लोग ले भागे सब !

भैरव बाबू सिगरेट पी रहे थे। कहा—आज की ये मोमबत्तियां भी क्या ! उस समय दो आने में सोलह बत्तियों का पैकेट मिलता था—असली ह्वेल की चर्बी की बत्ती। यह तो नकली मोम है।

वंशी ने कहा—मैं यहीं से लौटता हूँ साले साहब, छोटी माँ की तबीयत ठीक नहीं है।

—उन्हें क्या हुआ है ? मुझे तो कोई खबर नहीं ?

—खबर नहीं है, वही अच्छा है। नहीं सुनें तो अच्छा।

भूतनाथ ने पूछा—हुआ क्या है उन्हें वंशी ?

—ज़रूरत नहीं जानने की। हाँ, बने तो खा-पीकर जल्द लौट आएँ। कहीं महफ़िल में न जम बैठें।

—क्यों, उनके लिए खतरा है कुछ ?

—न होता तो झूठ क्यों कहता ? कल तो दोपहर को सोकर उठी हैं।

—पहले तो छोटी बहू बहुत सबेरे जग जाया करती थीं।

—पहले की छोड़िए। कल तो इमली घोलकर पिलाया, तब होश में आईं।

—ऐसा क्यों हुआ वंशी ?

—मैं क्या बताऊँ सरकार, कोई अपना भला न समझे तो क्या किया जाए? वंशी लौट गया।

बरात धीरे-धीरे आगे बढ़ रही थी। नाच-बाजे, मुसाहबों के ठहाके, हँसी-मज़ाक। मँझले बाबू आज खासे मूड मे थे। दिल दरिया मिज़ाज। पटाखे छूटते कि मुसाहबो की जमात ठठाकर हँस उठती। गाड़ी के नीचे से बोतल निकलती। खानदानी लहू और गरम हो उठता।

नन्हे बाबू के दोस्त पीछे-पीछे चल रहे थे। कान्तिधर की आवाज ज़ोरदार थी। जाने कहाँ से एक कनस्तर जुटा लिया था। उसी पर तबला बज रहा था। बीच-बीच मे चिल्ला उठता—अहा-हा! ताल कट गई। मारे थप्पड़ के जूड़ा उड़ा दूँगा साली का।

लेकिन ठनठनिया की शिवठाकुर गली मे मुसीबत आई। बरात को दरवाज़े लगाने के लिए इस गली से होकर जाना ज़रूरी था। दूल्हे की सवारी गली मे घुस चुकी थी। मँझले बाबू की गाड़ी भी। बाकी गाड़ियाँ जाने को ही थीं कि सुनाई पड़ा—रामनाम सत्य है! श्रीरामनाम सत्य है!

अँधेरा था। मगर बरात की रोशनी से सारी गली झकमका उठी थी। नज़र आया, उधर से मुर्दे के पीछे-पीछे एक भीड़ आ रही है।

किसी ने पूछा—किसका इन्तकाल हुआ?

—पता नहीं, कौन साला मरा! मरने का और समय न मिला। सच ही तो! मरने का कोई समय-असमय नहीं। जब चाहा, मर गए। और ऐन इसी वक्त लाश ले जाना!

मँझले बाबू ने कहा—भैरव, देखो तो, कौन मरा!

भैरव बाबू गाड़ी से उतर पड़े। कोई मामूली आदमी ज़रूर नहीं मरा था, नहीं तो ऐसी धूमधाम क्यों होती। पालिश की हुई सागवान की लकड़ी की खाट। फूलों का बिछौना। रोशनी। भीड़। गाड़ियाँ—लैंडो, ब्रूहम, ब्राउनबेरी, बॅरुष।

भैरव बाबू ने हाँफते हुए आकर खबर दी—छेनीदत्त गुजर गया!

सबने सुना। छेनीदत्त! मँझले बाबू का पुराना प्रतिद्वन्द्वी। बरसों खड़दा के मेले मे औरत के लिए उससे ठनती रही है। नाव की होड़। कबूतरों के बारे में तो अभी उस दिन तक लड़ाई चली। मँझले बाबू की हासिनी के लिए उसे बड़ा रश्क था। छोटे बाबू की चुन्नी को भी भगा ले जाने की कई बार कोशिश की। उसी की देखादेखी अपनी रखैल को उसने गहनों से मढ़ दिया था। चितपुर में मकान बनवा दिया था। वही छेनीदत्त मर गया!

मँझले बाबू ने फिर बोतल को मुँह से लगाया। बोले—सो चाहे जो हो, हमारे दूल्हे की सवारी पहले जायगी।

पतली-सी गली। बरात घुस जाने के बाद जगह ही नहीं रहती। या तो पीछे हट जाए या और किसी राह से जाए।

मँझले बाबू ने कहा—पूछा देखो भैरव, बरात कब तक खड़ी रहेगी?

भैरव बाबू गये। वे लोग भी लेकिन माननेवाले न थे। छेनीदत्त ठनठनिया का राजा था। मर गया तो क्या राज भी चला गया? बाल-बच्चे नहीं हैं उसके? नाती-पोते, सगे-सम्बन्धी, अपने-बिराने, दोस्त-अहबाब, नौकर-दरबान, मुसाहब, सभी हैं।

उधर छेनीदत्त के लड़के नाटूदत्त का भी पारा गरम हो गया। बाप के मरने का उसे कुछ कम ग़म था? इस ग़म को ग़लत करने के लिए तीसरे पहर से कितने गिलास खाली कर चुका था वह। बोला—कोई परवाह नहीं, पहले हम जायेंगे। बरात को वे पीछे हटा लें। पथरिया घट्टा जाने के बहुत-से रास्ते हैं।

ठन गई। दोनों अड़ गए। यह कहने लगा वह जाए, वह कहने लगा, वह।

मँझले बाबू अब आग बबूले हो गए। कम्बख्त छेनीदत्त मरकर भी परेशान कर रहा है! बोले—भैरव बाबू, बिरिजसिंह को बुलाइए तो।

आज बिरिजसिंह ने रेशमी मुरेठा बांधा था। सफ़ेद पैंट। बन्द गले का कोट। गोलियों की पेटी। हाथ में बन्दूक। मूंछ पर ताव देते हुए आकर खड़ा हो गया। सलाम ठोंककर बोला—हुजूर!

मँझले बाबू ने कहा—फ़ायर करो।

हां, फ़ायर करे। भैरव बाबू, मोती बाबू—सब मन-ही-मन खुश हो उठे। देखा जाए, कौन कितना बड़ा बाबू है!

बिरिजसिंह ने फ़ायर किया, लेकिन ऊपर को। गली कांप उठी।

फिर। फिर एक बार—

सिपाही दौड़कर मँझले बाबू के पास आये। इन्सपेक्टर साहब भी दौड़े।

—ह्वाट्स अप—क्या हुआ?

दारोगाजी ने मँझले बाबू से जानें क्या कानाफूसी की।

घबराकर शहनाई चुप हो गई। फानूस वाले छोकरों में भगदड़ मच गई। किवाड़-खिड़की से जो लोग झांक रहे थे उन्होंने झटपट सब बन्द कर लिया।

पता नहीं, दारोगाजी ने कौन-सा पुर्जा दबाया—लाश का जुलूस पीछे हट गया—एकबारगी गली के मोड़ पर एक किनारे जाकर खड़ा हुआ। नाटूदत्त दांत पीस रहा था खड़ा-खड़ा। उसे ओट किए दारोगाजी आगे खड़े थे। बरात आगे बढ़ चली। भूतनाथ अब तक चुप सब देख रहा था। एक इतना बड़ा मसला इस आसानी से हल हो गया। ताज्जुब! बड़े महल की यह जययात्रा उस रोज तो शायद निर्विघ्न अपनी मंजिल तक पहुँच सकी थी। लेकिन अखीर तक वह इतिहास के अदेखे इशारे को नाकाम क्यों न कर पाई? आखिर उस रोज़ भी तो बन्दूक चलाई जा सकती थी, दारोगाजी को घूस दिया जा सकता था। लेकिन बद्री बाबू को पता था—वहां इतिहास बड़ा निर्दयी है। दारोगा को रिश्वत देकर इतिहास की गति नहीं पलटी जा सकती।

एक दिन सन्दूक का ढक्कन हटाकर छोटी बहू ने कहा था—इसमे जो भी
ख रहे हो भूतनाथ, सब मेरा है—यह हीरे का कगना, मोती का चूड़, पन्ने का
ान और जड़ाऊ चूड़ियाँ—सब…सब…

भूतनाथ ने झुककर सन्दूक के अन्दर झांका—खाली पड़ा था। एक कतरा
ी न था। *खाली पेट सन्दूक अन्धकार में हा-हा कर रहा था। चूंकि छोटी बहू*
ापे मे न थी, इसलिए उस रोज कुछ कहने की हिम्मत न पड़ी भूतनाथ को।

छोटी बहू डगमगा रही थी। बार-बार कपड़ा खुल-खुल जाने पर। सर्वांग
गूर-जैसा ढल-ढल। छोटी बहू ने कहा—मैं यह सब-कुछ तुझे दे सकती हूँ, पर तू
झे क्या देगा, बता ?

भूतनाथ ने पूछा था—तुम्हें चाहिए क्या ? मैं तो गरीब हूँ।

—फ़िक्र क्या है, मैं तुझे मालामाल कर दूंगी। यह अट्टालिका, सारी
ायदाद—तू यहाँ आराम से रहेगा हाथ-पर-हाथ धरे बैठा। यह सब सुनकर
तनाथ को *कैसा तो डर-सा लगा था! आखिर यह सब कह क्या रही है छोटी*
ू! छोटे बाबू तो अभी जिन्दा हैं। डरते हुए वह बोला—मुझे कुछ नही चाहिए,
छ नहीं चाहता मैं।

नशे में छोटी बहू फ़ूटकर रो पडी थी। कहा था—तू बेईमान है भूतनाथ,
हुत बड़ा बेईमान है तू।

बगल ही के कमरे में छोटे बाबू बेहोश पड़े थे। बीमार। शायद छोटी बहू
ा रोना सुन लें। भूतनाथ ने छोटी बहू का मुँह हाथ से दबा दिया था। कहा था…

लेकिन इन बातो को अभी रहने दीजिए!

बरात उधर दरवाजे लग गई। सौ शख एक साथ बज उठे। नन्हे बाबू
ो गोद में उठाकर मड़वे पर ले जाया गया। बरातियों को पूजाघर की बड़ी जगह
 बिठाया गया। गुलाब-जल का छिड़काव हुआ। मँझले बाबू बीच मे जा बैठे।
हफ़िल चमक उठी।

नन्हे बाबू के श्वसुर व्यवसायी हैं। स्ट्रैण्ड रोड पर आटे की चक्की। लोहा
ालने का भी कारोबार। फिर भी बदन पर चुनदार मलमल का कीमती कुरता।
ामने आये। बोले—छोटे बाबू नही नजर आ रहे हैं ?

—तबीयत कुछ नासाज है। नही आ सके।

—ज्यादा खराब है तबीयत ?

—नही-नही, अक्सर ऐसा होता है। आने की बड़ी ख्वाहिश थी।

इधर-उधर की और भी दो-चार बातें हुईं।

—ये हैं मेरे बड़े दामाद—पटलडांगा के सरकार हैं।

—और ये…इन्हे तो देखा ही है।

—और ये···

चारों तरफ़ झाड़-फानूस। बिजली की बत्तियाँ लग चुकी हैं, लेकिन शोभा को खयाल से खींचे जाने वाले पंखे छोड़ दिये गए हैं। दीवारों पर चारों तरफ आदमकद आईने। दीवारों पर रंग-रंग की कारीगरी। फूल, बेल, पत्ते। भूतनाथ एक तरफ खोया-खोया देख रहा था। यहाँ उसका परिचय भी क्या! किस नाते वह यहाँ आया! कोई पूछ बैठे तो जवाब देना मुश्किल।

एकाएक बाहर शोरगुल हुआ और साथ-ही-साथ सुनाई पड़ी मोटर की आवाज़। कुछ लोग बाहर दौड़े। कोई सम्मानित अतिथि शायद आये। गाड़ी अहाते में आ लगी।

मोटर की आवाज़ से कुछ घोड़े भड़क उठे।

हाबुलदत्त दो पुश्त के रईस हैं। उनके पिता कुछ रोज़ पहले तक भी घुटने तक धोती पहनते थे। जब कार्नवालिस स्ट्रीट तैयार हो रही थी, तभी उन्हें लाटरी में बहुत रुपये हाथ लग गये थे। उन्हीं रुपयों से बड़ा बाज़ार लोहापट्टी में दूकान की थी। एक लुहार साथ था। अक्ल उसी की थी। उसके बाद वह लुहार कहाँ गया और कहाँ गया उसका हिस्सा! सारा मुनाफा दत्त का, किसी ठेके से काफी रुपया आने लगा। फिर आटे की कल ले आए। पूछिए नहीं जो हुई देखने वालों की भीड़। बों-बों करके चक्का घूमता और एक नल में से आटा बाहर निकलता रहता। जी चाहे चावल पीस लो, सत्तू पीस लो। उसके बाद पथरिया घट्टा का यह मकान। बड़े-बड़े घरों में लड़कियों की शादी हुई। लक्ष्मी के लाडले बनकर वे गुज़रे। सारी जायदाद नाबालिग लड़का हाबुलदत्त को मिली।

भूतनाथ ठगा-सा देख रहा था हाबुलदत्त को। नन्हे बाबू के ससुर। उठाने वाले बड़े आदमी। अपने-सगों की कमी नहीं। चटकल खोलने का इरादा हो रहा था। कोयले की खान खरीदने की सोच रहे थे। महज़ ज़मींदारी से अब चलता भी किसका है! रिआया को पीट-पीटकर कब तक आमदनी होगी! फिर ब्रह्म-समाजियों ने सबको पढ़ाना-लिखाना शुरू कर दिया है। औरतें तक पढ़ने लगीं। ऐसा दिन आएगा कि रिआया ज़मींदार को मानेगी ही नहीं। तब गाड़ी, घोड़ा और गुलछर्रा कैसे चलेगा!

हाबुलदत्त गप्प मारने में पक्के हैं। बैठ गए जमकर। लेकिन अचानक बाधा पड़ी। किसी ने आकर कहा—ननी बाबू आये हैं।

—ननी बाबू! कहाँ हैं?—हाबुलदत्त व्यस्त हो उठे।

उनके जाते ही भैरव बाबू ने कहा—जो कहिए सर, व्यवसाय करते-करते दत्त बाबू बिलकुल मारवाड़ी बन गए हैं। कोई रस नहीं रह गया है।

मँझले बाबू पान चबा रहे थे। बोले—दुरुस्त कह रहे हो। रुपये को खूब पहचाना है।

मोती बाबू बोले—मगर दत्त बाबू से आपका नाता भी क्या ! लड़की ले गए और छुट्टी। लड़का बेचने थोड़े ही आये हैं आप ?

भूतनाथ लेकिन अनमना हो गया। कौन ननी बाबू ! वही डॉक्टर साहब का लड़का ननीलाल ! उसी की ऐसी खातिरदारी ! कई लोग बाहर निकले। सबकी नजर बचाकर भूतनाथ बाहर गया। लोगों की भीड़। सामने की खुली जगह में घोड़ागाड़ी का जमाव। बीच में सिर्फ एक मोटर रोशनी में चमक रही थी। गोल-गोल चार पहिये। कुछ लोग उसी को अवाक् देख रहे थे।

चमक रही थी मोटर। चुन्नी को भी ऐसी ही गाड़ी ले दी थी छोटे बाबू ने। पड़ी है, पड़ी है। कल दबाया कि दौड़ पड़ी। पीछे से धुआँ निकलने लगा।

—कोई हाथ न लगाना गाड़ी को।

—ऐ, कौन जा रहा है गाड़ी के पास ?

चारों तरफ दौड़-धूप। लाल बनात के कपड़े पर से बराती गुजरे थे। गर्द से भर गया था। माला के टुकड़े बिखरे पड़े थे। फूल की महक। रसोई की गमक। गन्धों का उत्सव। बड़े महल के सारे लोग बटुर आए थे।

लोचन जा रहा था। भूतनाथ ने पुकारा—अरे लोचन, किधर चल दिए ?

लोचन रुक गया—अच्छा, साले साहब हैं ! मैं जरा इस फिराक में निकला हूँ कि देखूँ, तम्बाकू का यहाँ कैसा इन्तजाम है। परसों तो अपने यहाँ सब मुझी को करना पड़ेगा।

भूतनाथ बोला—घड़ी बाबू को देखा है कहीं ? आये हैं वे ?

—जी नहीं। वे नहीं आये। बहुतेरा कहा। बोले—मैं जाऊँगा तो घड़ी कौन मिलाएगा ? और यहाँ भी इन्तजाम वैसा नहीं है। माला, इत्र—सब-कुछ तो किया है, मगर असली चीज ही नदारद।

—असली चीज क्या ?

—गौर नहीं किया आपने, मँझले बाबू का मिजाज उखड़ रहा है।

—क्यों ? दिन-भर आज इतनी हुज्जत रही और ऊपर से रास्ते में छेनी-दत्तवाला मामला। इस पर उनका मिजाज ठीक भी कैसे रहे ! मगर मैं क्या करूँ, साथ में जो थी, भैरव बाबू, मोती बाबू, वग़ैरह चट कर गए। तब से सोच रहा हूँ, क्या बड़े आदमी हैं ये, जब वही नहीं।

भूतनाथ को अब खयाल आया। लोचन की लेकिन हर तरफ़ निगाह है। इतने में मँझले बाबू ने आवाज दी—लोचन !

—पुकार हुई। मैं चलूँ सरकार।—लोचन चला गया।

उधर नन्हे बाबू को बरामदे पर बिठाया था। मोटे-सोटे आदमी। थके-से दीख रहे थे। बन-ठनकर फब रहे थे खूब। रंगीन पख-लगी पगड़ी को अभी उतार दिया था। साटीन के चमकी चुने कुरते पर हीरे का लाकेट वाला हार खूब चम

रहा था। दोनों हाथों में धागा और कानों में मुक्ता के कान। सोने के कार्तिक-से दीख रहे थे। कान्तिधर, परेश—सब पास ही बैठे थे। लाल मखमल के तकिए पर रह-रहकर लेट पड़ते थे। लत तो उन्हें भी थी। बारह बजे का लग्न। कैसे रहेंगे उतनी रात तक !

भूतनाथ धीरे-धीरे बरामदे से रास्ते पर उतर पड़ा। लगा, कोई पहचानी-सी शकल उसी को देख रही है। उसने ग़ौर किया, वह आदमी आगे आया। अरे वृन्दावन ! चुन्नी का नौकर वृन्दावन।

वृन्दावन दांत निपोरकर हँसने लगा।

भूतनाथ ने पूछा—तुम यहां ?

वृन्दावन की अब वह सेहत नहीं थी। रात के अँधेरे में भी कुरते के भीतर से उसका कण्ठ दीख रहा था। पान से दांत काले। जली हुई बीड़ी को वृन्दावन ने फेंक दिया। कहा—आप ही के पास आया था।

—मेरे पास ?

—और भी हैरत में आ गया भूतनाथ।—मेरे पास किस लिए ?

वृन्दावन ने ज़रा आगा-पीछा किया। उसके बाद कहा—कुछ कहना था। ज़रा एकान्त में चलिए, कहता हूँ।

गली के मोड़ पर खड़ा हुआ भूतनाथ। जूठी पत्तलों का पहाड़ लगा था। कुत्तों की छीना-झपटी चल रही थी। नकली मोम के जलने की बू आ रही थी।

वृन्दावन बोला—यहां नहीं हुज़ूर, उधर चलिए। और एकान्त में।

भूतनाथ और भी एकान्त में गया। वहां पर कोई गड्ढा भरा जा रहा था। दिन में गाड़ियों से वहां कतवार फेंका जाता होगा। कतवार में आग लगाई गई थी। बदबू और धुआं भर गया था।

वृन्दावन ने कहा—मैं अभी आपके बड़े महल में गया था।

—क्यों ?

—आपसे काम था। वहां से फिर पैदल ही आना पड़ा यहां। पैर दुख रहा है। वंशी कहां है ?

—वह नहीं आया है।

—नहीं आया है तो अच्छा ही हुआ है। कम्बख्त बड़ा बदमाश है। उसे पता चले कि मैं आपसे बात कर रहा हूँ तो खोपड़ी खा जाएगा मेरी।

—वंशी से इतना नाराज़ क्यों हो तुम ?

—जी, वही तो सारी मुसीबतों की जड़ है। आप ही कहें छोटे बाबू को फ़ुसलाकर ले कौन गया ? आप उसे नहीं पहचानते। उसकी नीयत ही और है, नहीं तो छोटी बहूरानी को वह शराब की लत लगाता ?

—तुमसे किसने कहा यह सब ?

—सब खबर मिलती रहती है हुजूर ! नई माँ दिनों तक वहाँ रही है, सबको जानती है। उसी घर में कमाकर मधुसूदन धनी बन गया। बालेश्वर ने जायदाद खरीदी, इधर तो लोचन चिलम चढ़ाता है और उधर उसने ठेलों का ठेका ले रखा है। और यह विधु सरकार, उसे तो जानते होंगे आप ?

भूतनाथ ने गर्दन हिलाई।

—मैं कह रखता हूँ आपसे, एक दिन बाबुओं को पता चलेगा कि इस विधु सरकार ने कितना चौपट किया है। बाबुओं को समय कहाँ कि देखें और जानें कि कितनी जमीन में कितना अनाज होता है। सुखचर की ज़मीन में सोना फलता था, अब बीघे मे तीन मन भी नही होता है। रिआया से जो सलामी मिलती है, उसकी *आधी भी बाबुओं को नही मिलती।*

भूतनाथ ने पूछा—इतनी बातें तो तुम्हें जाननी नही चाहिए। कैसे जान लीं तुमने ?

वृन्दावन चुप रहा। ज़रा देर बाद बोला—जानते सभी हैं साले साहब, नही जानते हैं केवल बाबू लोग, बीबी लोग और आप। पारा भी दबा रहता है कहीं !

भूतनाथ ने कहा—और तुम्हारी नई माँ ?

—मेरी नई माँ को कह रहे हैं ?

—*हाँ-हाँ, चुन्नी दासी ! थी तो दाई की लड़की*—उसी ने छोटे बाबू का कौन-सा भला किया ? वैसी उनकी तन्दुरुस्ती, फिर उन्हें शराब पिलाकर, रुपए दुहकर कौन-सा उपकार कर रही है ?

—तो सुनिए, बताऊँ।—वृन्दावन ने एक बार चारों तरफ होशियार निगाहें दौड़ाईं। कहा—नई माँ का मैं कोई सगा लड़का नही, न कोई रिश्तेदार हूँ कि उसकी तरफदारी करूँ। लेकिन यह भी जान लीजिए, छोटे बाबू को दस-बीस तो नही, महज़ एक ही तो रखैल है। बिना रखैल के बाबुओं का चल भी नही सकता। फिर भी नई माँ से आप लोगों को इतनी चिढ़ क्यो ? गिन देखिए, मँझले बाबू के कितनी हैं ? फिर कबूतर पर, तो मुसाहबों पर कितना उड़ाते हैं ? नई माँ की उमर हो आई, अब अगर छोटे बाबू उसे छोड़ दें तो कहाँ हाथ फैलाएगी ? गाड़ी तक बेच देनी पड़ी। एक मन चावल का ही तो दाम तीन रुपया है, दस आने सेर घी, पाँच आने सेर सरसों का तेल, इतने-इतने लोग हम खानेवाले···

भूतनाथ को गुस्सा-सा आया। बोला—लेकिन शराब, सोडा और बर्फ के पैसे तो जुट ही जाते हैं !

वृन्दावन बोला—जुटता है कि नही, इस पाप-मुँह से मैं बताना भी नही चाहता।

भूतनाथ ने कहा—छोटी बहू उनकी ब्याहता हैं, नई माँ यह नहीं सोचती।

उनके दिन, उनकी रातें कैसे काटती हैं—कोई बच्चा है नहीं, पति है भी, तो नहीं के बराबर। औरत होकर एक औरत की इतनी बड़ी तकलीफ़ को नहीं समझ सकती। एक बार अपनी माँ-बहन की बात सोच देखो तो।

वृन्दावन सहमा गम्भीर हो उठा। ज़रा देर उसके मुँह से बात ही न निकल सकी। उसके बाद बोला—इतनी बड़ी बात कह दी आपने ?

वह रुआँसा-सा हो उठा। दोनों आँखें छलछला आईं। अँधेरे में भी भूतनाथ साफ देख सका कि वृन्दावन को खासी चोट लगी है। अचानक जैसे बम फट पड़ा। वृन्दावन बोला—जानते हैं आप, चून्नी मेरी कौन होती है ?

—कौन ?

दूसरे ही क्षण अपने को सँभालकर वृन्दावन ने कहा—न, रहने दीजिए, बल्कि वही कहूँ, जो मैं कहने आया था।

भूतनाथ ने पूछा—चुन्नी तो रूपा दासी की बेटी है, रूपा दासी तुम्हारी कौन है ?

वृन्दावन ने सिर हिलाया—न, न, न—

—क्यों, क्या हर्ज है कहने में ?

—जी नहीं, जो बात मेरे और चुन्नी के सिवाय कोई नहीं जानता, उसे मैं न बताऊँगा। पेट के लिए सब-कुछ करना पड़ता है हुजूर, मगर हया-शर्म हमें भी है। लोग मुझे चुन्नी दासी का नौकर जानते हैं, वही समझें। गाँव में दोनों जून पेट-भर भोजन नसीब नहीं होता, फिर वहाँ समाज है, पंचायत है। यह सब जानें-सुनें तो जात से निकाल बाहर करें लोग।

भूतनाथ कुछ समय चुप रहा। उसके बाद पूछा—मुझे करना क्या है, सो बताओ ?

—आप सब-कुछ कर सकते हैं हुजूर !

—मैं ?—उसे यह व्यंग्य-सा लगा।

वृन्दावन ने कहा—मैं वंशी के पास गया था। वह मुझे मारने दौड़ा। मधुसूदन से मालूम हुआ, वंशी ने छोटी माँ को शराब की आदत लगा दी है। उस रोज शायद सात घण्टे बेहोश पड़ी थीं। डॉक्टर को बुलाना पड़ा। शराबवाली अलमारी की कुञ्जी तो उसी के जिम्मे रहती है। बाद में गाँव लौटकर दोनों भाई-बहन चैन की वंशी बजाएँगे।

भूतनाथ ने बात काटी—झूठी बात है।

वृन्दावन ने जैसे सुना ही नहीं। कहने लगा—सबने किया है, वंशी ही क्यों न करेगा ? अब नौकरी छूट भी जाए, तो किसी को परवाह नहीं पड़ी है। काफ़ी बना लिया। मुझी से कुछ न बना।

—क्यों न बना ?

—जी, मुझसे भी न बना, आपसे भी न बना, गो कि छोटी बहू से आपकी खूब पटती है। उनके सन्दूक में जो गहने पड़े हैं, एक-एक कर वही बेचना शुरू करें, तो खत्म होने में जिन्दगी निकल जाएगी। नशे में जाने कहाँ पड़ी रहेगी कुञ्जी ! आप न लें सही, मगर वशी लेगा, उसकी बहन चिन्ता लेगी।

रात काफी हो गई थी। शहनाई पर कानड़ा का बड़ा ही करुण अलाप चल रहा था। उस मूर्च्छना में जवा, छोटी बहू, चुन्नी दासी के सिवाय राधा, अन्ना सबके गोपन अन्तरतम की कामना भूतनाथ के मन में मूर्त हो उठी। कलकत्ते के इस निर्जन सड़ाँध-भरे गढ़े के पास खड़े-खड़े उसे लगा कि वह उन सबका हाथ पकड़े बढ़ रहा [illegible], पर हकीकत में सब एक ही [illegible], किसी ने स्नेह और किसी ने व्यंग दिया है। लेकिन कानड़ा की करुण मूर्च्छना में आज सहसा सब एकाकार हो गई। जिसने नफरत की, हिकारत की—उससे और प्रेम करनेवाली से कोई फर्क न रहा। सब एक, हो सकता है, वह अँधेरे का धोखा हो या कानड़ा की भूल हो या यही चिरकाल का चरमतम सत्य हो।

आपे में आकर भूतनाथ ने कहा—तो मैं चलूँ। देर हो रही है।

वृन्दावन ने कहा—तो वही ते रहा ?

—क्या तय रहा ?

वृन्दावन ने कहा—जी, नई माँ ने सबसे यह सुना है कि छोटी बहू, से आपकी गाढ़ी है; आपको जूता, कपड़ा-लत्ता सब दिया है। मुहब्बत की निगाह से देखती हैं। विधु सरकार ने तो आपको वहाँ से हटाना ही चाहा था। खूराकी के खाने से आपका नाम तक काट दिया था। आखिर उन्हीं के कहे रखना पड़ा। सो, नई माँ ने आपको एक बार बुलाया है।

—क्यों, मैं उनके लिए क्या कर सकूँगा ?

—सो मैं क्या जानूँ ! मगर मिल लेने से क्या बिगड़ता है ?

भूतनाथ ने ज़रा देर कुछ सोचा। फिर बोला—लेकिन जैसा रवैया है, लगता है, ज्यादा दिनों तक मैं वहाँ रह नहीं सकूँगा।

—लेकिन छोटी माँ आपको छोड़ नहीं सकती।

भूतनाथ को नाराजगी हुई। बोला—क्यों नहीं छोड़ेगी ? होती कौन हैं वह हमारी ? मैं चला जाऊँ तो कौन रोक सकता है ?

—रोक सकती हैं, छोटी माँ रोक सकती है। मुझे मधुसूदन ने सब-कुछ बताया है। जभी तो इतने लोगों के होते, इतनी रात को मैं आप ही के पास आया हूँ।

भूतनाथ ने कहा—अच्छा, अब जाओ।

—तो आप आ रहे हैं ?

—वादा नहीं कर सकता—सोचूँगा।

—कल जरूर आइए।

जवाब न देकर ही भूतनाथ दनदनाता हुआ चला गया।

इतिहास की एक बँधी-बँधाई लीक है। जॉब चार्नक से लार्ड क्लाइव। लार्ड क्लाइव से वारेन हेस्टिंग्स। वारेन हेस्टिंग्स से लार्ड डलहौजी। इसके बाद लार्ड डलहौजी से लार्ड कर्जन। यह लीक बँधी-बँधाई तो है, पर सत्य नहीं। सहज और सच्ची राह बहुत पहले ही गुम हो चुकी थी। उसके बाद आये स्वामीजी—स्वामी विवेकानन्द अट्ठारह सौ तैंतीस से उन्नीस सौ दो; लेकिन बहुत दूर पड़ता। ठीक से जानी नहीं जा सकती थी यह लीक। जहाँ-तहाँ जंगल-झाड़ियाँ और मरु-भूमि। राह ढूंढ़ निकालने का आग्रह तो शायद था, धीरज नहीं था। विवेकानन्द की याद मिट गई थी। बड़े घर के बाबू लोग बेखबर सोए। छोटी बहू मोहिनी-सिन्दूर के मोह में पड़ी। नन्हे बाबू नई बीवी के पीछे पागल। ब्रजराखाल का कहीं पता नहीं। बेपनाह भूतनाथ मायावी कलकत्ते के भ्रमजाल में बेतरह परेशान। निवारण की जमात बिखर-सी गई थी। राह दिखाती चल रही थी अकेली सिस्टर निवेदिता।

लेकिन सहज रास्ता लार्ड कर्जन ने दिखा दिया। सिनेट हॉल में खड़े होकर अपने दीक्षान्त भाषण में कहा—तुम भारतवासी झुके हो, सत्य यानी Truth को जानने के लिए तुम्हें हमारे पास—यूरोप के पास—जाना होगा।

उस रोज भूतनाथ जवा के यहाँ से लौट रहा था। सिनेट हॉल के सामने निवारण से भेंट हो गई। निवारण, कदम भाई, शिवनाथ कुमुद—सभी थे।

कदम भाई ने कहा—अच्छा ही हुआ। लार्ड कर्जन ने हम लोगों की बहुत बड़ी भलाई की। अब हम अपने को पहचान सकेंगे।

निवारण की आँखों से शोले भभकने लगे थे। बोला—इतने बड़े झूठ को हम लोग चुपचाप सह लेंगे कदम भाई!

कदम भाई बोले—अरे बेवकूफ, अच्छा ही तो हुआ। स्वामीजी कही चुके थे, तुम्हारा देवता आज बलिदान माँगता है। और भी कहा था कि आज तुम्हारे सामने तैंतीस करोड़ नहीं, एक है। वह है तुम्हारी जन्मभूमि। कर्जन साहब याद न दिलाते तो हम भूल ही बैठे थे।

भूतनाथ पर नजर पड़ते ही निवारण बोल उठा—अरे भूतनाथ बड़े भैया आ गए हैं, पता है आपको?

—नहीं तो, अभी नहीं आये।

कदम भाई ने कहा—एक ही दो रोज में आ जाएंगे। कल चिट्ठी मिली है। अच्छा निवारण, कर्जन वाली किताब—Problems of the Far East चाहिए—सर गुरुदास ने माँगी है। मिस्टर निवेदिता से उन्हे पता चला है, उसमें

झूठों का अम्बार है। कोरिया मे लोगों की धारणा थी, चालीस के हुए बिना आदमी को अक्ल नही आती। कर्जन कोरिया के मन्त्री थे, तब उनकी उम्र तैंतीस की थी। किन्तु पूछने पर उन्होंने चालीस बताया था।

कुमुद ने कहा—'हितवादी' मे यह छपा नहीं दिया जा सकता।

कदम भाई बोले—छपाने से इसकी कोई दवा न होगी। हमें चोट ही खाने की जरूरत थी। हमे अब तैयार होना है। आनन्द-मठ के सन्यासियों-जैसी हमे शक्ति की दीक्षा लेनी होगी—वन्दे मातरम्।

बाद मे अवश्य 'अमृत बाजार पत्रिका' ने कर्जन की इस भूल की पोल खोली थी।

रात हो रही थी। भूतनाथ घर की ओर चल पड़ा। जाते-जाते जी मे आया, इस तरह बैठे-बिठाये कब तक काम चलेगा। कोई-न-कोई नौकरी मिल जाती तो अच्छा था। मगर किससे कहे?

बनमाली सरकार गली मे जाते ही लगा, मकान के सामने भीड़ है। कैसी भीड़!

भूतनाथ को डर लगा। कही उसी दिन-जैसा तो कोई मामला नही! लेकिन पास जाने पर आशंका जाती रही। असल मे दक्खिनवाला पोखरा साफ हो रहा था। हफ्ता लेने के लिए मजूर खड़े थे। माथे पर अगोछा बाँधे। नाहक देर करने मे विधु सरकार को आनन्द आता। कैसा अहैतुक आनन्द।

उसी रोजवाला हाल होता ता हो गया था। ओह! घर से तब भी नन्हे बाबू के ब्याह की गन्ध न गई थी। घर के बाहर, जूठी पत्तलों, मिट्टी के गिलास-कसोरों, जूठन का ढेर लगा था। कुत्ते, मक्खी और बिल्लियों की भीड़।

भूतनाथ पास पहुँचा तो अजीब एक नजारा!

—हट जाइए बाबू, हट जाइए।

—ऊपर-ऊपर नाम-जाप, भीतर-भीतर महापाप!

—दो-एक बड़े-बूढ़ों ने उझककर झाँका और नाक पर कपड़ा दबाए छि-छि कर उठे।

देखकर भूतनाथ भी सिहर उठा।

—किस घर से फेंका है!

—और किस घर से—कहकर एक ने अर्थपूर्ण हँसी हँसकर बड़े महल की तरफ इशारा किया।

मगर यहाँ से कौन फेंकेगा? कौन ऐसा पापी है!

—हिल रहा है बच्चा?

—नही भई, कब का मृत हो चुका। देखते नही, सफेद हो गया है। लहू का सादा पड़ा पिण्ड ही कहिए। मास का लोथड़ा। शक्ल भी नहीं

बन पाई पूरी।

—बच्चा है या बच्ची ?

—पट्ट तो पड़ा है, यह कैसे जान पड़े ! छुए भी कौन !

भीड़ तो उतावली थी। उस कम्बख्त औरत को खींचकर बाहर निकाले। अभी दारोगा गया तो है अन्दर। जिसकी करतूत है, उसे देखे बिना जैसे चैन नहीं पड़ रहा था। कैसी शक्ल है उसकी ! काली है कि गोरी ? उम्र क्या है ? विधवा है कि सधवा ? दासी है कि घर की बहू ?

भूतनाथ आगे बढ़ा। बिरिजसिंह ने गेट खोल दिया। पूछा—माजरा क्या है बिरिजसिंह ?

हाथ में बन्दूक लिये परम वैष्णव की तरह बिरिजसिंह ने कहा—सब बजरंगबली की किरपा है हुजूर ! महावीरजी ने दिया, महावीरजी ने लिया।

अन्दर कोई हलचल नहीं। दारोगाजी बैठकर विधु सरकार से बातें कर रहे थे। विधु सरकार कह रहा था—मँझले बाबू को तो अभी फुरसत न होगी।

साहब ने कहा—खबर कर दो।

—तीन-तीन बार तो बुलवा भेजा, अपना काम पूरा किए बिना वे उतरने के नहीं।

—क्या कर रहे हैं ?

—कबूतर उड़ा रहे हैं। कहीं बिगड़ उठें तो दिन-भर फिर किसी की खैर नहीं। वहाँ से आने के बाद हिसाब-पत्तर देखते हैं। यह सरकारी डाकखाना नहीं है हुजूर, यहाँ का तौर-तरीका और है।

अंग्रेज दारोगा साहब यह सुनकर खुश तो नहीं हुए। उन्होंने ज़मीन पर छड़ी को कई बार ठोंका।

बेनी ने कहा—कबूतर उड़ाना सबको तो आता नहीं। चक्कर मारकर कबूतर ऊपर उड़ते रहेंगे और उसी की ताल पर घूमता रहेगा मँझले बाबू का हाथ—बीच-बीच में बजाते रहेंगे चुटकी।

—चुटकी ! चुटकी क्यों ?

—चुटकी बजाई नहीं कि मैंने अपने हाथ के कबूतर को उड़ाया। वह भी जाकर पूरी जमात में जा मिला। बड़ा मजा आता है। नशा-सा हो जाता है, फिर किसी को कुछ खयाल नहीं रहता।

—कब तक चलता है ऐसा ?

—बस यों समझिए कि धूप में कबूतर थकते हैं—बड़े सुखी जीव होते हैं न ! एक-एक कर जब सब कबूतर मैं उड़ा देता हूँ तो मँझले बाबू का खेल शुरू होता है। बस चला सो चला। इसी बीच लोचन दो बार चिलम भरकर दे जाएगा। रखी-रखी ही चिलम ठंडी। मँझले बाबू के भैरव बाबू को इशारा करते ही, वे मुँह

में दो उँगली भरकर ऐसी सीटी बजाएँगे कि उड़ते-उड़ते सारे कबूतर रेल की लाइन-सी दो सीधी कतार में हो जाएँगे। नये ढंग की फिर सीटी बजेगी कि माला की तरह गोलाकार। सीटी बजाने में हमारे भैरव बाबू एक ही हैं। वरानगर के बगीचे में एक बार खूब सीटी बजाई थी—कहूँ क्या आप से!

—क्यों, ऐसा क्या!

—एक रोज आपको ले चलूँगा उस बगीचे में। ऐसी घनी झाड़ियाँ हैं कि आड़ में छिप जाइए, तो ढूंढ न पाए कोई। वहीं ये बाबू लोग लुकाछिपी खेला करते हैं।

—किसके साथ खेलते हैं?

मँझले बाबू कभी-कभी यहाँ से औरतें ले जाया करते हैं। उनकी आँखों में पट्टी बाँधकर बगीचे में छोड़ देते हैं। बाबू लोग झाड़ियों की ओट में कूँ-कूँ करते हैं। मजे का खेल है। कभी-कभी छिपकर दरवाजे की फाँक से हमने देखा है।

—छिपकर क्यों, देखने की मुमानियत रहती है?

—जी साला बाबू, देखने में खुद ही जो शरम आती…

बिलकुल नंग-धड़ंग। एक बार चीरहरण का खेल किया था मँझले बाबू ने।

—चीरहरण! श्रीकृष्ण का चीरहरण?

—जी हाँ, बड़े महल की दीवार पर तस्वीर टँगी है न, हूबहू वैसा ही मँझले बाबू कृष्ण बने थे।

जवानी में ऐसे बहुत-से शौक थे मँझले बाबू के—चीरहरण, कालिय-दमन, नौकाविलास, मानभंजन। अब न वह दिन रहा, न वे बातें रहीं। इस लोचन को उस समय साँस लेने की भी फुरसत न मिलती थी। दिन-भर नाचघर में अड्डा जमा ही रहता। रात-दिन एक-सा गुलजार। दूर-दूर से तवायफें आतीं—नन्हीं बाई—जुहरा बाई—जानें क्या-क्या नाम!

धोती में चुन देते-देते बेनी निराश-सा बोला—कपड़े का तब कोई हिसाब रहता था साले साहब। हमीं लोग कितने कपड़े इसको-उसको दे देते थे। कितने कपड़े तो छिपाकर ले जाते थे भैरव बाबू। और उस रोज आकर मोती बाबू ने कहा, क्यों रे बेनी, सारे कपड़े तो फट गए, नहीं मिलने से अब इज्जत नहीं बचती। मैंने बताया—अब वह दिन नहीं रहा हुजूर! गिनकर मिलते हैं कपड़े। एक भी कम हो तो विधु सरकार खोपड़ी खा जाएँ। फट जाए, तो फटा कपड़ा पेश करना पड़ता है सबूत के लिए—इतनी कड़ाई हो गई है।

—आखिर ऐसा हाल क्यों हुआ बेनी?

कपड़े का एक छोर पाँव के अँगूठे से दबाए दूसरे छोर को चुनियाते हुए बेनी ने कहा—कह नहीं सकता कि ऐसा क्यों हुआ साले साहब! नन्हे बाबू की

अभी शादी हुई न। पहले मैंने देखी है, मिठाइयों की रेलमपेल। कौए, चिड़ियां खाकर अघा जाते थे और यह शादी शुक्रवार को हुई—सोमवार को कहीं कुछ नहीं। हर बार एक धोती एक अँगोछा मिलता था। इस बार अँगोछे की शकल भी न दिखाई पड़ी।

सचमुच भूतनाथ को भी आश्चर्य लग रहा था। इन्हीं कई वर्षों में कितना क्या बदल गया ! कब से एक मोटर लाने की बात चल रही है, शील, सेठ—सबने गाड़ी ली। मरते-मरते भी छेनीदत्त मोटर ले गया। यहाँ न आई।

एक दिन एक गाड़ी आई थी।

भोजन करके उठा ही था भूतनाथ कि भों-भों की आवाज आई आँगन से।

वंशी दौड़ा—मँझले बाबू की मोटर आई है।

भूतनाथ भी गया। चक-चक गाड़ी। सब-कुछ लोहे का। सिर्फ़ उसकी छत कपड़े की। रबर के चार पहिए। बेलून-जैसी फूली-फूली कोई चीज थी—दबाते ही भों-भों आवाज होती। सभी देखने के लिए दौड़े आये।

अपनी छत पर इब्राहिम बाल में कंघी कर रहा था। उसकी भी नजर पड़ी। आँखें जल उठीं। वंशी ने कहा—देखिए, इब्राहिम के बदन में आग लग गई।

—क्यों, उसे क्यों गुस्सा आया ?

—मोटर आ गई, अब उसकी घोड़ागाड़ी को कौन पूछेगा ?

जो जहाँ थे, वहाँ से गाड़ी देखने के लिए आ धमके। अन्त में आये मँझले बाबू।

उनके आते ही साहब गाड़ी पर से उतरा। दोनों में बातें हुईं।

चारों तरफ से गाड़ी को देखा-दिखाया।

मँझले बाबू ने कहा—वेरी गुड। और क्या-क्या कहा, समझ में न आया। मँझले बाबू साहब को नाचघर में ले गये।

हवागाड़ी को देखकर जी भर नहीं रहा था। गाड़ी तो शहर में बहुतों की थीं। मगर इसकी तुलना नहीं। मँझले बाबू ने कहा था—मेरी गाड़ी सबसे अच्छी होनी चाहिए। सो गाड़ी तो गाड़ी ही आई।

श्यामसुन्दर अब तक ठगा-सा देख रहा था। अब बोला—इसे चलाएगा कौन ?

किसने तो बगल से कहा—क्यों, इब्राहिम।

किसने कहा—ऐसा बेवकूफ़ कौन है ! जिसने कहा था, उसने मुंह छिपा लिया। ऐसी बेवकूफ़ी की बात कह ही कौन सकता है ! छत पर उस समय भी इब्राहिम बाल संवार रहा था। शायद उसने यह सुना।

—इब्राहिम मियां, सुना तुमने, क्या कहा ?

इब्राहिम के कान और भी लाल हो उठे। यासीन उसके बालों में क्यारिय

बना रहा था।

इब्राहिम मुंह फिराकर आईना देखने लगा। मुंह से उसके निकला—बेवकूफ !

बेवकूफ-जैसी ही बात ! यह दुनिया ही बेवकूफों से भरी है, कम-से-कम इब्राहिम का यही खयाल है। इसका चाचा जोधपुर के राजा का घुड़सवार था। तगड़ा डीलडौल। राजा को पोलो का शौक था। इसका चाचा ही दो सौ घोड़ो की निगरानी करता। एक बार यह महाराजा की पार्टी मे अपने चाचा के साथ कलकत्ते आया। मँझले बाबू ने उसी समय वेलर का जोडा खरीदा था। इब्राहिम को काम मिल गया। तब से मज़े मे चल रहा था। मँझले बाबू की काफ़ी खिदमत की। लेकिन अब।

मोटर की घर्र-घर्र शुरू होती कि इब्राहिम कमरे से चुपचाप बाहर निकलता। छिपकर छत से देखता। उसकी आँखें देखते-देखते कठोर हो उठती। इतनी कठोर, जितनी कि शिकार को देखकर जगली जानवर की आँखे भी न हो सकती। मुंह से अस्फुट-से कुछ शब्द निकलते। शायद उस निर्जीव गाड़ी को गाली देता।

लेकिन इब्राहिम की गाली बीसवी सदी को ज़रा भी न डिगा सकी। चाँदपाल घाट में जहाज़ से लद-लदकर आने लगी हवागाडियाँ। मैंचेस्टर से रैली ब्रादर्स का कपड़ा आने लगा। ग्रामोफोन, कचकडे के खिलौने, स्टीम इजन, छोटे-बड़े कल-पुर्जे आने लगे। विलायती महावर, साबुन, एसेंस, खुशबू-तेल, रेशमी फीते, माथे के काँटे, सब आने लगे। रग-रग की बोतलो मे आने लगी शराब।

लेकिन ननीलाल की मोटर देखकर हैरान रह जाना पडा। लम्बी गाड़ी, वैसी ही चकाचक और वैसी ही उसकी आवाज़। रबर के बेलून को दबाने से मजेदार आवाज़ होती। उस आवाज़ से घोडे नही भडकते। गाडी के पास खड़े होने से कैसी तो खुशबू आती ! भूतनाथ को दुविधा होती, यह खुशबू गाडी के तेल की है कि ननीलाल के कपड़ों की या सिगरेट की ? फिर भी नई-सी लगती वह बू।

नन्हे बाबू के ब्याह मे उस रोज़ ननीलाल से भेंट हुई थी। नही के ही बराबर। उसे खिलाने के लिए लोग खुशामद कर रहे थे। खुद हाबुलदत्त कह रहे थे—यह क्या, आपने तो मुंह भी जूठा नही किया ?

ननीलाल ने कहा—अभी-अभी बरानगर से खाकर आया हूं, गोलू-टोला में और एक जगह न्यौता आया है। आखिर शरीर ही तो है।

किसी ने कहा—आपके चरणों की धूल पड गई, पथरिया घट्टा इसी से कृतार्थ है।

ननीलाल चुप रहा।

—नई मिल कब से चालू कर रहे हैं ? उस बार तो सारे शेयर बाज़ार से

छूमन्तर हो गए। इस बार ज़रा ख़याल रखेंगे।

ननीलाल ने सिगरेट का कश खींचा। गाड़ी के पायदान पर पाँव टिक खड़ा हुआ। उसकी अँग्रेजी पोशाक को भूतनाथ ने दूर से देखा। नन्हे बाबू से कीमती थी शायद, ज्यादा चटकदार। गाड़ी के अन्दर दो जने और बैठे थे। गोरे। अंग्रेज़ थे शायद।

जली सिगरेट फेंककर ननीलाल बोला—तो मैं चलूं?

हाबुलदत्त हाथ जोड़कर आगे बढ़ आए। कहा—उस नई बिल्डिं ठेके का···

—फ़िक्र न करें, मैं हूँ।

हाबुलदत्त ने कहा—आपने तो पानी तक न पिया···डर लग रहा है।

—सब होगा। आपका दामाद मेरा दोस्त है। हम दोनों सहपाठी हैं। अब तो अपने-से हो गए। आइन्दा ना न कह सकूंगा—और विलायती ढंग से हँसकर ननीलाल गाड़ी पर बैठ गया।

वही आखिरी मुलाकात। उस दिन जी में तो आया था कि आगे बढ़कर दो बातें कर ले। मगर मुमकिन न हुआ। ख़ुशबू उड़ाती हुई जब उसकी गाड़ी निकल गई, तो भूतनाथ के सामने ननीलाल का पिछला सारा इतिहास तिर आया। वही ननीलाल। गंज बाज़ार के डॉक्टर का लड़का। जाने उस पर भूतनाथ को क्या मोह था! उसके जीवन की पहली चिट्ठी ननीलाल की ही लिखी थी। उसके बाद जिस दिन स्वामीजी कलकत्ते आये उस दिन भेंट। उसके बाद नन्हे बाबू की ज़बानी सुनी मोतिया बीबी की कहानी। 'जख्मी दिल को न मेरे दुखाया करो' वाला गीत। शिव ठाकुर गली की बिन्दी की बात। कालेज के दरवाजे पर God is Good की जगह God is money लिखना। और आज का ननीलाल!

नन्हे बाबू ने बताया था, पांच हज़ार रुपये उनसे कर्ज ले गया था, और उसी ने उन्हें ऐसी लतें लगाईं। और नन्हे बाबू ने यह भी कहा—मगर मेमें भी उसकी कदर करती हैं। उस रोज़ एक बैंक भी खोला है। जूट की तीन-तीन मिलें हैं। कोयले की छः खानों के हिस्से खरीदे हैं। रात को दिन बना छोड़ा। जवान है बहादुर। उसके बाद जरदार श्वसुर और खूबसूरत बीबी। गोकि ऐसी भी नौबत आई थी कि अंग्रेज दर्जी के यहां कपड़े सिलने दिये थे—देने को पैसे पास न थे। फिर मैंने ही रुपये दिये।

नन्हे बाबू के ब्याह की दावत के समय फिर एक बार उससे मिलने का मौका मिल गया। पीछे से उसने आवाज़ दी—ननी!

सेठ, शील, लाहा, मल्लिक—सभी अपनी-अपनी गाड़ी पर आये थे। इत्र, गुलाबजल, माला, सिगरेट-तम्बाकू की पूछिए न। लखनऊ के उस्ताद रहमतुल्लाह और तीन दिनों तक टोड़ी, भैरों, दरबारी कानड़ा बजाते रहे, जिससे बड़े घर के

ऐश्वर्य और संस्कृति के आडम्बर में आंच न आए।

सुखचर के नायब ने इस बार सलामी की मोटी रकम भिजवाई थी। मँझले बाबू की चिट्ठी लेकर खुद विधु सरकार गये थे। बड़े बाबू के श्राद्ध के समय रिआया ने धोखा दिया था। सन् अट्ठारह सौ तैंतीस के आंधी-तूफान में जो तबाही हुई थी, उसमें दो साल का लगान माफ़ कर दिया गया था। सन् छिहत्तर के अकाल मे रिआया जमींदार के घर से धान ले गई। पुराने रेकार्ड मे सब दर्ज है। सो इस बार घर-पीछे एक-एक बेगार और आदमी-पीछे आठ आना नजराना देना ही पड़ेगा। विधु सरकार ने धमकी दी—नही तो अगले साल की बन्दोवस्ती मे देखा जाएगा।

विधु सरकार के साथ मधुसूदन गया था। वसूली जैसे-तैसे आदमी से तो होती नहीं। रिआया की जात होती ही बड़ी बदमाश। लाख हो, कचहरी में आकर रोना उनकी आदत है। ऐसे-ऐसे भी पाजी हैं, जो प्यादे से बात भी नही करते। कहते—अपनी राह लगो, खाना नसीब नही होता और जमींदार के बेटे के ब्याह का नजराना चाहिए।

लौटकर विधु सरकार ने बताया—सुखचर अब वह सुखचर नही रहा हुजूर! उस बार आपकी नीद हराम न हो, इसलिए रात-भर लोग पोखरों में मेढक भगाते रहे थे, याद है न? और उस बार जब होली के समय राजा बहादुर गये थे, तो मालोपाड़ा के सरदार ने हुजूर का पाँव धुलाया था। लेकिन आज क्या कहते हैं, पता है? कहते हैं, जमीदार पिता-तुल्य है। दुःख-दुर्दिन मे खयाल न रखें तो जमीदार क्या? बाप भी ऐसा हो तो लड़के उसे नही खिलाते।

मँझले बाबू को ये बातें अच्छी न लगी थी। अगर नन्हे बाबू की शादी न होती, तो यह घटना और ही रूप लेती।

बात नन्हे बाबू के कानों तक भी पहुँची। न्योते मे एक धोती, एक सौ अट्ठाईस गण्डा सुपारी और एक थाल मिठाई भेजने का रिवाज था। सदा से यही होता आया था। पण्डित-पुरोहित का कितना, दान मे कितना—सबका रेकार्ड था। लेकिन इस बार कुछ त्रुटि हुई। आठ सौ तिरानवें घर में न्योते के समान तो हिसाब से उतने ही गये, लेकिन मिठाई में चीनी ज्यादा, धोती कुछ दब, सुपारियो मे कुछ दागी सुपारियाँ।

जो भी हो, आये लेकिन सभी। बाहरी टीमटाम मे कोई कमी नही। रहमतुल्ला ने न केवल बहू बाजार, वल्कि सारे कलकत्ते को गुंजा दिया। सब पर खाते-सोते जैसे नशा सवार हो गया। मँझले बाबू मालोपाड़ा के सरदार के अपमान को भूल गए और नन्हे बाबू भूल गए समारोह की खामियाँ। सांझ को बड़ा महल गुलजार हो गया।

भूतनाथ ने फिर आवाज़ दी—ननी!

ननीलाल जाने को था। बहू को देख चुका था। हजार-बारह सौ का ए खिलौना भी उसने भेंट किया। खास पेरिस के उसके किसी मवक्किल ने भेजा थ

वह गाड़ी पर सवार हो रहा था कि भूतनाथ ने आवाज़ दी।

—अरे, भूतनाथ! क्या खबर है, आ। हाथ पकड़कर उसे अपनी गा पर बिठा लिया।—कहां है इन दिनों ?

—यहीं, इन्हीं के यहां।

—क्या कर रहा है ?

—कुछ नहीं।

गाड़ी बनमाली सरकार लेन में चलने लगी। ज़िन्दगी में मोटर पर यही पहली बार चढ़ा। किस आसानी से निकल आई इतनी दूर गाड़ी! वह आराम से बैठ गया।

ननीलाल ने ही पहले बात की—नन्हे बाबू की बीवी कैसी लगी ?

—बहुत अच्छी। ये लोग रूप ही देखकर तो ब्याह करते हैं।

—लेकिन बहुत छोटी है। दस साल से ज्यादा उम्र न होगी। नन्हे क्या करेगा यह बहू लेकर ?

भूतनाथ ने कहा—इस घर का यही रिवाज है।—फिर कुछ देर चुपचाप रहकर बोला—और कहां तक चलूं, यहीं उतर पड़ूं!

—क्यों, मेरे यहां चल—पटलडांगा।

—इतनी रात को मैं लौटूंगा कैसे ?

—उसकी फ़िक्र तू न कर। मेरा घर तो देख ले। खैर, करता क्या है ?

—कहा तो, कुछ नहीं करता।

—नौकरी करेगा ?

—नौकरी देगा कौन ?

—मैं दूंगा। अपने बैंक में इतना-इतना आदमी रख रहा हूं।

—मैं कर सकूंगा ?

—काम कुछ कठिन तो नहीं। रुपये वाले बैंक में रुपया रखेंगे, सूद मिलेगा और अगर तू किन्हीं का रुपया लाएगा, तो उसका अलग से कमीशन मिलेगा। पैसेवाला कोई तेरी जान-पहचान का हो, तो मेरे बैंक में रखे, सूद मिलेगा, रुपये भी हिफ़ाजत से रहेंगे और जी चाहे जब निकाल लेगा।

ननीलाल ने और भी बहुत तरह की बातें बताईं। सुनकर वह तो हैरान। बताया, रुपया तो धरती में बिखरा पड़ा है। बटोर लेने की अकल होनी चाहिए। ननी करोड़ों का ख्वाब देखा करता है। बोला—दुनिया में रुपया नहीं तो कुछ नहीं। सो रुपया ही मेरा ध्यान है। जीवन में जिन वस्तुओं की कामना होती है, यानी इज्जत, नाम, तन्दुरुस्ती, खूबसूरती, भोग, स्त्री, परिवार, मान-प्रतिष्ठा—

सबकी जड़ रुपया है। आज मेरे पास रुपया है, तो सब मेरी कद्र करते हैं। ऐसा कोई भी खोटा काम नहीं, जो मैंने नही किया, मगर मैं उसमे गर्क नही हो गया। शराब पी है, आज भी पीता हूँ। बड़ों की दोस्ती गाँठी है। अड्डा भी जमाया है। कर्ज करके भी दोनों हाथो रुपये उडाए हैं। मगर किसलिए ? इसीलिए कि और रुपये आएँ। मैंने सिर्फ़ खूबसूरती देखकर शादी नही की है, दौलत भी देखी है। खूबसूरती भी चाहिए रुपये भी चाहिए। इसीलिए तो नन्हे से कहा था—

—नन्हे बाबू को कितने रुपये मिले ?

—फूटी पाई भी नहीं। ह्राबुलदत्त को क्या जुर्रत है ! रात-दिन तो रुपयो के लिए मेरे पास दौड़ता है। मेरे रुपयों से वह बड़ा आदमी बना है।

भूतनाथ ने पूछा—उसे रुपये देने से तुझे लाभ ?

—मैं कुछ अपनी टेंट में से देता हूँ ! राम का रुपया श्याम को और श्याम का जद्दू को—बीच में मुझे मिल जाता है मुनाफा। इतने-इतने लोगों को मैं तनख्वाह देता हूँ। देता हूँ कुछ अपनी जेब से ? राम-श्याम का दे देता हूँ।

इतनी बातें भूतनाथ के दिमाग में नही आतीं। उसने पूछा—अभी जा कहाँ रहा है ?

—अब सीधे घर जाऊँगा। दिन-भर कुछ खाया नही।

—बड़े महल मे कुछ नही खाया ?

—जिद तो बहुत की उन लोगों ने, मगर पेट मे जगह न थी। शाम की तरफ बेतरह शराब पी है।

—शराब ! शराब में रुपये क्यों खर्बाद करता है ?

ननीलाल ठठाकर हँस पड़ा।—तू पूरा बछिया का ताऊ ही रह गया। शराब में चूड़ामणि-जैसे गोबरगणेश ही रुपये फूंका करते हैं। मुझे तो शराब पीने से रुपए मिलते हैं।

—कैसे ?

ननीलाल ने कहा—यह फिर कभी समझाऊँगा। कलकत्ते मे ऐसे भी लोग हैं, जो साथ शराब पीने से मुझे रुपये देते हैं। मैं उनसे बात करूँ, तो धन्य हो जाते हैं। ये इतने करोबार जो मैंने चला रखे हैं, इसमे अपना धेला भी नही लगा। आएगा यकीन तुझे ?

यकीन न आने-जैसी ही बात थी। आखिर किस कलकत्ते का जिक्र कर रहा है ननीलाल। ब्रजराखाल से उसे पता चला था, स्वामीजी का जो अभिनन्दन-समारोह हुआ था, उसका खर्च-भर भी इकट्ठा न हो सका। बाढ़ या अकाल के समय गा-गाकर लोग चावल, कपड़ा, पैसा माँगते हैं। कोई नहीं देता। रुपयो की कमी से देश की भलाई के कितने ही काम ठप्प पड़े हैं। पैसे मिलते तो —— की एक मूर्ति कलकत्ते के राजपथ पर कही स्थापित की जाती। रुपयों

फूलदासी-जैसी कितनी औरतें हैजे की शिकार होती हैं। रुपये होते तो निवारण की जमात कितना काम करती। जर्मनी से रिवाल्वर, बन्दूक, बम-बारूद आता गरीबों के लिए अस्पताल खोला जा सकता। और इधर ननीलाल के लिए रुपए कोई बात ही नहीं।

ननीलाल ने कहा—रुपया लाना सहज है, उसे लगाना कठिन है। रुपए के बच्चा होता है, मालूम है तुम्हें? यह बच्चा दिलाना ही मुश्किल काम है।

भूतनाथ ने कहा—मेरे पांच सौ रुपये हैं।

ननीलाल ने कोई आग्रह नहीं दिखाया। सिर्फ़ इतना ही कहा—पांच सौ!

—हां, पांच सौ।

अबकी भी ननीलाल ने वैसा कुछ न कहा। भूतनाथ मन-ही-मन हिसाब लगाने लगा कि पांच सौ रुपए अगर इसके बैंक में रख दिए जाएँ, तो साल में पांच बारां साठ रुपये सूद के आ जाएँगे। जवा की शादी में वह कोई भेंट देगा, यही सोचकर रुपये उसने छोटी बहू के पास रख छोड़े थे।

अचानक भूतनाथ बोल पड़ा—एक और आदमी के पास बहुत-से रुपये हैं—लाखों-लाख।

अबकी ननीलाल मुखातिब हुआ। जली सिगरेट को फेंककर तुरत पूछा—किसके पास?

एक झटका देकर गाड़ी फिर सीधी चलने लगी।

भूतनाथ बोला—और उतने-उतने रुपये उनके पास यों ही पड़े हैं—बेकार। अच्छा, नन्हे बाबू ने तेरे बैंक में नहीं रखा?

ननीलाल ने हिकारत दिखाते हुए कहा—उन लोगों की सारी टीम-टाम बाहरी है। जमा-जथा कुछ नहीं है। कर्ज़ से लदे हुए हैं।

अभी-अभी तो मँझले बाबू ने गाड़ी खरीदी है।

—लटकती धोती, गाड़ी-घोड़ा, पाई-नौकर से ही कोई बड़ा आदमी नहीं होता। आजकल बड़प्पन बड़ा वैसा हो गया है। जमीन-जमींदारी जब तक है, तभी तक बड़प्पन। रिआया ने लगान बन्द कर दिया कि गए। अभी एक घोड़ा मर गया था, दूसरा न ले सके। इधर रखैल के लिए मकान बन रहा है, कबूतरों की लड़ाई चल रही है। सब ढाप है ढाप!

भूतनाथ बोला—मगर मैं जिनकी बात कह रहा था, उनके पास बहुत रुपये हैं। रखेगा अपने बैंक में?

—है कौन वह?

—सुविनय बाबू—मोहिनी-सिन्दूर वाले। अपने सब रुपये वे दान कर रहे हैं। कहने से रख भी सकते हैं। उनकी लड़की जवा से मेरी जान-पहचान है। उ

भी कहने से हो सकता है काम—

—जवा ?

—हाँ, हैं तो ब्रह्मसमाजी, पर सुविनय बाबू के पिता हिन्दू थे। उन्होंने ही नाम रखा था। बड़ी अच्छी लड़की है, पहचानता है क्या ?

—कैसी शक्ल है, बता तो ?

भूतनाथ ने कहा—शक्ल बड़ी अच्छी है, फिर ब्रह्मसमाजी हैं। पूरे हाथ का कुरता पहनती है, मखमली गला गूँथकर चोटी झुलाती है—

कुछ सोचकर ननीलाल ने पूछा—ब्राह्म है न ? ब्राह्म लड़कियों से तो कभी बहुत मिलता रहा हूँ। काफी ज़िद्दी-सी लड़की है, क्यों ?

—हाँ-हाँ, बड़ी ज़िद्दी है। मान नहीं सकती कभी।

—तो किसी दिन चल, चलें।

भूतनाथ ने कहा—सुविनय बाबू अभी काफ़ी बीमार हैं। बीच में तो अब-तब हालत हो गई थी। सुना, अब कुछ ठीक हैं। पहले मैं किसी दिन देख आऊँ, फिर तुझे ले चलूँगा।

गाड़ी इतने में पटलडाँगा जा पहुँची। घर के पास पहुँचते ही एक बड़ा-सा कुत्ता जोरों से भूँक उठा।

उतरकर ननीलाल ने कुत्ते को पकड़कर छाती से लगाकर कहा—बद्री···

ननीलाल चला जा रहा था। भूतनाथ ने पुकारा। मुड़कर उसने पूछा—कुछ कहना है ?

—अब अपनी उस बिन्दी के पास नहीं जाता ?

ननीलाल को याद आ गया।—ओ-ओ—याद आया न, अब उसे छोड़ दिया है। अब मिसेज़ ग्रियर्सन है।

—यह कौन ?

—मेरे पार्टनर की बीवी।

कबूतर उड़ाना कोई दस बजे खत्म हुआ।

इन्तज़ार करते-करते दारोगा का तो धीरज छूट गया। मगर कुछ कहते भी न बन रहा था। बड़े महल से थाने को सदा से काफ़ी भेंट-पूजा चढ़ती आई है। शुरू से थाने के दारोगों की पूरी सूची बही में दर्ज है। ब्लेक साहब जाने कब स्काट-लैंड की कब्र में दफ़न हो गए, पर उनका नाम है। आज भी उनके नाम से खर्च लिखा जाता है। भूमिपति-चौधरी को उन्होंने खून के जुर्म से बेदाग बचा लिया था। अपनी बीवी को गोली मारकर जिस रात इटालियन चित्रकार भागा, उसी रात पाँच सौ एक गिन्नियाँ दारोगा के पास पहुँच गईं। फिर टाउनसेंड साहब, उसके बाद रॉबिन्सन साहब। पुलिस से दोस्ती न होती, तो नन्हे बाबू की बरात में

भी कहने से हो सकता है काम—

—जवा ?

—हाँ, हैं तो ब्रह्मसमाजी, पर सुविनय बाबू के पिता हिन्दू थे। उन्होंने ही नाम रखा था। बड़ी अच्छी लड़की है, पहचानता है क्या ?

—कैसी शक्ल है, बता तो ?

भूतनाथ ने कहा—शक्ल बड़ी अच्छी है, फिर ब्रह्मसमाजी हैं। पूरे हाथ का कुरता पहनती है, मखमली गला गूँथकर चोटी झुलाती है—

कुछ सोचकर ननीलाल ने पूछा—ब्राह्म है न ? ब्राह्म लड़कियों से तो कभी बहुत मिलता रहा हूँ। काफ़ी ज़िद्दी-सी लड़की है, क्यों ?

—हाँ-हाँ, बड़ी ज़िद्दी है। मान नहीं सकती कभी।

—तो किसी दिन चल, चलें।

भूतनाथ ने कहा—सुविनय बाबू अभी काफी बीमार हैं। बीच में तो अब-तब हालत हो गई थी। सुना, अब कुछ ठीक हैं। पहले मैं किसी दिन देख आऊँ, फिर तुझे ले चलूँगा।

गाड़ी इतने मे पटलडांगा जा पहुँची। घर के पास पहुँचते ही एक बड़ा-सा कुत्ता ज़ोरों से भूँक उठा।

उतरकर ननीलाल ने कुत्ते को पकड़कर छाती से लगाकर कहा—बद्री···

ननीलाल चला जा रहा था। भूतनाथ ने पुकारा। मुड़कर उसने पूछा—कुछ कहना है ?

—अब अपनी उस विन्दी के पास नही जाता ?

ननीलाल को याद आ गया।—ओ-ओ—याद आया न, अब उसे छोड़ दिया है। अब मिसेज़ ग्रियर्सन है।

—यह कौन ?

—मेरे पार्टनर की बीवी।

कबूतर उड़ाना कोई दस बजे खत्म हुआ।

इन्तज़ार करते-करते दारोगा का तो धीरज छूट गया। मगर कुछ कहते भी न बन रहा था। बड़े महल से थाने को सदा से काफ़ी भेंट-पूजा चढती आई है। शुरू से थाने के दारोगों की पूरी सूची बही मे दर्ज है। ब्लेक साहब जाने कब स्काटलैंड की कब्र मे दफन हो गए, पर उनका नाम हैं। आज भी उनके नाम से खर्च लिखा जाता है। भूमिपति-चौधरी को उन्होने खून के जुर्म से बेदाग बचा लिया था। अपनी बीबी को गोली मारकर जिस रात इटालियन चित्रकार भागा, उसी रात पाँच सौ एक गिन्नियाँ दारोगा के पास पहुँच गईं। फिर टाउनसेंड साहब, उसके बाद राबिन्सन साहब। पुलिस से दोस्ती न होती, तो नन्हे बाबू की बरात में

फूलदासी-जैसी कितनी औरतें हैजे की शिकार होती हैं। रुपये होते तो निवारण की जमात कितना काम करती। जर्मनी से रिवाल्वर, बन्दूक, बम-बारूद आता। गरीबों के लिए अस्पताल खोला जा सकता। और इधर ननीलाल के लिए रुपया कोई बात ही नहीं।

ननीलाल ने कहा—रुपया लाना सहज है, उसे लगाना कठिन है। रुपये के बच्चा होता है, मालूम है तुम्हें? यह बच्चा दिलाना ही मुश्किल काम है।

भूतनाथ ने कहा—मेरे पांच सौ रुपये हैं।

ननीलाल ने कोई आग्रह नहीं दिखाया। सिर्फ़ इतना ही कहा—पांच सौ!

—हां, पांच सौ।

अबकी भी ननीलाल ने वैसा कुछ न कहा। भूतनाथ मन-ही-मन हिसाब लगाने लगा कि पांच सौ रुपए अगर इसके बैंक में रख दिए जाएँ, तो साल में पांच बारां साठ रुपये सूद के आ जाएँगे। जबा की शादी में वह कोई भेंट देगा, यही सोचकर रुपये उसने छोटी बहू के पास रख छोड़े थे।

अचानक भूतनाथ बोल पड़ा—एक और आदमी के पास बहुत-से रुपये हैं—लाखों-लाख।

अबकी ननीलाल मुखातिब हुआ। जली सिगरेट को फेंककर तुरत पूछा—किसके पास?

एक झटका देकर गाड़ी फिर सीधी चलने लगी।

भूतनाथ बोला—और उतने-उतने रुपये उनके पास यों ही पड़े हैं—बेकार। अच्छा, नन्हे बाबू ने तेरे बैंक में नहीं रखा?

ननीलाल ने हिकारत दिखाते हुए कहा—उन लोगों की सारी टीम-टाम बाहरी है। जमा-जथा कुछ नहीं है। कर्ज़ से लदे हुए हैं।

अभी-अभी तो मँझले बाबू ने गाड़ी खरीदी है।

—लटकती धोती, गाड़ी-घोड़ा, पाई-नौकर से ही कोई बड़ा आदमी नहीं होता। आजकल बड़प्पन बड़ा वैसा हो गया है। ज़मीन-ज़मींदारी जब तक है, तभी तक बड़प्पन। रिआया ने लगान बन्द कर दिया कि गए। अभी एक घोड़ा मर गया था, दूसरा न ले सके। इधर रखैल के लिए मकान बन रहा है, कबूतरों की लड़ाई चल रही है। सब ढाप है ढाप!

भूतनाथ बोला—मगर मैं जिनकी बात कह रहा था, उनके पास बहुत रुपये हैं। रखेगा अपने बैंक में?

—है कौन वह?

—सुविनय बाबू—मोहिनी-सिन्दूर वाले। अपने सब रुपये वे दान कर रहे हैं। कहने से रख भी सकते हैं। उनकी लड़की जबा से मेरी जान-पहचान है। उसे

भी कहने से हो सकता है काम—

—जवा ?

—हाँ, हैं तो ब्रह्मसमाजी, पर सुविनय बाबू के पिता हिन्दू थे। उन्होंने ही नाम रखा था। बड़ी अच्छी लड़की है, पहचानता है क्या ?

—कैसी शक्ल है, बता तो ?

भूतनाथ ने कहा—शक्ल बड़ी अच्छी है, फिर ब्रह्मसमाजी हैं। पूरे हाथ का कुरता पहनती है, मखमली गला गूँथकर चोटी झुलाती है—

कुछ सोचकर ननीलाल ने पूछा—ब्राह्म है न ? ब्राह्म लड़कियों से तो कभी बहुत मिलता रहा हूँ। काफी ज़िद्दी-सी लड़की है, क्यों ?

—हाँ-हाँ, बड़ी ज़िद्दी है। मान नहीं सकती कभी।

—तो किसी दिन चल, चलें।

भूतनाथ ने कहा—सुविनय बाबू अभी काफी बीमार हैं। बीच में तो अव-तब हालत हो गई थी। सुना, अब कुछ ठीक हैं। पहले मैं किसी दिन देख आऊँ, फिर तुझे ले चलूँगा।

गाड़ी इतने में पटलडांगा जा पहुँची। घर के पास पहुँचते ही एक बड़ा-सा कुत्ता ज़ोरों से भूँक उठा।

उतरकर ननीलाल ने कुत्ते को पकड़कर छाती से लगाकर कहा—बद्री···

ननीलाल चला जा रहा था। भूतनाथ ने पुकारा। मुड़कर उसने पूछा—कुछ कहना है ?

—अब अपनी उस बिन्दी के पास नहीं जाता ?

ननीलाल को याद आ गया।—ओ-ओ—याद आया न, अब उसे छोड़ दिया है। अब मिसेज़ ग्रियर्सन है।

—यह कौन ?

—मेरे पार्टनर की बीवी।

कबूतर उड़ाना कोई दस बजे खत्म हुआ।

इन्तज़ार करते-करते दारोगा का तो धीरज छूट गया। मगर कुछ कहते न रहा था। बड़े महल से थाने को सदा से काफी भेंट-पूजा चढ़ती आई है शुरू से थाने के दारोगों की पूरी सूची बही में दर्ज है। ब्लेक साहब जाने कब स्काट लैंड की कब्र में दफ़न हो गए, पर उनका नाम है। आज भी उनके नाम से ख लिखा जाता है। भूमिपति-चौधरी को उन्होंने खून के जुर्म से बेदाग बचा लि था। अपनी बीवी को गोली मारकर जिस रात इटालियन चित्रकार भागा, उ रात पाँच सौ एक गिन्नियाँ दारोगा के पास पहुँच गईं। फिर टाउनसेंड साह उसके बाद राबिन्सन साहब। पुलिस से दोस्ती न होती, तो नन्हे बाबू की बरात

फूलदासी-जैसी कितनी औरतें हैजे की शिकार होती हैं। रुपये होते तो निवारण की जमात कितना काम करती। जर्मनी से रिवाल्वर, बन्दूक, बम-बारूद आता। गरीबों के लिए अस्पताल खोला जा सकता। और इधर ननीलाल के लिए रुपया कोई बात ही नहीं।

ननीलाल ने कहा—रुपया लाना सहज है, उसे लगाना कठिन है। रुपये के बच्चा होता है, मालूम है तुम्हें? यह बच्चा दिलाना ही मुश्किल काम है।

भूतनाथ ने कहा—मेरे पांच सौ रुपये हैं।

ननीलाल ने कोई आग्रह नहीं दिखाया। सिर्फ़ इतना ही कहा—पांच सौ!

—हां, पांच सौ।

अबकी भी ननीलाल ने वैसा कुछ न कहा। भूतनाथ मन-ही-मन हिसाब लगाने लगा कि पांच सौ रुपए अगर इसके बैंक में रख दिए जाएँ, तो साल में पांच बारां साठ रुपये सूद के आ जाएँगे। जबा की शादी में वह कोई भेंट देगा, यही सोचकर रुपये उसने छोटी बहू के पास रख छोड़े थे।

अचानक भूतनाथ बोल पड़ा—एक और आदमी के पास बहुत-से रुपये हैं—लाखों-लाख।

अबकी ननीलाल मुखातिब हुआ। जली सिगरेट को फेंककर तुरत पूछा—किसके पास?

एक झटका देकर गाड़ी फिर सीधी चलने लगी।

भूतनाथ बोला—और उतने-उतने रुपये उनके पास यों ही पड़े हैं—बेकार। अच्छा, नन्हे बाबू ने तेरे बैंक में नहीं रखा?

ननीलाल ने हिकारत दिखाते हुए कहा—उन लोगों की सारी टीम-टाम बाहरी है। जमा-जथा कुछ नहीं है। कर्ज़ से लदे हुए हैं।

अभी-अभी तो मँझले बाबू ने गाड़ी खरीदी है।

—लटकती धोती, गाड़ी-घोड़ा, पाई-नौकर से ही कोई बड़ा आदमी नहीं होता। आजकल बड़प्पन बड़ा वैसा हो गया है। ज़मीन-ज़मींदारी जब तक है, तभी तक बड़प्पन। रिआया ने लगान बन्द कर दिया कि गए। अभी एक घोड़ा मर गया था, दूसरा न ले सके। इधर रखैल के लिए मकान बन रहा है, कबूतरों की लड़ाई चल रही है। सब ढाप है ढाप!

भूतनाथ बोला—मगर मैं जिनकी बात कह रहा था, उनके पास बहुत रुपये हैं। रखेगा अपने बैंक में?

—है कौन वह?

—सुविनय बाबू—मोहिनी-सिन्दूर वाले। अपने सब रुपये वे दान कर रहे हैं। कहने से रख भी सकते हैं। उनकी लड़की जबा से मेरी जान-पहचान है। उं

कहने से हो सकता है काम—

—जबा ?

—हाँ, हैं तो ब्रह्मसमाजी, पर सुविनय बाबू के पिता हिन्दू थे। उन्होंने ही म रखा था। बड़ी अच्छी लड़की है, पहचानता है क्या ?

—कैसी शक्ल है, बता तो ?

भूतनाथ ने कहा—शक्ल बड़ी अच्छी है, फिर ब्रह्मसमाजी हैं। पूरे हाथ कुरता पहनती है, मखमली गला गूंथकर चोटी झुलाती है—

कुछ सोचकर ननीलाल ने पूछा—ब्राह्म है न ? ब्राह्म लड़कियों से तो कभी त मिलता रहा हूँ। काफी ज़िद्दी-सी लड़की है, क्यों ?

—हाँ-हाँ, बड़ी ज़िद्दी है। मान नहीं सकती कभी।

—तो किसी दिन चल, चलें।

भूतनाथ ने कहा—सुविनय बाबू अभी काफी बीमार हैं। बीच में तो अब- : हालत हो गई थी। सुना, अब कुछ ठीक हैं। पहले मैं किसी दिन देख आऊँ, र तुझे ले चलूँगा।

गाडी इतने में पटलडांगा जा पहुँची। घर के पास पहुँचते ही एक बड़ा-सा ता ज़ोरों से भूंक उठा।

उतरकर ननीलाल ने कुत्ते को पकड़कर छाती से लगाकर कहा—बद्री···

ननीलाल चला जा रहा था। भूतनाथ ने पुकारा। मुड़कर उसने पूछा— ꣳ कहना है ?

—अब अपनी उस बिन्दी के पास नहीं जाता ?

ननीलाल को याद आ गया।—ओ-ओ—याद आया न, अब उसे छोड़ या है। अब मिसेज़ ग्रियर्सन है।

—यह कौन ?

—मेरे पार्टनर की बीवी।

कबूतर उड़ाना कोई दस बजे खत्म हुआ।

इन्तज़ार करते-करते दारोगा का तो धीरज छूट गया। मगर कुछ कहते भी बन रहा था। बड़े महल से थाने को सदा से काफी भेंट-पूजा चढती आई है। ꣳ से थाने के दारोगों की पूरी सूची बही में दर्ज है। ब्लेक साहब जाने कब स्काट- ꣳ की कब्र में दफन हो गए, पर उनका नाम है। आज भी उनके नाम से खर्च ला जाता है। भूमिपति-चौधरी को उन्होंने खून के जुर्म से बेदाग बचा लिया । अपनी बीवी को गोली मारकर जिस रात इटालियन चित्रकार भागा, उसी रात पाँच सौ एक गिन्नियाँ दारोगा के पास पहुँच गईं। फिर टाउनसेंड साहब, उसके बाद राबिन्सन साहब। पुलिस से दोस्ती न होती, तो नन्हे बाबू की बरात में

फूलदासी-जैसी कितनी औरतें हैजे की शिकार होती हैं। रुपये होते तो निवा
की जमात कितना काम करती। जर्मनी से रिवाल्वर, बन्दूक, बम-बारूद आ
गरीबों के लिए अस्पताल खोला जा सकता। और इधर ननीलाल के लिए र
कोई बात ही नहीं।

ननीलाल ने कहा—रुपया लाना सहज है, उसे लगाना कठिन है। ९५
के बच्चा होता है, मालूम है तुम्हें? यह बच्चा दिलाना ही मुश्किल काम है।

भूतनाथ ने कहा—मेरे पांच सौ रुपये हैं।

ननीलाल ने कोई आग्रह नहीं दिखाया। सिर्फ़ इतना ही कहा—पांच सौ!

—हां, पांच सौ।

अबकी भी ननीलाल ने वैसा कुछ न कहा। भूतनाथ मन-ही-मन हिसाब लगाने लगा कि पांच सौ रुपए अगर इसके बैंक में रख दिए जाएँ, तो साल में पांच बारां साठ रुपये सूद के आ जाएँगे। जबा की शादी में वह कोई भेंट देगा, यही सोचकर रुपये उसने छोटी बहू के पास रख छोड़े थे।

अचानक भूतनाथ बोल पड़ा—एक और आदमी के पास बहुत-से रुपये हैं—लाखों-लाख।

अबकी ननीलाल मुखातिब हुआ। जली सिगरेट को फेंककर तुरत पूछा—किसके पास?

एक झटका देकर गाड़ी फिर सीधी चलने लगी।

भूतनाथ बोला—और उतने-उतने रुपये उनके पास यों ही पड़े हैं—बेकार। अच्छा, नन्हे बाबू ने तेरे बैंक में नहीं रखा?

ननीलाल ने हिकारत दिखाते हुए कहा—उन लोगों की सारी टीम-टा बाहरी है। जमा-जथा कुछ नहीं है। कर्ज से लदे हुए हैं।

अभी-अभी तो मँझले बाबू ने गाड़ी खरीदी है।

—लटकती धोती, गाड़ी-घोड़ा, पाई-नौकर से ही कोई बड़ा आदमी न होता। आजकल बड़प्पन बड़ा वैसा हो गया है। ज़मीन-ज़मींदारी जब तक है, त तक बड़प्पन। रिआया ने लगान बन्द कर दिया कि गए। अभी एक घोड़ा मर ग था, दूसरा न ले सके। इधर रखैल के लिए मकान बन रहा है, कबूतरों की ल चल रही है। सब ढाप है ढाप!

भूतनाथ बोला—मगर मैं जिनकी बात कह रहा था, उनके पास ब रुपये हैं। रखेगा अपने बैंक में?

—है कौन वह?

—सुविनय बाबू—मोहिनी-सिन्दूर वाले। अपने सब रुपये वे दान कर हैं। कहने से रख भी सकते हैं। उनकी लड़की जबा से मेरी जान-पहचान है।

ो कहने से हो सकता है काम—

—जवा ?

—हाँ, हैं तो ब्रह्मसमाजी, पर सुविनय बाबू के पिता हिन्दू थे। उन्होंने ही
ाम रखा था। बड़ी अच्छी लड़की है, पहचानता है क्या ?

—कैसी शक्ल है, बता तो ?

भूतनाथ ने कहा—शक्ल बड़ी अच्छी है, फिर ब्रह्मसमाजी हैं। पूरे हाथ
ा कुरता पहनती है, मखमली गला गूँथकर चोटी झुलाती है—

कुछ सोचकर ननीलाल ने पूछा—ब्राह्म है न ? ब्राह्म लड़कियों से तो कभी
ुत मिलता रहा हूँ। काफ़ी ज़िद्दी-सी लड़की है, क्यों ?

—हाँ-हाँ, बड़ी ज़िद्दी है। मान नहीं सकती कभी।

—तो किसी दिन चल, चलें।

भूतनाथ ने कहा—सुविनय बाबू अभी काफी बीमार हैं। बीच में तो अब-
थ हालत हो गई थी। सुना, अब कुछ ठीक हैं। पहले मैं किसी दिन देख आऊँ,
फेर तुझे ले चलूँगा।

गाड़ी इतने मे पटलडांगा जा पहुँची। घर के पास पहुँचते ही एक बड़ा-सा
ुत्ता जोरों से भूँक उठा।

उतरकर ननीलाल ने कुत्ते को पकड़कर छाती से लगाकर कहा—बद्री···

ननीलाल चला जा रहा था। भूतनाथ ने पुकारा। मुड़कर उसने पूछा—
ुछ कहना है ?

—अब अपनी उस बिन्दी के पास नही जाता ?

ननीलाल को याद आ गया।—ओ-ओ—याद आया न, अब उसे छोड़
ेया है। अब मिसेज़ ग्रियर्सन है।

—यह कौन ?

—मेरे पार्टनर की बीवी।

कबूतर उड़ाना कोई दस बजे खत्म हुआ।

इन्तज़ार करते-करते दारोगा का तो धीरज छूट गया। मगर कुछ कहते भी
ा बन रहा था। बड़े महल से थाने को सदा मे काफी भेंट-पूजा चढ़ती आई है।
ुरू से थाने के दारोगों की पूरी सूची बही मे दर्ज है। ब्लेक साहब जाने कब स्काट-
लैंड की कब्र मे दफन हो गए, पर उनका नाम हैं। आज भी उनके नाम से खर्च
लिखा जाता है। भूमिपति-चौधरी को उन्होंने खून के जुर्म से बेदाग बचा लिया
था। अपनी बीवी को गोली मारकर जिस रात इटालियन चित्रकार भागा, उसी
रात पाँच सौ एक गिन्नियाँ दारोगा के पास पहुँच गईं। फिर टाउनसेंड साहब,
उसके बाद राबिन्सन साहब। पुलिस से दोस्ती न होती, तो नन्हे बाबू की बरात मे

उस दिन जाने क्या हाल होता !

खा-पीकर भूतनाथ हाथ धोने गया कि वंशी से भेंट हो गई। बड़ा व्यस्त-सा था। हड़बड़ में दो लोटा पानी डालकर तुरन्त भागने को तैयार। बोला—आज बिलकुल फुरसत नहीं है हुजूर—चला।

भूतनाथ ने कहा—इन दिनों तुम्हारा काम सचमुच ही बहुत बढ़ गया है वंशी !

बात भी सही थी। जब तक छोटे बाबू घर नहीं रहा करते थे, तब तक फुरसत-ही-फुरसत थी। आजकल साले साहब से भेंट ही नहीं कर पाता। और इधर भूतनाथ भी नौकरी के लिए चक्कर काटता फिर रहा था। बहुतों के पास गया। व्रजराखाल की जान-पहचान वालों में, सुविनय बाबू के समाज के कुछ लोगों के पास। छोटी-सी कोई नौकरी। जैसी भी तनखाह हो चाहे। पाँच रुपया, दस रुपया। डलहौजी के बड़े-बड़े हाउसों की खाक छानी। कई नये दफ्तर खुले थे—रैली ब्रदर्स, मैलकम एण्ड कं०, मार्टिन पिलर्स एण्ड को०, टर्नर कैंडोगन एण्ड कं० देशी कम्पनियाँ भी थीं। प्रेमचन्द एण्ड कं०, दत्त लिनिज एण्ड कं०।

किसी-किसी ने उपदेश देकर ही बैरंग वापस कर दिया। मोती शील का नाम सुना है ? तुम्हीं-जैसा गरीब था और बड़ा आदमी हो गया। बैठकर पत्ते खेलने से तो न होगा।

हलकी-सी आपत्ति की भूतनाथ ने—जी, ताश तो खेलना मैं जानता ही नहीं—तो—

—यह देखो, मामूली चीज़ ताश, उसी के व्यापार से लोग लखपती हो रहे हैं। और तुमने खेलना तक न सीखा ! बोतल और कार्क के कारोबार से मोती शील ने कितना पैदा किया, जानते हो ? उन दिनों वही आस्ट्रेलिया बिस्कुट चलान भेजते थे। वही क्यों, विश्वम्भर सेन आठ-दस रुपये से बैंक में दो लाख पौंड छोड़ गए थे। राजा नवकृष्ण—

एक-से-एक उदाहरण देते लोग। दुनिया-भर के नाम गिना जाते। यह··· वह···।

भूतनाथ ने पूछा—आखिर दारोगाजी क्या कह गए वंशी ?

—खाक-पत्थर कहेगा। साहब की कोठी पर कल डाली पहुँच जाएगी ! सारा किस्सा खत्म हो जाएगा। मैं तो चिन्ता की फिक्र से परेशान हूँ, भर्तार को खा बैठी है, ऐसा है बड़े महल का रवैया।

भूतनाथ कौतूहल को दबा न सका। पूछ बैठा—अच्छा, यह करतूत किस की है वंशी ?

—आपने क्या यह हरकत पहली ही बार देखी साले साहब ? बीच में शशी की नौकरी गई। इधर गिरि की क्या शक्ल हो गई है, देखा है आपने ?

—गिरि

—जी, मँझले बाबू तो मारने पर आमादा हो गए। इधर से मँझली मालकिन भी डपट उठी। बोली—सारा कसूर औरत के मत्थे। घर के लड़के की बाग थामो। कल जिसकी शादी होने वाली है, उसका यह हरकत! आखिर खून तो तुम्ही लोगों का है—भला भी कितना हो! मँझले बाबू तो फिर ज्यादा कुछ न बोले, लेकिन मँझली माँ और बडी माँ में ठन गई।

—वह क्या?

—बडी माँ टट्टी में थी। नगी ही बाहर निकल आई। बोली—तू मेरे बेटे को तोहमत दे रही है मँझली! कातिक-जैसा सलोना लड़का, उसे दूसरी औरत नही मिली! शहर मे औरत की कमी पड़ी है कि घर में पैसे की! बड़े बाबू के रहते यहाँ नाचनेवाली नही आई। एक रात मे उन्होने लाख रुपया नही फूँका! तेरा बाप फूँक सका है उतना! कि तेरे सात पुश्त में किसी ने फूँका! मेरे लड़के पर तोहमत!

—और नई बहू ने सब सुना?

वंशी ने कहा—पूछिए न, लंकाकाण्ड हो गया। जल्दी-जल्दी सिन्धु आई। बड़ी माँ के बदन पर ओदा अँगोछा डाल दिया, तो आबरू बची।

—और नई बहू?

—अन्दर ही थी। आकर माँ की आरजू-मिन्नत करने लगी। बहुत बातें हैं। फिर कहूँगा। अभी चलूँ, मरने की भी फुरसत नही।

—आखिर इतना क्या काम पड़ा है?

—जी छोटे बाबू बाहर जाएँगे। फिर अनबन हो गई।

वंशी चला जा रहा था। भूतनाथ ने रोका। पूछा—छोटे बाबू कहाँ जायेंगे?

—और कहाँ, जान बाजार!

जान बाजार! फिर चुन्नी के पास! इतने दिनों की सारी साधना बेकार हो गई! इतने दिनों तक कभी भी बाहर नही गये छोटे बाबू। उनकी गाडी अस्तबल मे पड़ी रही। घोड़े दाना खाते रहे और मोटे होते रहे। शादी की इतनी धूम-धाम हुई, उनकी झाँकी भी न दिखाई पड़ी। बरात तक नही गये।

भूतनाथ ही नही, घर-भर के लोग हैरत में थे। मँझली बहू ने होंठ दबाकर हँसते हुए कहा—तू ने कोई टोना किया क्या रे छोटी?

बड़ी बहू ने भी सुना सिन्धु से—अच्छा, अपनी बीबी के साथ इस घर में यही पहली बार मरद को सोते देखा। छोटे बाबू खानदान का नाम डुबोएँगे!

गिरि में अब वह तेज नहीं रह गया था। अब वह उछल-उछलकर तिमंजिले पर नहीं चढ़ पाती पहले-जैसी। सौदामिनी से गला फाड़कर झगड़ भी नहीं

सकती। मगर सौदामिनी सब्जी काटती हुई आप-ही-आप बुदबुदाती—दिन-रात बीवी का दामन थामे पड़ा रहता है, यह कैसा खसम रे बाबा! जभी तो भोला बप्पा कहा करता था, फूल बहू—आँखें रहते ही तिरभुवन चीन्ह लो। भोला का बप्पा मरा, मुझे भी मार गया। छि:, शरम की हद हो गई।

एक रोज़ गिरि से भूतनाथ का आमना-सामना हो गया। वह सीढ़ी से च रही थी और आप-ही-आप बुदबुदाती जा रही थी—मेरी तरफ नज़र देने वालों की आँख जाए। मेरी सेहत गई, तो तुम्हारे बाप का क्या···। तेरे समांग में कीड़े पड़ें···।

अचानक भूतनाथ पर नज़र पड़ी कि उसने लम्बा घूंघट काढ़ लिया। उसी तरह बुदबुदाती रही, जानें किसे कह रही थी—हरामजादी, यम के घर जा···ये मरे तो मेरा कलेजा ठण्डा हो। कन्धे पर मसान पहुँचा आऊँ, चिता में पानी उँडेलूं, गया में पिण्ड दे आऊँ···

एक ही पल में भूतनाथ की निगाह में आया कि गिरि की शक्ल जली लकड़ी-सी स्याह पड़ गई है, महज़ कै दिन पहले वह अच्छी-खासी थी।

बंशी ने बताया था—यह चार बार हो चुका जी।

नन्हे बाबू की नई बीवी दस साल की थी। वह भी दंग रह गई। बहू बन-कर आने से पहले इस घर के बारे में बहुत-कुछ सुन चुकी थी। सुन चुकी थी कि इस घर के मर्द रात को अपने घर नहीं रहा करते। ऐसा ही नियम है। और भी बहुत-सी बातें।

उसने मँझली सास से पूछा—छोटे चाचा शायद रात को घर ही रहते हैं?

मँझली बहू हँस पड़ी और गिरि से कहा—ज़रा बहू की बात सुन ले गिरि!

बाघ-गोटी खेलते समय गिरि कहती—जो भी चाहे कहिए, मुझे लगता है कि छोटी माँ ने कुछ टोटका जरूर किया है: पूजा-पाठ की बात बेकार है, कुछ दवा-दारू किया है।

छोटे बाबू की इस हरकत से हर कोई हैरान था—बुनियादी खानदान के मर्द की आखिर यह कैसी चाल!

इस अरसे में छोटी बहू ने भूतनाथ को शायद ही कभी बुलाया। बीच में एक बार वह अपनी गरज़ से गया था। चोर दरवाज़े से निकलकर चुपचाप कमरे के सामने जा खड़ा हुआ। शाम हो रही थी। बरामदे पर कोई न था। मँझली बहू अपने कमरे में बाघ-गोटी खेलने में मशगूल थी। बड़ी बहू सिन्धु से बातें कर रही थीं। नन्हे बाबू की तो तब शादी ही न हुई थी। नई बहू नहीं आई थी। अच्छा मौका था।

दरवाजे के सामने से भूतनाथ ने धीमे-से पुकारा—छोटी बहू—

पता नहीं अन्दर क्या कर रही थी वह। बोली—कौन, भूतनाथ ?

क्या कहे, भूतनाथ सोचने लगा। इतने में घूंघट काढ़कर चिन्ता बाहर निकली और अँधेरे में खो गई।

भूतनाथ के पाँव काँप रहे थे। छोटी बहू के पास आते ही जानें क्यों तो उसके पाँव काँपने लगते। पाँव ही क्यों, सारा शरीर। क्यों काँपता है, कहना कठिन है। यह भी नहीं कि जवा उससे बहुत घनिष्ठ है। वह भी आसमान के चाँद-सी पकड़ के बाहर है। मगर उससे इतना डर नहीं लगता। इतना वह प्यार भी नहीं करता शायद उसे। फिर भी ऐसा क्यों होता है, कौन कहे !

छोटी बहू पलंग पर लेटी थी। चिन्ता उसके पैर दबा रही थी।

अन्दर झाँककर उन्हें उस हालत में देख भूतनाथ अप्रतिभ हो गया।

छोटी बहू ने उठ बैठने की कोशिश न की। कहा—खड़ा क्यों है, अन्दर आ जा, बैठ यहाँ।

भूतनाथ गया। कैसी तो शर्म आने लगी उसे। पूछा—तबीयत ठीक नहीं है क्या ?

लेटी-लेटी ही हँसती रही वह। कहा—तबीयत क्यों खराब होने लगी ? आजकल मैं बिलकुल अच्छी हूँ। फिर जरा रुककर हँसती हुई बोली—अभी भी मेरी याद आती है तुझे ?

—रोज़ ही आने को जी चाहता है तुम्हारे पास।

—मगर रोज़ आने न लगना।

—क्यों ?—पूछकर वह चौंक उठा। मानो इस कमरे में आने का उसे अधिकार है।

—न, रोज़ नहीं आते। आजकल छोटे बाबू जो आते हैं !

—वह तो रात को।

—तुझे पता नहीं भूतनाथ, वे आते तो रात को हैं, मगर दिन को भी मैं रात की ही सोचा करती हूँ। मेरे रात-दिन एकाकार हो गए हैं। जानते हो, समय पर यशोदादुलाल की पूजा करना भी भूल जाती हूँ मैं।

भूतनाथ चुप रह गया। बोलते हुए छोटी बहू का मुखड़ा मानो और भी खूबसूरत हो उठा। इन कै दिनों में वह न केवल खूबसूरत हो गई है, बल्कि और भी पवित्र, और भी निर्मल, और भी मुलायम हो उठी है।

भूतनाथ बोला—मैं एक काम से आया था।

—कौन-सा काम, बता ?

कपड़े की एक पोटली दिखाकर वह बोला—कुछ रुपये हैं। तुम्हारे पास रख देता। मेरे तो बक्स-पिटारा है नहीं।

—कैसे रुपये हैं ?

—जवा के पिता ने पाँच सौ रुपये दिये। नौकरी तो रही नहीं, दफ्तर ही बन्द कर दिया उन्होंने।

—नौकरी गई, बला गई।

—बला गई! रोटी कैसे चलेगी! रहूँगा कहाँ—जिन्दगी-भर तुम थोड़े ही खिलाओगी!

—खिलाऊँगी भई, खिलाऊँगी। मैं ज़िन्दा रह गई तो तुझे रोटियों के लाले न पड़ेंगे। तू महल में रहेगा—किसकी मजाल कि तेरा कुछ बिगाड़े! अब तो छोटे बाबू से मैं जो कहूँगी, वही सुनेंगे। तूने मुझ पर इतना बड़ा एहसान किया, मुझे पति की सेवा करने का सुयोग मिला, उन्हें बाघ के जबड़े में से निकाल सकी मैं—किसकी बदौलत आखिर—

छोटी बहू ने करवट बदली, अँगड़ाई ली, जम्हाई ली।

भूतनाथ बोला—तुम्हें नींद आ रही है, मैं चलूँ—

—नहीं रे पगले, नींद नहीं आ रही। छोटे बाबू रात-भर सोने ज़रूर नहीं देते, फिर भी इतनी जल्दी नींद नहीं आती। ले कुञ्जी ले। उस सन्दूक में रुपयों को रख दे।

—कुञ्जी ले—यह सुनकर भूतनाथ को कैसा डर-सा लगा।

उसमें न धमकी थी, न आदेश। आखिर क्या है इस आवाज़ में, यह सोचते हुए भूतनाथ ने छोटी बहू के चेहरे की तरफ़ देखा। आँखों में सुरमा तो नहीं! या स्याही पड़ी है। रात जागने की स्याही। सोचकर हैरत होती है, इन आँखों के इस कर्षण की अब तक छोटे बाबू कैसे उपेक्षा कर सके! सोचा भी नहीं जा सकता, कि औरत की सहज निगाह में इतना मोह, इतनी माया, इतनी मदिरा होती है। फतेहपुर की राधा! उसके रूठने पर आँखों में यह नशा नहीं होता। बात-बात में चिकोटी काटने वाली अन्ना। वह भी इस कदर नहीं खींचती थी। हरिदासी थी तो गम्भीर स्वभाव की, लेकिन पेट में शरारत भरी थी उसके। उसके व्यंग्य से गुस्सा ज़रूर आता, पर अच्छा भी लगता था। जवा उसका मज़ाक बनाने लगती तो गुस्सा चाहे लाख आए, अच्छा लगता। अच्छा लगने की भी मात्रा होती है। लेकिन इसके अच्छा लगने की गोया हद ही नहीं कोई।

भूतनाथ ने कहा—सन्दूक मैं खोल सकूँगा?

—बेशक! न खोल चाहे, मगर अभी मैं उठने की नहीं।

—और न खोल सकूँ तो?

—फिर मर्द क्या बना?

उस रोज़ सन्दूक के अन्दर झांककर भूतनाथ हैरान रह गया था। मोतियों की माला थी शायद। पास ही ढेरों गिन्नियां। अँधेरे में हीरे के गहने झकझक कर रहे थे। चाँदी की एक तश्तरी में रुपयों की थैली उसने रख दी। झन्न से आवाज़

हुई। वह चौंक उठा। वह झंकार उसकी नस-नस में कुछ देर तक दौड़ती रही। उसे लगा, छोटी बहू के बदन पर उसका हाथ पड़ गया। नरम शरीर। वह चौंक पड़ी और झटके में हाथों की चूड़ियाँ झनझना उठीं।

—बन्द कर दे और उस दराज में से निकालकर बोतल ला दे।

एक काली बोतल पर भूतनाथ की नजर पड़ी। लेबिल लगी बोतल—शराब है?

—हाँ, ले आ तू।

बढ़ाकर भी हाथ खिंच आए उसके। दुविधा हुई। लगा कुण्डली मारकर फन फैलाए कोई विषधर बैठा है। छुआ नहीं कि डसा। मुड़कर कहा—पियोगी क्या अभी?

वह उठ बैठी। कहा—कैसा तो लग रहा है!

—लगे चाहे, उससे थोड़े ही दुरुस्त होगी तबीयत?

छोटी बहू हँसी। बोली—होगी, दुरुस्त होगी। उस दिन नील का उपवास था—दिन-भर पानी तक न छुआ, लेकिन शाम को ज़रा-सी पी और ताज़ी हो गई।

—अब उल्टी नहीं आती पहले दिन की तरह?

छोटी बहू हँसने लगी।

—हँस रही हो?

—हाँ, अब बिलकुल उलटा हो गया है। दिन बिना पिए भी कट जाता है, मगर साँझ हुई नहीं कि जम्हाई आने लगती है, सूना-सूना लगता है और जीभ से लगाते ही सब ठीक।

भूतनाथ ने गम्भीर होकर कहा—फिर तो तुम्हें लत लग गई है, ज़रूर—

—धत्, जब तक छोटे बाबू चाहेंगे, पीऊँगी, फिर छोड़ दूँगी।

—तो अभी क्यों पी रही हो फिर?

—कैसा तो कर रहा है जी, इसलिए। ला। ज़रा-सी पीऊँगी। सच।—लेटी-ही-लेटी उसने हाथ बढ़ाया।

—मैं नहीं देता। तुमने वचन दिया था कि ज्यादा न पिओगी।

—सच मान, मैं ज्यादा नहीं पीती भूतनाथ, सच कह रही हूँ।। जिस दिन छोटे बाबू के पल्ले पकड़कर पीती हूँ, उस दिन सुबह सिर नहीं उठा सकती, एक दिन तो तमाम दिन बदहोश पड़ी रही, जाने क्या बकती रही। मैंने छोटे बाबू से भी कहा। बोले, शुरू-शुरू ऐसा होता है। देख नहीं रहा है, कितनी मोटी हो गई हूँ मैं!

मोटी हुई भी है कि नहीं, भूतनाथ ने ग़ौर किया। बोला—मोटी कहाँ हुई हो—हाँ, पहले से और खूबसूरत हो गई हो।

—छोटे बाबू ने कहा है—शराब से सेहत कभी खराब नहीं होती। अंगूर का रस ही तो है।

भूतनाथ ने कहा—हरगिज़ नहीं, शराब अंगूर का रस होता तो नशा क्यों आता ? इसके नशे में आदमी बर्बाद क्यों होता ? कदम लड़खड़ाते क्यों हैं, चक्कर क्यों आता है ?

छोटी बहू फिर लेट गई। बोली—आखिर कहना क्या चाहता है तू, उनकी न मानकर तेरी ही सुनूं !

भूतनाथ करीब जाकर बोला—यह थोड़े ही कह रहा हूं मैं, नाहक मुझ पर तोहमत डाल रही हो !

—फिर ? मना क्या करता है तू ?

—अपने लिए थोड़े ही मना करता हूं। तुम खुदकशी करोगी तो तुम्हारा ही नुकसान होगा।

छोटी बहू ने कहा—वह भी करनी पड़े, तो उनके चरणों माथा टेककर करने का मौका मिलेगा—एक सधवा के लिए इससे बड़ी हविश और क्या हो सकती है ?

भूतनाथ को अब सच ही गुस्सा हो आया। वह बोतल लाकर बढ़ाते हुए बोला—तो तुम मरो—पिओ, मन की अपनी हविश पूरी कर लो।

हँसती हुई वह उठ बैठी। कहा—जब शराब दी, तो सोडे की बोतल भी बढ़ा दे ज़रा।—और बोतल को उसने खुद खोल लिया।

भूतनाथ एकटक देखता रहा। एक दिन इसी बोतल को लेते हुए उसके हाथ कांप उठे थे, डर भी लगा था शायद, शायद अन्दर से रोना भी आया था। लेकिन आज उस दृश्य पर जैसे यकीन नहीं आता। आज यह कितना आसान हो गया। उस ज़हर को उसने गिलास में उँड़ेला। बिजली की रोशनी में गिलास चमकने लगा।

और फिर ?

फिर भूतनाथ की अपलक आंखों के सामने छोटी बहू ने घूंघट को ज़रा ऊपर खींच लिया और लमहे में गिलास खाली हो गया। चेहरे पर शिकन न आई। खटका नहीं। पीकर छोटी बहू हँसने लगी। बोली—तू उल्लू की तरह देख रहा है भूतनाथ।—थोड़ी-सी फिर ढाली। पूछा—पीएगा ?

भूतनाथ कुछ न बोला।

—देख तो सही पीकर। आ, हम दोनों साथ ही मरें।

भूतनाथ फिर चुप रहा।

छोटी बहू ने दुबारा गिलास को खाली कर दिया। फिर थिर-सी हो गई। पत्थर-सी। सर्वांग में फिर वही प्रशान्ति। आप-ही-आप बोलने लगी—

पीती हो हूँ तो किसी का क्या? ग़ैर के पैसे से पीती हूँ! जरूर पीऊँगी, खूब पिऊँगी—अभी और पीती हूँ—देखती हूँ कौन क्या कर लेता है—कहकर सच ही उसने फिर से गिलास में शराब ढाली। एक ही सांस में पी डाली। सिर से घूंघट हट गया। बोली—पीती हूँ, ठोक करती हूँ। खुशी अपनी, पीऊँगी। जिसे नहीं सुहाता, वह हट जाए, चला जाए यहाँ से, निकल जाए मेरे कमरे से। मैं किसी का खाती हूँ कि पहनती हूँ।

अब भी भूतनाथ के मुँह से कुछ न निकला। देखते-देखते छोटी बहू की आँखें सुर्ख हो गईं, पसीना बहने लगा। पतले होठ रसीले हो उठे। तकिए के सहारे पलंग पर ओठंग कर पूछा—देख क्या रहा है भूतनाथ?

भूतनाथ ने कहा—शर्म नहीं आती, छि:!

छोटी बहू खिलखिलाकर हँस पड़ी। हँसी के आवेग में सारा शरीर मानो उभर उठने लगा। उसके बाद बोली—शर्म! शर्म किस दुःख से हो! बता सकता है, मुझसे सुखी कौन है! मुझ-जैसी है कोई खूबसूरत, मुझ-सी इतने बड़े परिवार की बहू—छोटे बाबू-जैसे पति, इस खानदान में जो किसी ने नहीं किया, मेरे लिए वही किया छोटे बाबू ने। वे रात को घर में सोते हैं—मुझ-सी सुखी कौन है! मैं समझती हूँ, हिंसा से छाती फटती है तुम्हारी।

भूतनाथ चुप रहा। लगा, वह हद से बाहर जा रही है। जरा रुककर छोटी बहू ने कहा—एक दिन छोटे बाबू से मैंने पूछा था—तुम सुखी हुए? जानते हो, क्या कहा उन्होंने—

—क्या कहा?

—कहा, मेरी छोड़ो, तुम सुखी हुईं? जो चाहती थी, मिला तो?

मैंने कहा—तुम्हारे ही सुख से मेरा सुख है। तुम क्या सुखी नहीं हुए? मैं क्या तुम्हें सुखी नहीं कर सकी? तुमने कहा था कि बाजारू की औरतें ही आनन्द देना जानती हैं। मैंने जोर के साथ कहा था—मैं भी दे सकूँगी। तुम्हीं बताओ, दे नहीं सकी मैं? छोटे बाबू हँसने लगे। रात खत्म हो रही थी। वे मेरी छाती पर सिर रखकर सोए थे। मैं उनके बालों के अन्दर उँगली डालकर सहलाती रही, फिर पूछा—जवाब नहीं दे रहे हो?

छोटे बाबू देर तक जाने क्या सोचते रहे! बोले—तुम्हें मन्त्र पर विश्वास है?

मैंने कहा—धरती पर कोई मन्त्र पर विश्वास करता है, तो वह मैं हूँ। तुम्हें अपने कलेजे में मैंने मन्त्र के ही जोर से तो पाया है। देखो, मेरी तरफ देखो।

उनकी ठोड़ी पकड़कर मैंने उनका चेहरा अपनी तरफ किया। पूछा—क्या देख रहे हो, कहो तो?

—कहाँ, कुछ भी तो नहीं।

—मेरे कपाल में क्या है ?

—कपाल में ? कुछ भी तो नहीं देख रहा हूँ।

—सिन्दूर नहीं दिखाई देता ?

—हां, सिन्दूर का टीका है।

—वही तो मन्त्र है—मन्त्रवाला सिन्दूर—मोहनी सिन्दूर। इसी की बदौलत तुम्हें मैंने अपने पास पाया है।

सुनकर छोटे बाबू हँसने लगे। हँसने पर बड़े अच्छे लगते हैं वे। पहले कभी देखी तो नहीं थी हँसी। पूछा—हँस रहे हो ?

छोटे बाबू ने कहा—मैं उस मन्त्र की बात नहीं करता। वह तो ठगी है, गांठ काटने का मनसूबा। मैं उस मन्त्र की कह रहा हूँ, जो ब्याह के समय पुरोहित ने पढ़ाया था। तुम्हें शायद याद न हो। तब तुम्हारी उम्र दस साल की होगी। मैंने भी उस समय इस मन्त्र का मतलब नहीं समझा था, लेकिन जो भी समझा, उसके अनुसार मैंने तुम पर जुल्म किया है।

मैंने हाथ से उनका मुँह ढँक दिया। कहा—तुमने कुछ भी जुल्म नहीं किया। वह सब मेरे कर्म का लिखा था।

वे बोले—नहीं-नहीं, किया है! मैंने तुम्हें शराब की आदत लगाई है।

रात-भर हम दोनों ने खूब पी थी। फिर भी देखा, उन्हें होशोहवास है। दिलासा देते हुए मैंने कहा—फिक्र न करो, जब भी कहोगे, पीना मैं छोड़ दूंगी। तुम्हें चूंकि अच्छा लगता है, इसलिए तो मैं पीती हूँ।

वे बोले—उहूँ, तुम्हें नशे की अब लत हो गई।

उन्होंने आँखें मूंद लीं। मैंने देखा, उनकी आंखों से आंसू बह रहे हैं। मैं बताऊँ भूतनाथ, उस आदमी को इतने दिनों तक हम लोग ग़लत समझते रहे। दर-असल इस घर में उसे किसी ने नहीं पहचाना, सो उसने भी किसी की परवाह न की। मँझले जेठ भी तो हैं। उन्हें एक नहीं, दर्जनों नशे हैं। और छोटे बाबू को एक है—जान बाजार। वह भी इसलिए कि आदमी अभिमानी है, सो नशे में अपने को डुबाए रखता है। मैंने देखा है, खुद बहुत ज्यादा नहीं पीता, बल्कि मुझे ही ज़्यादा पिलाता है—ज़रा आदर करो कि गल जाता है, प्यार करो तो धन्य-धन्य हो जाता है।

भूतनाथ ने पूछा—लेकिन सच ही अगर तुम्हें नशे की लत लग जाए छोटी बहू ?

छोटी बहू ने कहा—अरे, यह नशा नहीं है भैया, पीकर देख, तू भी समझ जाएगा। कैसी जो एक धुन हो जाती है, लगता है, सबको मैं क्षमा कर सकती हूँ, सबको प्यार कर सकती हूँ, किसी की बुराई पर निगाह नहीं पड़ती। मेरे देवता और मेरे छोटे बाबू उस घड़ी जैसे एक हो जाते हैं। उस समय तुझे भी प्यार करने को जी चाहता है।

भूतनाथ बोला—लेकिन ऐसे मे तो यहाँ मेरा ज्यादा दिन रहना नहीं चल सकेगा।

छोटी बहू के चेहरे का भाव अचानक बदल गया—क्यों ?

—सभी कानाफूसी करने लगे हैं कि तुमसे मेरी गहरी पटती है। तुमने मुझे जूते-कपड़े दिये हैं। विधु सरकार ने तो सूची में से मेरा नाम काट डाला था—तुमने ही अपने जोर से—

—कहते हैं लोग-? बैठी-बैठी वह सामने की तरफ झुक गई। जरा देर टकटकी लगाए भूतनाथ को देखती रही। गिर ही पड़ती नीचे कुछ देर मे।

झट से भूतनाथ ने उसे पकड़ लिया। बोला—देखो, क्या हो जाता अभी !

—हाथ छोड़ दे। मेरे बदन पर हाथ न लगा।—कहकर वह अपने कपड़े सँभालने की कोशिश करने लगी।—जा, निकल जा यहाँ से—और वह बोतल को झुकाकर गिलास मे शराब ढालने लगी।

भूतनाथ ने पूछा—फिर पीओगी ?

—पिऊँ तो तुम्हारा क्या ?

भूतनाथ आगे आकर अड गया—अब नही पी सकती तुम ?

—जबर्दस्ती है ?

—हाँ, है। छोटे बाबू के सामने जो चाहे सो करो, मैं कुछ नहीं कहता, मगर मेरे सामने नही पी सकती।—भूतनाथ ने उसके हाथ से बोतल छीन लेनी चाही कि वह छूटकर फर्श पर जा गिरी। झन्न की आवाज के साथ बोतल चकनाचूर। काँच के टुकड़े तमाम बिखर गए। कमरे में शराब फैल गई। भूतनाथ के हाथ मे खून बहने लगा। वह ठगा-सा रह गया।

जाने क्या हुआ कि छोटी बहू ने हँसना शुरू किया। शुरू किया तो किया। वह हँसी रुकने क्यों लगी ! और घर तोड़ गिरानेवाली हँसी। हँसते-हँसते दम घुट जाएगा मानो। उस रात बोतल टूटने की आवाज से छोटी बहू की हँसी मिलकर एक हो गई थी।

उस रात इस वारदात के बाद भूतनाथ ने चोर कमरे मे आकर अन्दर से दरवाजा बन्द कर लिया था। लेकिन आज वंशी की बात सुनकर, वह मानो आसमान से गिर पड़ा। छोटे बाबू से फिर कैसी लड़ाई हो गई कि वे जान बाजार चले ! क्या कोई मौका पाकर वृन्दावन का टोना काम कर गया ?

वंशी ने कहा—वह देखिए, उनकी गाडी की सफाई हो रही है। नया इत्र निकालना है, तैयारियाँ कर देनी हैं—आज बेतरह काम है साले साहब—इजाजत दीजिए

भूतनाथ ने पूछा—अच्छा, एक बात बता सकता है तू ?

—क्या ?—वंशी पलटकर खड़ा हो गया।

—तुझे मालूम है, चुन्नी वृन्दावन की कौन होती है ?

वंशी अवाक् रह गया—आपने कैसे जाना ?

—वृन्दावन से मेरी मुलाकात हुई थी।

—आपके पास भी आ पहुँचा था—खबरदार, उसे सहारा न दीजिए। इसी तरह कुछ दिनों ठनठनिया के छेनीदत्त के यहाँ भी चक्कर काटता रहा, छेनीदत्त तो चल बसा, अब नाटूदत्त के पीछे पड़ा है। छोटे बाबू तो जाते नहीं, अब उन्हें दाना नहीं नसीब होता। छोटे बाबू ने मोटर खरीदी दी थी, उसे भी बेचना पड़ा। क्यों न बेचना पड़े—चीजें मँहगी हो गई हैं—सात आना सेर मांस, चौदह पैसा सेर सरसों का तेल, दूध दस पैसे का सेर और घी तो बारह आने! उनका चले कैसे, कहाँ से चले! खैर, बिन्दावन कह क्या रहा था आपसे ?

—कह रहा था कि उसकी नई माँ ने मुझे जरा बुलाया है।

वंशी आग-भभूका हो गया—कम्बख्त बिदाबन की हिमाकत देखिए जरा! यह सब उसकी साजिश है। किसी तरह आपको ले जाकर फँसाएगा—

—तुम क्या मुझे इतना कच्चा समझते हो वंशी ?

—हाँ, उसने और क्या-क्या कहा ?

—वही सब रोना-गाना, और क्या! गाड़ी बेचनी पड़ी, गुजारा नहीं चलता। मतलब यह कि किसी तरह मैं छोटे बाबू को जान बाजार भेज सकूँ तो—। लेकिन खोलकर कुछ बोला नहीं, इतना ही कहा कि मुझे बुलाया है।

—खबरदार, आप हर्गिज न जाइए। डायन है वह डायन। छोटे बाबू का लहू सोखती रही। अरे बाबा, कलकत्ते में तो बहुतेरे बाबू पड़े हैं—उनके पास जा। वे गाड़ी देंगे, जूतों के तलवे चाटते रहेंगे—जा उनके पास।

भूतनाथ ने पूछा—वंशी, चुन्नी कौन होती है उसकी ?

वंशी ने सिर हिलाया—जी नहीं, जगन्नाथ परभु की कसम खाई है'''नहीं बता सकता। हाँ, इतना कहे देता हूँ, इस बिदाबन को नरक में भी जगह नहीं मिलेगी—मगर न-न, बता नहीं सकूँगा मैं।

ज़रा देर चुप रहकर भूतनाथ बोला—लेकिन इतने दिनों के बाद छोटे बाबू जान बाज़ार क्यों जा रहे हैं ?

—क्या पता, नौकर ठहरा, बड़ों के मन की क्या जानूँ ?

—तुमने कुछ नहीं सुना ?

—सुना तो सारा कुछ है—मगर समझा खाक भी नहीं।

—सुना क्या, सो ही बताओ ?

वंशी ने कहा—सुनिए फिर। उस रोज मैं छोटी माँ के पास गया। साँझ नहीं हुई थी। छोटे बाबू अन्दर थे। मैं अन्दर नहीं गया। देखा, झड़प हो रही है।

छोटी माँ कह रही हैं—मुझसे ऐसी क्या चूक हुई—बताओ तो ?

छोटे बाबू ने कहा—वह तुम ठीक-ठीक समझ नहीं सकोगी छोटी बहू—मन्त्र पढ़कर जिससे शादी की जाती है, उसके साथ वास्तव में मौज नहीं की जा सकती। खासकर इस घर के मर्दों के साथ तो यही है।

छोटी माँ ने कहा—लेकिन तुमने जो कुछ भी कहा है, सब तो किया मैंने। तुम्हारी खातिर मैंने पूजा-पाठ तक छोड़ दिया है—तुम्हारे सिवा मेरा और कोई देवता नहीं। जो मेरे यशोदादुलाल हैं, वही तुम हो। जाने कितने जन्मों के तप के बाद तुम्हारे जैसा पति पाया है मैंने। तुम पर मुझे कितना नाज है, पता है ? इस घर की किसी बहू से जो नहीं बन सका, मैंने वह किया है—तुम्हें पाकर मैंने मुट्ठी में स्वर्ग पाया था, जानते हो ?

छोटे बाबू ने कहा—स्वर्ग-नरक की फ़िक्र बुढ़ापे में करूँगा। इस उम्र में वह दिमाग़ में घुस भी नहीं सकता। इन कै महीनों तक घर में रहकर दम घुटने लगा है—दिन-भर जी छटपटाता रहता है।

छोटी माँ ने कहा—तुम्हारे लिए मैंने और भी दामी शराब मँगाई है, पियोगे थोड़ी-सी ?

छोटे बाबू ने कहा—मुझे भुलाने की कोशिश न करो छोटी बहू !

छोटी माँ ने लम्बी उसाँस ली—काश, तुम्हें मैं भुला सकती ! बोतल की ठेपी खोलते हुए बोली—लोग कहते हैं, मैंने तुम पर जादू किया है, टोना किया है; लेकिन जो भी हथियार भगवान् ने औरतों को दिया है, मैंने सबका तो इस्तेमाल किया—शिव को भुलाना फिर भी सहज है, मगर तुमको ! पत्थर के देवता होते, तो भी समझती कि उसका कुछ मतलब है—तुम्हें अपनी छाती पर सुलाकर मैंने तुम्हारी हँसी देखी है—और कुछ न हो चाहे, जब कुछ भी न होगा तो इसी याद का सहारा रहेगा।—इसके बाद थोड़ी-सी शराब ढालकर छोटे बाबू की तरफ बढ़ाते हुए पूछा—लो, पियोगे ?

—शराब से मुझे ऊब नहीं आती—देती हो, पी लेता हूँ।

छोटी माँ ने कहा—तुम इसे शराब कहते हो, मैं कहती हूँ अमृत। याद है, कभी इस चीज से किस कदर नफरत थी मुझे, शराब से, शराब पीनेवालों से कितनी घृणा करती थी मैं ! मगर यह मैं हर्गिज न भूलूँगी कि इसी अमृत ने तुम्हें मेरे पास ला दिया है। जानते हो अब मैं इसे क्यों पीती हूँ ?

—क्यों ?

—तुम्हारे लिए। मुझे नशे की आदत नहीं पड़ी—न कभी पड़ेगी। और सच ही अगर मुझे नशा हुआ है, तो वह नशा शराब का नहीं, तुम्हारा है। तुम्हारे सिवा मैं जिन्दा नहीं रह सकूँगी। इन कुछ महीनों में मुझ पर तुम्हारा सरूर सवार हो गया है। तुम्हारे पैरों पड़ती हूँ, दिन को तुम जहाँ जी चाहे जाओ, मगर रात

को मेरे पास रहा करो।

छोटे बाबू ने कहा—मौज क्या दिन को हो सकती है छोटी बहू ?

—तो फिर एक काम करो।

—क्या ?

—मुझे तुम अपने बगीचे के बंगले में रख छोड़ो। चाहे बरानगर में चाहे खदड़ा में। या फिर जान बाजार ही में दूसरा मकान खरीद लो, उसी में मैं रहूँगी।

—इस घर की बहू होकर बाहर रहोगी तुम ?

—नहीं तो क्या, तुम्हीं घर में न होगे तो मेरे लिए यह घर जंगल ही जानो। वहाँ रहूँगी तो रात को तुम मेरे पास होगे, मैं तुम्हारी सेवा करूँगी। तुम न हो, तो यही सोचना कि चुन्नी के पास हो। या हो तो मेरा कोई और नाम रख लेना, मुझे कोई एतराज नहीं।

छोटे बाबू ने कहा—इससे इस घर की बदनामी होगी।

—और तुम बाहर रात बिताते फिरोगे उससे बदनामी न होगी ?

—नहीं। घर में ही रात बिताने से बदनामी होगी, जैसी कि अभी हो रही है।

—यह कैसा रिवाज है तुम्हारे घर का ?

—रिवाज नहीं, यह यहाँ का कानून है कि घर के मर्द पराई औरत के साथ रात बाहर बिताया करेंगे, लेकिन घर की बहुओं को सती होना होगा। कभी जरा चूक हुई, तो उसे माफ़ी नहीं मिल सकती।

—फिर मैं क्या करूँ ?

छोटे बाबू ने कहा—क्यों, तुम्हें क्या फ़िक्र पड़ी है ? और बहुएँ जैसा करती हैं, करो। बाघगोटी खेलो, गहने पहनो—

छोटी माँ जरा देर मौन रहीं, फिर साँप की तरह फन निकाला।—तुमने मँझली और बड़ी दीदी से मेरी तुलना की लेकिन···और वह अचानक चुप हो गई।

छोटे बाबू किन्तु चुप न हुए। कहा—रुक क्यों गई ? कहो—

छोटी माँ शराब-भरे गिलास को खाली कर गईं। जहर पीने से आदमी की शक्ल शायद वैसी ही होती होगी। छोटी माँ की आँख, नाक, मुँह—सारे चेहरे से मानो आग निकलने लगी। छोटे बाबू मेरे अन्नदाता हैं, मुझे कहना नहीं चाहिए, कहीं मालिक न होते तो क्या जो करता मैं, नहीं कह सकता।

उसके बाद छोटी माँ खिलखिलाकर हँसने लगीं। मुझे लगा, वे हँस नहीं रही हैं, रो रही हैं। उस हँसी की पूछिए न। मतवाले-सी, पागल-सी। हँसते-हँसते वे बिस्तर पर लुढ़क पड़ीं।

छोटे बाबू को जैसे काठ मार गया। उन्हें भली तरह पता था कि पीने से

औरतों की क्या हालत होती है। फिर भी छोटी माँ की यह हालत उनके लिए जैसे नई थी। बिस्तर के पास जाकर पूछा—इस जोर से हँस क्यों रही हो?

छोटी माँ ने सिर उठाया। एक बार बाबू की आँखों पर अपनी आँखें रोपीं। फिर कहा—तुमने मँझली बहू से मेरी तुलना की! मैं गहने तुड़वाकर नये बनवाया करूँ और बाघगोटी खेलती रहूँ बैठी-बैठी।

छोटे बाबू ने कहा—ऐसी क्या आफत ढा दी मैंने! सदा से यही होता आया है। दादा, दादा के दादा के वक्त से यही चला आया है, कभी किसी ने एत-राज नहीं किया। बाबू लोग शराब पीते रहे, कबूतर उड़ाते रहे, रखैल रखते रहे और बहुओं को दाई-नौकर, गहना-गुरिया जुगाते रहे। किसी ने कभी चूँ न किया—यह नहीं समझा कि अपमान हो रहा है उनका। आज तुम्हारी बात से रातों-रात सारा कुछ कैसे बदल जाएगा!

छोटी माँ तकिए में मुँह गाड़कर पड़ी रही।

पैरों की आहट हुई तो छोटी माँ ने सिर उठाया। बोली—मेरी बात का जवाब देते जाओ—

उलटकर खड़े हो गए छोटे बाबू—किस बात का जवाब?

—यही कि तुमने दूसरी बहुओं से मेरी तुलना क्यों की?

—आखिर तुम क्या दुनिया से बाहर हो?

छोटी माँ बाघिन-सी गुर्रा उठी—हाँ, बाहर हूँ। बाहर नहीं होती, तो अपने भाग्य में ऐसा क्यों लिखा होता? दुनिया में और है कौन ऐसी, जिसने अपना सर्वस्व यों गँवाया हो? हिन्दू घर की बहू होकर शराब किसने पी है! कहो, जवाब दिए बिना तुम जा नहीं सकते।

गम्भीर गले से छोटे बाबू ने कहा—छोटी बहू ने!

छोटी माँ फिर साँपिन-सी फुफकार उठी—क्या कहना है, कहो?

—शराब आखिर हम लोग भी पीते हैं, मगर तुम्हारी तरह नशे में नहीं होते।

छोटी माँ बोली—यही क्या मेरी बात का जवाब है?

—मैं शराबी की बात का जवाब नहीं देता।—कहकर छोटे बाबू ने दरवाजे की तरफ़ कदम बढ़ाया।

छोटी माँ फिर चीख उठी—सुनो, अपने सवाल का खुद मैं ही जवाब देती हूँ। तुमने किस मुँह से और बहुओं से मेरी तुलना की? उन सबके जो कुछ था या है, तुम वह दे सके हो मुझे? तुमने कौन-सी दुनिया दी है—लड़का दिया है?

बम फटने से जैसी चमक होती है, कमरा एकाएक उसी तरह चमक उठा। लेकिन जिसे कही गई थी यह बात, उन छोटे बाबू के ही कानों तक न पहुँची।

छोटे बाबू जा चुके थे। मैंने कमरे में झांककर देखा, छोटी मां बिस्तर पर पट पड़ी फूल रही थीं। रो रही थीं कि हँस रही थीं, समझ न सका।

भूतनाथ ने पूछा—उसके बाद ?

वंशी ने कहा—फिर क्या, मैं तो समझ नहीं पा रहा था कि क्या करूँ कि छोटी मां ने आवाज़ दी—वंशी—

मैंने पूछा—मुझसे कह रही हैं ?

—चिन्ता कहां है ?

मैंने कहा—चिन्ता आपके भोजन के इन्तज़ाम में निकली है।

छोटी मां ने कहा—कह दे उससे, मैं आज नहीं खाऊँगी और उसे तुरत बुला ला, कहना मेरे गहने-कपड़े निकाल दे, और सुन, गाड़ी जुतवा, मैं बाहर जाऊँगी।

सोचने लगा कि कुछ पूछना ठीक भी होगा या नहीं। उन्हें भूले भी कभी बाहर निकलते नहीं देखा। मँझली मां, छोटी मां तो पर्व-त्योहार पर कभी-कभी गंगा नहाने भी जातीं। इन्हें तो जब से आई हैं, एक दिन को भी घर से बाहर कदम रखते नहीं देखा। सो उनकी बात पर कुछ परेशानी हुई। मैंने पूछा—कहां जाएँगी ?

गुस्से में तो थीं ही, बोलीं—तुझे भी सफ़ाई देनी पड़ेगी।

मैं वहां से जाने लगा कि मियां जान को खबर करूँ। ज़माने से उनकी गाड़ी खड़ी है। ज़रा झाड़ना-पोंछना होगा। इतने में छोटी मां ने पुकारा—वंशी, सुन जा—

मैं करीब गया। बोलीं—ज़रा भूतनाथ को भी देखना। अगर हो तो कहना तैयार हो ले, उसे मेरे साथ जाना होगा।

भूतनाथ ने कहा—छोटी बहू ने मेरा नाम लिया ?

—जी हां साले साहब, मैं भी हैरान हुआ। नौकर-चाकर नहीं, आपको साथ ले जाएँगी। घर के बाबू लोग कितनी ही मनमानी क्यों न करें, औरतों ने ज़रा भी आज़ादी बरती कि कुहराम। छोटे बाबू सुनेंगे तो कुछ बाक़ी भी रखेंगे !

भूतनाथ ने पूछा—फिर ?

—फिर मैंने आपकी खोज शुरू की। मास्टरजी का कमरा तो वैसे-का-वैसा ही बन्द पड़ा था। यहां-वहां देखा, चोर कमरे में झांक गया, नन्हे बाबू के बैठके में देखा—आप कहीं न मिले। मैंने जाकर छोटी मां से कहा।

छोटी मां ने पूछा—तमाम देख लिया ?

मैंने कहा—कोई कोना-कतरा न छोड़ा। आप कल थे कहां साले साहब ?

भूतनाथ बोला—सारा दिन नौकरी की खोज में चक्कर काटता हूँ। और घर में करूँ भी क्या रहकर ?

—रात के दस बजे छोटी माँ ने फिर बुलाकर पूछा—आया वह ?

मैंने कहा—जी नहीं, अभी तक नहीं आये।

भूतनाथ ने पूछा—फिर ?

—फिर क्या, रात-भर छोटे बाबू अपने कमरे में पीते रहे। मैंने तो पलकें नहीं मोड़ीं, चिन्ता का भी वही हाल। छोटी माँ भी नहीं सोईं—वह भी पीती रहीं। क्या जो वाक़या हुआ, भगवान् जानें! दोनों में इतनी कहा-सुनी ही क्यों हुई, यह भी राज समझ में न आया। बीच में ठीक था। राम जानें अब क्या होगा ?

भूतनाथ ने कहा—इस अरसे में कभी वृन्दावन मिला था क्या छोटे बाबू से ?

—क्या पता ? मैं तो बिंदावन को देखते ही दुतकार भगाता हूँ। कह भी दिया है, इस अहाते में कदम रखा तो टाँग तोड़ दूँगा। फिर भी लुक-छिपकर आता है। ये मधुसूदन वगैरह हैं न, ये सारे-के-सारे लोग उसी जमात के हैं—यहाँ तक कि विधु सरकार भी। क्या मनसूबे गाँठ रहे हैं, वही जानें! आज सुबह ही छोटे बाबू ने कहा—शाम को मैं जान बाजार जाऊँगा—गाड़ी तैयार रखने को कह दो। सुबह से ही मैं तैयारी में लगा हूँ।

बंशी जाने लगा। अचानक फिर लौटा—जी एक बात—

भूतनाथ ने कहा—क्या ?

—आज सुबह ही आपको पूछ रही थीं छोटी माँ। मैंने कहा, कल बड़ी रात हो गई, तब लौटे हैं। मुझसे भेंट नहीं हुई है। मिलेंगे तो कह दूँगा।

छोटी माँ ने कहा—मिलेगा तो नहीं, तू जाकर उसे मिल ले। कह देना, आज शाम को कहीं न निकले। छोटे बाबू के चले जाते ही उसके साथ मैं बाहर जाऊँगी। सो आज तो हुजूर भगवान् के नाम पर आप कहीं न जाएँ, वरना मुझे तो कच्चा चबा डालेंगी।

भूतनाथ को डर लगा। आड़-ओट में छोटी बहू से उसकी कितनी ही घनिष्ठता हो चाहे, खुलेआम इस तरह उसके साथ गाड़ी में जाना कैसा दीखेगा। कोई बात उठ खड़ी हो, तो छोटी बहू तो निकल जाएगी, अपना क्या हाल होगा ? मैं न था इन लोगों का कोई सगा-सम्बन्धी हूँ, न बन्धु-बान्धव। अपनी हस्ती भी क्या ? इस घर का आश्रित मास्टर साहब और उसका आश्रित मैं! एक ही भरोसा है कि छोटी बहू का कृपापात्र हूँ। लेकिन डर की वजह भी तो यही है। इस घर की बहुओं को धूप के दर्शन नहीं होते, फिर ऐसी एक बहू से उसका सम्बन्ध तो असामाजिक ही है, ग़ैरकानूनी। फिर यह भी सोचने की बात है कि छोटे बाबू से उसकी बनती नहीं। और पी-पिवाकर जानें कब क्या कर बैठें ? रास्ते में ही कोई वाक़या कर गुज़रें।

भूतनाथ ने पूछा—तुम्हारा क्या खयाल है बंशी, मेरा जा— —

होगा ?

—आप खुद पढ़े-लिखे हैं हुजूर, मैं आपको क्या बताऊँ ?

—फिर भी तुम्हें इस घर के रवैये का बहुत-कुछ पता है।

इस घर में तो अपनी ज़िन्दगी में मैंने ऐसा कभी नहीं देखा। बहुएँ कभी निकलती भी हैं, तो पिछली खिड़की और पालकी से जाती हैं। पहले पालकी के पीछे-पीछे दाइयाँ दौड़ती जाती थीं। जहाँ जातीं, वहाँ कपड़े से मच्छरदानी-जैसा घेरा डालकर तब उतरतीं। मगर ऐसा कभी नहीं सुना। छोटी माँ की बात ही जुदा है। इनके जैसा स्वाभिमान भी किसी में नहीं, इनकी तरह प्यार करना भी कोई नहीं जानती। आप ही समझिए, तीन महीनों से हम दोनों भाई-बहनों को तनखा नहीं मिली है। फिर भी कलेजे के जोर से टिके तो हैं यहाँ।

भूतनाथ ताज्जुब में आ गया—कह क्या रहा है तू ?

—जी, सच ही बता रहा हूँ।

—तनखाह क्यों नहीं मिली ?

—यह न पूछिए हुजूर, मेरी तरह जो छोटी माँ की तरफ़ हैं, वैसे बहुतों को नहीं मिली है।

—छोटी बहू को इस बात का पता है ?

—छोटी माँ की मैं देवी की तरह भक्ति करता हूँ साले साहब! उनकी सारी जिन्दगी दुःख में ही गुजरी। कसम ले लें, जभी तो कभी-कभी लगता है, भगवान् है भी ? आखिर इस बिचारी को भी तो हविस है।

—कैसी हविश ?

—बच्चे की! बच्चा न हुआ, न होगा अब। इसी से अपनी तनखा का ज़िक्र करके उनका दिल नहीं दुखाना चाहता। देखा आपने, उस दिन हवागाड़ी के लिए क्या हो गया।

हवागाड़ी की भूतनाथ को याद है। कितनी खूबसूरत गाड़ी! चुनकर सबसे अच्छी गाड़ी खरीदी थी मँझले बाबू ने। देखते ही बनती थी! वैसी गाड़ी किसी रईस को नसीब नहीं। छेनीदत्त जिन्दा नहीं, नहीं तो ईर्ष्या से उसकी छाती फटती। जिस दिन गाड़ी आई—देखनेवालों का काफ़ी रात तक तांता लगा रहा। आँखें नहीं अघातीं।

किसी ने कहा—आईने-सा मुँह दीखता है इसमें, है न ?

उत्सुकता को ज़ब्त न कर पाकर किसी ने भोंपू को दबा दिया कि आवाज हुई। हलचल हो गई।

—गाड़ी को कौन हाथ लगा रहा है, कौन है रे ?

मधुसूदन दौड़ा आया। लोचन। विधु सरकार।

बार-बार ताकीद कर दी है मँझले बाबू ने—गाड़ी को कोई हाथ न लगाए।

छूते ही दाग लग जाएगा। आखिर यह लैंण्डो और ब्रूहम नहीं है कि दाग लगा और ब्राहटन कम्पनी में भेजकर ठीक करा लिया। यह खास विलायती गाड़ी है। यहाँ इसकी मरम्मत नहीं हो सकती है। पुर्जा बिगड़े तो विलायत भेजना पड़ेगा।

विधु सरकार ने डाँट बताई—अबे लड़को, निकलो। सब दाई नौकरों के बच्चे उसकी घुड़की से भाग खड़े हुए। दासू मेहतर का लड़का दूर खड़ा देख रहा था। उसने गाड़ी को हाथ नहीं लगाया। लगाने की हिम्मत भी न थी। परिवार-सहित दासू खुद भी आया था। लौट गया। उसका छोटा बेटा वहीं रह गया था। लोभ न रोक सका बेचारा।

विधु सरकार उसी पर झपटा।

लेकिन पास पहुँचते ही पहचानकर सहम गया। मेहतर को छूने से शाम को नहाना पड़ जाएगा। धमकाकर बोला—अबे लौंडे, भाग जा हरामजादा!

मेहतर का लड़का, सरकार बाबू को देखकर ही रो न पड़ा, यही गनीमत। ऊपर से यह डाँट। पास ही एक दूसरा लड़का खड़ा-खड़ा देख रहा था। आखिर में विधु सरकार कान पकड़कर उसी को खींचने लगा—तू कौन है बे, किसका बेटा है?

लड़का चुप।

लोचन ने बताया, वह इब्राहिम का बेटा है।

एक थप्पड़ जमाकर विधु सरकार किटकिटाया—जैसी बाप की शक्ल! जोधपुर के फिलखाने में था, मरने को और कोई जगह नहीं मिली—फिर वहीं भाग जा—अब तो बाबुओं ने मोटर ले ली—अब क्या खाक करेगा यहाँ!

लेकिन वह रत्ती-भर का लौंडा भी छँटा हुआ था—गेहुँअन का बच्चा हो जैसे। वह न रोया, न कुछ बोला। किया क्या कि भर मुँह थूक लेकर सरकार के मुँह पर थूक मारा।

फिर क्या था, आग में घी के छींटे पड़ गए। देखने ही लायक हो गया विधु सरकार! सरकण्डे-सा चिमड़ा शरीर। वह उछल-कूद शुरू की कि पूछिए न। सुबह जो मोटर देखने नहीं आये थे, अब वे भी आ जुटे। माना कि वह ब्राह्मण नहीं है, मगर थूक तो मुसलमान का ठहरा। जात ही चली गई। बुला कम्बख्त इब्राहिम को। उसकी तो नौकरी पर बन आई—अब गई, तब गई!

शोरगुल सुनकर अन्त में आ पहुँचे बद्री बाबू। क्या हुआ? मोटे-मोटे-से आदमी। इतनी ही दूर आने में हाँफ उठे। खाली बदन। कमर में घड़ी। कमर पर हाथ रखकर खड़े हो गए। बोले—गोबर खा ले विधु जात बच जाएगी।

विधु सरकार गरम हो उठा—आप तो चुप ही रहो घड़ी बाबू! नास्तिक! मुर्शीद कुली खाँ के जूठन पर पले, जात का मर्म क्या जानो?

बद्री बाबू हँसने लगे। बोले—मैं तो जात-पाँत नहीं मानता. यह सबको

मालूम है।

—पता है मुझे। तुम न तो हिन्दू हो न ब्राह्मण; ईसाई भी नहीं हो, मुसलमान भी नहीं—तुम अधार्मिक हो—मक्कार।

बद्री बाबू ने शान्त स्वर में कहा—जात नहीं मानता, इसके यह मानी नहीं कि धर्म भी नहीं मानता। अक्ल होती, तो समझते की जात और धर्म दोनों एक चीज़ नहीं।

विधु सरकार ने कहा—अक्ल होती तो तुम भी घड़ी में कुन्जी नहीं देते फिरते, मेरी तरह खजांचीखाने में बैठते।

बद्री बाबू बोले—खुशकिस्मत हूँ कि खजांचीखाने का पोद्दार न बना।

—बनते क्या, उसके लिए तो अक्ल चाहिए।

—सो हो, मगर धर्म नहीं रहता है।

विधु सरकार जोरों से बिगड़ उठा। बोला—यानी तुम यह कहना चाहते हो कि मेरा धर्म नहीं! मैं अधर्म करता होता तो बाबुओं की जमा-पूंजी बचती?

आखिर ज़मींदारी तो तुम्हारी ही वजह से जाने को है।

—मतलब?—विधु सरकार आपे से बाहर हो गया।

—मतलब कि घड़ी अब न चलेगी, मैं कुन्जी लाख दूं चाहे, घड़ी न चलेगी। देख लेना, एक दिन मेरी टेंट की घड़ी भी बन्द हो जाएगी। उतना बड़ा बादशाह आलमगीर, वही न रहा—सीताराम, अबू तुरप, रजा खां, ईशा खां—कोई न रहा तो ये बाबू। क्या पिद्दी और क्या पिद्दी का शोरबा! और आ तो गई वह—

—क्या आ गई?

—यह—कहकर उन्होंने मोटर दिखा दी।

—इसकी कीमत भी जानते हो, यह कोई घड़ी नहीं तुम्हारी!

कीमती है, जभी तो जाएगी। दर्पनारायण जब जेल में थे, तो एक रात एक साधु उनके पास आया। चालीस दिनों की फाकाकशी। मुर्शिद खां ने प्रतिज्ञा की थी कि उसका खून करके ही शान्त होऊँगा। साधु ने पूछा—धर्म चाहते हो कि जिन्दगी? दर्पनारायण ने कहा, धर्म। साधु चला गया। पन्द्रह दिन के बाद फिर पहुँचा। दर्पनारायण की हालत बड़ी दर्दनाक थी। चावल का एक दाना। पानी की एक बूंद। छटपट कर रहे थे। साधु ने फिर वही सवाल किया। उन्होंने फिर कहा—धर्म। अन्तिम दिन भी साधु ने उनसे यही पूछा था और उन्होंने यही जवाब दिया था। मैं उसी दर्पनारायण का वंशधर हूं। मैं पूछता हूं, बाबुओं के धर्म के पैसों से तुमने के गांव, के ताल्लुके खरीदे?

जिसके लिए यह सारा टण्टा खड़ा हुआ, जाने वह कब चुपचाप खिसक गया। सामने आ खड़ा इब्राहिम। बोला—जाने दीजिए घड़ी बाबू।

इब्राहिम को सामने देखकर विधु सरकार ने पूछा—अच्छा, आ गए। कै हीनों से तुम्हें तनखाह नहीं मिली, बताओ?

—दो महीने से।

विधु सरकार एकाएक चिल्ला उठा—आज ही मैं मँझले बाबू से कहता कि बद्री बाबू सभी लोगों को उभार रहे हैं और चाबुकों की चोट से आज ही को खदेड़ने का इन्तजाम करता हूँ।

सबको सुनाकर बद्री बाबू बोले—इससे मगर तुम्हारी जात नहीं लौटने । याद रखना, तुमने मुसलमान का थूक खाया है।

गुस्से से गुर्राता हुआ विधु सरकार चला गया।

किन्तु दो ही दिन बाद बद्री बाबू का कहा फला।

गाड़ीवाला साहब एक दिन आया। उसके आने की खबर पाकर मँझले बू नीचे नहीं उतरे। उस रोज नाच-घर में खाना-पीना भी न चला। साहब या और गाड़ी को ले गया। फिर न लौटा।

जिस रोज गाड़ी आयी थी, इब्राहिम ने उस दिन भी कुछ न कहा था, ज भी ऊपर से सिर्फ देखता रहा।

शाम को रोज की तरह इब्राहिम गाड़ी ले गया। यासीन ने उसके हाथ मे बुक दिया। मँझले बाबू चढ़े। हाथ में पान का डब्बा लिए बड़ी मालकिन बैठी। सके बाद मँझली बहू। हासिनी। पिछली गाड़ी में भैरव बाबू, मोती बाबू, तारक बू वगैरह। कुछ बोतलें लदी, भोजन-भरा टोकरा चढाया गया, बर्फ, सोडा, रमोनियम-तबला, घुंघरू—और भी क्या-क्या!

गेट खोलकर बिरिजसिंह चीख उठा—होशियार···और इब्राहिम ने गली र करके गाडी को बहू बाज़ार स्ट्रीट पहुँचा दिया।

—मोटर जब आई, तो चली क्यों गई?

मधुसूदन ने कहा—मँझले बाबू को जँची नहीं गाडी।

लोचन ने बताया—मँझले बाबू दूसरी गाडी लेंगे।

हुक्के में दम लगाते हुए भैरव बाबू ने कहा—उँहूँ, असल में यह काला रग न्हें पसन्द नहीं—आँखों में लगता है। मोरपंखी रंग चाहिए। आ रही है विलायत वैसी गाड़ी जहाज से—आ ही चली।

भूतनाथ ने पूछा—सच ही क्या गाडी आएगी वैसी?

—अब खाक आएगी! देखा नहीं, नन्हे बाबू के श्वशुर का रोज चक्कर लग रहा है?

—क्यों आता है?

देखा तो भूतनाथ ने भी था। शादी के कुछ दिन तक तो हाबुलदत्त बिलकुल नहीं आता था, पर आजकल अक्सर आने लगा था। गाड़ी पर ही आता था। मोटर

नहीं थी। पहली बार जब लड़की मैके लौटी तो उसी की मोटर से गई थी और फिर आई थी बड़े घर की मोटर से। आजकल हावुलदत्त ट्राम से आया करता।

भैरव बाबू कहते—ट्राम से आना हुआ क्या?

—हाँ, ट्राम से ही आया।

—बड़ी तकलीफ हुई। कित्ते पैसे लगे?

—सात पैसे। बड़े आराम से आया।

—वह चाहे जो हो, ट्राम में लेकिन इज़्ज़त नहीं है।

इतने में आ पहुँचे मँझले बाबू। इत्र की महक से कमरा महमहा उठा। तीसरे पहर सोकर उठे और बिलकुल तैयार होकर ही उतरे। लोचन चिलम भरकर दे गया। फूँककर धुआँ भी निकाल दे गया। पीते-पीते मँझले बाबू बोले—इज्जत की कुछ कह रहे थे शायद भैरव?

—जी, ट्राम का ज़िक्र हो रहा था। चीज़ तो अच्छी ही हुई, लेकिन उसमें इज्ज़त नहीं—सट-सटकर बैठो।

हावुलदत्त ने पूछा—मोटर खरीदी क्या समधी साहब?

मोती बाबू ने बगल से कहा—मोटर न खरीदना ही बेहतर है मँझले बाबू! खुली और हवा हो गई। न किसी ने देखा, न कोई तारीफ़ कर सका। यह जरा फँसी तो···

भैरव बाबू बोले—कल-पुर्जे का कारबार, बिगड़ा कि मुसीबत, रास्ते पर पड़े-पड़े मर मारते रहो···।

तारक बाबू ने कहा—वैसा घोड़ा हो तो मोटर को मात कर दे। हीरा-मोती से सजाइए घोड़े को, कोचवान को दीजिए जरी की पोशाक—देखने वाले देखते ही रह जाएँगे।

बात जमती नहीं कुछ। रोज़ यही होता।

हावुलदत्त पूछता—नन्हे बाबू की नींद खुली?

मँझले बाबू बेनी को बुलाकर कहते—जरा देख तो आ रे बेनी, नन्हे बाबू नीचे उतरे या नहीं?

उस दिन नन्हे बाबू से भी भेंट हो गई। भूतनाथ ने छेड़ा—कैसे हैं आप नन्हे बाबू?

इन्हीं कुछ दिनों में नन्हे बाबू के रवैये बदल गए। गाने-बजाने का सिलसिला टूट गया। इस घर में एक अजीब ही जीव हैं ये। पहले भी इस घर में बहुतों की शादी हुई है। मगर जो ब्याह से पहले, वही ब्याह के बाद। छोटे बाबू तो पहली रात, रात के बारह बजे घर आये थे। इन्तजार करते-करते छोटी बहू सो गई थीं। ऐसे में भी शोर करते हुए घर आने में उन्हें शर्म न आई। मुँह से बदबू निकल रही थी। पैर लड़खड़ा रहे थे। उस रात बीवी के कमरे में सोये जरूर थे, मगर इसके

लिए उलाहने नहीं सुनने पड़े थे। वैदूर्यमणि भी छुटपन में कुछ कम न थे। बड़ी मालकिन को देखकर उस समय की शक्ल का अनुमान भी नहीं किया जा सकता। दूध-सा साफ रंग। जिस दिन बरात लौटती की दावत थी, दूल्हे का पता नहीं। सारे कलकत्ते की खाक छानी गई। आखिर रामबागन की साहब बीणा के घर मिले। बीणा का रंग अंग्रेजों-सा गोरा-चिट्टा था, इसीसे ऐसा नाम पड़ा था। बदहोश पड़े थे वहाँ। और मँझले बाबू! इनके कारनामों की तो गिनती नहीं। फिर भी बाबुओं में उनकी कद्र ही बड़ी है।

मगर नन्हे बाबू जैसे सबसे जुदा हैं।

भूतनाथ ने कहा—आजकल तो आपका पता ही नहीं चलता। सगीत की बैठक भी नहीं होती।

गाड़ी से उतर रहे थे नन्हे बाबू। हाथ में थी किताब। कॉलिज से लौट रहे थे शायद। बोले—इम्तहान सिर पर है। ज़रा पढ़ने में लग गया हूँ। होली के मौके पर गाने-बजाने का कुछ किया जाएगा।

भूतनाथ ने पूछा—अभी इम्तहान कैसा?

—ऐटर्नीशिप का। बड़ा कड़ा इम्तहान है। शादी के चलते काफ़ी दिन बरबाद हो गए, पढ़ाई हुई नहीं।

बस, इतनी ही बात हुई थी। जाने कहाँ, किस कमरे में बैठकर पढ़ा करते हैं!

वंशी ने कहा—आखिर तक आपने मेरे भाई के लिए कुछ न किया, नन्हे बाबू ने दूसरा आदमी रख लिया।

—किसे रख लिया?

—अपनी ससुराल से लाकर किसी को रखा। यहाँ के किसी को अब नहीं रखेंगे वे।

—इस घर के लोगों से नन्हे बाबू को इतना गुस्सा क्यों है?

वंशी ने कहा—वे आदमी ज़रा और किस्म के हैं। जी, मैं जो कहूँगा, सच ही कहूँगा। रात-दिन बस ससुराल कि ससुराल। और वैसे मिले हैं उन्हें ससुर—जब देखो यही, दामाद का कान फूंक रहे हैं।

भूतनाथ ने पूछा—हाबुलदत्त को कह रहे हो?

—जी, दत्तों का खानदान कुछ बुनियादी तो है नहीं। इसीलिए मँझले बाबू की ख्वाहिश नहीं थी वहाँ शादी करने की। लेकिन बड़ी माँ अड़ गईं। उन्हें लड़की पसन्द आ गई थी। घर ही पर एक दिन लड़की को दिखा गए थे। आते ही उस ज़रा भर की लड़की ने बड़ी माँ को माँ कहना शुरू कर दिया। देखते-ही-देखते सबको अपना बना लिया उसने।

इस घर का नियम ही यही है। बड़ी माँ के बाप भी यहाँ लड़की दिखा गए थे। मँझले बाबू के ससुर भी मँझली माँ को ब्याह के पहले यहाँ ले आए थे।

विधु सरकार बिगड़कर आग हो गया—बेअदब कहीं का, बाबुओं की पंचायत बैठी है—अभी उनका हुक्म बजाऊँ कि तेरा ? जिन्दा रहा तो कल चुका दूँगा।

भूतनाथ ने बेनी से पूछा—बाबुओं की पंचायत कैसी ?

—मुझे मालूम नहीं हुजूर !

बेनी को मालूम नहीं। लोचन को भी नहीं। मधुसूदन जानता भी होगा, तो बताएगा ?. दिन-भर कैसी उदासी रहती ! कहीं जैसे कोई आकर्षण नहीं। छोटी बहू शायद अपने कमरे में नशे में झूम रही हो ? भूतनाथ की अब जरूरत नहीं रही शायद। जिस दिन से बोतल टूट गई थी, उस दिन से भूतनाथ फिर नहीं गया।

बंशी ने भी कहा—राम जाने, कैसी पचायत है हुजूर !

—नाचघर मे है कौन-कौन ?

—मैंने देखा, मँझले बाबू, छोटे बाबू, नन्हे बाबू और नन्हे बाबू के ससुर, ये चार जने हैं। चाहें तो पंचायत कहें। खजांचीबाबू भी हैं—खड़े-खड़े जो पूछा जाता है, जवाब देते हैं।

बरसों सब साथ रहे हैं, ऐसा तो कभी नहीं हुआ। देखा-देखी भी मुश्किल से ही होती है, गो कि आपस में कोई झगडा भी नही।

—अभी-अभी मधुसूदन बालक बाबू को बुलाने गया है।

—बालक बाबू कौन ?

—जी, इनके वकील हैं। वह बाजार के बालक बाबू वकील।

बड़े महल के इतिहास मे बेशक नई बात थी यह। फिर भी काफी दि निकल गए, नतीजा कुछ मालूम न पडा। दो-दो घटे तक बातें चलती रही औ शाम को फिर जो जहाँ चले गये। भूतनाथ जवा के यहाँ गया था। लौटकर उस बंशी से पूछा—क्या हुआ, कुछ पता चला ?

—किस बात का क्या हुआ ?

—बाबुओं की पंचायत का।

—राम जानें साले साहब ! छोटे बाबू ने आकर बर्फ माँगी। मैंने दी बड़े थके-से दीखे। गम्भीर-से थे। कुछ बोले नहीं। पलग पर पड गए। मैं पैर दबान लगा। इस घटना के बाद फिर सब शान्त।

विधु सरकार का मिजाज और भी रूखा हो उठा। कहता—भैया, य तुम्हारा डाकघर नहीं है, कानून न बघारा करो यहाँ—जो करना हो करो जाकर इस महीने में कुछ नहीं मिलेगा—अगले महीने आना।

—जी, पाँच-पाँच महीने हो गए, सिर्फ़ बाईस रुपये।

सरकार उछल पडता—बाईस हो चाहे बासठ हो, नहीं मिलेगा तो नहं मिलेगा, कह तो दिया। बस। अदालत खुली पडी है, जो करते बने, करो।

जाड़ों में बनारस की नन्ही बाई कलकत्ते आया करती। इन दिनों शायद भारत के तमाम बड़े शहरों में मुजरे के लिए जाया करती वह। नन्ही शक्ल। नाक में हीरे की कील। गले में चन्द्रहार। दाएँ कन्धे पर साड़ी का अँचरा लटका देती। यहाँ कई जाने-सुने घरों में जाकर सलाम बजा आती। इस बार भी बड़े महल में आई। मँझले-बाबू ने कभी वापस नहीं किया।

जमात का सरदार था मुन्नालाल। रेशमी पगड़ी पर चुमकी का काम। पैरों में आगरे का नागरा जूता।

विधु सरकार ने पहचाना। बहीखाते से सिर उठाकर ऐनक के ऊपर से एक बार देखा।

—सलाम खजांची बाबू!

—मुन्नालाल! आ गए फिर?

—जी, दो रोज हुए, आया हूँ। कल हाटखोला के दत्त बाबू के यहाँ मुजरा था, आज ठनठनिया के दत्त बाबू के यहाँ है। मँझले बाबू को सलाम पहुँचाने आया हूँ।

—नन्ही बाई कैसी है?

—जी, आप लोगों की दुआ और खुदा के फज़ल से ठीक हैं सब—मँझले बाबू का हुक्म हो तो एक दिन यहाँ भी···

कहने से विधु सरकार बाज़ न आया। बोला—हर मरतबा तुम लोग पहले यहाँ आते थे, तब कहीं जाते थे ठनठनिया के दत्त के यहाँ। अबकी ऐसा क्यों? क्या मँझले बाबू ज्यादा नहीं देते हैं?

—राम-राम, यह क्या कह रहे हैं आप? असल में इस बार ननी बाबू खुद लिवा लाए थे हमें, साहबों की पार्टी थी। तीन दिन तक तो वहीं से फुरसत न मिली। आने की सोच ही रहा था कि नाट्र बाबू का पैग़ाम पहुंचा···आज मौका निकालकर आया हूँ—गुस्ताखी माफ़ हो।

—यह ननी बाबू कौन?—विधु सरकार ने भवें सिकोड़ीं।

—जी, पटलडांगा के ननी बाबू।

विधु सरकार फिर भी न पहचान सका। भाड़ में जाए! आजकल तो हर कोई बाबू हैं। थोड़े-से कच्चे पैसे हुए कि बाबू बन गए। छेनीदत्त मरा, अब नाट्र बराबरी कर रहा है। खैर, तुम बैठो मुन्नालाल। मँझले बाबू अभी सो रहे हैं—जग जाएँ तो खबर कर दूंगा।

नजर पड़ी और दौड़ा आया बंशी।—आज तमाम दिन आप रहे कहाँ साले साहब, आपको तो बार-बार कह दिया था कि शाम को हरगिज़ कहीं न जाएँगे—तैयार रहेंगे। मुझे छोटी माँ से क्या नहीं सुनना पड़ा।

—क्यों, क्या हो गया ?

—छोटी माँ तैयार हो रही हैं।

—तो मैंने देर कहाँ की ! जरा निकल गया था घूमने।

—कहाँ गये थे आप, सुनूँ जरा ?

—और कहाँ जाता, नौकरी की तलाश में रोज जैसे जाता हूँ।

बात बिलकुल सही तो न थी। नौकरी की तलाश में निकला जरूर था, ांकिन कैसे-कैसे इस तरह वह जवा के यहाँ जा निकलेगा, यह कौन जानता था ! ौर जरूरत भी क्या थी जाने की ! किसी ने कसम तो दिया नहीं था जाने के ळए। फिर गया न होता तो वैसी जगह लोचन से भेंट भी न होती।

वंशी ने कहा—आप अपने कमरे में बैठें—मैं देख आऊँ, छोटी माँ को क्या र है।

खबर मिली थी, एक नई कम्पनी खुल रही है। कुछ लोग उसमे लिये ाएँगे। चिलचिलाती धूप। उसी में पाव-पयादे जा पहुँचा दमोहाटा। मगर कहाँ े कम्पनी और कहाँ तो क्या ! पुराना मकान तोड़कर नया बन रहा था।

एक ने बताया—अभी क्या पूछते हैं—पहले मकान तो बन ले, फिर ादमी। अभी कम-से-कम छ. महीने।

नई कम्पनी का दरबान था शायद वह। बैठा-बैठा खैनी मल रहा था। ले में जनेऊ। बात बताकर रामायण पढ़ने लगा। सटे-सटे मकान। तंग गली। ंकिन उसी पतली-सी गली के मोड़ पर एक बड़ा-सा बरगद। रास्ते तक उसकी ड़ें। कहीं बैठकर सुस्ता लेता तो ठीक था। कुली ठेलों पर सामान लिये जा हे थे।

जो भी सामने मिला, भूतनाथ ने उसीसे पूछा—इधर कोई नौकरी मिलेगी भैया ! कोई भी नौकरी। सात-आठ रुपये की।

इस तरह कुछ रोज चक्कर काटने से कोई-न-कोई जगह मिल ही जाएगी। ीना बाजार, सुर्तीबगान, राधाबाजार, सोयालो लेन, लियन्सरेंज—इन मुहल्लों ं बहुतेरे नये दफ्तर खुले थे।

उस दिन ननी के यहाँ गया था। बातें होती रहीं इधर-उधर की। भूतनाथ े कहा—रात हो गई, चल अब।

—जाएगा। और थोड़ी देर ठहर जा।

—आखिर तू खाएगा नहीं—बीवी फटकारती नहीं तुझे ?

ननी ने गिलास को खाली करके कहा—औरतों का नशा अब उतर गया भाई—वह विन्दो, मिसेज प्रियर्सन और अपनी बीवी—सब एक ही हैं। अब तो रुपये की लगन है। बस। जमाना रुपयों का है और रुपयों क. जड हैं कल-कारखाने और कोयले की खानें। मैं कहता हूँ, देख लेना, एक दिन रानीगंज, आसनसोल

फुलटी, हावड़ा, हुगली, बर्दवान, मानभूम, सिंहभूम—ये सारी जगहें सोना उगलेंगी। ये जगहें कलकत्ते से बड़ी बन जाएँगी—सारे कल-कारखाने वहीं खुलेंगे।

—सपने देखा करता है तू ?

—हाँ, लेकिन जगते हुए। भैया, मेरे और कोई सपना नहीं—यही देखता हूँ कि मेरे कारखाने में हज़ारों-हज़ार, लाखों-लाख लोग काम करते हैं—मजूरों की कतारें चल रही हैं और मेरी गाड़ी के सामने रुक-रुककर लोग सलाम कर रहे हैं।

इसीलिए मैंने उस दिन नन्हे से कहा कि रुपया चाहता है तो खान खरीद—बग़ैर कोयला के कुछ न होने का। जमाना स्टीम का है। स्टीम के लिए कोयले की जरूरत है—मगर उसके चाचा की राय नहीं।

भूतनाथ ने कहा—नन्हे बाबू ने तो इन दिनों पढ़ने में बड़ा जी लगाया है। बोले कि गाना-बजाना बन्द कर दिया है।

—उससे कुछ भी न होगा। कह रहा था मुझसे, जमींदारी से अब वैसी आमदनी नहीं होती। खा-पका जाते हैं लोग। गाँव के लोग अब शहरों में ही नौकरी के लिए आने लगे हैं। उसकी शादी में भी जमींदारी से कुछ नहीं आया। उस दिन उसके मँझले चाचा ने गाड़ी खरीदी, दाम दे नहीं पाए सो गाड़ी बेच देनी पड़ी। बीच में कुछ रुपयों की खामखाह चपत पड़ गई।

—लेकिन सुना कि नन्हीं बाई तो तीन सौ रुपये ले गई उस दिन।

—बस, आन की बात। मैं बाईजी को पाँच सौ पर लखनऊ से ले आया था। साहबों को दावत दी थी। सो पाँच सौ गँवाए तो पाँच हज़ार कमाए भी।

—वह कैसे ?

—मुझमें और उनमें यही तो फर्क है। वे रुपयों से बच्चे नहीं दिलवा सकते। सुना, अभी-अभी उसकी चाची ने अपनी दाई की गुड़िया से अपने गुड्डे का ब्याह रचाया है। बड़ी धूम-धाम हुई। नन्हे ही तो कह रहा था।

वह भी एक ही रही। नन्हे बाबू के ब्याह के दो दिन पहले। अचानक भूतनाथ को भी न्योता आ गया।

भूतनाथ ने पूछा—एकाएक यह न्योता कैसा ?

—जी, आज तो मँझली माँ के गुड्डे का ब्याह हो रहा है गिरि की गुड़िया से।

गिरि ने कहा—माँजी, मेरे पल्ले रुपये कहाँ, बिटिया को मैं गहने पाते तो कुछ दे न सकूँगी।

मँझली माँ ने कहा—अपनी बहू ही तो ठहरी, गहनों से मैं सजा लूँगी उसे, तू ब्याह की तैयारी कर।

तैयारी भी ऐसी-वैसी नहीं। नौबत झरने लगी : बदस्तूर लोगों को न्योता

भेजा गया। देखने लायक सामान। कांच और सोने की चूड़ियाँ, हार, छेना के खिलौने—दस टोकरे कपड़े। ब्याह में जो होता है, सब हुआ। मुबलिग हज़ार-बारह सौ रुपये निकल गए।

ननी ने कहा—ज़माना बदल गया है, इसकी उन्हें खबर ही नहीं। मैंने कहा तो उससे, धीरे-धीरे ज़मींदारी को समेट ले, कलक्टरी में दरखास्त देकर जो भी हकूक है, बेच डाल। खरीदारों की कमी नहीं। मैं ही खरीद ले सकता हूँ। और फिर उन रुपयों से चाहे कुछ न कर, कोयले की खान खरीद ले। एक खान से एक पुश्त का मज़े में चल जाएगा। वही कारखाना खोल दे। लोहे का युग है। रत्ती-रत्ती सब समझा तो दिया मैंने।

—कहा क्या नन्हे बाबू ने ?

—असल में वह कहे तो क्या, उसकी नकेल तो उसके ससुर ने थाम ली है। वही सारी राय देता है। ब्याह के पहले उसने लड़के के बारे में पूछा था। मैंने कह दिया था, गोबरगणेश है। भले-बुरे की बला नहीं। खुद सम्हाल सकें, तो लड़की दीजिए। खानदान पुराना है, इसमें शक नहीं, मगर आजकल उसकी पूछ भी क्या रही ? वह ज़माना लद गया। यह कैपीटलिज़्म का युग है, जिसे पूंजी है, कदर उसी की है। द्वारकानाथ ठाकुर ने विलायत में दोनों हाथों रुपये लुटाए, नमक के एजेंट प्लाउडन साहब की दीवानी की, नील का कारोबार किया, यूनियन बैंक, चीनी की मिल, कोयले की खान की—इसी से प्रिंस कहलाए। लोग नाम राम-मोहन का लेते हैं, मगर आदमी तो प्रिंस है।

खासी रात हो आई थी। आरामकुर्सी पर पाँव समेटे ननी लेट गया था। खासा बड़ा मकान। दुमंज़िला। पूजा-घर। ड्योढ़ी देखते ही पता चल जाता कि इसके मालिक ने भी कलकत्ते की नींव पड़ने के समय से धन बटोरना शुरू कर दिया था। ननीलाल के ससुर न था। नाबालिग साले ननीलाल की दया पर रहते थे। मकान-मालिक जिसकी कल्पना भी नहीं कर सके, ननीलाल ने वह कर दिया।

ननी ने कहा—एक बार विलायत जाने की सोच रहा हूँ।

—बीवी एतराज़ न करेगी ?

—किसी के कहने-सुनने की परवाह करने से काम नहीं चलता। काफ़ी दिनों से जाने को लिख रहे हैं लोग। बहुत-सी नई मशीनों का आर्डर दिया है। अपनी आँखों देखकर खरीदने की इच्छा है। फिर बताया तो, अपना आदर्श है प्रिंस द्वारकानाथ।

इतने में किसी के पैरों की आहट हुई। ननीलाल ने आवाज़ दी—कौन है बद्री ?

—जी, रात काफ़ी हो गई—आज क्या खाएँगे ?

—क्या खिलाएगा, बता ?

—हुज़ूर की जो भी मर्ज़ी होगी, वही खिलाऊँगा।

—जी चाहे, सो पका।

बद्री चला गया। घनी दाढ़ी। सिर पर पगड़ी। कमर में पेटी। खानसामे-जैसी शकल।

ननी बोला—यह बदरुद्दीन है। मैंने उसका हिन्दू नाम रख दिया है—बद्रीनारायण।

—मुसलमान है।

—हाँ। बड़ा बेहतरीन खाना बनाता है। इसका दादा द्वारकानाथ का बावर्ची था।

—घर की रसोई नहीं खाता है ?

—मेरा रात का खाना बाहर ही बनता है। कब लौटूंगा, इसका ठिकाना नहीं। इसके अलावा, अन्दर की रसोई का बड़ा नियम है। वहाँ के बर्तन बाहर आए तो फिर अन्दर नहीं जाते। बाहर के बर्तन अलग हैं। मेरे अन्दर जाने में कोई एतराज़ नहीं, मगर बर्तन गए कि पुराण अशुद्ध।

बहुत आगा-पीछा करने के बाद भूतनाथ बोल उठा—मेरी नौकरी के बारे में कुछ सोचा था ?

ननी शायद सो गया था—आँखें खोलकर बोला—बेशक मैंने तो कह ही रखा है कि मेरी ही फ़र्म में होगी नौकरी।

भूतनाथ बोला—मारा-मारा फिर रहा हूँ, लोग···

अचानक ननी को क्या तो याद आ गया। कहा—हाँ, तेरे उस आदमी का क्या हुआ, कह रहा था, बहुत रुपये हैं उसे !

दोषी की तरह भूतनाथ कुण्ठित हो गया, बोला—ओ, सुविनय बाबू ! नौकरी के चक्कर में उधर जा ही नहीं पाया। कल ही जाऊँगा।

लेकिन दूसरे ही दिन वहाँ न जा सका। आख़िर क्या बहाना लेकर जाये ? दुविधा होने लगी।

ननी के यहाँ से निकलते ही प्रकाश हलवाई से भेंट हुई। वह अनमना-सा था। उसने भूतनाथ को नहीं देखा।

—प्रकाश !

प्रकाश चौंक उठा।—भूतनाथ बाबू, आप यहाँ !

—यहीं आया था। इतनी रात को तुम क्यों खड़े हो यहाँ ?

—अपने साहब का घर है। रात ही को तो साहब लौटते हैं। आते ही जकड़ लूँगा पैर। जो हो नसीब में। चाहे इस किनारे, चाहे उस किनारे। क्या

ख़याल है आपका ?

—बात क्या है ?

—जी, नौकरी अपनी जाती रही।

—क्यों जाती रही ?

—अपनी तकदीर का फेर, और क्या कहूँ ? कहाँ सोच रहा था कि साहब से आपके लिए कहूँगा, सो अपनी ही नौकरी छूट गई। एक बार साहब से कह देखूँ।

उस दिन प्रकाश के लिए भूतनाथ को माया-सी हो आई। कहीं नहीं टिक सका। शायद कही टिक भी न सके। यह किया, वह किया, किसी में न जम सका।

भूतनाथ ने पूछा—कसूर क्या किया था ?

—जी, अपने जानते कोई कसूर तो नही किया।

—तुम्हारे साथ-साथ और भी किसी की नौकरी छूटी है ?

—जी नही। ज़रा देर रुककर बोला—एक रोज़ साहब के कमरे मे जाकर यह ज़रूर कहा था कि आठ रुपये मिलते हैं, इससे गुज़ारा नही होता। बेटी का ब्याह करना है, बाज़ार का कुछ बाकी भी पड गया है—कुछ बढ़ा देते, तो दया होती।

—उसके बाद क्या हुआ ?

—और क्या हुआ, नौकरी छूट गई। अचानक मैनेजर साहब की चिट्ठी आ गई। मुझे ख़ाक पता न था। पता होता तो बल्कि यह कहता कि चाहें तो तनख़ाह कम कर दीजिए।

याद आता है, प्रकाश की बातो पर उसे हँसी आई थी। व्यंग्य की नहीं, मज़ाक की भी नही। रोने-जैसी करुण हँसी। जिन्दगी मे भूतनाथ को ऐसी हँसी बहुत बार हँसनी पडी है। अन्त-अन्त तक ननी ने उसे नौकरी नही दी। लेकिन कसूर ननीलाल का भी क्या ! ससार के सभी भूतनाथों से ननीलालो का यही सलूक होता है। जीवन मे इसके लिए भूतनाथ ने कभी अफ़सोस नही किया। ज़रा देर के लिए दु:ख ज़रूर हुआ। छोटी बहू के लिए आज भी, अब तक भी उसका गला भारी हो आता है, गीली हो आतीं हैं आँखें।

जवा ने उस रोज़ यही कहा भी, बेशक हँसते-हँसते कहा। बोली—ख़ुद अपमान करने की हिम्मत नही है, शायद इसीलिए ननी बाबू को भेज दिया था।

—कह क्या रही हो तुम ? कौन-से ननी बाबू ?

—आपके दोस्त।

—वह यहाँ आया था ?

शुरू से ही सारी बात बतायें। बड़े दिनों के बाद सारी हिचक हटाकर एक रोज़ भूतनाथ फिर मोहिनी सिन्दूर के दफ़्तर के सामने जा खड़ा हुआ। आज ऐसा

लगता है कि उस दिन नहीं गया होता, वही अच्छा था। कम-से-कम वैसे समय में जब कि घर-भर व्यस्त था। मगर भूतनाथ को पता भी क्या था इसका! सारे मकान की शक्ल बदल गई थी। दीवारों से तस्वीरें उतार ली गई थीं। सामानों के ढेर लगे थे। यहां-वहां कतवार जमा पड़ा था। ऐसी स्थिति, मानो कोई तुरत इस घर में आया है या कि यहाँ से जा रहा है।

भूतनाथ ने पूछा—यह क्या हो रहा है जवा ?

जवा ने कहा—हम लोग यह घर छोड़कर जा रहे हैं।

—अरे! कब ?

—आज ही। अभी।

उसने साड़ी का छोर कमर में लपेट रखा था। चेहरे पर पसीने की बूंदें झलक पड़ी थीं। सुबह से उसे काफ़ी मेहनत करनी पड़ी हो गोया। बातें करते-करते किसी काम के बहाने जाने कहाँ चली गई। लौटकर बोली—वाह, आप तो अजीब हैं! पांचसौ रुपये लेकर वही जो गये-सो-गये। दर्शन भी नदारत। बाबूजी अकसर आपको पूछते हैं।

—कैसे हैं पिताजी ?

—देखकर ही समझेंगे।

—सच ही मैं न आ सका। नौकरी के लिए दौड़-धूप करने में इतना थक जाता हूँ कि फिर इतनी दूर आने की इच्छा नहीं होती। लेकिन बीच में एक दिन सुपवित्र बाबू से भेंट हुई थी, रास्ते में। उनसे पता चल गया था कि बाबूजी अच्छे हैं। फिर पराये घर का रहना—शायद और ज्यादा दिन वहाँ रह भी न सकूं। रहूं भी किस नाते! खाने को दे देते हैं, यही बहुत।

जवा ने कहा—जब तक आप बाबूजी के पास बैठें। मैं हाथ के काम निपटा लूं।

सुविनय बाबू चुपचाप बिस्तर पर पड़े थे। बोले—कौन? भूतनाथ बाबू? आओ।

भूतनाथ करीब जाकर बैठा। इस कमरे में भी बड़ा हेर-फेर हो गया था। राजा-रानी की तस्वीर थी दीवार पर—नीचे लिखा था God save the king. जवा की मां का एक तैल चित्र था। पांव मोड़े आसन पर बैठी। आधा घूंघट। लम्बे आस्तीन का कुरता। कलाई पर सोने की कई-कई चूड़ियां। चौड़ी कोर की साड़ी।

पहले दिन इस घर में आकर भूतनाथ ने पूछा था—तुम्हारी कोई तस्वीर नहीं है जवा, छुटपन की कोई ?

—छुटपन में मैं मां के पास थोड़े ही थी कि मेरी तस्वीर होती। नौ साल की हुई, तब कलकत्ते आई। मैं तो रहती थी बलरामपुर में।

—कहाँ ? बलरामपुर में ?

जबा ने कहा—जानते हैं, मैं दादाजी को ही बाबूजी कहा करती थी। वे पूजा करते थे। आँखों से ठीक देख नहीं पाते थे। एक दिन मैं नैवेद्य का फल चट कर गई। दादी ने कहा—अरे, नैवेद्य का केला क्या हो गया ?

टटोलकर दादाजी ने भी देखा—ठीक तो, केला क्या हो गया ! खोज शुरू हुई। मैं भागकर आम के एक पेड़ पर चढ़ गई। दादाजी खा न सके। मुझे खोजने चले। उठकर तो हिन्दू लोग फिर खाने नहीं बैठते। लगे मुझे ढूँढ़ने। मैं ऊपर से चुपचाप सब देख रही थी। उन्हें डर लगा। गई कहाँ आखिर ! गोपी तो नहीं ले गया। बाबूजी को वे गोपी ही कहते थे। बाबूजी का तो वे मुँह भी नहीं देखते थे और मरते दम तक उन्होंने अपनी यह प्रतिज्ञा निभाई थी।

—फिर ?

—फिर, दादाजी तो अन्धे थे। शनिवार को उपवास करके सोमवार को कहीं खाने बैठे, दादी ने पहरे के लिए मुझे उनके पास बिठा दिया—मेरे तो मजे समझिए—पत्तल में उठा-उठाकर खाने लगी, किसी को पता क्या ! अचानक दादाजी को खयाल आया, पूछा, मछली नहीं बनी आज ?

दादीजी बोलीं—बनी क्यों नहीं, बिल्ली ले गई लगता है। फिर मुझे देख-कर कहतीं—नहीं-नहीं, यह जबा की करतूत है।

—अच्छा !—दादाजी हँस पड़ते। उनके एक भी दाँत न था। पोपले मुँह से हँसते हुए कहते—दिन-दिन शरीर हुई जा रही है तू, तुझे अब गोपी के पास भेज दूँगा—वहीं रहना।

—उस समय कलकत्ता भेजने के नाम से ही मुझे डर हो जाता था।

—कलकत्ते से क्यों डर हो जाता था ?

—पता नहीं। उमर तो ज्यादा नहीं थी। सब कहते थे, मेरे माता-पिता म्लेच्छ हो गए हैं, वहाँ जाने से मेरी जात जाएगी। जात क्या होती है, तब मालूम न था, लेकिन लगता था कि जात जाना कोई बड़ी बात है। बलरामपुर की चर्चा आज भी अच्छी लगती है।

भूतनाथ ने पूछा—कितने दिनों तक थी वहाँ ?

—आठ-नौ साल की उम्र तक। माता-पिता को कभी आँखों भी न देखा था। पिताजी दादी को चिट्ठी लिखते। वह उसे और कहीं से पढ़ा लातीं, क्योंकि दादाजी को खबर हो जाती तो आगबबूला हो जाते।

दादीजी कहतीं—यह देख, तेरे बाप ने तेरे बारे में पूछा है। जाएगी तू ?

मैं कहती—नहीं जाऊँगी—जात जाए तो ? मगर मैं पैदा कलकत्ते में हुई थी—ताज्जुब !

—इसी घर में ?

—नहीं। उस समय अपना मकान बारशिमले में था। लेकिन मैंने यह सुना है कि जब मैं दो महीने की थी, तभी दादाजी मुझे बलरामपुर चुरा ले भागे थे।

—चुरा ले भागे थे ?

एक दिन जवा ने यह किस्सा सुनाया था।

बहुत दिन हो गए। सुविनय बाबू के पीछे उनके पिता ने गुण्डा लगा रखा था। इस पर बीस रुपये भी खर्च किये थे। कह रखा था, जहाँ कहीं भी गोपी दीख जाए, उसका काम ही तमाम कर दे। उस कम्बख्त ने जात गँवाई है। वह मेरा लड़का नहीं। मैं प्रतिज्ञा करता हूँ, उसकी शक्ल न देखूँगा।

बलरामपुर से कलकत्ता पैदल आने में डेढ़ दिन लगता। शाम को रामहरि भट्टाचार्य गांव के बरगद के नीचे चुपचाप बैठे रहते। गर्मियों में खा-पीकर सिर पर ओदा अँगोछा डाले बाहर निकला करते। रथ-स्थान में शतरंज के अड्डे पर जरा देर बैठते। फिर कलमी साग के लिए नहर की तरफ जाते। पके कटहल की खोज में मल्लिकों के बगीचे की तरफ पहुँचते। कहते, कटहल पके और ब्राह्मण को नहीं दिया। शाम को नारायण हलवाई की दुकान पर आ बैठते। कहते—नारायण, जरा ब्राह्मण के लोटे में पानी तो दे।

नारायण बताशे बनाया करता। पर्व-त्योहार में छेना की मिठाइयाँ बनाता, पापड़ी बनाता—ऐसी पापड़ी कि जूते से दबाने पर भी नहीं टूटती। चैत संक्रान्ति के मेले में वही पापड़ी बेचता। बिकने से जो रह जातीं, उन्हें गलाकर फिर बनाता और आसाढ़ महीने में रथयात्रा के मेले में बेचता। उससे भी जो बच जातीं उन्हें भादों की ताड़नौमी पर बेचता और फिर भी रह जातीं उन्हें दशहरे के मेले में। लेकिन नाम उसका बताशे के लिए था। ऐसे हलके बताशे बनाता कि पानी पर तैरते !

रामहरि बोले—अरे, पानी-ही-पानी दिया नारायण, बताशे कैसे बने, देखूँ जरा !

कभी-कभी घर ले आते बताशे। आते ही जवा को पुकारते।

एक बताशा। या कभी नींबू या केले का टुकड़ा। या कभी दो-चार पूरियाँ, थोड़ा-सा हलवा, उसके साथ रसदार चने के दो-चार दाने। कहते—प्रसाद है, गिराना नहीं।

जवा कहती—दादाजी मुझे बड़े ही अच्छे लगते थे। वह गांवघर, मल्लिकों का बगीचा—यह सब छोड़कर कलकत्ता मुझे अच्छा नहीं लगता था।

आखिरी दिनों आंख से वे अच्छी तरह देख नहीं पाते थे। लेकिन चाहते तो क्या वे धनी नहीं बन सकते थे ?

शुक्रवार पड़ता था 'मोहिनी सिन्दूर' देने का दिन। कितनी दूर-दूर से आते लोग !

—तुम्हें क्या शिकायत है बेटी ?

एक पैसा लेते। सिर्फ एक पैसा। एक पैसा भी कभी-कभी दो घेला मिला-कर होता। बड़े ही गरीब थे बेचारे गाँव के लोग। साग, केले, आम, कटहल जरूर मिल जाते खाने को, लेकिन पैसे की बात आई कि माथे पर बिजली ठनकी।

—यह मेरी बिटिया है बाबा। दामाद इसे साथ नहीं रखता। इसे अपने सिंदूर का आशीर्वाद दीजिए।

ऐसी कितनी आरजू-मिन्नतें, दुःख-दुर्दशा की पुरदर्द कहानियाँ। वैसे सख्त आदमी थे, सुनकर उनकी आँखों से भी आँसू बहने लगते।

कभी-कभी रात में नींद टूट जाती जवा की। देखती, दादाजी गायब हैं। अँधेरी रात मावस की। हाथ को हाथ नहीं सूझता। पूजा-घर से आवाज़ आती। मन्त्र पढ़ते होते वे। उस आवाज़ से डर-सा लगता। लगता, धरती काँप रही है—जैसी भूकम्प के समय काँपी थी।

रामहरि ठाकुर को खबर मिली—गोपी के लड़की हुई है। रात के उसी अँधेरे में धीरे से दरवाज़ा खोलकर बाहर निकले। गुण्डों को बुलाकर कहा—एक काम करना है।

—जी, हुक्म कीजिए।

रामहरि बोले—ये ले बीस रुपये।

बीस रुपये। तेल से चिकने काले चेहरे चमक उठे। बीस रुपयों के बदले कुछ भी किया जा सकता है। आदमी की जान तक ली जा सकती है। बेवजह जाने कितनों की जानें ली उन्होंने। अकाल के समय उनके पुरखों को हर कुछ करना पड़ा। महज़ एक गमछे के लिए किसी का खून करने में भी न हिचके वे।

रामहरि ने कहा—जान नहीं लेनी है, चोरी करनी पड़ेगी।

—तैयार हैं, बताइए, किसका क्या चुराना है ?

थोड़ी रात रहते रामहरि चुपचाप आकर सो गए। लेकिन स्त्री भाँप गई। बोली—कहाँ थे अब तक ?

रामहरि कुछ न बोले।

दो दिन बाद भोर-भोर को दरवाज़े पर थपकी पड़ी। रामहरि ने उठकर जैसे ही दरवाज़ा खोला, वैसे ही उन लोगों ने उनकी गोद में दो महीने की एक बच्ची को रख दिया।

रोने की आवाज़ सुन सुबह ब्राह्मणी जगी। पूछा—यह कौन ?

रामहरि बोले—गोपी की बेटी है।

—इसे यहाँ कौन ले आया ?

रामहरि बोले—चुप। मैं जानता हूँ, मेरा बेटा नहीं रहा, मगर पोती को भी मैं नहीं जाने दूँगा।

—इस दो महीने की बच्ची को तुम ज़िन्दा कैसे रखोगे ?

—देवी मेरी सहायता करेंगी—मैं इसे यहीं पालूंगा। नाम रखूंगा जवा। काली माँ का प्यारा फूल।

ब्राह्मणी रो पड़ी—तुम पागल तो नहीं हो गए ?

ब्राह्मणी ने गोपी को चुपचाप खत लिख भेजा। उसे यहाँ आने को मना किया। आने से पिताजी एक न बाकी रखेंगे। बीच-बीच में गोपी जाता। गाँव में बाहर कहीं खड़ा रहता। बच्ची की खबर पूछ लेता। देखने की इच्छा होती। कपड़े-लत्ते दे जाता। पैसा कौड़ी।

रामहरि को कभी-कभी शुबहा होता। इतना-इतना दूध कहाँ से आता है ! पैसे तो घर में थे नहीं !

उसके बाद वह लड़की बड़ी हुई। देखने-सुनने में खूबसूरत हुई। दिन कटने लगे।

एक दिन गोपी की स्त्री ने चिट्ठी भेजी कि वे सख्त बीमार हैं। बाबूजी चाहें तो आखिरी मुलाकात कर जाएँ। अब-तब हालत है।

ब्राह्मणी बोली—तुम पत्थर बन सकते हो, मैं माँ हूँ। मैं जरूर जाऊँगी।

—जाओगी कैसे ?

—जैसे भी हो, जाऊँगी। पैदल जाऊँगी। जिसका लड़का अब-तब हालत में हो, वह माँ रुक सकती है ?

रामहरि ने कन्धे पर चादर रखी। ब्राह्मणी के दो अदद गहने सुनार के यहाँ गिरवी रखकर पचास रुपये लाये और निकल पड़े। पीछे-पीछे घूँघट काढ़े ब्राह्मणी।

सुविनय बाबू कहा करते—मैं तब सख्त बीमार था, समझ गये भूतनाथ बाबू, जवा की माँ मेरे पास बैठीं, हठात् नजर पड़ी माँ आई हैं। जमाने के बाद भेंट। फिर भी माँ को पहचानने में बेटे को कैसी तकलीफ ! मैंने कहा—माँ !

वही जो माँ मेरे बिस्तर के पास बैठीं सो लगातार सात दिन तक बैठी ही रहीं। मैंने पूछा—पिताजी नहीं आये ?

वह बोलीं—वे रास्ते के मोड़ पर बैठे हैं। डॉक्टर को भेज दिया। आप वहीं बैठे हैं। नहीं आये।

सुविनय बाबू कहते थे—जवा नौ साल की उम्र में मेरे पास आई—पिताजी की मृत्यु के बाद। नये सिरे से उसे सिखाया-पढ़ाया। जब वह आई, उसका माँ गुजर चुका था। उसकी माँ की हालत शोचनीय थी। वह इसे पहचान नहीं सकी।

भूतनाथ ने पूछा—उसके बाद आप फिर कभी गाँव नहीं गये ?

—गया था। उनकी अन्तिम क्रिया करने का कोई अधिकार तो था नहीं मुझे, फिर भी गया था। अपनी जन्मभूमि ठहरी, छुटपन के कितने साल वहाँ बीते

वहाँ जाने को जी रोता था, मगर पिताजी की प्रतिज्ञा के डर से जा नहीं पाता। घर के अन्दर कदम रखने के बाद मैं अपने आँसू रोक न सका।—कहकर रुक गए। उसके बाद दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए बोले—उसके बाद माँ चल बसीं। घर सूना हो गया। एक सुबह मैंने एक बैलगाड़ी पर रहे-सहे सामान लादे। पिताजी की जो भी यादगार थी, सबको साथ लिया। उस पुराने बक्स को देखो, उसी में उनके सारे दस्तावेज खत-पत्र थे। हाथ की लिखावट बड़ी अच्छी थी उनकी।

भूतनाथ ने देखा था, सुविनय बाबू के सोने के कमरे में आज भी वह बक्स सुरक्षित था।

—एक ही बात का दुःख रहा कि उनकी कोई तस्वीर नहीं। उन्हें देखने को बड़ा जी चाहता है। अपने आदर्श भी दो ही थे—एक ब्रह्मानन्द केशवचन्द्र सेन, दूसरे अपने पिताजी। इस जमाने में ब्रह्मानन्द के सिवा वैसी जीती-जागती निष्ठा किसी में नहीं मिलती। सोच देखो जरा, जिस दिन इम्तहान में नकल करने की वजह से उन्हें निकाल दिया गया था—उसके बाद उनकी लिखने-पढ़ने की वह चेष्टा। और जब धर्म जाने के दोष पर घर से निकाल दिया गया, तो स्त्री के साथ महर्षि देवेन्द्रनाथ के आश्रम में पहुँचे। सोचो जरा :

भूतनाथ को और एक आदमी की बात याद आती है। सन् उन्नीस सौ का इकत्तीस दिसम्बर। करारी सर्दी पड़ रही थी। रात को ब्रजराखाल घर लौटा। बदन पर कुरता नहीं। चादर सिर्फ।

भूतनाथ सोने जा रहा था। बोला—क्यों भाई साहब, खाली बदन!

ब्रजराखाल गीत गाने लगा। बोला—जाड़ा लगे तो गीत गाओ। देखो, जाड़ा भाग जाता है कि नहीं।

—आखिर कुरता डाल कहाँ आए?

ब्रजराखाल खाने बैठ चुका था। खाते-खाते बोला—फूलदासी मर गई।

भूतनाथ चौंक उठा। जबान न खुली।

ब्रजराखाल बोला—जानें किन कष्टों से उसे पादरियों के हाथ से बचाया था…शिवनाथ शास्त्री ने उसका उद्धार किया था…और…ब्रजराखाल चुप लगा गया और जल्दी-जल्दी खाने लगा। खाना क्या निगलना कहिए!

—और दूँ थोड़ा-सा? बहुत है।

—मजा देखो, हैजा से बचाया, प्लेग से बचाया, एक बार गुंडों के भी शिकंजे से बचाया। मगर जाने वाले को कौन रोक सकता है? हाँ, दो भाई साहब, थोड़ा-सा और दो।

माँगकर वह कभी नहीं खाता था। जानें आज हुआ क्या उसे! खाते-खाते बोला—ऐसे मर जाएगी, सोच भी न सका था।

भूतनाथ ने पूछा—मरघट तक गये थे शायद?

—हां। जभी तो कुरता उतारकर डोमड़े को दे आया। धोती गंगा में भिगो ली थी, बदन ही पर सूख गई।

—बीमारी क्या थी ?

—बीमारी कोई न थी। अच्छी-खासी थी। मकान का किराया चन्दे से दिया जाता था, खाना मैं दिया करता था। ईसाई हो जाने के बाद से सगे-सम्बन्धी कोई पूछते नहीं थे। काफ़ी दिनों तक तो शिवनाथ शास्त्री ही सब-कुछ चलाते थे।

—आख़िर में खाना न मिलने से ही मर गई, क्यों ?

—न-न, खाकर ही मरी।

—क्या खाकर ?

—ज़हर!—ब्रजराखाल ज़रा देर चुप रहा। उसके बाद बोला—पुलिसवाले लाश ही नहीं दे रहे थे। पेट में उसके बच्चा मिला था न! मगर मैं कहता हूँ भाई साहब, वह मरने ही क्यों गई? मरकर जी सकी क्या?

ब्रजराखाल उठा।

—अरे, खाया नहीं ?

नहीं भाई, ज्ञानयोग से मेरा विश्वास उठ गया। गिरीश बाबू ठीक ही कहते थे। जानते हो उनको तो? गिरीश घोष। 'चैतन्यलीला' लिखी है। एक दिन उन्होंने नरेन से कहा—ज्ञानयोग-ज्ञानयोग की धूम तो मचाते हो—संसार का सारा दुःख मेट सकोगे ज्ञानयोग से? श्मशान में फूलदासी का चेहरा देखकर यही बात मेरे जी में उठ रही थी। कहाँ, इन अभागिनों को तो हम बचा नहीं सके—तर्कशास्त्र या मीमांसाशास्त्र से तो इनका दुःख नहीं मिटने का। कह नहीं सकता क्यों, भाई साहब, प्लेग के समय रात-दिन आँखों के आगे बहुत-सी मौत देखीं, बाप, बेटे—सबको एक घर, एक कमरे, एक खाट पर मरते देखा, पर मेरा मन इतना न डगमगाया।

इस घटना के कुछ ही दिनों बाद ब्रजराखाल कहाँ तो गायब हो गया। इतने दिनों के बाद आज यहाँ उसकी याद आ जाने का एक कारण था। लगता है, सुविनय बाबू के अन्दर वैसा ही एक वज्र-कठोर व्यक्तित्व छिपा है, गोकि यों हर घड़ी, हर समय प्रसन्न। सदा सुखी। कभी उन्हें अगाध ऐश्वर्य के बीच यहाँ देखा था, आज रोग से जर्जर, ऐश्वर्यहीन, असहाय अवस्था में भी उनमें कोई फ़र्क नहीं। वही शान्त दृष्टि, वही अडिग निष्ठा।

सुविनय बाबू चित लेटे छत की तरफ़ नज़र किए पड़े थे। करवट बदलकर बोले—बहुत दिनों से तुम्हें नहीं देखा। नौकरी का कुछ ठिकाना हुआ?

भूतनाथ बोला—जी, नहीं तो।

—मैंने तुम्हारे लिए कई जगह चिट्ठी लिखी। कई के जवाब भी आए हैं। चंगा हो लूँ तो खुद कोशिश करूँगा। हाँ, ब्रजराखाल की कोई खबर मिली? तुम्हें

देखकर बड़ी खुशी हुई। जवा की शादी मे तुम्हें आना ही पड़ेगा। अगहन में तै पाई है।

चारों तरफ एक बार देखकर भूतनाथ ने पूछा—लेकिन ब्याह में इतनी देर क्यों हो रही है ?

—कुछ तो उन दोनो की इच्छा से और कुछ मेरी बीमारी की वजह से। लेकिन इस बार मैंने कहा है भूतनाथ बाबू, तुम दोनों मे प्रेम है, दोनों के मिलन में कोई अड़चन नहीं है, आपस में एक-दूसरे को पहचाना है और मन-ही-मन एक ने दूसरे को ग्रहण किया है, तो समझना होगा, ईश्वर की यही इच्छा। बेजा कहा ?

—जी नही, आपने तो ठीक ही कहा।

—मैं भी यही कहता हूँ, बहुत बार अर्थ से ही अनर्थ होता है। और इधर सामाजिक जीवन में उसकी जरूरत को भी इनकार नहीं किया जा सकता। मेरे पिताजी कहते थे, पैसा हाथ-पैर का मैल है। और उन्होने शान्ति से जीवन जिताया। लेकिन मुझसे न बना। जवानी की उठान में मुझ पर पैसे का सरूर सवार हो गया था—आज मैं सब-कुछ लुटाकर फकीर हूँ। लेकिन सब गँवाकर भी मैंने पाया है—धर्म को पाया है। गलत कहता हूँ ?

—जी नही, ठीक ही कह रहे हैं आप।

—यह देखो न इस घर को मैं छोड़ रहा हूँ—यहाँ अब अस्पताल होगा। जवा को दुविधा-सी थी, लेकिन जब उसे समझा दिया कि बेटी, यह त्याग नही, भोग है—विश्व के सभी लोगों से एक होकर, मिल-जुलकर काम करना उपनिषद् के ऋषि ने कहा है—'तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा'—तो वह समझ गई। जरा देर रुककर फिर बोले—मैंने उससे पूछा कि तुमने सुपवित्र बाबू से खोलकर सब कहा तो है ? कहा है कि इस ब्याह से वह सिर्फ तुम्ही को पाएगा—मोहिनी-सिन्दूर की पूँजी पर उसका या तुम्हारा कोई अधिकार न होगा ? जवा ने कहा—जी हाँ, कहा है।

—सुनकर मुझे बड़ी शान्ति मिली भूतनाथ बाबू ! मैंने जवा से कहा—तुम्हारी माँ अन्तिम दिन मुझसे तुम्हें मुक्ति देने की कह गई थी। मेरी इच्छा है कि तुम मुक्त हो, मिथ्या, ग्लानि, सब बन्धन से तुम्हे मुक्ति मिले। ऐश्वर्य का प्राचुर्य भी तो एक बन्धन ही है। क्यो भूतनाथ बाबू !

बात करने का मौका मिले तो सुविनय बाबू और कुछ नही चाहते। भूतनाथ ने पूछा—इस घर को आज ही छोड़ रहे हैं ?

—हाँ, आज ही। मुक्ति जितना जल्दी मिले, उतना ही अच्छा। मोहिनी सिन्दूर का कारखाना खोलने से पहले मैं वकालत करता था, शायद पता हो तुम्हें। कुछ आमदनी हो जाती थी। उसी आमदनी को रखकर बाकी मैंने छोड़ दिया है। इस घर पर मेरा कोई अधिकार नही। मैंने जो भूलें की, उसके लिए अनुताप भी

बहुत किया। सोच देखो, एक दिन जब मैं घर लौटा तो सुना, मेरी इकलौती सन्तान को जाने कौन उठा ले गया। यही किस्सा उस रोज मैंने सुपवित्र से कहा। कहा कि तुम एक साथ जवा के प्रति पिता, माता और स्वामी का कर्तव्य करोगे। इसे माँ का स्नेह नहीं मिला और मेरी आयु तो चुक ही गई।

—सुपवित्र ने मेरे पैरों की धूल ली। कहा—आशीर्वाद दीजिए, मैं इस कर्तव्य की कभी उपेक्षा न करूँ। सुपवित्र के पिता मेरे गहरे मित्र थे। उसे मैं जन्म से ही जानता हूँ। उसके हाथों जवा को सौंपकर मैं भी निश्चित हो सकूँगा। तुम्हें खबर दूँगा—अगहन में।

इतने में जवा कमरे में आई—बोली—आप फिर बातें करने लगे बाबूजी आइए भूतनाथ बाबू—बस, बातें ही करते हैं—मेरी मदद कर दीजिए थोड़ी-सी जब आ गए हैं, तो आपसे कुछ काम ही करा लूँ। फिर पिता की तरफ़ देखकर बोली—वही पुरानी सब बातें कह रहे थे शायद!

—तुम्हारी बातें कह रहा था। कह रहा था कि अब से तो तुम्हें खुद सब-कुछ करना पड़ेगा। काम करने की आदत तो है नहीं।

—क्यों, उस बार ठाकुर के चले जाने के बाद मैंने रसोई नहीं की थी

—यह मैं थोड़े ही कह रहा हूँ!

—जाने भी दीजिए। बहुत सारे काम पड़े हैं। मैं भूतनाथ बाबू को ले जा रही हूँ। आप सोने की कोशिश कीजिए ज़रा। आइए—कहकर जवा चली। भूतनाथ ने देखा, उसके सारे बदन पर धूल लगी है। वह भण्डारघर में जाकर रुकी। कहा—देख क्या रहे हैं ऐसे?

भूतनाथ ने नज़र हटा ली।

जवा खिलखिलाकर हँस पड़ी। बोली—इस तरह ताकते हुए शर्म नहीं आती!

कमरा अँधेरा था। कांसे-पीतल के ढेरों बर्तन एक तरफ़ को पड़े थे। और-और चीजें भी बिखरी पड़ी थीं।

इस प्रसंग को टाल जाने की नीयत से भूतनाथ ने उधर देखकर कहा—ये चीजें तुम्हारे साथ जाएँगी?

जवा ने कहा—इन सबको एक-एक कर इस टोकरी में डाल तो दीजिए। कुरते की आस्तीन सँभाल कर भूतनाथ जुट जाने लगा कि जवा बोली—यह न सोचिए कि महज आप ही से काम करा रही हूँ—सुपवित्र को भी काम से भेजा है। धूप में ही बाजार गया है, सुबह से चक्कर काट रहा है—जरा भी नहीं बैठने दिया। आप ही आराम करें, यह कैसे हो सकता है!

बर्तन की टोकरी हटाते हुए वह बोला—मैं यह कहाँ कह रहा हूँ! जवा ने धोती के छोर को फिर से भली तरह कमर में लपेटा। लपेटकर कहा—मुँह से

शायद न कहें, पर मन-ही-मन बिगड़ें और गाली दें।

भूतनाथ मे और न सहा गया। बोला—तुमने मेरा ऐसा क्या बिगाड़ा है कि मैं गाली दूँगा! तुमसे क्या अपना यही सम्बन्ध है!

जवा पलटकर काम कर रही थी। उसी तरह बोली—हर बात में आप सदा सम्बन्ध लेकर बात क्यों करते हैं?

भूतनाथ जो जवाब देने जा रहा था, उसे उसने बडी मुश्किल से जब्त किया। काम करता रहा। बोला—यह सब तो हो गया, और क्या करना है, बताओ?

जवा खड़ी होकर बोली—यह सन्दूक है न, इसमे की सारी चीजें निकालनी हैं—अकेले बनेगा? न बने तो आने दीजिए सुपवित्र को।

सुपवित्र का नाम सुनकर भूतनाथ को कैसी तो ज़िद-सी हो आई। बोला—देखूँ, अकेले ही कर लूँगा।

जवा ने कहा—नौकर, दाइयों को हटा दिया गया है। अब से सब-कुछ मुझे अकेले ही करना पड़ेगा।

भूतनाथ ने कहा—तुम सब-कुछ कैसे अकेली करोगी, यही सोचता हूँ।

जवा ने कहा—भगवान् ने दो हाथ सिर्फ खाने के ही लिए नही दिये हैं। पाँव हों चाहे हाथ, काम न करने से सब निकम्मे हो जाते हैं।

इसके बाद जवाब देने की गुंजाइश न थी। भूतनाथ लोहे के उस भारी सन्दूक को एक ही हाथ से खोलने की कोशिश करने लगा। ढक्कन बहुत भारी था। फिर भी न जाने कहाँ से राक्षस की ताकत बदन में आ गई। दोनो हाथों से हिलाते-हिलाते आखिर खुल गया। पसीने-पसीने हो गया लेकिन।

जवा भी कुछ कम हैरान न हुई।

उसकी विस्मित दृष्टि की तरफ देखते हुए हँसते-हँसते भूतनाथ बोला—हैरान रह गई! मैं गँवई-गाँव का हूँ, यह बात भूल गई क्या?

जवा कुछ बोल न सकी। तब भी हैरान रह गई थी। उसी तरह हँसते हुए भूतनाथ ने कहा—अगहन महीने में तुम्हारी शादी का कहीं न्योता मिल गया, तो यह भी देख लेना कि हम सिर्फ चावल ही नहीं, पूरियाँ भी काफी खा सकते हैं।

जवा कुछ क्षण चुप रही। उसके बाद हँसी। कहा—न्योता देने वाली मैं तो कोई नहीं होती, न्योता बाबूजी भेजेंगे। लेकिन भरपेट पूरियाँ खाना ही शायद आपका मकसद है।

इतने मे भूतनाथ काम मे जुट पड़ा। कोई भारी-सी चीज़ उतारते हुए बोला—इसके सिवाय मकसद हो भी क्या सकता है? हम न तो वर-पक्ष के हैं, न कन्या-पक्ष के। हैं सिर्फ़ इतर पक्ष—मुँह मीठा हुआ कि खुश!

जवा फिर हँसी—विद्यासागर का वर्ण-परिचय पढ़ा है न?

—बिना पढ़े उपाय क्या था? तुमने शरत् गुरुजी की छड़ी तो देखी नहीं?

उफ् किस मुसीबत का था वह लिखना-पढ़ना—हरूफ और अंक तो माटी पर ही लिखे, वही-कलम नसीब न हुई—पीठ की रीढ़ दुख जाती थी। खैर। आज लगता है, लिखना-पढ़ना बिलकुल बेकार नहीं गया।

—क्यों ?

—लिखना-पढ़ना आया चाहे न आया, मगर गुरुजी की छड़ी ने देह को मजबूत बना दिया है।

जवा ने कहा—घमंड तो बहुत है आपको।

—घमंड का ऐसा क्या पाया तुमने ?

—लोहे के सन्दूक को खोल क्या लिया, सोचा, इससे मैं दंग रह गई हूँ

—तुम्हें दंग कर देने की यदि स्पर्धा मुझमें रही तो धिक्कार है मुझे।

भूतनाथ ने फिर काम में मन लगाया।

कुछ देर बाद जवा बोली—नाराज़ हो गए ?

भूतनाथ थम गया। बोला—इसके पहले जाने कब-कब कितना क्या कहा है तुमने, यदि उस समय नाराज़ न हुआ, तो अब भी न हुआ जानो।

जवा बोली—मगर अपनी तकदीर ही ऐसी है कि सभी लोग मेरी भूल समझते हैं।

भूतनाथ ने उसकी तरफ़ ताका। जवा अपनी धुन में काम करती जा रही थी। मेहनत से पसीने-पसीने हो गई थी। गूँथी हुई लट पीठ पर से होकर ज़मीन पर लोट रही थी। उस कमरे में झुटपुटे परिवेश में आज उसने नये सिरे से जवा का आविष्कार किया।

भूतनाथ ने पूछा—क्या सबने ही तुम्हारी भूल समझी ?

—सबने।

दुविधा को काटकर भूतनाथ बोला—एक आदमी भी अपवाद नहीं ?

—एक भी नहीं।

भूतनाथ बोला—सबका तो अपने को पता नहीं, अपने बारे में इतना कह सकता हूँ···न-न, अपनी बात आज रहे···लेकिन सुपवित्र बाबू ?

जवा ने कहा—सुपवित्र ? वह तो अपने ही को नहीं समझता, तो समझेगा ! अच्छा आपने ऐसा भी आदमी देखा है, जिसका ऐनक का डब्बा दसियों बार खो जाता है—कभी-कभी खाना भूल जाता है, ऐसा तो पाग यकीन आएगा आपको, उसकी माँ आज भी उसे सुलाया करती है। शादी क गिरस्ती कैसे चलाएगा, कौन जाने ! कभी-कभी सच ही मुझे बड़ा डर लग

भूतनाथ को जवाब न सूझा। अन्त में बोला—हो सकता है, आदमी दुनियादारी मजे में चला सकते हैं—लेकिन अच्छा पति होना बात है।

जवा ने कहा—लेकिन सुपवित्र तो निरा बालक-सा है। आज भी उसे अपनी इच्छा जैसी कुछ भी नही। पता नही उसने एम० ए० कैसे पास किया! मैंने जब कहा कि कोई नौकरी तलाश करो—और करोगे क्या? तो नौकरी ढूंढ़ने लगा। मगर इतनी भी अक्ल उसे नही कि ब्याह के पहले ही यह सोचना चाहिए। यह भी नही मालूम कि ब्याह के मानी कन्धे पर जिम्मेदारी का बोझ लादना है।

भूतनाथ चुप रहा।

जवा बोली—मगर उसकी एकनिष्ठता की तारीफ करनी पड़ती है। समाज के और भी बहुतेरे जवानो से तो मिलती रही हूँ, किसी की नजर मेरे रुपयों पर थी, किसी की रूप पर, कोई-कोई काफी दुनियादार मिला—जन्म-दिन पर कीमती-कीमती भेंटें दी—मगर सुपवित्र गरीब है—कितनी बार कितना कुछ कहा, नाराज हुई; जानते हैं, कई बार तो घर में दाखिल नही होने दिया उसे, उसने जब जो कहा, मैंने ठीक उसका उलटा किया, उसके मित्रों के आगे उसकी तौहीन की, फिर भी उसने कुछ न कहा। कभी-कभी रास्ते पर खड़े होकर घंटो मेरे घर की तरफ देखता रह गया है।—जवा कुछ देर रुक गई। फिर बोली—कभी-कभी जी मे ऐसा आता है, कहीं गलती तो नही कर रही हूँ। बाबूजी को सुपवित्र पसन्द है। उनकी राय है—तो भी कभी-कभी डर लगा है।

उसके बाद अचानक सिर उठाकर जवा बोली—कभी-कभी यह सोचती हूँ भूतनाथ बाबू, हिन्दू होकर पैदा हुई होती तो अच्छा था। माता-पिता जिसके साथ जोड देते, उसी को स्वामी मान लेती —उसमें इतनी परेशानी न होती—कम-से-कम अपनी फिक्र भाग्य के ऊपर डालकर निश्चित हो सकती थी।

इस बार भी भूतनाथ ने कोई उत्तर नही दिया। उत्तर देने को था भी क्या? यह कल्पना भी न कर सका था वह कि जवा ऐसी भी बातें करेगी—अथच वे बातें भूतनाथ को ही लक्ष्य करके कह रही थी, ऐसी भी धारणा उसकी न थी। जवा को स्वगत उक्ति समझना ही उसे वाजिब लगा था। भूतनाथ अचानक बोल उठा था—काफी देर हो गई—देर तो नही हो रही है?

—यह मजा देखिए—कहकर चौंक उठी थी जवा। कहा था—छि-छि, कोई भी काम न हुआ। गप्पें ही मारती रह गई—वह उठ बैठी—आपसे बड़ा काम कराया आज—बुरा तो न मानेंगे···अरे, आपके कपड़ों को क्या गत हो गई!

—होने दो गत। एक अर्ज है, मानोगी?

—अर्ज फिर कैसी?

—पहले कह लो, मानोगी या नही। अनुचित कुछ न कहूँगा।

—मानूँगी। कहिए।

—जिन्दगी में जब भी कोई जरूरत हो, मुझे बुलाना। तुम्हारे किसी काम

आ सकने से अपने को धन्य समझूंगा मैं।

जवा हँसी। बोली—कृतज्ञता न मिले तो भी ?

—हाँ, तो भी।

जवा ने पूछा—आखिर ऐसा अजीब खयाल क्यों ?

—खयाल नहीं, यह मेरा···

—आपका क्या है यह ? नशा ?

—नशा होता, तो जी जाता। कभी-न-कभी उतर भी सकता था वह—मगर यह जाने का नहीं—एक व्रत समझो।

—इससे लाभ ?

—लाभ और नुकसान का लेखा कभी लगाया तो नहीं, दान-प्रतिदान की भी बात कभी नहीं सोची—सिर्फ जरूरत होने पर प्राण देकर तुम्हारा उपकार करूँगा—और कुछ नहीं।

जवा कुछ देर सोचती रही। उसके बाद बोली—लेकिन मैं कभी भूल कर बैठूं, आपको चोट पहुँचाऊँ ?

—भूल क्या और कभी की नहीं ? या कि मुझे चोट नहीं पहुँचाई ?

जवा ने नजर झुका ली। बोली—अपनी यही किस्मत है—मुझे किसी ने नहीं समझा, किसी ने कभी समझने की कोशिश भी नहीं की।

भूतनाथ कुछ कहना चाहता था कि जवा बोल उठी थी—आपने भी आखिर मुझे गलत ही समझा भूतनाथ बाबू। आठ-नौ वर्ष की उम्र तक जिसके दिन गाँव-घर में एक दूसरे ही समाज में बीते, पढ़ने-लिखने का जिसे मौका नहीं मिला, जिसे गुण्डे माँ-बाप से अलग चुरा ले गए—उसके बाद एकाएक एक और ही समाज में आ पहुँची—यहाँ पाया कि माँ मुझे चीन्हती नहीं, उस समाज में जो गुण गिने जाते थे, यहाँ आकर वे दोष हो गए—जिसे ठोंक-पीटकर फिर से सभ्य बनाया गया हो, उसका अपना रहा ही क्या ? आपने मेरी बात को ही सच मान लिया, बाहरी आवरण को ही असली रूप समझ बैठे—गलती अगर कभी की ही हो, कभी अगर चोट ही पहुँचाई हो, तो कम-से-कम आज तो मुझे क्षमा करें। सुपवित्र की तरह आप···कहते-कहते जवा एकाएक रुक गई।

भूतनाथ ने देखा, सामने सुपवित्र खड़ा था।

जवा ने पूछा—सब ठीक कर आए ?

सुपवित्र ने कहा—सब ठीक हो गया।

—कमरे-वमरे साफ-सुथरे किए जा चुके ?

भूतनाथ ने सुपवित्र को गौर से देखा। आज बदन पर अलपाका का कोट नहीं था। बनियान थी। मोटे ऐनक के नीचे दोनों आँखें काँप रही थीं। देखते ही लगता कि उसकी सारी ज़िन्दगी लिखने-पढ़ने में ही कटी है। कम-से-कम जिस

निगाह से वह जवा को देखता है, शायद उसी निगाह से किताब के पन्नों को भी देखता है। मानो उसके लिए सारे मनुष्य, सारी धरती, सारा संसार कोई ग्रन्थ हो। किताब के बाहर भी एक दुनिया है, इसे मानो वह सोच भी नहीं सकता। सोचता भी, तो शायद जबर्दस्ती भूले रहना चाहता है। इसमें सुख चाहे न हो, शान्ति है। इसीलिए वह जवा को भी उसी दृष्टि से देखता है। जवा भी उसके लिए मानो एक किताब के सिवा और कुछ नहीं। पढ़ने के पहले या बाद में उसे हाथ से छूने में भी तृप्ति है।

जवा ने पूछा—और गाड़ी ? गाड़ी का क्या किया ?

सुपवित्र मानो आसमान से गिर पड़ा। बोला—लो, गाड़ी की बात तो एकबारगी भूल गया। जा रहा हूँ—यह मुड़ने लगा।

जवा ने कहा—रहने दो। अब जाने की जरूरत नहीं। धूप में चक्कर काटकर जो शक्ल बन गई है तुम्हारी।

सुपवित्र ने कहा—कोई तकलीफ न होगी। जाऊँगा मैं। और वह सच ही चलने को तैयार हो गया।

लेकिन जवा ने उसका हाथ पकड़ लिया। बोली—सवेरे से ही घूम रहे हो, अब नहीं जाना है। आखिर माँ की फटकार मुझे ही तो सुननी पड़ेगी। ऊपर जाकर आईने में शक्ल देखो अपनी—क्या दशा हुई है ! भूतनाथ बाबू है, तुम्हें अब कुछ नहीं करना है। भूतनाथ बाबू, एक गाड़ी तै कर देंगे ?

भूतनाथ ने पूछा—कब जाना है ?

—तीसरे पहर। बार-शिमले जाना है। बारह आने से ज्यादा किराया न कहिए।

भूतनाथ ने कहा—वहाँ के लिए बारह क्यों, आठ आने बहुत हैं।

उस रोज आठ ही आने में गाड़ी तै कर लाया था भूतनाथ। बैल-गाड़ी से धीरे-धीरे सामान भेज दिया गया। घर खाली हो गया। कभी स्त्री के साथ सुविनय बाबू यहाँ आये थे। उनकी पहली सन्तान यहीं पैदा हुई थी। एक दिन उस शिशु के रोने से यह घर मुखरित हुआ था और फिर यहीं उस शिशु ने अन्तिम साँस ली। यहीं जवा की माँ का दिमाग दुःख, शोक और सूनेपन से धीरे-धीरे खराब हुआ। यहीं सुविनय बाबू अपने पिता का छोड़ा हुआ सामान उठाकर लाए थे—साथ जवा को ले आए थे—यहीं जवा का पुनर्जन्म हुआ। इसी घर में कितने उत्सव, कितने अनुष्ठान हुए। विद्यासागर, शिवनाथ शास्त्री, देवेन्द्रनाथ ठाकुर, ब्रह्मानन्द, केशवचन्द्र सेन इसी घर में पधारे। इसी घर में बंकिमचन्द्र आये थे। सन् १८६४ में जिस साल आश्विन में आँधी आई थी जोरों की, उसी समय 'दुर्गेशनन्दिनी' पहली बार प्रकाशित हुई थी। एक प्रति अपने हाथ से वह सुविनय बाबू को भेंट दे गए थे।

सुविनय बाबू ने कहा—विलायत जाने से पहले केशव बाबू यहाँ आए थे—सम्भवतः सन् १८७० में। उस कुरसी पर बैठे थे वे। कई बड़ी अच्छी बातें बताई थीं। एक तो यह कहा था कि महापुरुष चश्मे-से होते हैं। चश्मा नजर को ढँकता नहीं, उसे और भी तेजी देता है। महापुरुषों की दरबान से भी उपमा दी थी उन्होंने—प्रभु तक पहुँचाने वाला।

आज उनकी बात मानो खत्म नहीं होना चाहती थी। जवा बोली—साँझ हो चली बाबूजी, चलिए।

सुविनय बाबू बोले—जरा देर और रुक जाओ। इस घर में फिर तो कभी आना न होगा—कह लूं। यहाँ घटनाएँ क्या कुछ कम हुई हैं? आँखें बन्द करने से आज भी सब देख पाता हूँ। केशव बाबू विलायत से लौटे—Indian Reform Association कायम हुई और उसका पहला अधिवेशन यहीं हुआ। शिवनाथ शास्त्री की किताब निकली—शराब या ज़हर। सुलभ-समाचार अखबार निकला। एक पैसा दाम।

सुपवित्र बैठा-बैठा बनियान का बटन घुमाता रहा। कल सवेरे ही यह घर अस्पताल में बदल जाएगा। सुविनय बाबू का सपना सफल होगा। लेकिन आज तीसरे पहर की इस संधिवेला में कमरों की तरफ ताककर ऐसा लगा मानो सारी मृतात्माओं ने अचानक चलना-फिरना शुरू कर दिया है। मानो कान लगाने से उनकी बातें भी सुनाई पड़ेंगी। जवा की माँ की याद आई। यहाँ पर एक आराम-कुरसी पर बैठी कुछ बुनाई कर रही हैं, और मन-ही-मन कुछ सोच रही हैं।

सुविनय बाबू कहते ही चले जा रहे थे, पर भूतनाथ के कानों तक कुछ पहुँच नहीं रहा था। बड़े महल और इस घर के इतिहास में मानो कोई मेल न हो। इतने करीब थे दोनों, इतने समसामयिक। नये युग के होने के बावजूद भूमिपति चौधरी की सन्तानें अपने पुरखों के बुनियादीपने के नशे में मदहोश थीं और पास ही सुविनय बाबू के घर में दूसरे इतिहास की रचना चल रही थी। राजनारायण बसु ने हिन्दू धर्म की श्रेष्ठता पर भाषण दिया। विलायत के 'टाइम्स' में उसकी रिपोर्ट छपी। ब्रह्मानन्द, केशवचन्द्र सेन विलायत से वापस आये और उन्होंने 'भारत आश्रम' की स्थापना की।

जवा ने कहा—अब चलिए बाबूजी!

—हाँ-हाँ। मगर जाने से बातें तो रही जाएँगी। ऊब तो नहीं रहे हो सुपवित्र?

जवा ने कहा—सुपवित्र बाबू से आज बड़ा काम कराया है—हो सकता है, उनकी माँ फटकारें मुझे।

—अच्छा, ऐसा! फिर तो देर करना ठीक नहीं। चलो...।

बाहर बग्घी खड़ी थी। साँझ हो चली थी। भूतनाथ ने घर में ताला डाल

दिया। पूर्ववाले कमरे की तरफ से आते ही जवा उसके पीछे आ खड़ी हुई। कहा—जरा ठहरें भूतनाथ बाबू !

भूतनाथ चौंक उठा। वहाँ पर झुटपुटा-सा था। कमरे बिलकुल खाली पड़े थे, इसलिए हलकी-सी आवाज भी प्रतिध्वनि बनकर लौट आती थी। साँ-साँ करती हुई आबहवा में दम मानो घुट रहा था। दिनभर की मशक्कत से भूतनाथ थककर चूर हो गया था। अचानक बोल उठा—कौन ?

जवा ने कहा—एक बात कहनी थी।

जवा का चेहरा गुस्से से मानो काला हो उठा था। अँधेरे में ठीक-ठीक दीखा तो नहीं, फिर भी भूतनाथ ने अन्दाज लगा लिया कि खौफनाक कुछ हुआ है। कहा—कहो।

जवा ने कहा—शायद फिर कभी आपसे भेंट न हो, इसलिए कह रखना ही ठीक है।

अपने को सम्हालकर भूतनाथ ने पूछा—कोई बहुत जरूरी बात ?

—जरूरी चाहे न हो, काम की है।

—क्या वह बात सबके सामने नहीं कही जा सकती ?

—सबके सामने ही सुनना चाहते हों तो कह सकती हूँ मैं। पर उससे आपकी मर्यादा नहीं बढ़ेगी।

—आज तुमसे यह नई बात सुन रहा हूँ जवा, मर्यादा पर तर्क करना नहीं चाहता, लेकिन बात चाहे जो हो, बाद में भी तो कह सकती थीं। अभी बहुत परेशान हो तुम।

—परेशानी कितनी ही क्यों न हो, अब तक काम में भूल बैठी थी, अब याद आ गई है।

—कोई कसूर बन पड़ा है मुझसे ?

—आपकी हिम्मत नहीं थी, तो आपने ननीलाल को क्यों भेजा था ?

—कौन ननीलाल ?

—आपका कहा न होता तो इस घर में कदम रखने की हिम्मत क्या थी उसे ? आपने उसे पिताजी के पास क्यों भेजा था ?

—यकीन मानो···

—वह साफ बता सकता था कि पिताजी की जायदाद को वह हड़पना चाहता है, लेकिन बैंक के नाम से वह क्यों ठगना चाहता है ? उसे यह मालूम ही कैसे हुआ कि हम अपनी सारी सम्पत्ति समाज को दे रहे हैं ?

अपराधी की नाईं भूतनाथ ने कहा—यह मैंने बताया था।

—सिर्फ कहा ही नहीं, उसे आपने हमारे पास भेजा था। आपका ही नाम लेकर उसने जिक्र छेड़ा, वरना मुझे मुँह दिखाने का उसे साहस कहाँ ? उसने समाज

की किसी लड़की की मर्यादा नहीं रखी, किसी का विश्वास नहीं पा सका।
सकता है, आज वह अमीर हो गया है, बड़ी-बड़ी जगहों में उसकी खातिरदा
होती है, मगर आप तो जानते हैं, हम वैसों में से नहीं हैं। हमारी शिक्षा-दी
अलग है, हम रुपयों से मनुष्य का विचार नहीं करते। जिसमें मनुष्यत्व नहीं,
किसी को बाबूजी बर्दाश्त नहीं करते।

ताला-कुञ्जी हाथ से हिलाते हुए भूतनाथ बोला—शायद कसूरवार
मैं, पर विश्वास करो, मैंने उसे यहाँ नहीं भेजा।

जवा ने कहा—फिर वह आया किस साहस से ?

भूतनाथ बोला—यह मैं नहीं जानता, और अगर तुमने उसे ठीक से
चाना है, तो समझ ही सकती हो कि वह मेरे भेजने की परवाह नहीं करता।

—मगर आप उसके दोस्त हैं, यही सोचते तो घृणा होती है।

—विश्वास करो जवा···

अचानक सुविनय बाबू की आवाज़ आई—जवा बेटी···

—आई पिताजी—जवा चली गई।

भूतनाथ के शरीर की सारी शक्ति पल में लुप्त हो गई। खुले कमरे के
सामने ताला लिये वह बुत-सा खड़ा रहा। बड़ी देर के बाद जब वह घर के सामने
आकर खड़ा हुआ, तो अँधेरा हो चुका था। सुविनय बाबू को अपनी शकल दिखाने
में भी उसे शर्म मालूम हुई। आखिर ननी ने ऐसा किया ही क्यों ? साथ ही तो ले
चलने की कही थी !

सुविनय बाबू सीढ़ी से धीरे-धीरे उतर रहे थे। जवा भी उनका हाथ थामे
उतर रही थी। पीछे-पीछे था सुपवित्र। समाज के भी कई सज्जन आ पहुँचे थे।
मुहल्ले के भी कुछ जाने-माने लोग। भूतनाथ ने सुविनय बाबू को पकड़कर धीरे-
धीरे नीचे उतारा।

गाड़ी में बहुत सामान लदा था। छत पर जगह न थी। कुछ कीमती
सामान गाड़ी के अन्दर था। कुछ पीछे भी बँधा था।

भूतनाथ ने सावधानी से सुविनय बाबू को गाड़ी पर सवार करा दिया।
कहा—जी, सिर बचाकर।

उसके बाद जवा सवार हुई। सामने की सीट पर बैठी।

सुविनय बाबू ने जो लोग खड़े थे, उनसे दो-चार बातें कीं, और सुपवित्र
से कहा—अन्दर आ जाओ, रात हो रही है।

सुपवित्र चुपचाप जाकर बैठ गया।

कोई जगह नहीं बच रही।

सुविनय बाबू ने कहा—भूतनाथ, तुम भी आ जाओ।

भूतनाथ ने कहा—आप परेशान न हों, मैं कर लूंगा इन्तजाम।

सुविनय बाबू कुछ परेशान-से हुए—फिर, भूतनाथ कहाँ बैठेंगे ?

भूतनाथ ने झट-से कहा—मैं पैदल ही चलूँगा।

—छत पर जगह नहीं है ? पीछे ?

—मैं गाड़ी के पीछे-पीछे पैदल ही चलूँगा—आप फिक्र न करें।

जवा ने कहा—हाँ वे पैदल ही चलेंगे। चलने की खूब आदत है उन्हें।

भूतनाथ बोल पड़ा—हाँ, चलने की मुझे आदत है। भई गाड़ीवान, बढ़ाओ गाड़ी।

फिर किसी ने कुछ न कहा। गाड़ीवान ने गाड़ी बढ़ाई। पहले तो घोड़े जरा हिले, फिर पहियों की रूखी आवाज कानों में पहुँचने लगी। रूखी और ऊबड़-खाबड़ राह पर सुविनय बाबू का इतिहास चल पड़ा। इनका इतिहास बड़े महल के इतिहास-जैसा अचल नहीं। अनेक रास्ते, अनेक बाधाओं की ठोकर बचाते हुए उसे बीसवीं सदी के पहले दशक तक पहुँचना है।

हाँफता हुआ भूतनाथ भी चलने लगा। गाड़ी के पीछे लाल रोशनी के दो बिन्दु दीख रहे थे। उन्हीं दो बिन्दुओं को देखते हुए चलना। कहाँ बाग बाजार और कहाँ बार शिमले ! खैर, गँवई-गाँव का आदमी ठहरा। भात ज्यादा खाता है, पैदल चलने की आदत है। चलने की आदत सुपवित्र को नहीं है। बड़ा भुलक्कड़ है। खाने तक की याद तक नहीं रहती। उसकी माँ अभी भी उसे सुला दिया करती है। कैसे गिरस्ती चलाएगा, पता नहीं ! मशक्कत से थक जाता है, चेहरा खराब हो जाता है। गाड़ी पर बल्कि वही जाए।

साँझ बीत गई। और एक मोड़ से घूमते ही गाड़ी आँखों से ओझल हो गई।

रास्ते में चलते-चलते अचानक कई दिन पहले की एक घटना भूतनाथ को याद आ गई।

अचानक जी में आया, अरे, भूल ही गया था, वंशी ने सवेरे-सवेरे लौट आने की बार-बार ताकीद की थी। छोटी बहू बन-ठनकर तैयार होंगी। मियाँजान गाड़ी लेकर पहुँच गया होगा। वंशी तमाम ढूँढता फिर रहा होगा। बड़े महल की अब वह बात न रही। नन्हे बाबू की संगीत-गोष्ठी अब नहीं जमती। सारे आँगन में सन्नाटा। सूने महल में बन्दूक लिये बिरिजसिंह ऊँघता रहता। पहले टहला करता था, अब बैठकर ऊँघता है। हावुलदत्त आकर बेटी-दामाद के कमरे में जो घुसता है सो रात ही को बाहर निकलता है। कानों में क्या मन्त्र देता है, राम जाने ! मँझले बाबू अकेले ही रात का उत्सव चलाया करते हैं। हासिनी अब भी आती है, मँझली बहू आती हैं, पान का डब्बा लिये बड़ी मालकिन भी आती हैं। उस रोज नन्हीं बाई की महफ़िल भी हो गई। नन्हीं बाई ने गजल सुनाई, ठुमरी सुनाई, लेकिन वह वाह-

वाहा इस बार न मिली। नाचते-नाचते होंठ से अशर्फी उठा ली। बस। दुबारा चाँदी की थाली में अशर्फियों की झड़ी न लगी। और बार की तरह विदाई में बनारसी ओढ़नी भी मिली, लेकिन नन्हीं बाई वैसी खुश न हुई, सारंगी बजाते-बजाते मुन्नालाल इस बार मस्त होकर लोट नहीं पड़ा। नन्हीं बाई का घूँघट उठ-उठ नहीं गया। महफ़िल के बाद मँझले बाबू के खास कमरे में उसकी बुलाहट भी न हुई। यह मानो नियम का पालन-भर हो। आ ही गई है तो नाउम्मीद होकर लौट क्यों जाए—कुछ ऐसा भाव।

और छोटे बाबू ! ये फिर जॉन बाज़ार क्यों जाने लगे ? फिर क्या अनबन हो गई ? छोटी बहू ने ठीक से शराब नहीं पी क्या ? या कायदे-कानून में कोर-कसर रह गई ? हो सकता है, ब्याहता स्त्री के साथ वह आनन्द नहीं आता। या छोटी बहू में वह बात नहीं आती, जो चुन्नी में है। अचानक उसे एक घटना याद आ गई।

भूतनाथ कहीं जा रहा था कि वृन्दावन की नज़र पड़ गई। बोला—मैंने चुन्नी से कह रखा था कि आप आएँगे। खैर, अभी चलिए। दो कदम तो है यहाँ से !

—नहीं वृन्दावन, अभी मुझे जरूरी काम है, यक़ीन मानो।

मगर वृन्दावन मानने क्यों लगा !

भूतनाथ ने कहा—बहुत काम पड़ा है वृन्दावन, जानते ही तो हो, ग़ैर के यहाँ रहता हूँ—समय पर खा न लूँ तो···

—मैं एक नहीं सुनने का साले साहब !

—मैं वादा करता हूँ, एक दिन ज़रूर आऊँगा—आज छोड़ दो।

—जी नहीं, यह तो हो ही नहीं सकता।

आखिर जाना ही पड़ा। कुल एक ही बार वहाँ गया था भूतनाथ। वंशी के साथ। दरवाज़े से घुसते ही छोटा-सा बरामदा। उसी के बाद ऊपर चढ़ने की सीढ़ी।

ऊपर जाकर जानें किसे तो वृन्दावन ने कहा—सुनती हो, देखो, मैं किसे साथ लिवा लाया हूँ।

—कौन है रे ?—औरत की आवाज़। चुन्नी-जैसी।

—देखो भी। पहचानती हो ?

भूतनाथ कमरे के दरवाज़े पर खड़ा। गहनों से लदी चुन्नी फ़र्श पर बैठी। सामने पनबट्टा। चूना, सुपारी, लौंग, इलायची के डब्बे। कुछ और मोटी हो गई है। गोरा रंग। सँवारे बाल। भूतनाथ को देखकर बायें हाथ से ज़रा घूँघट काढ़ लिया। कहा—अरे, खुश-किस्मती अपनी। आइए-आइए !

बड़ा स्वागत-सत्कार। वृन्दावन ने फ़र्श के सामने के हिस्से को ज़रा झाड़

दिया। गाव-तकिये को भूतनाथ की तरफ़ खिसकाते हुए कहा—आराम से बैठिए हुज़ूर! फिर चुन्नी की तरफ देखकर बोला—बड़े सज्जन हैं साले साहब! छोटी माँ के लिए कौन-सा कष्ट नहीं उठाते!

एक तश्तरी पर पान के दो बीडे रखकर उसकी तरफ बढाते हुए चुन्नी ने कहा—भला, इतना भी न करेंगे! जो सज्जन होते हैं, उनका सब-कुछ भला ही होता है। खैर, सज्जन बाबू पान तो खाइए।

भूतनाथ तो अवाक् हो गया था। दीवार के ताख पर सजी हुई बोतलें। पास ही ढँकी-सी कोई चीज़। शायद हारमोनियम। उसी के पास तबला। घुंघरू। सामने छोटे बाबू की तस्वीर।

वृन्दावन ने कहा—तकिए के सहारे आराम से बैठें हुज़ूर—ऐसे सिकुड़े-से क्यों?

भूतनाथ तकिए के सहारे बैठा।

—हाँ, लेट जाइए मजे से और चुन्नी से बातें कीजिए। कई दिनो से सोच रहा था, आपने कहा था, फिर भी आये क्यों नही? लेकिन चुन्नी कहती थी, जब कहा है, तो सज्जन बाबू आएँगे जरूर।

पान चबाते हुए चुन्नी ने कहा—सचमुच, कई दिनों से कह रही थी, कि इतना निहोरा किया और सज्जन बाबू नहीं आये। सोचा, खुद ही जाऊँ—लेकिन गाड़ी तो बेच दी है, सुना होगा शायद···लेकिन दुबले क्यों हो गए है?

फिर जाने क्या सोचकर वृन्दावन को आवाज़ दी।

भूतनाथ ने देखा—अभी-अभी वृन्दावन यहीं था—तुरत गायब।

—आया।—बगल के कमरे से जवाब आया।

—तोते को चना दे दिया है? मुसीबत देखिए, कै दिनो से कुछ छूता ही नहीं है भैया, सब तरफ़ से झंझटें—छोटे से ही पाला है, अब ऐसी ममता हो गई है कि···

वृन्दावन आया। चुन्नी ने कहा—थाको को बुला तो।

भूतनाथ ग़ौर से कमरे को देखने लगा। छोटी बहू के कमरे से इसमे बड़ा फ़र्क था। दीवारों पर कई तस्वीरें टँगी थी। विलायती लग रही थी। परियों के बदन से कपड़े खिसक पड रहे थे। एक परी नहा रही है। पहाड़ी झरने के किनारे एक परी अपने शरीर की परछाई देखने मे मशगूल। कहीं तीन परियाँ अजीब ढग से खड़ी। बदन पर कपड़े का नाम नहीं।

कैसी तो एक तीखी गन्ध मिल रही थी। आप ही एक अजानी उत्तेजना-सी होती। काफी मोटा बिछौना। बैठिए कि एक हाथ धँस जाता। पाँच-छ: मोटे-मोटे तकिए। बिस्तर पर ही पान की तश्तरी। मसाले की डिबिया। एक कोने में गड़गडा।

चुन्नी ने कहा—संकोच क्या भैया, आराम से बैठिए।

भूतनाथ ने ग़ौर किया—नाक में हीरे की कील थी। छोटी बहू से मिलती-जुलती। चुन्नी पान छोटी बहू से ज्यादा खाती है। उस बार जब आया था भूतनाथ, छोटे बाबू इसी बिस्तर पर सोये थे। लेकिन उस रोज़ चुन्नी इतनी अच्छी न लगी थी।

कुछ ठहरकर चुन्नी ने कहा—तम्बाकू के लिए कहूँ? फिर भूतनाथ के चेहरे का भाव देखकर बोली—फिक्र न करें, ब्राह्मण का हुक्का भी है।

भूतनाथ ने बताया, तम्बाकू वह नहीं पीता। कहा—बल्कि पानी मँगवाओ, प्यास लगी है।

—पानी क्यों, शरबत मँगवाऊँ।

—न, पानी ही बहुत है।

—तैयार तो हो ही रहा है शरबत। यहाँ शरबत रोज़ ही बनता है, छोटे बाबू पिया करते थे न—आजकल हैं कैसे वे?

—वैसे ही हैं। कभी अच्छे, कभी बीमार।

—कोई खयाल नहीं रखता है, क्यों?—वह कहने लगी—मैं किस एहतियात से रखती थी उन्हें—कभी ज्यादा पी जाते थे, तो मना करती, बक-झक करती थी। मगर लोगों से देखा न गया। अच्छा, उन्होंने दवा पीना छोड़ दिया है?

भूतनाथ बोला—मैं नहीं कह सकता, बंशी को पता है।

—बड़ा कमीना है यह कम्बख्त—मुझे वेश्या कहता है। मगर बड़े महल की मैं क्या पहली हूँ, सब पता है। कलकत्ता के किसी घर की खबर बाकी नहीं है। सबको यहाँ आना पड़ा है। काली-पूजा के दिन छोटे बाबू को आखिर किसने बचाया! आग में जलकर दुर्गत हो जाती। बंशी को क्या पता इसका!

भूतनाथ की आँखों में अचरज देखकर चुन्नी ने पूछा—नहीं जानते हैं आप?

भूतनाथ बोला—नहीं, सुना तो नहीं।

—बगल में यह मकान है न, उसके दक्खिन जो मकान है, उसमें कुछ बाजारू औरतें रहती हैं—दीवाली में उस घर के बाबू लोग पटाखे, मुरहे छोड़ रहे थे। छोटे बाबू के साथ देखने के लिए मैं भी छत पर गई। एक अपने आँगन में जा गिरा और सुखी चिल्ला उठा।

—सुखी कौन?

—तोता था एक। उसके पिंजड़े पर गिरा कि वह टें-टें कर उठा। मरती-जीती नीचे उतरी। रोने लगी। छोटे बाबू को तो पहचानते ही हैं आप, नाराज़ होने से होशोहवास नहीं रहता। बोले—तुरत आतिशबाजी मँगवाओ—हजार रुपये की।

—हजार रुपये की ?

—हजार से कम की तो बात ही नहीं करते छोटे बाबू। खैर, वृन्दावन गया। हजार की आतिशबाजी कोई मजाक तो नहीं। जो मिला, जोड़-बटोरकर लेता आया।

छोटे बाबू ने कहा—अब सब मिलकर उनकी तरफ छोड़ो।

उस रोज सभी आये हुए थे —मधुसूदन, लोचन, मेरा दरबान, नौकर सब।

—मधुसूदन यहाँ आता है ?—भूतनाथ ने पूछा।

—हाँ, रोज ही तो आता है। अपनी ही तरफ का है। शरबत पी जाया करता है, आपको पता न था ? मधुसूदन, लोचन, कभी-कभी श्यामसुन्दर और बेनी भी। पहले शशी भी आया करता था। असल में वृन्दावन शरबत बेहतरीन बनाता है। कलकत्ता में चर्चा है इसकी।

उसके बाद चिल्लाई—क्यों रे, शरबत तैयार भी हुआ ? हाँ, तो उसके बाद की बताऊँ—

पान का एक बीड़ा उसने और डाल लिया मुँह में। डण्ठल से थोड़ा-सा चूना। डिबिया से तम्बाकू निकालकर थोड़ा-सा वह भी खा लिया। भर गया मुँह। बगल से पीकदान उठाकर थूका और मुँह पोंछते हुए कहा—पान खाते हुए मुझसे बातें करते नहीं बनता भैया !

भूतनाथ ने पूछा—फिर हुआ क्या ?

मुँह में फिर पीक भर आई। हटकर उसने फिर थूका। बोली—धो ही डालूँ मुँह। तम्बाकू खाकर बातें करने में सहूलियत नहीं हो रही है। आवाज दी—थाको, लोटे में पानी ले आ।

उसका पान खाना, तम्बाकू खाना, उठना-बैठना, सब-कुछ देखते-देखते एक अजीब-सा खयाल भूतनाथ को हो आया। आखिर नाचते हुए यह कैसी दीखेगी, कौन जाने ! थोड़े में सन्तुष्ट होने वाले जीव तो छोटे बाबू हैं नहीं। हर ऐरू-गैरू उन्हें तृप्त नहीं कर सकती। महज रूप की बहार से काम नहीं चलने का। उस रूप में प्रकाश चाहिए, अदा चाहिए। उस रूप को बिगाड़कर, विश्लेषण कर तब उन्हें सन्तोष होता है। इसी कमरे में छोटे बाबू आज तक अपनी तृप्ति खोजते और पाते रहे हैं। मगर चुन्नी में यह खासियत कहाँ है, अनूठापन कहाँ है ! यही औरत हँसी, गीत, नाच और बातों में छोटे बाबू को मन्त्रमुग्ध किए रहती है। पेशेवर नाचने-गानेवालियाँ जो आती हैं, उन्हें तो देखते ही यह खूबी झलक जाती है। उनकी चितवन ही कुछ और होती है। बड़ी मालकिन कभी नाच सकती थी। पाँव देखने से आज भी समझ में आता है। कभी-कभी गाड़ी पर चढ़ते हुए उनके पाँव का जितना-भर कपड़ा उघड़ गया है, उसी को देखकर भूतनाथ ने समझ लिया है। मगर यह चुन्नी अजीब औरत है। ऐसी औरत से भूतनाथ का यही पहली बार

मुकाबला हुआ है।

चुन्नी कहती गई। कहा—उस मकान में एक साथ चालीस आसमानतारे करीने से रखकर चालीस औरतें आग लगा देतीं। सों-सों करते हुए आसमानतारे ऊपर को उड़ जाते और फूटकर शून्य में बिखर पड़ते। खुशी से शोर कर उठतीं औरतें और उनके साथ-साथ उनके सौ चाहने वाले। छत पर ही गाना-बजाना भी चल रहा था। जुटे हुए सौ बाबुओं की एक स्वर में 'क्या कहने, क्या कहने' की आवाज़।

इधर से वृन्दावन ने भी छोड़ना शुरू कर दिया—लगातार। बाप रे!—औरतें छिटक पड़ीं। गाना-बजाना बन्द हो गया। कपड़ों में चिनगी लगी। हल्ला पड़ गया।

छोटे बाबू ने कहा—हाँ, चला वृन्दावन, चला। इन दईमारियों को फूंक दे; पटाखे छोड़ने आई हैं!

रास्ते पर भीड़ जम गई। आग के फुहारे-से छूटने लगे। औरतों में भगदड़ मचने लगी।

लेकिन बाबू लोग छोड़ने वाले कब थे! रुपये खर्च करके मज़े लूटने आये थे, किरकिरा क्यों होने दें? बला से एकाध औरत गई, गई।—बातों के बीच ही में चुन्नी ने आवाज़ दी—अरे वृन्दावन, शरबत हुआ तैयार?

भूतनाथ ने कहा—फिर?

—फिर उधर से एक आकर गिरा छोटे बाबू पर…

इतने में शरबत लेकर वृन्दावन आया। बिस्तर के पास दो गिलास रख दिए। चाँदी के गिलास…झकमका रहे थे। ऊपर वृन्दावनी काम किया हुआ। एक में चुन्नी का नाम खुदा हुआ। वृदावन ने छोटे बाबू वाला गिलास भूतनाथ के सामने रखा। कहा—गटगटाकर पी जाइए हुज़ूर, देर न कीजिए।

वृन्दावन चला गया। भूतनाथ ने पूछा—किस चीज़ का है?

—पीकर ही देखिए न सज्जन बाबू! खटाई डालकर गिलास को साफ़ करा दिया है। भला ब्राह्मण को हम ऐसी कोई चीज दे सकते हैं? इतनी भी अकल नहीं हमें?

भूतनाथ फिर भी आगा-पीछा करने लगा। भंग तो नहीं है? एक बार नन्हे बाबू की महफ़िल में पीकर गत कर ली थी अपनी…जान जाने की नौबत—लगने लगा कि सारा घर ही उलटा जा रहा है।

चुन्नी तब तक चुसकी लेने लगी थी। एक साँस में सारा गिलास गटककर मुँह से एक आवाज़ निकाली—आह, बेहतरीन बना है!

लेकिन इधर दुर्घटना हो गई। गिलास से चुसकी लेते ही भूतनाथ का सिर चक्कर खा गया। हाथ से फिसलकर गिलास गिर गया।

—क्या हुआ ? चुन्नी लपककर पकड़ने गई। मगर होना था सो हो चुका ा। बिस्तर गीला हो गया। भूतनाथ अप्रतिभ हो गया।

आगे बढ़कर अपनी साड़ी से चुन्नी ने भूतनाथ का हाथ-मुँह पोंछ दिया। ूतनाथ ने कहा—सिर चकरा गया…

उसे लगा, अब बैठ नहीं सकेगा वह।

—अब भी चक्कर आ रहा है ?

भूतनाथ ने पूछा—शरबत में था क्या ?

—होगा क्या सज्जन बाबू, सबने तो वही पिया, मैंने भी।

—फिर मेरा जी ऐसा क्यों कर रहा है ?

भूतनाथ को लगा, वह गिर पड़ेगा। सिर झिमझिमाने लगा। सारे शरीर ं कँपकँपी। नन्हे बाबू के यहाँ भंग पीकर जैसा लगा था, यह वैसा नहीं था। उसे ऐसा लगा कि जहर पी गया है। जहर कभी पिया नहीं था। जहर पीने से क्या ाल होता है, यह भी मालूम न था। फिर भी उसे ऐसा लगने लगा कि इन लोगों ा हो-न-हो उसे जहर पिला दिया है। कमरा, दरो-दीवार, तस्वीरें, सब उसकी ाँखों के आगे घूमने लगी।

—सिर दबा दूँ ? चुन्नी ने उसका सिर अपनी गोद में रख लिया।

बोली—सो जाने की कोशिश कीजिए।

उसकी गोद पर सिर रखकर कितना आराम आया ! कितना तो चैन-सा ड़ा ! सिर के नीचे उसकी नई साड़ी खसखसा रही थी। जाने कौन-सा इत्र लगाया ा उसने ! जी भर खुशबू लेने लगा वह। लगा, चुन्नी उसके बालों के भीतर धीरे-ीरे उँगलियाँ चला रही है। कितनी नरम उँगलियाँ !

चुन्नी ने कहा—ज़रा सोने की तो कोशिश कीजिए सज्जन बाबू !

भूतनाथ ने कहा—तुम्हारे कपड़ों की दुर्गत हो रही है।

—हो दुर्गत। सिर का चकराना कम हुआ कुछ ? कहकर चुन्नी ने अपने ाँचल से उसका पसीना पोंछ दिया।

आराम-सा लग रहा था। भूतनाथ ने कहा—तुम लोगों को बड़ी तकलीफ ो मैंने।

—तकलीफ ! तकलीफ काहे की ! मैंने तो बुलवा भेजा था, आप आये ौर यह क्या हो गया देखिए ! मगर कुछ फिक्र न करें आप।

भूतनाथ ने कहा—वंशी मुझे ढूँढ़ता होगा। आज ज़रा सवेरे ही लौटने को हा था। काम था।

—कुछ देर सो लीजिए। जी अच्छा हो जाएगा तो गाड़ी मँगाकर भेज दूँगी। सोचिए न आप।

भूतनाथ ने फिर आँखें बन्द करने की कोशिश की। लेकिन दिमाग जाने

कैसा करने लगा। अचानक तन्द्रा-सी हो आती और लगता कि कमरे में भीड़ जमी है। पुलिस पहुँच गई है। पूछ रही है, इसका खून किसने किया? फिर ऐसा लगा कि कमरे में जाकर वृन्दावन ठी-ठी हँस रहा है। चुन्नी उससे कह रही है—अब इसे ले जाकर रास्ते पर फेंक दे। उसकी शकल भी और हो गई है। बोतल निकालकर गिलास में शराब ढाल रही है। फिर बोली—ज़रा कल्लू को बुला, तबला बजाएगा। तन्द्रा में ऐसा लगा, गोया चुन्नी ने साड़ी उतार फेंकी। बालों को गूंथकर वेणी बना लिया। सिर पर पतली जाफरानी ओढ़नी। मखमली घाघरा पहन लिया है। उधर कोई तबला बजा रहा है, गा रहा है, और इधर चुन्नी नाच रही है। अदाकारी चल रही है, आँखों के इशारे चल रहे हैं। महफ़िल में शराब उड़ रही है, सिगरेट का धुआँ घुमड़ रहा है। और उधर एक कोने में बैठे हैं छोटे बाबू। चाँदी के गड़गड़े में रेशमी कपड़े से बँधी नय लगी है। धीरे-धीरे कश खींच रहे हैं। आखिर आ कब पहुँचे ये सब! मारे डर के सकपका गया। आँख मलते ही सारा दृश्य छाया-सा खो गया।

चुन्नी ठीक उसी तरह अपनी गोद में उसका सिर रखे बैठी थी। वृन्दावन सामने खड़ा था। बोला—आँखें खोली हैं।

चुन्नी उसके मुँह के पास मुँह ले जाकर बोली—अब कुछ आराम लग रहा है?

भूतनाथ ने पूछा—छोटे बाबू आये थे न?

—नहीं तो! सपना देख रहे थे। सोने की कोशिश कीजिए।

वृन्दावन बोल उठा—अच्छा हुज़ूर, छोटे बाबू को आप एक बार यहाँ नहीं ला सकते? बस, आ जाएँ एक बार!

भूतनाथ टुकुर-टुकुर उसकी तरफ ताकता रहा।

वृन्दावन ने फिर कहा—एक बार अगर उन्हें यहाँ ला सकें, तो जिन्दगी-भर के लिए खाने-पहनने की फ़िक्र ही न रहे आपको।

चुन्नी ने कहा—सज्जन बाबू, मेरा यह घर-द्वार, गहना-गाठी, सब आपका होगा।

वृन्दावन ने कहा—छोटी माँ ने आपको ऐसा क्या दिया है, कहें तो? इतना करते हैं आप उनके लिए, ठीक से खाना भी तो नहीं देतीं। आप वहाँ बेकार पड़े हैं, छोटी माँ की जो भी जमा-पूंजी है, सब बंशी हथिया लेगा। शराब की लत तो लगा ही दी है, कभी नशे में होंगी और वह सब निकाल ले जाएगा हुज़ूर!

चुन्नी बोली—अच्छा, एक काम नहीं कर सकते आप? छोटी बहू से तो आपकी काफ़ी घनिष्ठता है, कभी कुछ खिलाकर खात्मा ही कर दीजिए···

वृन्दावन ने कहा—इसकी कोई ज़रूरत नहीं; आप छोटे बाबू को एक बार ला सकते हैं यहाँ? मैं सिर्फ़ एक गिलास शरबत उन्हें पिलाऊँगा, नई किस्म का

शरबत, जिसे पीकर घर लौटने को जी नही चाहेगा।

इतनी-इतनी बातें। इतने-इतने सवाल। भूतनाथ का सिर फिर चकराने लगा। आँखें बन्द करते ही फिर वही सब नजारे। अबकी चुन्नी ने बदन पर से घाघरा, अँगिया, ओढनी सब उतार दी। पैरो मे सिर्फ घुँघरू। छोटे बाबू ने झुककर शराब के गिलास मे होंठ लगाया। इतने मे पुलिसवाले घुस आये। कहा—भूतनाथ का किसने खून किया ? फिर ऐसा लगा कि छोटे बाबू के हाथो हथकड़ियाँ पडी हैं, चुन्नी के हाथो, वृन्दावन के हाथो। सबको पुलिस ने पकड़ लिया। भूतनाथ ने सहसा आँखें खोल दी। चुन्नी तब भी गोद मे उसका सिर रखे बैठी थी। सामने उदास मुँह किये वृन्दावन खडा था। उसके पास खड़े थे मधुसूदन, लोचन, श्यामसुन्दर, बेनी।

भूतनाथ अवाक् हो गया। ये सब यहाँ क्यों ?

मधुसूदन ने कहा—अगर किसी से काम हो सकता है, तो वह हैं साले साहब। छोटी माँ इनसे काफी मिलती-जुलती हैं। अभी-अभी नन्हें बाबू के ब्याह मे छोटी माँ ने ही तो इन्हें धोती, कुरता, जूता दिया है। और हम लोग वहाँ इतने दिनों मे काम करते हैं, हम लोगों को मिली सिर्फ एक धोती, एक गमछा।

लोचन ने कहा—कहने को मैंने इतना कहा था, रोज़ाना एक धेला दीजिए, नही तो यों ही तम्बाकू पी जाया कीजिए जैसे सब पीते हैं—बडो की बात ठहरी, कौन तो हिसाब रखता है—उस पर भी राजी न हुए थे। छोटी माँ के पास पाँच सौ रुपए रखे हैं, खुद बशी ने बताया है।

वृन्दावन ने पूछा—अच्छा, मधुसूदन चाचा, छोटी माँ को शराब की आदत किसने लगाई ?

मधुसूदन ने कहा—बशी और उसकी बहन चिन्ता ने। सारा सत्यानाश तो इन्ही दोनो जनो ने किया है।

वृन्दावन ने कहा—अच्छा, मँझले बाबू ने मोटर क्यो बेच दी ?

बेनी ने कहा—पसन्द नही आई। विलायत से दूसरी गाडी आ रही है।

मधुसूदन ने टोका—तू बस भी कर बाबा, सारी खबर तो है, सुखचर की रिआया ने इस बार धता बता दिया। नन्हे बाबू के ब्याह मे नज़राना लेकर कोई नही आया। लाख किया, कोई नतीजा नहीं। मँझले बाबू ने कहा है—इस बार चाबुक लेकर मैं खुद जाऊँगा।

वृन्दावन ने कहा—जाएँगे मँझले बाबू ?

—गये थे। सरकार बाबू ने कहा, उनका जाना और न जाना, दोनों का एक ही फल होगा।

वृन्दावन ने पूछा—क्या होगा ?

—होगा यह। और उसने अँगूठा दिखा दिया। अब वह बात नहीं रही

वृन्दावन···बड़े महल की भी वह बात नहीं।

वृन्दावन हताश-सा हुआ। बोला—तू जरा चुन्नी को समझा। हर घड़ी छोटे बाबू कि छोटे बाबू। छोटे बाबू के सिवाय क्या कलकत्ते में कोई बाबू नहीं? छेनीदत्त का बेटा नाटू तो है। कहा भी है उसने मुझसे। मगर यही हरदम छोटे बाबू कि रट लगाती है।

मधुसूदन ने कहा—भैया, छोटे बाबू में अब गूदा नहीं रहा। जो है भी वह वंशी चट कर जायेगा।

भूतनाथ ने फिर आँखें बन्द कर लीं। लगा, वह छोटी बहू के कमरे में लेटा है। छोटी बहू आपे में नहीं। वह भूतनाथ को खींच रही है और खींच रही है। कहती है, छोटे बाबू कहीं जॉन बाजार गये, तो मैं भी घर नहीं रहने की। तू ही बता भूतनाथ, कहाँ चलेगा? बरानगर के बाग में? खड़दा के मेले में? गंगा में नौका-विहार करेगा? उसके बाद छोटी बहू ने उसके बदन पर थोड़ा-सा इत्र मल दिया। कंघी से उसके बाल सँवार दिये। और तब बोतल से थोड़ी-सी शराब ढाल-कर बोली—जरा पीकर देख भूतनाथ!

भूतनाथ ने कहा—उँहूँ, नहीं पीता मैं। कै हो जाएगी।

—कै-वै कुछ न होगी। शुरू-शुरू में मुझे भी वैसा ही लगता था। आदत होने से सब ठीक हो जाएगा।

इतने में बाहर किसी के जूतों की मसमसाहट हुई। सभी चौकन्ने हो उठे। वृन्दावन बाहर निकला और तुरत दौड़ा आया।

चुन्नी ने पूछा—कौन? कौन है?

—नाटूदत्त। मधुसूदन चाचा, लोचन, अब चल दो तुम लोग। कल मैं दत्त बाबू से कह आया था।

चुन्नी ने अपनी गोद से भूतनाथ का सिर उतार दिया। दोनों हाथों से अपने जूड़े को ठीक करती हुई बोली—वृन्दावन, सज्जन बाबू को कमरे से हटा दो।

नाटूदत्त को भूतनाथ ने यहीं पहली बार देखा था। खासा लम्बा कद। छोटे बाबू-जैसा रंग न था, मगर सेहत अच्छी थी। तीखी निगाहों उसने एक बार भूतनाथ को देखा, फिर शायद वृन्दावन से पूछा—यह कौन है?

वृन्दावन ने जवाब क्या दिया, समझ में न आया।

खीझकर चुन्नी बोली—इसे जल्दी यहाँ से हटा ले जा वृन्दावन!

वह नौबत न आई। भूतनाथ खुद उठा। बदन डगमगा रहा था। उठने की भी ताकत न रह गई थी गोया! मगर उठना ही था। वह दरवाजे के पास पहुँचा। वृन्दावन सहारा देने आया। पूछा—अकेले जा सकेंगे आप?

—फ़िक्र न करो, ठीक ही चला जाऊँगा मैं। कहने को तो कह दिया

भूतनाथ ने, पर उसके बदन में सच ही कोई ताकत नहीं थी। धीरे-धीरे सीढ़ियाँ उतरा, मगर ठिकाना न कर सका कि रास्ता किधर से है। पीछे से कुछ लोग हँस पड़े···व्यंग्य की हँसी।

भूतनाथ कुछ ठीक न कर पाया, किधर को जाए। रास्ता अँधेरा था। रात हो आई थी। दो-चार दूकानों में तेल की बत्तियाँ टिमटिमा रही थीं। उसे चलते-चलते शुबहा हुआ—ठीक ही रास्ते चल रहा है तो! रात को कलकत्ते की शकल ही मानो और हो रही थी—गोया उस आदिम कलकत्ते का नगा, उघरा हुआ रूप। यहीं कहीं पोर्चुगीज़ों के छिपने के अड्डे थे। सप्तग्राम के जहाज-घाट को लूटकर औरतें लाया करते और यहीं के जगल में छिपाकर रखते थे। इस समय भूतनाथ को फिर कलकत्ता उसी जगल-जैसा घिनौना लगा। मानो दो-ही-चार कदम और चलने से रतन सरकार का घर मिलेगा—धोबी रतन सरकार! साहबों को औरत पहुँचाने के कारोबार से धनी बन बैठा।

भूतनाथ को डर लगने लगा। किताब में पढ़े हुए कलकत्ते से यह कलकत्ता मानो हूबहू मिल रहा था। वही डिहि कलकत्ते के पश्चिम भगीरथी। उत्तर की ओर सूतानटी और पूर्व को जहाँ तक जाओ—लोनी जमीन। सीधे दक्षिण की तरफ गोविन्दपुर। कलकत्ते के चारों तरफ लकड़ी का घेरा। वह घेरा शुरू हुआ था फँसी लेन के मोड़ से और लारकिन्स लेन के अन्दर से होता हुआ जा मिला था ब्रिटिश-इण्डियन स्ट्रीट में। उसके बाद बटोटा लेन, मैंगो लेन, मिशन को। वहाँ से सीधे लाल बाजार, राधा बाजार, एजरा स्ट्रीट, अमड़ातल्ला, आर्मेनियन स्ट्रीट, हमाम गली, मुरगीहाटा, दरमाहाटा, सगरपट्टी, बोनफील्ड्स लेन, राजा उटमण्ड स्ट्रीट होकर एकबारगी गगा के किनारे जा पहुँचा था। इसी कोयलाघाट स्ट्रीट और फेयरली प्लेस के बीच में था पुराना किला। और उसी के पीछे था मालगोदाम और छोटा-सा डॉक। चर्चलेन और हेस्टिंग्स स्ट्रीट के मोड़ पर मिट्टी के बुर्जों पर तोपें सजी रहती थीं।

चलते-चलते भूतनाथ मानो किसी और ही जमाने में जा निकला—सब मानो अजानी जगह, सब नई! आखिर यह कहाँ आ निकला वह! कहाँ है माधव बाबू का बाजार—बनमाली सरकार लेन! उसे लगा, रात-भर वह यों ही सारे कलकत्ते का चक्कर काटता रहा है। जान बाजार के फिरगी मुहल्ले में उस वक्त तक भी लोग जगे थे। लेकिन उधर चौरगी में बिलकुल सन्नाटा। फुटपाथों पर ही कुली-कबाड़ी लोग बेफिक्र सो रहे थे। भूतनाथ वह रास्ता छोड़कर उत्तर की तरफ मुड़ा। मोड़वाली मस्जिद के पास एक साँड बैठा जुगाली कर रहा था। जहाज से उतरे कई काफ़ी कलकत्ता घूमना खत्म नहीं कर पाए थे; हाथ की छड़ी डुलाते हुए लड़खड़ाते हुए सटे-सटे चल रहे थे। भूतनाथ को मछुआ बाजार के पास जाकर खयाल आया कि बनमाली सरकार की गली तो वह कहाँ छोड़ आया। इधर यह

कार्नवालिस स्ट्रीट और उधर शायद चितपुर रोड। बीच की गली में कुछ खपरैल। चाय की दूकान के सामने काफ़ियों का जमघट। इस मुहल्ले में शराब की दूकानें कुछ ज्यादा हैं। लिहाज़ा यहाँ अभी रात मानो ज्यादा नहीं हुई। साँझ की-सी आवहवा। काफ़ियों की निगाहें भूतनाथ पर टिकीं, डर गया। ऐसे समय यहाँ आ निकलना ठीक न हुआ। दिन में यहाँ का हाल देख चुका है वह। जहाज़ से उतरकर दो-तीन जने मिलकर एक-एक खपरैल किराए पर लेकर रहते। उसके बाद गुण्डई। बहुत बार मुहल्ले में खून हो चुका है। 'सोमप्रकाश' में खून की खबरें छपी हैं। यहाँ की गलियाँ बड़ी टेढ़ी-मेढ़ी हैं। कौन-सी गली कहाँ जा निकलेगी, कहा नहीं जा सकता। ऐसी ही किसी गली में कभी व्रजराखाल गुण्डों की चपेट में आ गया था। साहसी था, अड़ गया और किसी तरह सही-सलामत लौटा।

भूतनाथ को उतनी हिम्मत नहीं। एक जगह पचास-एक काफ़ी बैठकर चाय पी रहे थे। भूत-सा काला-कलूटा चेहरा एक-एक का! सिकुड़े-सिकुड़े बाल! एक के हाथ में लाठी थी। इतने में एक बग्घी जाती हुई दीखी। इतनी रात गये इस राह से बग्घी! बग्घी के सामने आते ही काफ़ियों में कुछ सजगता-सी हुई। अचानक उनमें से एक जाकर गाड़ी के आगे अड़ गया।

भूतनाथ थमक गया। गाड़ी को लूटेंगे क्या ये? वह चुपचाप ज़रा देर खड़ा रहा। उसे क्या कोई देख नहीं सका है? इस समय सारे मछुआ बाज़ार में उन काफ़ियों के सिवा कहीं कोई न था। उन्हीं का राज। भूतनाथ को ये मार भी डालें तो किसी को खाक भी खबर न होगी। पुलिस का नामोनिशान नहीं। घुप-घुप अँधेरा और उस पृष्ठभूमि में सिर्फ़ कुछ काले-काले काफ़ी। भूतनाथ को सच ही ऐसा लगा कि यह कलकत्ता नहीं, वही शुरू का जंगल है। सुन्दरवन का आख़िरी छोर! समन्दर से चोर निकला है। होगला और गरान के जंगल। सतगाँव से कुछ औरतें लूटकर ले आए हैं पुर्तगीज; काफ़ी दाम पर उन्हें अंग्रेज़ों के हाथ बेचेंगे। अंग्रेज यहाँ अपनी बीवियाँ तो लाते नहीं। मुगल बादशाह और नवाब मेम की काफ़ी कीमत देते थे। सफ़ेद चमड़े की एक औरत के बदले सारे देश का इजारा लिख दे सकते थे। इतना दाम था मेमों का! डचों ने फिर भी औरतों की कमी दूर की थी। औरतें अंग्रेजी न जानती थीं। उनसे बोलने और मिताई करने में दिक्कत होती थी। मगर बोबी रतन सरकार मौजूद था। दुभाषिया! इसी की दलाली करते-करते अंग्रेजी बोल लेता था। औरतों की बिक्री से काफ़ी रुपयों की आमदनी थी उसे।

रात को कलकत्ते का आदिम रूप प्रकाश में आता। हैलीडे स्ट्रीट में कितनों का काम तमाम होता, खिदिरपुर के पुल पर कितना छीन-छोर और मारपीट होती, कितनी खून-खराबी होती मछुआ बाज़ार में, दिन के कलकत्ते को इन बातों का पता न होता। कोई लैंडो गाड़ी चली जा रही है कि गली से लपके गुण्डे; चढ़

गए गाड़ी पर। बाबू के अद्धी के कुरते की जेब से घड़ी ले ली, सोने की जंजीर खींच ली। साईं बाबा के साचो मे जाने कितने बाबू बेखौफ चाय पीने गये और जुए में रकम और जान गंवा बैठे ! पुलिस को पता तक न चला। बेचाराम चटर्जी आदि ब्रह्म-समाज के आचार्य थे। बेहाला मे रहते थे। एक दिन समाज की सभा में शामिल होकर घोड़ा-गाड़ी से लौट रहे थे। खिदिरपुर के पुल पर काफियों ने लपेड़ा। पण्डितजी मोटी लाठी लिये जाते-आते थे। साहस सम्हाला और बच निकले।

भूतनाथ तब भी हक्का-बक्का देख रहा था। सूने रास्ते पर एक गाड़ी और काफियों ने उसे घेर लिया। गाड़ीवान शायद जान लेकर भाग खड़ा हुआ। उसके बाद हमला शुरू हो गया। गाड़ी बिलकुल बन्द थी। मगर झटके से दरवाज़ा खुल गया। और फिर जो हुआ···

भूतनाथ का नशा जैसे गाढ़ा हो गया। आँखों के आगे सब अन्धकार हो उठा। फिर सब साफ दीखने लगा। लगा; कोई कहीं नहीं है। खड़ा-खड़ा वह मानो सपना देख रहा था। इन आँखों के आगे जो कुछ भी देखा, सब मानो कल्पना थी। फिर लगा—नहीं। कलकत्ते में जहाज आया है। मुन्शी नवकृष्ण तब छोटे थे, नौकरी की कोशिश में गंगा के किनारे खड़े। साहब लोग उतरें तो कुछ खोज-पूछ की जाए। फिर लगा, कलकत्ते को सिराजुद्दौला ने आग लगा दी है; अंग्रेज़ों का किला जलकर राख हो रहा है। चर्च लेन के मोड़ की तोप मौन हो गई है। कुछ धुआँ निकल रहा है। सिराजुद्दौला छावनी के सामने खड़ा-खड़ा हँस रहा है। अलीवर्दी खाँ ने ठीक ही कहा था, अंग्रेजों को खदेड़े बिना राज्य में शान्ति नहीं आ सकती। सो कलकत्ते का नाम बदलकर रखा गया अलीनगर। बादलों-जैसे ये दृश्य आँखों पर तिर जाते। फिर लगा, वह बड़े महल के चोर कमरे में लेटा है, दीवारों की उड़नपरियाँ जिन्दा-सी हो उठी हैं। आधी रात को दरवाज़े पर किसी ने थपकी दी। पहले आहिस्ते-आहिस्ते फिर ज़ोर-ज़ोर से। लेकिन दरवाज़ा खोलते ही हवा का एक झोंका आया और सामान को बिखेर गया।

जवा की गाड़ी के पीछे-पीछे चलते हुए भूतनाथ को उस रोज़ की सारी घटना याद आ गई। सच ही उस दिन उसे बड़ा नशा आया था। चीख उठने की इच्छा हुई थी, पर हाल यह है कि सारी शक्ति लगाने पर भी गले की आवाज़ नहीं निकलने की। आँखें खोलकर उसने गौर किया और अचरज मे अवाक् हो गया वह। सामने एक भरा-पूरा आदमी चित पड़ा था। बदन पर हाथ लगाते ही चौंक उठना पड़ा। लाश थी। यहाँ कैसे मर गया यह ! भूतनाथ ने भागने की कोशिश की, मगर रुक गया। वह लाश उसे आँख के इशारे से बुलाने लगी।

—इधर आ, डर मत। मैं बद्री बाबू हूँ।

—बद्री बाबू ! अब पहचान पाया। बदन पर वही रूई की बंडी। भारी-

कम लम्बा शरीर। मुँह से लार टपक रही थी। लेकिन हँसते भी जा रहे थे।

बद्री बाबू ने कहा—मैं मर गया हूँ।

—कैसे मरे आप?

—घड़ी में कुंजी दे रहा था। उलटकर गिर पड़ा—घड़ी भी बन्द हो गई, री कमरवाली घड़ी भी टूट गई और मेरी साँस भी घुट गई।

भूतनाथ ने मानो यह पूछा—मर ही चुके तो बात कैसे कर रहे हैं?

—मरकर इतिहास जो हो गया, अब कोई ग़म न रहा मुझे। घड़ी अब नहीं चलेगी। बड़े महल की घड़ी बन्द हो गई। मोटर आई थी, चली गई। बाबू लोग अब कोयले की खान खरीद रहे हैं। ज़मींदारी बेच दी। कलि के चारों चरण पूरे। पता है, कलि कौन है? क्रोध के औरस से हिंसा के गर्भ से जन्म होता है कलि का। और हा-हा-हा हँसने लगे बद्री बाबू। देखते-ही-देखते उनकी दोनों आँखें जलने लगीं, अंगारे जैसी। सफ़ेद और सब्ज़ रोशनी! अचानक उन आँखों का रंग बदल गया; लाल हो गईं आँखें—सुर्ख लाल। अन्त में मानो दो स्थिर बिन्दु रहे—धीरे-धीरे दोनों बिन्दु दूर हटने लगे।

चारों ओर अँधेरा! उस अँधेरे में दो लाल बिन्दु देखकर पहले भूतनाथ को डर लगा था। फिर लगा, खड़े-खड़े कुछ लोग बात कर रहे हैं। जवा की आवाज! सुविनय बाबू की आवाज़! सुपवित्र बाबू का गला! अरे, बार-शिमले आ पहुँचा! अब उसे याद आया, जवा की गाड़ी के पीछे-पीछे चलते हुए वह कै दिन पहले की बातें सोचता रहा; पुरानी यादों की जुगाली करता रहा।

जवा की आवाज कानों में आई—अरे, आप तो हाथ बाए खड़े हैं भूतनाथ बाबू, चीज़ें उतारनी हैं कि नहीं?

सुविनय बाबू भी थक गए थे। उन्हें उतारकर अन्दर ले जाना था। भूत-नाथ बढ़ आया—चलिए, मैं चलता हूँ।

बिस्तर पर बैठकर सुविनय बाबू बोले—शुरू में वकालत से जो आमदनी की थी, उसी से यह मकान बनाया था। ज़माने के बाद यहाँ आया हूँ, मगर लगता है कल की बात है। जिस समय केशव बाबू ने 'साधन-कानन' खोला था, उसी समय इस घर को छोड़ा था। केशव बाबू की तरह हम लोग मुठिया पर गुजारा चलाते थे—खुद पकाते, खुद बर्तन मांजते। आनन्दमोहन बसु की प्रेरणा से मध्यवित्तों के लिए 'भारत-सभा' कायम की—उसी की देखादेखी शिशिर बाबू—अमृत बाजार के शिशिर बाबू ने भी 'इंडिया लीग' कायम की।

जवा कमरे में आई। कहा—आप फिर किस्सा कहने लगे बाबूजी!

—पुरानी बातें याद आ गईं बेटी! ख़ैर, सुपवित्र कहाँ है?

जवा ने कहा—दिन-भर काम ही कर रहा है। मैंने उसे घर भेज दिया। भूतनाथ बाबू को भी छुट्टी देनी है और इधर काम बहुत पड़ा है।

—तुम इन्हे ले जाओ—बातें मैं फिर कर लूँगा।

बड़ा पुराना मकान! नए सिरे से रहने के लिए सजाया गया। लेकिन 'मोहिनी सिन्दूर' वाले मकान से कोई तुलना नही। बीच का कमरा उपासना के लिए रखा गया। बीच मे केवल एक वेदी। चारो तरफ दरी बिछी। दीवार पर जवा की माँ की तस्वीर लगा दी गई। उसके ऊपर राजा-रानी की तस्वीर। कार्पेट पर जवा की माँ के हाथ का काढा हुआ 'गॉड सेव दि किंग' लगा दिया गया। रसोई घर से लगी ही हुई थी। भूतनाथ ने खुद लाकर सामान वहाँ सँवार दिया। ब्याह के बाद जवा और सुपवित्र की नई दुनिया यहीं बसेगी। भूतनाथ को काफी देर हो गई।

जवा ने पूछा—बहुत रात हो गई, अकेले जा सकेंगे तो?

भूतनाथ बोला—जाने से पहले तुमसे एक बात पूछनी है जवा!

—पूछिए।

—तुम यकीन करो, ननीलाल को मैंने यहाँ नही भेजा था। मैंने तो उसे कहा था कि लिवा चलूँगा कभी।

—जानती हूँ, मगर रुपये की बात उसे किसने बताई?

—वह मैंने ही बताई थी। उसके बैंक मे जमा करने से सूद काफी मिलेगा, इसी से। फिर उसने मुझे नौकरी दिलाने की भी कही है। ननी की सब जगह कद्र है। बडे महल के बाबू लोग भी खातिर करते है। ह्रासुलदत्त, नन्द बाबू के ससुर, वह भी तो उसके साथ कारोबार करते हैं। इसी उम्र मे जूट की मिल के हिस्से खरीदे, गाड़ी ली, खानें खरीदी। अंग्रेज भी उसे विश्वास पर रुपये देते है। पता है, कलकत्ते मे उसकी कैसी धाक-पूछ है?

—सब पता है भूतनाथ बाबू, सब पता है। ननीलाल का परिचय मुझे आपको नही देना पडेगा।

—फिर मेरा कसूर कहाँ मिला तुम्हे?

जवा ने कहा—उसे अगर फिर कभी यहाँ लाए तो आपके लिए यह घर बन्द हो जाएगा। सिर्फ आपकी वजह से उस रोज उसे निकाल बाहर नहीं किया। मैं शुरू-शुरू जब कलकत्ते आई तो मुझे पढाया करती थीं एक मेम साहब। फिर पिताजी ने मुझे सिखाया है कि आदमी होना क्या होता है—मैं ननीलाल की बातों मे नही आ सकती।

—लेकिन आज तो तमाम रुपयों की हो रही है। जानती हो [illegible] तरफ कितने रुपये और चन्दे दिए हैं?

जवा हँसी। बोली—रात हो गई है आप घर जाएँ। यह बात शुरू की जाए तो खत्म नही होने की। बीच-बीच में भेंट का इरादा करेंगे। [illegible] मुहल्ला, सुपवित्र का इम्तिहान आ धमका [illegible] वह आदत [illegible]

भूतनाथ खड़ा ही रहा। सिर्फ़ इतना कहा—आने को कहने का अर्थ है कंगले को साग की क्यारी दिखाना।

—आइएगा। जब जी आए, आ जाइएगा। बाबूजी की सेहत अच्छी नहीं। ब्याह के कामों का भार तो आप ही को उठाना है, अकेले सुपवित्र से नहीं बन पड़ेगा···मुझसे भी नहीं। इसी तरह आपको कष्ट दूँगी, रोज़ काम कराया करूँगी।

—ऐसे काम करने में मुझे कष्ट नहीं होता।

जबा हँसी। बोली—डर से शायद फिर कभी भेंट भी न करेंगे। और जब आपकी अपनी घर-गिरस्ती हो जाएगी, तो याद भी न आएगी।

भूतनाथ ने कुछ सोचा। उसके बाद बोला—यही तो अपनी कमजोरी है कि किसी को भूल नहीं सकता। भूल पाता तो जी ही जाता। जो अपने को भूल गए हैं, मैं उन्हें भी मन से नहीं निकाल सकता।

—लेकिन इतना याद रहे, याद रखने की जिम्मेदारी जहाँ तक एक ही की होती है, वहीं सम्बन्ध स्थायी होता है।

भूतनाथ ने कहा—कहीं यह जिम्मेदारी दो की होती तो कितना अच्छा होता!

—ऐसा नसीब संसार में कितनों का होता है ?

भूतनाथ ने पूछा—लेकिन मैं शायद उन्हीं अभागों में से एक हूँ ?

जबा खिलखिलाकर हँसी। बोली—आपके सवाल का जवाब मैं नहीं दूँगी। रात हो रही है, लौटने में आपको कष्ट तो न होगा ?

भूतनाथ उठ खड़ा हुआ। बोला—अब मैं खुशी-खुशी लौट सकूँगा जबा, क्योंकि मेरे मन का उत्तर मुझे मिल गया।

—खाक उत्तर मिला है ! जबा हँसने लगी।

भूतनाथ पलटकर खड़ा हो गया—तो क्या मुझसे भूल हुई ?

जबा ने कहा—नहीं। लेकिन लगता है, घर जाने की आपकी कतई इच्छा नहीं।

भूतनाथ ने कहा—लेकिन सुने बिना जा जो नहीं पाता।

—गज़ब के आदमी हैं आप ! सारा दिन इतना काम किया, फिर भी आपको नींद नहीं आती ! सुपवित्र शायद खा-पीकर सो भी चुका होगा।

—मैं तो लेकिन इतना बड़ा भाग्यवान नहीं हूँ।

—रहिए, आप यहाँ खड़े हाय-तोबा करते रहिए। मैं चली।

इसके बाद भूतनाथ लौट आया था। रात को उसे देर तक नींद नहीं आई। बाहर सन्नाटा। आधी रात को सिर्फ़ फाटक खोलने की आवाज से मालूम हुआ कि मँझले बाबू लौटे। घोड़ों ने दो-चार बार पैर पटके। दक्खिन के पोखरे के पास

कोई चिड़िया एक-सी चीखती हुई जाने किधर को उड़ गई ! फिर सन्नाटा। उस सन्नाटे का भी शायद कुछ अर्थ है। उसमें भूतनाथ को खुद को बड़ा अकेला लगा। राधा की याद आई। एक दिन उसने कहा था—इस तरह से नजर न लगाओ, कहे देती हूँ।

भूतनाथ ने पूछा था—क्यों, नजर लगाने से क्या होता है ?

उसने कहा था—नजर लगाना भी ठीक है भला, मैं लगाऊँ तो ?

भूतनाथ ने कहा था—लगा, लगा नजर, कहाँ लगाएगी तू !

जरा देर कुछ सोचकर राधा ने कहा था—अभी तो नहीं लगाती, तुम्हारी बहू आ जाए, फिर लगाऊँगी।

मगर वह सुयोग उसे न मिला। पेट में बच्चा लिए एक दिन वह गुजर गई। फिर याद आई अन्ना। कितनी खुशमिजाज थी ! जहाँ रहती, गुलजार किये रहती। वही अन्ना ! उस रोज शायद उसी से भेंट हो गई थी। बड़ी अप्रत्याशित थी वह भेंट।

कालीघाट की तरफ जा रहा था। पूस की काली के दर्शन की जमाने से इच्छा थी। धरमतल्ले की ओर से रास्ता।

बाईं तरफ साहब-मेमों के घर, दाएँ मैदान। बीच-बीच में पेड़ तले छाया में जरा सुस्ता लीजिए। फेरीवाले गन्ने के टुकड़े बेच रहे है। नाई दाढ़ी-मूँछ साफ़ कर रहा है, सिर घोट रहा है। लोगों की कातर दर्शन को जा रही है या लौट रही है। भूतनाथ सीढ़ी पर चढ़ ही रहा था कि उसे लगा—अरे, अन्ना तो नहीं है वह !

भूतनाथ ने बार-बार देखा—बाल छोटे-छोटे छँटे। सफेद कोर की धोती। गोद में साल-भर की बच्ची। अगल-बगल और तीन-चार लड़के-लड़कियाँ। साथ में उसकी सास थी शायद—सधवा। माँग में दमक रही थी सिन्दूर की लकीर। सफेद बालों में सिन्दूर। जब सधवा थी तब नाक में नथ पहनती थी शायद अन्ना। नाक में निशान था सूराख का। भूतनाथ को लगा था—बेशक अन्ना ही है। फिर जाने कब भीड़ में खो गई वह ! लौटते वक्त लेकिन उस जमात से फिर भेंट हो गई।

चौरंगी के पासवाली पगडण्डी पर जा रही थी वह जमात। आगे-आगे एक मर्द सूरत। बार-बार पीछे मुड़कर कह रहा था—जरा लपककर चलो, लपककर।—श्रीमान् का घर ?

भूतनाथ ने पलटकर देखा, यह सवाल उसी से किया गया था। कहा—मेरा घर फतेपुर है। ज़िला नदिया।

—नाम आपका ?

—भूतनाथ चक्रवर्ती।

उस भले आदमी ने कहा—हम लोग भी नदिया ज़िले के हैं। —अरे, जरा

कदम बढ़ाकर चलो, गाड़ी नहीं मिलेगी।

भूतनाथ बातें करता गया। तब तक जमात पास आ पहुँची। उस भले आदमी ने पूछा—अच्छा, अपनी बहू का मैका तो फतेपुर ही है न ?

भूतनाथ ने मौके से देखा, उस विधवा ने लम्बा घूँघट काढ़ लिया। उसी पल उसकी आँखें ज़रा दीखीं। भूतनाथ पर ही लगी थीं।

—बहू, ज़रा तेज़ चलो बेटी, गाड़ी छूट गई तो आफ़त···

देखने की जो ख्वाहिश हुई थी, भूतनाथ उसे भी दबा गया। वे लोग तेज़ चलने लगे। भूतनाथ जानकर धीमे चलने लगा। अन्ना ही होगी। वही होगी तो एक बार पीछे मुड़कर जरूर देखेगी। बड़ी देर तक भूतनाथ टकटकी लगाए रहा। उस विधवा स्त्री ने एक बार भी पीछे मुड़कर न देखा। नन्हीं बच्ची को गोद में लिये धीरे-धीरे वह आँख से ओझल हो गई। शायद अन्ना न रही हो। वही हो शायद। कौन जाने !

और हरिदासी ! उससे ज़िन्दगी में फिर कभी भेंट न हुई। जीवन में सबसे थोड़े ही भेंट होती है। कोई-कोई जीवन में रात-भर का मेहमान बनकर ही आता है, सुबह होते ही खो जाता है। शायद यही इस संसार का नियम हो।

उस रोज़ चोर-कमरे में यही सब सोचते-सोचते बहुत रात हो गई थी।

बड़ा बाज़ार की गली में खड़ा-खड़ा भूतनाथ सोच रहा था—अब कहाँ जाया जाए ! इसी तरह चक्कर काटते-काटते किसी-न-किसी दिन लग ही जाएगी नौकरी। अब बड़े महल को ही चलें। बंशी आज ज़रा पहले ही लौटने को कहा था। छोटे बाबू फिर जान बाज़ार जाने को हैं—चुन्नी के पास। वे उधर गए कि छोटी बहू भूतनाथ को साथ लेकर बाहर निकलेगी। सोचते ही डर लग आया। बड़े महल के कानून के खिलाफ़ काम। लेकिन अब लौटना ही चाहिए। इतने में मिल गया लोचन।

—लोचन, इधर कैसे ?

—जी, आप इधर कैसे ?

—मैं तो नौकरी के लिए रोज ही खाक छानता हूँ। तुम ? आज क्या बाबू लोग घर में नहीं हैं ?

—हैं। नौकरी करता हूँ तो क्या बाहर निकलना भी पाप है ? फिर उस तनखा से गुज़ारा चलता है ? विधु सरकार टैम से तनखा भी नहीं देता। ऊपरी आय तो जाती रही।

—क्यों ?

—तम्बाकू पीनेवाले ही घटते जा रहे हैं। अब कोई दूसरा रास्ता अख्तियार किये बिना कै दिन काम चलेगा ? इसीलिए दौड़-धूप करता हूँ। मगर नौकरी

तो अब न करूँगा माले साहब !

—क्यों ?

—नौकरी में अब वह सुख न रहा। बड़े महल में जो मौज काट चुका, वह कहीं नसीब न होने की। अपने यहाँ का एक आदमी घुसा तो है ननी बाबू के यहाँ ""मगर दाल नहीं गलती।

—जी, नन्हे बाबू के दोस्त ननी बाबू। अब तो बहुत बड़े आदमी हैं। कितने दफ्तर हैं उनके। वह आदमी उन्ही के यहाँ काम करता है, यह-वह हुक्म बजाता है। मानते हैं वे, सो रुपये-पैसे देते हैं, मगर कौड़ी-कौड़ी का हिसाब। सुना है, सुबह सात बजे तक साहब को हिसाब समझा देना पड़ता है। इधर-उधर हुआ कि नौकरी गई। *यह कुछ बड़े महल की तो बात नहीं कि खाया, चुराया, उड़ाया।* ननी बाबू के यहाँ हो तो धेले का गोलमाल ! यों साहब तो पी-पवाकर पड़े रहते हैं, मगर पैसों के मामले में बड़े चौकन्ने। जितनी ही रात को सोएँ चाहे, सुबह जग ही जाना चाहिए। बड़े महल जैसी नौकरी अब कहाँ मिलने की ! जो सुख कर चुका, कर चुका। अब आज अपनी राह बनानी है, क्योंकि गाँव लौटकर न तो हल चला सकूँगा, न माटी-गोबर कर सकूँगा।

—फिर ? कोई व्यापार करोगे ?

—जी, वही सोचता हूँ, व्यापार क्या करूँ ? कुछ ठेले रखे थे, वे भी न रहे। जैसा चाहिए, जमा नहीं मिलता, ऊपर से मरम्मत का खर्चा। अब सोचता हूँ, कोई जगह मिल जाए तो पान की दूकान करूँ।

—पान की दूकान ?

—जी हाँ। अपना तो जाती पेशा है। मौके की जगह मिल जाए, तो नौकरी छोड़ दूंगा। बिना तनखा के कब तक चले, आप ही कहिए ! सुना है, बाबुओं पर यों ही बहुत कर्ज हो गया है।

—यह कहाँ सुना है तुमने ?

—जी, मधुसूदन तो कहता है अब तो समझिए कि सारी अक्ल तो नन्हे बाबू के ससुर ही देते हैं। सुना है, जमीदारी बेचकर अब कोयले की खान लेंगे। बाबुओं को क्या कमी पडी है ! इधर से लाख गया तो इधर से लाख आया—ले-दे-बराबर। मगर इतने नौकर अब क्यों रखेंगे ?

भूतनाथ अवाक् हो गया। पूछा—तुमने ठीक-ठीक सुना है ?

—क्या ?

—यही, जमीदारी बेचकर खान खरीदने की बात ?

—आपने नहीं खयाल किया, बालक बाबू रोज आ रहे हैं, नन्हे बा[illegible] उनके ससुर से रोज राय-मशविरा चल रहा है। कई दिनों से [illegible] नहीं उड़ाते। उस रोज मँझले बाबू कह रहे थे कि बालक बाबू

जाना रुक गया। फिर सब कोई नाचघर में जो बैठे, सो रात के तीन बज गए। बातें होती रहीं। तम्बाकू चढ़ाते-चढ़ाते मेरा हाथ-पैर पिराने लगा।

—सुना क्या-क्या?

—मैं मूरख आदमी, समझूं क्या भला! लेकिन उस दिन देखा, कुछ लोग पोखरे को नाप-जोख गये। सुना, भर दिया जाएगा। उसके बाद वह ज़मीन बेची जाएगी; खरीदार खोजा जा रहा है। अन्दर-अन्दर क्या-क्या हो रहा है, कौन जाने! हम तो नौकर ही हैं।

—लेकिन बंशी ने तो कुछ नहीं बताया? उसे नहीं मालूम है?

—जी, वह तो छोटी माँ का मुँह ताकता हुआ बैठा है···अब तो···कहते-कहते अचानक रुक गया वह।

—रुक क्यों गए, कहो?

—जी, ज़नानख़ाने की बातें न कहना ही ठीक है और बड़े महल की औरतों की बातें हम जान भी कितनी सकते हैं···तब जो सुनते हैं···

—क्या सुनते हो लोचन? कहो।

—हुज़ूर पहले यह कहें कि किसी से कहेंगे नहीं; कहा तो मेरा सर्वनाश होगा।

—मैं तुम्हें वचन देता हूँ, किसी से न कहूँगा।

आवाज़ धीमी करके लोचन बोला—बंशी ने छोटी माँ को शराब की आदत लगाई है। हम गरीब-गुरबे हैं। अपने यहाँ की औरतों का यह रवैया बाप-जन्म में भी नहीं सुना। लेकिन बंशी को इस पाप का फल भोगना पड़ेगा। उसने सोचा है, छोटी माँ को नशे में चूर करके सारे ज़ेवर मार ले जाएगा, लेकिन भगवान् नाम का एक आदमी माथे पर है, साले साहब, उसकी नज़र कोई नहीं बचा सकता। जी हाँ!

भूतनाथ कुछ देर तक कुछ बोल न सका।

लोचन ने कहा—शायद आपको विश्वास नहीं हो रहा है। मधुसूदन काका से पूछ लीजिएगा कि सच है या नहीं। उस रोज़ पालकी के कहारों को जवाब दे दिया गया। जाते-जाते बेचारे जो दहाड़ें मारकर रोये कि क्या बताऊँ! तीन पुश्त यहीं बीते; दूसरा काम तो नहीं जानते। सरकार बाबू ने डांट बताई। रोया-गिड़-गिड़ाया, कोई नतीजा न निकला। दोपहर की कड़ी धूप में निकल गए बेचारे। बाबुओं ने झाँककर देखा भी नहीं। हम लोगों की भी यही गत होगी हुज़ूर! घर की वह रौनक ही नहीं। पहले क्या बोलबाला था! दशहरा-दीवाली की धूम, होली में मारे अबीर के गली लाल हो जाती थी, नाच-गान—अब वह सुख रहा नहीं हुज़ूर? तनख़ा तक बाकी रह जाती है। तो जब कमा-कोड़कर ही खाना है तो यहाँ व्यापार करना ही ठीक है।

—उससे कुछ मिलेगा ?

—क्यों नहीं ? देख नहीं रहे हैं, देखते-देखते कलकत्ता क्या-से-क्या हो गया ! आँखों से तो देखा, क्या था बड़ा बाज़ार और क्या हो गया ! घोड़े की ट्राम थी, कल की ट्राम आ गई। रेंडी के तेल का दीया जलता था, बिजली की बत्ती हो गई।

रेंडी के तेल की बत्ती भूतनाथ ने भी देखी थी। याद है। नन्हे बाबू के कमरे में गिलास की बत्ती जलती थी। तीन हिस्सा पानी, एक हिस्सा रेंडी का तेल। बच्चों के पढ़ने के कमरे में नारियल का तेल जलता था। इसकी रोशनी थोड़ी साफ होती थी। उसके बाद एक तीली की नोक पर तेल में भिगोई रुई को चकमकी पत्थर की आग से सुलगा देना। लेकिन मोमबत्ती ही सबसे अच्छी थी। नाच-घर में जब मँझले बाबू पढ़ने बैठते थे, तो ऊपर रहता था मोमबत्ती वाला झाड़-फानूस और उनके अगल-बगल दो मोमबत्तियाँ। उसके बाद आया किरासन। किरासन तेल की लालटेन। इसकी तरह-तरह की बत्तियाँ निकलते-न-निकलते रास्तों पर गैस की रोशनी जलने लगी। बड़े महल में भी गैस की बत्तियाँ पहुँचीं। उसके बाद ऐमिटिलिन। अन्त में पहुँच गई बिजली। वह भी कभी गुल हो गई तो वही अँधेरा ! अन्दर से लालटेन निकल आती, मोमबत्ती जल जाती।

भूतनाथ के देखते-ही-देखते कितना-क्या बदल गया ! मगर लगता है महज़ उस दिन की बात है !

लोचन ने कहा—चीज़ों की कीमत ही देख लीजिए न, पहले गया का कड़ा-मीठा तम्बाकू मँगवाया है—सात आने सेर गोश्त, दस पैसा सेर दूध, बारह आने सेर घी, छः पैसे की दाल, तीन आने की सरसों का तेल, आज कहाँ पहुँच गया ! समय दिन-दिन बुरा आता जा रहा है।

भूतनाथ ने कहा—अब चलूँ लोचन, देर हो गई।

लोचन बोला—जी, अब मैं भी लौटूँगा हुजूर !

लेकिन लौट न सके वे। उधर कुछ लोग शोर मचाकर क्या तो कह रहे थे। एक-एक आदमी दूकान के सामने खड़ा हो रहा था और जाने क्या कह रहा था ! भाषण के बाद सबने गाना शुरू कर दिया—

बंगाली का प्राण बंगाली का मन
बंगाली घर के भाई ओ बहन
एक होवें एक होवें
एक होवें भगवान !

गाते-गाते सब पास आ पहुँचे। छपा हुआ कोई कागज बाँट रहे थे। भूतनाथ ने एक इश्तहार माँगकर लिया।

लोचन ने पूछा—क्या लिखा है हुजूर ?

भूतनाथ पढ़ने लगा—अगले ३० आश्विन को कानून द्वारा बंगाल का बँटवारा हो रहा है। लेकिन ईश्वर ने बंगालियों को अलग नहीं किया है, इस बात की याद दिलाने के लिए उस रोज हम राखी-बन्धन त्योहार मनायेंगे और आपस में एक-दूसरे की कलाई पर पीला धागा बांधेंगे। मन्त्र होगा—भाई-भाई एक हैं। —हस्ताक्षर—रवीन्द्रनाथ ठाकुर।

लोगों ने वंदेमातरम् का नारा बुलन्द किया।

एक ने कहना शुरू किया—३० आश्विन याद रखें। लॉर्ड कर्जन ने तै किया है कि उस रोज वे बंगाल को दो हिस्सों में बाँट देंगे। हम लोगों ने भी तै किया है कि इसका विरोध करेंगे। हमारे राष्ट्रीय कवि रवीन्द्रनाथ उस दिन जातीय नव-जागरण के पुरोहित बनकर नंगे पाँवों जनता के जुलूस के आगे-आगे प्रधान रास्ते से पुण्य-सलिला गंगा के तट तक जाएँगे। आप सबसे अनुरोध है, उस दिन आप भी भारत भाग्य-वाहिनी भगीरथी को साक्षी मानकर शपथ लें—विदेशी बहिष्कार की शपथ।

सबने फिर नारा लगाया—वंदेमातरम्!

—उसके बाद गंगा में स्नान कर लोग एक-दूसरे के हाथ में राखी बांधेंगे। एक निवेदन और। ३० आश्विन को घर-घर रसोई बन्द रखकर, उपवास करके हम इस राष्ट्रीय वेदना को अंकित करके रखना चाहते हैं। निहत्ये लोगों का बिना हथियार का प्रतिरोध। दूकानदार भाई अपनी-अपनी दूकानें बन्द रखें; गाड़ीवान-बन्धु गाड़ी चलाना बन्द रखें; कुली, मेहतर, मोटिया, मजूर, सबसे हमारी प्रार्थना है, हमें सबका सहयोग चाहिए।

लोचन कुछ समझ नहीं सका। पूछा—ये दूकान क्यों बन्द करने को कह रहे हैं हुजूर?

भूतनाथ ने कहा—बंगाल को अखण्ड रखने के लिए।

लोचन फिर भी कुछ न समझ सका। बोला—मैं जो पान की दूकान खोलने वाला हूँ, नहीं खोलने देंगे क्या?

भूतनाथ बोला—पहले सुनने दो।

भाषण चल ही रहा था—हमारे नेताओं ने उसी दिन बंगाल की राजधानी में 'फ़ेडरेशन हॉल' की स्थापना करने का निश्चय किया है, जो भारत के सभी प्रदेशों के लोगों का एक महामिलन केन्द्र होगा। उसी दिन तीन बजे उस मिलन-मन्दिर की नींव डाली जाएगी। नींव डालेंगे हमारे पूज्य नेता आनन्दमोहन वसु!

फिर से वंदेमातरम् की ध्वनि गूंज उठी। पांच-छः छोकरे थे। दूकानदारों ने शायद उनकी बात नहीं समझी।

भूतनाथ ने कहा—चलो, अब चलें लोचन।

रास्ते में एक बार भूतनाथ के जी में आया—आखिर ये छोकरे कौन हैं!

युवक मघ के तो नही ? लेकिन घर पहुँचते-पहुँचते कुछ भी याद न रहा। देर हो चुकी थी। पहुँचते ही नज़र पड़ी, छोटे बाबू की लैण्डो गाड़ी बरामदे में जुती खड़ी है। ज़रा ही देर मे छोटे बाबू उतरे। वंशी साथ था। लैण्डो का सईस अब्राम मियाँ दरवाज़ा खोलकर सलाम ठोककर खड़ा हो गया। घंटी घनघना उठी। घोड़ों का सब्र छूट रहा था, दाँतो से लगाम को चबा रहे थे। लगाम, लगाम लेते ही दौड़ पड़ेंगे। अचानक छोटे बाबू को मानो कुछ याद आया। पुकारा—वंशी···

वंशी मौजूद ही था। बोला—हुज़ूर !

—मेरा कोडा।

बिजली की तरह वंशी दौड़कर अन्दर गया और दूसरे ही दम सफ़ुर्चों की पूँछ वाला कोड़ा लाकर उसने छोटे बाबू को दिया। उसके बाद लगाम खींचते ही घोड़ों ने एक झटका दिया और देखते-ही-देखते गाड़ी गेट पार करके वनमाली सरकार लेन पहुँच गई।

नत्थूसिंह चिल्लाता रहा—होशियार, होशियार···

अब वंशी के जी-मे-जी आया।

भूतनाथ को देखकर बोला—आप आ गए···उधर छोटी माँ भी तैयार हैं।

भूतनाथ ने कहा—मैं भी तैयार हूँ।

—फिर आप चोर कमरे के दरवाज़े से आइए। मैं मियाँजान को ख़बर दे आऊँ।

वंशी अन्धड की तरह चला गया। भूतनाथ चोर कमरे के बरामदे से गया और धीरे से दरवाज़े को खोला। उस तरफ बडी मालकिन का गला सुनाई पड रहा था। सिन्धु से अण्ड-बण्ड बातें चल रही थीं उनकी। मँझली बहू के कमरे से गिरि का गला सुनाई पड़ रहा था। बरामदा सूना पडा था।

भूतनाथ छोटी बहू के कमरे के सामने जा खडा हुआ। अन्दर से चूड़ियों की झनक आ रही थी—

भूतनाथ ने आवाज़ दी—छोटी बहू···

—आ गया भूतनाथ ! उसे अन्दर बुला ले चिन्ता !

कमरे मे कदम रखते ही भूतनाथ अवाक् रह गया। चिन्ता उनका शृंगार कर रही थी। अभी भी साज-सिंगार पूरा न हो सका था। लेकिन छोटी बहू मे इतना रूप !

काठ का मारा-सा कुछ देर देखता रह गया भूतनाथ। जूड़े को काफी फैलाकर बाँधा था। कितने गहने पडे थे उसमें। हीरे की कील, मोती-जडी एक कघी, जिसमें लिखा था पति परम गुरु ! कोई और गहना था, भूतनाथ को नाम नही मालूम। कान मे हीरे का फूल। पूरे दोनो कान, सोना, हीरा, मोती से मढ़े

हुए। गले में हार। जूड़े के नीचे गोरी गर्दन पर एकाध बाल उड़ रहे थे।

छोटी बहू ने कहा—बस जरा और रुक जा भूतनाथ! उसके बाद चिन्ता से कहा—दोनों कंगन ला, बाजूबन्द ला और कुछ अँगूठियाँ निकालकर दे।

सन्दूक से निकाल-निकालकर चिन्ता छोटी बहू को गहने पहनाने लगी।

आखिर में निकली करधनी। कमर के नीचे से दो इंच चौड़ी करधनी छोटी बहू के चारों तरफ़ लिपटी रही।

आईने में आखिरी बार अपना चेहरा देखकर वह बोलीं—अब चल भूतनाथ! चिन्ता से कहा—चिन्ता, ज़रा पता लगा तो, छोटे बाबू चले गये या नहीं?

चिन्ता बाहर निकल गई तो भूतनाथ ने पूछा—कहाँ चलना है बहूजी?

जहाँ जी चाहेगा।

—मुझे भी चलना होगा?

—हाँ, तू मेरे साथ चलेगा।

—लेकिन यह अच्छा होगा? बड़े महल की छोटी बहू के साथ मैं बाहर जाऊँ, यह मेरे लिए ठीक होगा?

छोटी बहू ने कहा—गाड़ी मेरी है, मैं जी चाहे जहाँ जाऊँगी, कोई कह क्या सकता है? और तू मेरे हुक्म से चल रहा है।

—आखिर छोटे बाबू को पता तो चलेगा ही, तब?

—मैं क्या छोटे बाबू से डरती हूँ! वे जान बाज़ार जा सकते हैं, मैं नहीं जा सकती? औरत हुई तो क्या मानव नहीं हूँ मैं?

भूतनाथ बोला—तुम तो बहू हो, मर्द से तुम्हारी तुलना ही क्या?

छोटी बहू मानो बिगड़ उठी। जरा देर चुप रही। फिर बोली—मैं क्या करती हूँ क्या नहीं, तुझे भी इसकी सफ़ाई देनी पड़ेगी।

भूतनाथ ने आवाज़ धीमी कर ली। बोला—गुस्सा न हो, मगर नशे के झोंक में जो-सो कर बैठोगी और…

यानी! छोटी बहू ने मानो फन उठाया—तू कहा चाहता है कि मैं नशे में हूँ! आज षष्ठी का उपवास है, दिन-भर में एक बूंद पानी भी नहीं छुआ तो नशा! और अगर पी ही है, तो तू बता, किसकी वजह से पी है? किसके लिए पी है? किसने पीना सिखाया? और कोई न जाने चाहे, मेरे देवता तो जानते हैं। मगर तू कहने वाला कौन होता है?

भूतनाथ ने कहा—मैं तुम्हारे भले के लिए कहता हूँ।

—मेरा भला किसी को नहीं सोचना पड़ेगा। तेरे पैरों पड़ती हूँ, मेरे भले की तू मत सोच, मेरे भले की फिक्र दुनिया में कोई न करे। जो अपने हैं, उन्होंने जब न सोचा, तो तू तो बिराना है।

—फिर भी एक बार अच्छी तरह से सोच देखो छोटी बहू!

—मैंने बहुत अच्छी तरह से सोचकर देख लिया है। और ज्यादा सोचने मे दिमाग खराब हो जाएगा। ब्याह के बाद जो इस घर में दाखिल हुई, फिर कभी बाहर न निकली। पता है तुझे इस दुनिया में ऐसी कोई जगह नहीं जहाँ मैं जाऊँ। लोगों के मैका होता है, मुझे वह भी नहीं। इस कमरे और इस बरामदे से बाहर झाँककर भी नहीं देखा कभी। चारों ओर से घिरा है। कहाँ है वरानगर और कहाँ है जान बाजार, यह भी नहीं जानती।

जरा देर चुप रहकर बोली—अच्छा भूतनाथ, वरानगर कहाँ है, जानता है तू?

भूतनाथ ने कहा—जानता हूँ। ब्रजराखाल के दोस्त पहले वहीं रहते थे। मगर वहाँ कहाँ जाओगी? अपने बगीचे में?

—नहीं। लेकिन अगर वहीं जाऊँ तो एतराज है तुझे?

—मैं नहीं जाऊँगा।

—क्यों?

भूतनाथ ने कहा—इतना नहीं समझती? तुम बड़े महल की बहू हो। और मैं? मैं कोई नहीं। न तुम्हारा कोई हूँ, न इस घर ही का कोई हूँ। मेरे साथ तुम्हारा निकलना ठीक नहीं दीखता—इसमें तुम्हारा ही नुकसान होगा छोटी बहू!

—मेरे नुकसान की सोचने वाला तू कौन होता है?

—आखिर एक कोई तो सोचने वाला होना चाहिए, तुम्हारा जो कोई नहीं?

—अगर तुझे मेरी इतनी फिक्र रहती है, तो तू मेरे साथ चल, मेरे भले ही के लिए चल।

—मैं सुनूँ कि वरानगर जाने से क्या भला होगा तुम्हारा?

—तुझे अपनी सब बात मैं बताऊँ क्यूँ!

—फिर मैं भी नहीं जाता। भूतनाथ रूठ बैठा।

छोटी बहू ने गम्भीर स्वर में कहा—नहीं जाएगा तू?

—तुम मुझे जाने को न कहो।

छोटी बहू ने कहा—तू न जाएगा तो मेरे साथ जाएगा कौन, बता?

—क्यों, बंशी जाएगा या चिन्ता जाएगी।

—उनके जाने से काम न चलेगा। मेरे घर की निगरानी कौन करेगा? छोटे बाबू के काम कौन करेगा?

भूतनाथ कुछ देर चुप रहा। उसके बाद कहा—जा सकता हूँ, बशर्ते कि तुम वचन दो, आज पियोगी नहीं।

—दिया वचन, नहीं पिऊँगी। और अब शायद पीने की जरूरत भी न

जिसके लिए पिया करती थी, वही तो अब रात को घर में नहीं रहा

इतने में चिन्ता आई। बताया—बाबू चले गए।

वंशी भी आ पहुँचा।

छोटी बहू ने पूछा—गाड़ी तैयार है?

वंशी ने कहा—जी, खिड़की पर गाड़ी लिए मियाँजान खड़ा है।

छोटी बहू ने कहा—चल भूतनाथ! उसके बाद चिन्ता से कहा—घर की रगिरी रखना। सन्दूक की ताली तेरे ही जिम्मे छोड़े जाती हूँ, लौटकर सारी जें सही-सलामत ही पाऊँ। शाम को धूप जलाना, दीया-बत्ती करना। रोज़ से देती है, यशोदादुलाल को भोग देना। चलते-चलते फिर बोली—और अगर कोई पूछे तो कहना कि मैं बरानगर गई हूँ।

वंशी पूछ बैठा—लौटेंगी कब?

—लौटने में रात होगी।

चिन्ता ने पूछा—खाने का क्या करूँगी? पूजा का प्रसाद रखा है, वही रखे रहूँगी।

छोटी बहू ने ज़रा देर कुछ सोचा, जूड़े की एक कील को ठीक तरह से खोंसा और तब कहा—प्रसाद ही खा लूंगी आज, और कुछ नहीं। लेकिन तुम लोग खा-पी लेना, मेरे इन्तजार में बैठे न रहना। उसके बाद चलकर भी वह रुक गई। कहा—कहीं न लौटी तो···

—यह कैसी बात, लौटेंगी कैसे नहीं?

—ठीक-ठीक कहा तो नहीं जा सकता—रास्ते में जाने कैसी-कैसी आपदाएँ आ सकती हैं। अगर मैं न लौटूँ तो तुम लोग···

—ऐसा न कहिए छोटी माँ! आप न लौटेंगी तो हमारा क्या होगा?

—क्या सोचती है कि मैंने इसका इन्तजाम नहीं किया है? मेरा सारा कुछ पड़ा रहा, तुम सब लेना, भूतनाथ लेगा···और किसके लिए रख जाऊँगी, बता!

वंशी और चिन्ता की आँखें छलछला आईं।

छोटी बहू ने कहा—और देर न कर भूतनाथ, चल, जाने-आने में रास्ता काफ़ी लम्बा पड़ेगा।

आगे-आगे छोटी बहू। पीछे-पीछे भूतनाथ। वंशी और चिन्ता भी साथ-साथ बढ़े। सीढ़ी से उतरते हुए लगा, आहट पाकर मँझली और बड़ी बहू भी बरामदे में निकल आई हैं।

—छोटी बहू निकली?

—कहाँ चली रे छोटी?

छोटी बहू सुन न पाई शायद। पीछे उलटकर भूतनाथ ने देखा, गिरि और

सिंधु अवाक् खड़ी देख रही हैं। डर-सा लगने लगा। सबकी नजरों के सामने इस तरह से जाना। कोई बात आ पड़े। कल कहीं छोटे बाबू के कानों पहुँचे यह खबर? नन्हे बाबू सुनें। आजकल नन्हे बाबू भी तो अकेले नहीं, ह्वावुलदत्त भी इस घर के एक मालिक ही हैं। सारी परिस्थिति को सोचकर अनमना हो उठा था भूतनाथ।

मियाँजान गाड़ी लिये खड़ा था। घोड़ों की लगाम थामे था इलियास। दौड़कर गाड़ी का दरवाजा खोल दिया। छोटी बहू ने लम्बा घूँघट खींचा। इलियास हटकर खड़ा हुआ। गाड़ी पर पहले छोटी बहू सवार हुई, फिर भूतनाथ। बंशी ने दरवाजा बन्द कर दिया। कहा—हाँको मियाँजान!

गेट खोलकर बिरिजसिंह खड़ा था। गाड़ी के निकलते ही गेट को फिर बन्द कर लिया।

एक साथ, एक गाड़ी में आमने-सामने बैठकर जाना। भूतनाथ ने देखा, छोटी बहू ने घूँघट हटा लिया। अभी गाड़ी वनमाली सरकार लेन से जा रही थी, मगर समझना मुश्किल था। अन्दर अँधेरा था, सिर्फ़ सामने के नीले काँच से थोड़ी-सी रोशनी आ रही थी। गाड़ी की छत के नीचे रेशमी जाल टँगा था। चारों ओर भी रेशमी झालर झूल रही थी। गाड़ी के तख्तों पर मखमल मढ़ा था। कितना मुलायम! आवाज नहीं। पालकी-सी हिलती-डुलती चल रही थी गाड़ी। गाड़ी पर भूतनाथ बहुत बार चढ़ चुका है, पर उन गाड़ियों में झटके-से लगते। बड़ी रूखी आवाज! सारी गाड़ी ही थरथराती रहती। लेकिन यह गाड़ी ही और तरह की थी। इससे दूर जाने में कोई दिक्कत नहीं। बदन में दर्द नहीं होने का। रह-रहकर घंटी बजती जा रही थी। बगल से ट्राम गुजर गई। शायद सामान से लदी बैलगाड़ी जा रही थी आवाज करती हुई। लदी गाड़ी में कैसी आवाज होती है!

लगा, गाड़ी ट्राम के रास्ते पर जा रही है।

भूतनाथ कैसा जड़-सा बैठा रहा! इतने पास बैठी थी छोटी बहू! भूतनाथ ने एक बार उसकी तरफ़ ताका। अपने ही मन में क्या सोच रही थी! किसी तरफ़ उसकी नजर न थी मानो। साड़ी और जूड़ा धीरे-धीरे हिल रहा था। रेशमी साड़ी बार-बार कन्धे से गिर-गिर पड़ने को होती। दाएँ हाथ से फिर उसको सरका लेती छोटी बहू। गाड़ी का अन्दर इत्र की खुशबू से महमहा रहा था। अँधेरे में भी करनफूल चकमका उठता था। कपाल पर सिंदूर का बड़ा-सा टीका—शायद 'मोहिनी सिंदूर' का। मगर अब भी उसे क्यों लगाती हैं छोटी बहू, किसी काम तो आया नहीं वह।

ट्राम की लाइन पार करते समय गाड़ी की चाल थोड़ी धीमी हो गई। उसके बाद फिर वही झूलते हुए चलना।

भूतनाथ को कैसा अक-बक-सा लग रहा था। कोई बातचीत नहीं। आमने-

सामने चुपचाप बैठे। भूतनाथ ने अपने कपड़े-कुरते पर निगाह डाली। काफ़ी दिनों से धुला न था। बड़ा मैला दीख रहा था। खासकर छोटी बहू के वैसे साज-सिंगार के बगल में। अन्दर न बैठने से भी चलता। वह तो ऊपर ही बैठना चाह रहा था, लेकिन छोटी बहू ने अन्दर बैठने को कहा। कोई बात ही न करनी थी, तो अन्दर बैठना क्या! अचानक आज उसे अपना आप बड़ा गरीब लगा। बड़ा गरीब! छोटी बहू से इतनी घनिष्ठता बढ़ाने ही क्यों चला वह! जबा से ही इतना मिलने-जुलने की क्या ज़रूरत थी! उनके बुलाने पर बार-बार वह जाता ही क्यों है? वे तो इसे नीची निगाह से ही देखते हैं। चाहती तो उस दिन जबा उसे गाड़ी में बिठा नहीं सकती थी? सब लोग तो गाड़ी से ही गये, वही अकेले पैदल गया बाग बाज़ार से बार शिमले। कम-से-कम गाड़ी की छत पर तो थोड़ी-सी जगह निकल ही आती। और आज ही वह क्यों जा रहा है? क्या केवल छोटी बहू के आग्रह से? क्या उसे खुद जाने की इतनी-सी भी ख़ाहिश न थी? और इच्छा ही थी तो किस लिए! छोटी बहू का सामीप्य! छोटी बहू के सामीप्य का इतना लोभ! यह लोभ ठीक तो नहीं। फिर याद आया, ये कपड़े-लत्ते तो छोटी बहू ने ही दिये हैं। उसने न दिया होता तो भूतनाथ पहनता क्या? लेकिन कपड़े-लत्ते तो वे बहुतों को दिया करते हैं। जो खिलौने के ब्याह में हजार-डेढ़ हज़ार फूंक सकते हैं, उनके लिए इतना-सा क्या है? इतने ही थोड़े में लेकिन उसने अपने को क्यों धन्य समझा? ब्रजराखाल ने पहले ही कहा था—वे साहब-बीवी की ज़ात हैं—हम सब गुलाम हैं। सच ही छोटी बहू उसे गुलाम-जैसा देखती है। अपने ऊपर कैसी नफ़रत होने लगी!

जी में आया, छोटी बहू से एक बार पूछे कि कहाँ जा रही हो तुम? लेकिन उसकी तरफ देखकर बात मुँह से निकली नहीं।

छोटी बहू मानो उसके मन की ताड़ गई। पूछा—क्या सोच रहा है रे भूतनाथ?

भूतनाथ की आँखों से रोना फट पड़ने लगा। अपने को किसी तरह से सम्हालकर बोला—ऐसा जानता होता तो मैं हर्गिज़ न आता।

छोटी बहू हँस पड़ी—क्यों, हुआ क्या तुझे?

—तुम बिलकुल न बोलो, यह अच्छा लगता है मुझे?

छोटी बहू ने कहा—तो बोल मैंने मना कब किया?

—और तुम सिर्फ़ चुपचाप सुनती रहोगी?

—मेरी तो सारी बातें चुक गई भैया! तू बोल मैं सुनूंगी।

—उससे तो बेहतर है, मैं यहीं पर उतर जाऊँ।

छोटी बहू ने कहा—बड़ा मान है तुझे! मर्दों को इतना नहीं सोहता। देखा है न, छोटे बाबू किसी के मान की कीमत नहीं देते।

भूतनाथ ने कहा—तुम क्या मुझे छोटे बाबू-सा बनने को कहती हो ?

हँसते-हँसते छोटी बहू ने कहा—इसीलिए तो तू मुझे इतना भला लगता है। काश, वह तेरे जैसा होता···वह जान बाजार जाकर क्या करता है, नहीं जानती, कितनी तो कोशिश की मैंने, एक औरत से जो नहीं बन सकता है, वह भी करके देखा, मगर सब बेकार। कभी-कभी जी में आता जान बाजार में उस राक्षसी के यहाँ छिपकर देख आऊँ कि वह कौन-सा मन्त्र जानती है, कैसे उसने छोटे बाबू को इस कदर लुभा रखा है। रात में सोये-सोये अचानक उसका नाम लेकर जाग पड़ता है, कभी-कभी भूलकर मुझे चुन्नी कह बैठता है। नशे में बदहोश पड़ा रहता है, तब मैं भी कुछ नहीं कहती, मगर मेरा कलेजा टूट जाता है भाई !

भूतनाथ ने कहा—लेकिन तुम भी तो जाने कैसी औरत हो ! अरे तुम्हारे सामने उसकी बिसात क्या है, पाँव बराबर भी नहीं, मैंने तो देखा है।

छोटी बहू ने कहा—मैं भी तो यही सोचती हूँ। जरूर उसने कुछ खिलाया है, जैसा तुझे खिलाया था। सुना है, कामाक्षा की औरतें मर्दों को भेड़ बनाकर रखती हैं; कुछ खिला देती होगी।

भूतनाथ बोला—तुम कहो तो मैं एक बार और जाऊँ जान बाजार। *अबकी कुछ पिऊँगा नहीं, सब देख आऊँगा।*

—उँहूँ, तुझे अब वहाँ न जाने दूँगी। तुझ पर भी टोना कर दे कहीं। लेकिन अबकी मैं आखिरी कोशिश कर देखूँगी भूतनाथ। इससे भी न बन पडा तो समझूँगी अब होने ही का नहीं।

—किस बात की कोशिश कर देखोगी ?

—आज उसी के लिए तो बरानगर जा रही हूँ।

भूतनाथ ने पूछा—किस कोशिश में ?

—एक साधु के पास जा रही हूँ। हमारी नाइन ने बताया—उसे तो साल-साल लड़का होता था और मर जाता था, उसी साधु की दवा से तो इस बार बचा बच्चा उसका। देखूँ भी, क्या बताता है ? सुना, हर तरह की दवा देता है। उसी से पता पूछा है।

—क्या है पता ?

—तू बरानगर जानता है ?

—सिर्फ एक बार गया था ब्रजराखाल के साथ, उसके गुरुभाई उस समय वहीं रहते थे। क्या है पता ?

—पता तो नहीं मालूम। नाइन ने कहा, वहाँ जिससे भी पूछोगे, बता देगा; सभी जानते हैं।

—लेकिन इसके लिए तुम्हारे आने की क्या जरूरत थी ? मैं अकेले ही आकर जा सकता था।

ने चुपचाप बैठे। भूतनाथ ने अपने कपड़े-कुरते पर निगाह डाली। काफ़ी दिनों
धुला न था। बड़ा मैला दीख रहा था। खासकर छोटी बहू के वैसे साज-सिंगार
बगल में। अन्दर न बैठने से भी चलता। वह तो ऊपर ही बैठना चाह रहा था,
किन छोटी बहू ने अन्दर बैठने को कहा। कोई बात ही न करनी थी, तो अन्दर
ठना क्या! अचानक आज उसे अपना आप बड़ा गरीब लगा। बड़ा गरीब!
छोटी बहू से इतनी घनिष्ठता बढ़ाने ही क्यों चला वह! जबा से ही इतना मिलने-
जुलने की क्या ज़रूरत थी! उनके बुलाने पर बार-बार वह जाता ही क्यों है?
वे तो इसे नीची निगाह से ही देखते हैं। चाहती तो उस दिन जबा उसे गाड़ी में
बिठा नहीं सकती थी? सब लोग तो गाड़ी से ही गये, वही अकेले पैदल गया बाग
बाज़ार से बार शिमले। कम-से-कम गाड़ी की छत पर तो थोड़ी-सी जगह निकल
ही आती। और आज ही वह क्यों जा रहा है? क्या केवल छोटी बहू के आग्रह से?
क्या उसे खुद जाने की इतनी-सी भी ख़्वाहिश न थी? और इच्छा ही थी तो किस
लिए! छोटी बहू का सामीप्य! छोटी बहू के सामीप्य का इतना लोभ! यह लोभ
ठीक तो नहीं। फिर याद आया, ये कपड़े-लत्ते तो छोटी बहू ने ही दिये हैं। उसने
न दिया होता तो भूतनाथ पहनता क्या? लेकिन कपड़े-लत्ते तो वे बहुतों को दिया
करते हैं। जो खिलौने के ब्याह में हज़ार-डेढ़ हज़ार फूंक सकते हैं, उनके लिए
इतना-सा क्या है? इतने ही थोड़े में लेकिन उसने अपने को क्यों धन्य समझा?
ब्रजराखाल ने पहले ही कहा था—वे साहब-बीबी की जात हैं—हम सब गुलाम
हैं। सच ही छोटी बहू उसे गुलाम-जैसा देखती है। अपने ऊपर कैसी नफ़रत होने
लगी!

जी में आया, छोटी बहू से एक बार पूछे कि कहाँ जा रही हो तुम? लेकिन
उसकी तरफ़ देखकर बात मुँह से निकली नहीं।

छोटी बहू मानो उसके मन की ताड़ गई। पूछा—क्या सोच रहा है रे
भूतनाथ?

भूतनाथ की आँखों से रोना फूट पड़ने लगा। अपने को किसी तरह से
सम्हालकर बोला—ऐसा जानता होता तो मैं हर्गिज़ न आता।

छोटी बहू हँस पड़ी—क्यों, हुआ क्या तुझे?

—तुम बिलकुल न बोलो, यह अच्छा लगता है मुझे?

छोटी बहू ने कहा—तो बोल मैंने मना कब किया?

—और तुम सिर्फ़ चुपचाप सुनती रहोगी?

—मेरी तो सारी बातें चुक गईं भैया! तू बोल मैं सुनूँगी।

—इससे तो बेहतर है, मैं यहीं पर उतर जाऊँ।

छोटी बहू ने कहा—बड़ा मान है तुझे! मर्दों को इतना नहीं सो
देखा है न, छोटे बाबू किसी के मान की कीमत नहीं देते।

भूतनाथ ने कहा—तुम क्या मुझे छोटे बाबू-सा बनने को कहती हो ?

हँसते-हँसते छोटी बहू ने कहा—इसीलिए तो तू मुझे इतना भला लगता है। काश, वह तेरे जैसा होता···वह जान बाजार जाकर क्या करता है, नही जानती, कितनी तो कोशिश की मैंने, एक औरत से जो नहीं बन सकता है, वह भी करके देखा, मगर सब बेकार। कभी-कभी जी मे आता जान बाजार में उस राक्षसी के यहाँ छिपकर देख आऊँ कि वह कौन-सा मन्त्र जानती है, कैसे उसने छोटे बाबू को इस कदर लुभा रखा है। रात मे सोये-सोये अचानक उसका नाम लेकर जाग पडता है, कभी-कभी भूलकर मुझे चुन्नी कह बैठता है। नशे मे बदहोश पडा रहता है, तब मैं भी कुछ नही कहती, मगर मेरा कलेजा टूट जाता है भाई !

भूतनाथ ने कहा—लेकिन तुम भी तो जाने कैसी औरत हो ! अरे तुम्हारे सामने उसकी बिसात क्या है, पाँव बराबर भी नही, मैंने तो देखा है।

छोटी बहू ने कहा—मैं भी तो यही सोचती हूँ। जरूर उसने कुछ खिलाया है, जैसा तुझे खिलाया था। सुना है, कामाक्षा की औरतें मर्दों को भेड बनाकर रखती हैं; कुछ खिला देती होंगी।

भूतनाथ बोला—तुम कहो तो मैं एक बार और जाऊँ जान बाजार। अबकी कुछ पिऊँगा नही, सब देख आऊँगा।

—उँहूँ, तुझे अब वहाँ न जाने दूँगी। तुझ पर भी टोना कर दे [illegible]। लेकिन अबकी मैं आखिरी कोशिश कर देखूँगी भूतनाथ। इसमें भी न बन पाया तो समझूँगी अब होने ही का नहीं।

—किस बात की कोशिश कर देखोगी ?

—आज उसी के लिए तो बरानगर जा रही हूँ।

कोर जैसे अन्दर नहीं घँसता। बड़े महल में जाते हुए शर्म लगती है। व्रजराखाल तो कब का चला गया। उसका काम भी मिल गया होता, तो बात थी।

छोटी बहू बोली—बड़ी धीमी चल रही है गाड़ी।

भूतनाथ ने गर्दन निकालकर कहा—मियाँजान, ज़रा तेज़ चलो। घर से होकर फिर बरानगर जाना है।

—जी हुजूर! कहकर मियाँजान ने घोड़े को एक चाबुक जमाया। घोड़े हवा से बात करने लगे। अब छोटी बहू का सर्वांश डोलने लगा। भूतनाथ भी डोलने लगा।

भूतनाथ बोला—कहीं उलट न जाए गाड़ी?

छोटी बहू बोली—नहीं उलटेगी। और उलट भी जाए तो क्या हर्ज है?

भूतनाथ ने कहा—तुम्हारा क्या, तुम तो बच जाओगी, पकड़ा जाऊँगा मैं। कहेंगे, बहू को लेकर भागा जा रहा था।

—मुझे भी क्या रिहाई मिलेगी? लोग इस बात को जानें, इससे पहले ही मुझे गाड़ देंगे, बड़े महल के नीचे, नहीं तो खानदान की इज़्ज़त को आँच जो आएगी। यदि जिन्दा रह गई तो डॉक्टर-वैद बुलाएँगे, दवा देंगे, मगर मर गई तो माटी में गाड़ देंगे, देख लेना।

—क्यों, गाड़ क्यों देंगे?

छोटी बहू ने कहा—खुदाई में बड़े महल के नीचे से कितनों की हड्डियाँ मिलती हैं, नहीं मालूम है? मैंने अपनी सास से सुना था एक बार सुखचर से कोई आया था बाबुओं के पास फ़रियाद करने, रिआया की तरफ से पैरवी करने। बाबू लोग मालगुज़ारी घटाने को तैयार नहीं और बिना घटाए वह लौटने को तैयार नहीं। भूखा-प्यासा डेवढ़ी पर पड़ा रहा, कई दिनों तक पड़ा रहा निराहार। बाबुओं का निकलना मुश्किल! चाबुक लगाये गए। सारा बदन लहू-लुहान हो गया, बेहोश हो गया। खींचकर उसे बाहर डाल दिया। फिर भी टस-से-मस नहीं। उसके बाद उसका पता ही न चला। गाँव से उसके बीवी-बच्चे उसे ढूँढ़ने आये। मैंने सुना उसे शायद गाड़ दिया गया।

—कहाँ?

—महल की खिड़की की तरफ जो सीढ़ी है, उसी के नीचे···जहाँ फेंक देने से कोई जान भी नहीं सकता, वहीं।

—कितने साल पहले?

—यह कोई आज की बात है रे, तब छोटे बाबू नहीं हुए थे, मैं भी पैदा न हुई थी, तू भी नहीं। और यह घटना कोई एक बार की है?

—खोदने से आज भी मिलती हैं हड्डियाँ उनकी?

—कौन खोज करता है! जानते हैं सिर्फ़ खजांची बाबू और बाबू लोग।

रिआया जब बागी हो उठती थी, तो जमींदारी पर जो करना होता था, करते ही थे, उन्हीं में से जो कलकत्ते तक आ पहुँचते थे, उनके लिए इस बैकुण्ठ का इन्तजाम किया गया था। यह सब मैंने अपनी सास से सुना है। सास ने अपनी सास से सुना था। इसलिए कभी-कभी ज्यादा रात तक जगी रह जाती हूँ, तो बाज़े-बाज़े वक्त कैसी-कैसी आवाज़ सुनती हूँ! लगता है, दूर कोई रो रहा है। गिद्ध की आवाज़ जैसी आवाज। कभी-कभी बड़ा डर लगता है।

भूतनाथ को सुनते ही स्मरण हो आया, उसने भी मानो कई बार वैसा रोना सुना है। शहर का सारा कोलाहल जब थम जाता है, बड़े महल की हलचल जब मरी-सी हो उठती है, तब लगता है, कोई जैसे महल के चारों ओर चुपचाप चहलकदमी कर रहा है। सुनकर भूतनाथ अनमना हो जाता—ठीक जैसे बहुत बार फतेपुर में नदी किनारे उस पेड़ के नीचे हुआ था। अचानक हवा भारी हो उठती, पेड़ों की मर्मराहट थम जाती, पत्तों का कांपना रुक जाता। लगता, कोई पास आकर खड़ा हुआ। दीखता नही। समझ मे नही आता। तो भी लगता, कोई आया, आकर बदन से सटकर खड़ा हो गया। तुम्हे वह एकटक देख रहा है, तुम उसे देख रहे हो। यहां भी उस समय अस्तबल के घोड़े पैर नही पटकते। बत्ती गुल करके नौकर सब सो जाते। बगीचे के कनेर पर कोई चिड़िया बोलते-बोलते सहसा चुप हो जाती। कुछ क्षण के लिए राह के कुत्ते भी जैसे बेजान हो उठते। ऐसे ही सन्नाटे की घड़ी में बहुत बार भूतनाथ को ऐसा लगा है, कोई मानो इतिहास के काले परदे को हटाता हुआ आया है और सारे मकान के चारो तरफ घूम रहा है। डेवढ़ी से लेकर पीछे की खिड़की तक। नारियल के बगल से होकर दक्खिनी पोखरे को पार करके, दासू जमादार और धोबियों के घर से घूमकर, इब्राहिम के घर के सामने से होता हुआ आंगन के बीच मे आकर खड़ा हो गया। उसके बाद जाने कहाँ खो गया। जरा ही देर बाद लगता, वह छत पर चल रहा है। जी मे आता, वह कुछ नही। प्रेतात्मा नही, स्वप्न भी नहीं, शायद बड़े महल की अभिशप्त आत्मा अपनी प्यासी अधूरी चाह लिये यों ही चलती फिर रही है। वह ऐसी उन्नीदी रातों मे बद्री बाबू की बकबक की तरह अपनी कामयाबी खोजती चलती है। और फिर आती वही आवाज—हवा की सन्-सन्-सी! रोने-सी करुणा-भरी! अजीब है, आज तक तो भूतनाथ उसे अपनी ही कल्पना समझता रहा है; समझा है कि यह महज डर है, लेकिन छोटी बहू ने भी सुना है। इसने भी इतिहास के उस अचूक इशारे को सुना है।

छोटी बहू ने कहा—लेकिन एक दिन मैंने देखा था।

—किसको?

छोटी बहू बोली—नई-नई शादी हुई थी। रात-भर नीद नही आई। रात के पहले पहर बारिश हो चुकी थी। दरवाजा खोलकर मैं बरामदे पर आई। ...

की नौबत आ पहुँची थी। दामाद की बात। हाबुलदत्त को फिक्र ज़्यादा थी। छोटे बाबू तो आगबबूले हो गए। छोटे और मँझले बाबू एक तरफ, एक तरफ नन्हे और उनका ससुर। मैंने सुना, बालक बाबू यानी उनके वकील से अलग होने का राय-मशविरा पूछा गया। नन्हे का पढ़ना-लिखना ठप्प! दिन-भर ससुर से कानाफूसी। उफ, झंझट के गये कई दिन!

भूतनाथ बोला—अच्छा! मैं तो कुछ भी नहीं जानता।

अब उसे याद आने लगा। इसीलिए बाबुओं के चेहरे पर कई दिनों तक कैसा तो भाव रहा। कई दिनों तक नाच-घर में बड़ी मालकिन या हासिनी नहीं आई। लोचन तम्बाकू भरकर दे जाता और मँझले बाबू पीते रहते। नन्हे बाबू का अड्डा तो पहले ही ठप्प पड़ा था। दो-एक दिन महफ़िल लगी भी, वह भी बन्द हो गई। पोखरे की नाप-जोख के लिए कुछ लोग आये। भैरव बाबू आये और लौट गए। भूतनाथ को अब समझ में आने लगा कि उस रोज़ नाच-घर में पंचायत आख़िर क्यों बैठी थी। खरीदने के बाद भी मोटर क्यों चली गई और क्यों बालक वकील बार-बार आता-जाता रहा। अब सारी घटनाओं के सामंजस्य का एक सूत्र मिल गया।

ननीलाल ने कहा—आख़िर खान उन लोगों ने खरीदी, मगर खरीदने से पहले मुझसे एक बार पूछा तक नहीं, इतने जेलस हैं।

—तुझसे भी न कहा? भूतनाथ भी अवाक् रह गया।

—मगर उनकी खोपड़ी को यह अकल मैंने दी थी। नन्हे को यह सूझ सबसे पहले मुझी से मिली और उसने मुझी को नहीं बताया। सोचा, मैं कहीं कमीशन न खा जाऊँ। बहुत रुपयों की बात थी।

—लेकिन अन्त तक खरीदा किससे?

—मुनाफ़ा जो भी हुआ, झूमटमल को हुआ। मैंने तो नन्हे से यही कहा था। उसने कहा—जायदाद अकेली अपनी तो है नहीं। मँझले चाचा के हितू-मित्रों ने जैसी सलाह दी।

—और नन्हे बाबू के ससुर को कुछ मालूम न हुआ?

—उँहूँ। उसे भी कुछ न बताया। जो कुछ भी किया, मँझले बाबू ने किया। घर के बड़े वही हैं। नन्हे किन्तु भीतर-भीतर नाराज़ है।

—और छोटे बाबू?

—छोटे बाबू कभी किसी बात में नहीं रहते। उन्हें रुपया मिलना चाहिए। जब तक रुपये मिलते जाते हैं, चूं नहीं करेंगे। इतने वकील, मुख्तार, बैरिस्टर आते रहे, कचहरी चली, छोटे बाबू को कोई वास्ता नहीं। दस्तावेज़ पर सही बनाई, छुट्टी। आज भी जो यह खाना-पीना चल रहा है, लोग-बाग आ रहे हैं, छोटे बाबू इसमें भी एक नज़र दीखे और खिसक पड़े। ज़्यादा कभी बोलते नहीं, समझते सब हैं।

यह जलसा काफी रात को खत्म हुआ। कब लोग गये, ननीलाल गया,
ौज चलता रहा, नाच-गान हुआ, भूतनाथ को खाक भी मालूम नहीं। जिस
गुड़ियों के ब्याह में हजार-बारह सौ रुपये उड़ाये जा सकते हैं, वहाँ व्यवसाय
गणेश में ऐसा जलसा हो तो अचरज क्या! आसनसोल या बिहार में जाने
ड़ी है कोयले की खान! मिट्टी के पेट में रत्न भरा पड़ा है! कैसी है,
ो बड़ी है, कागज पर वट्टा-वट्टा हिसाब तैयार है। दस्तावेज महल के
में बन्द हो गया। और उधर सुखचर के तालाब में भेंट के फूल नहीं फूलते,
वहाँ मछली नहीं मारते; सूखकर दरारें पड़ गई हैं। बाघ आ जाए तो कोई
का जिम्मा नहीं लेता···इस पर भी कहीं अकाल पड़ जाए तो मालगुजारी
नहीं करता। सुबह ही वहाँ की रिआया अवाक् होकर नये मालिक, नये गुमाश्ते
वल देखेगी। जमींदारी वैसी ही रहेगी, लेकिन रातोंरात यह अदला-बदली
गई, उसका उन्हें पता भी न चला। भूमिपति चौधरी के पुरखों ने कभी
बादशाह से सनद पाई थी, सूली-फाँसी का हक पाया था, सात हाथी रखने
ाजादी पाई थी। काल की गति से मुग़ल बादशाहों का जमाना चला गया,
आये। अंग्रेजी हुकूमत में भूमिपति चौधरी को नमक और शोरे का व्यापार
। जमाने से सुखचर कलकत्ते के बीच एक अदृश्य सेतु की रचना हुई थी।
, श्राद्ध और ऐसे मौकों पर गाँव से लोग नजराना देने आते थे बेगार खटे

छोटी बहू ने कहा—उतरना पड़ेगा भूतनाथ ! वंशी से कहना, पोटली मेरे पलंग पर रखी है।

भूतनाथ अब जाकर मानो आपे में आया। वह उतर पड़ा। बोला—मियां-जान, रुकना। अभी बरानगर जाना पड़ेगा।

खबर मिलते ही ब्रिरिजसिंह खिड़की का ताला खोलने आया। उसे देखकर छोटी बहू ने घूंघट काढ़ लिया। गाड़ी खिड़की पर जाकर खड़ी हुई। भूतनाथ उस नारियल के पेड़ के पास खड़ा हुआ। यहीं पर कहीं सीढ़ी के नीचे वह घर है। बाहर से कुछ भी पता नहीं चलता। वह आवाज शायद यहीं से उठती है ! छोटी बहू बोली—देख क्या रहा है, वंशी को आवाज दे।

लेकिन इसी बीच गाड़ी की आवाज सुनकर चिन्ता नीचे उतर आई। उसके चेहरे पर, आंखों में घबराहट ! गाड़ी के अन्दर मुंह डालकर फुस-फुसाकर बोली—छोटी माँ, छोटे बाबू आ गए हैं।

छोटे बाबू ! शाम ही को तो गाड़ी से गये। वंशी से चाबुक मँगवाया। आज तो जान बाजार में चुन्नी के यहाँ रात बिताने की बात थी। अभी ही लौट आये !

छोटी बहू ने पूछा—वंशी कहाँ है ?

—बहुत बातें हो चुकी हैं। आप एक बार उतरिए तो।

—क्यों, क्या हुआ है, खोलकर बता ?

—आपको उतरना ही पड़ेगा छोटी माँ, सब बताती हूँ। छोटे बाबू की तबीयत अच्छी नहीं है।

—सो क्या ? छोटी बहू गाड़ी से उतर पड़ी और लम्बा घूंघट काढ़कर चिन्ता के आगे-आगे अन्दर चली गई। भूतनाथ कुछ देर वहीं खड़ा रहा। पता नहीं छोटी बहू को कितनी देर हो ! छोटे बाबू की जाने क्या तबीयत खराब हुई !

मियांजान ने पूछा—गाड़ी यहीं रहेगी हुजूर ?

—रहने दो। मैं जरा देख आऊँ।

पिछले दरवाजे से पार होकर भूतनाथ सदर दरवाजे से अन्दर दाखिल हुआ। सच ही छोटे बाबू की गाड़ी अस्तबल में खड़ी थी। कैसा सन्देह हुआ ! ऐसा होना तो नहीं चाहिए। जाने कहाँ से यह दुर्घटना घटी ! सब गड़बड़ हो गया। वंशी का भी कहीं पता नहीं। नन्हे बाबू की बैठक आज भी अँधेरी पड़ी थी। भूतनाथ आगे बढ़ा। लोचन अपने काम में लगा था। भूतनाथ को उसने देखा नहीं। अच्छा ही हुआ, देखता तो बहुत समय खा जाता। वंशी शायद छोटे बाबू की खिदमत में लगा हो।

वह आँगन में कुछ क्षण खड़ा रहा। अचानक गाड़ी की घण्टी बज उठी। मँझले बाबू आ रहे हैं क्या ! इस समय वह क्यों आने लगे भला !

—हटो, हट जाओ बाबूजी !

भूतनाथ हटकर खड़ा हो गया। गाड़ी जाकर गाड़ी-बरामदे मे रुकी। अन-चीन्ही गाड़ी। घोड़े दोनों ही दुबले-दुबले। यहाँ के घोड़ों जैसे तन्दुरुस्त नही थे।

गाड़ी पर से पहले विधु सरकार उतरा। पीछे से उतरे शशी डॉक्टर—बहू बाजार के शशी डॉक्टर। कोई सख्त बीमारी होती है, तो वही यहाँ आते हैं कभी-कभी। लेकिन तबीयत किसकी खराब हुई ?

विधु सरकार कुछ तटस्थ-सा गाड़ी से झटपट उतरा और दवा के बक्स को उठा लिया। कोई सामने पड गया सो झुंझला उठा—भैया सामने से हट जाओ, यह लगे-लगे डोलना मुझे नही सुहाता।

जो सामने आ गया था, झटपट हट गया।

विधु सरकार ने कहा—आइए डॉक्टर साहब !

डॉक्टर को लेकर वह अन्दर चला गया।

भूतनाथ फिर भी वही चुपचाप खड़ा था। आज सारा घर उसे बड़ा उदास-सा लगा। कहाँ, किसी की भी तो आवाज़ नही मिल रही है। आखिर गये कहाँ सब !

लोचन आ रहा था। भूतनाथ को देखते ही फफककर रो पड़ा—जी आप, शाम को कहाँ थे हुजूर ?

लोचन का हाव-भाव देखकर भूतनाथ को डर हो आया। पूछा—क्यों, हुआ क्या ?

—जी, छोटे बाबू तो घायल हो गए हैं।

—घायल ! भूतनाथ मानो भूत देखकर चौंक पडा।

—जी, मारे खून के छोटे बाबू के कपड़े भीग गए हैं। शशी डॉक्टर तो आये अभी···ज़रा देखूँ चलकर।

गिरा कि पड़ा, कुछ खयाल न करके लोचन अन्धाधुन्ध दौड़ पडा।

—लोचन, अरे ओ लोचन, सुन जाओ !

वह रुका। बोला—ज़रा डॉक्टर बाबू को तम्बाकू दे आऊँ। मेरे तम्बाकू की बड़ी तारीफ करते हैं वे। यहाँ आने पर मेरा तम्बाकू पिए बिना वे हिल नही सकते। उस बार मॅझले बाबू कैसे सख्त बीमार पड़े···

भूतनाथ ने टोक दिया—रुको भी, ये बातें फिर होंगी। पहले खोलकर यह तो बताओ कि छोटे बाबू को हुआ क्या है ?

लोचन ने कहा—जाइए न, वंशी से सब मालूम होगा।

—वंशी कहाँ है ?

—वंशी क्या अब खड़ा भी हो सकता है हुजूर ! देखिए भी तो जाकर, क्या हालत हुई उसकी !

—उसकी फिर क्या हालत हुई ?

लोचन ने कहा—मैं तो कहूँगा हुज़ूर, कसूर वंशी ही का है। हज़ार बार यही कहूँगा। इधर छोटे बाबू लहू-लुहान खड़े हैं और हुज़ूर लापता। छोटे बाबू निकले क्या कि उसने मानो साँप के पाँव देख लिए। ताश खेल रहा था। छोटे बाबू ने जमकर मरम्मत की।

—किसने मरम्मत की, बताया ?

लोचन के एक हाथ में गड़गड़ा था, दूसरे हाथ में चिलम। फूंकते हुए वह बोला—पीटा तो अच्छा ही किया। क्यों न पीटें ! यह तो छोटे बाबू थे कि चाबुक से पीटा, मँझले बाबू होते तो खून ही कर डालते। गुस्से में लोचन ज़ोर-ज़ोर से चिलम फूंकने लगा। कहा—पीटा तो अच्छा किया, उसे तो बस छोटी माँ की रट रहती है। जैसे छोटी माँ ही मालिक हों। अरे कम्बख्त, तुझे खिलाता कौन है ? आप तो विद्वान् आदमी हैं, आप ही कहें तो, तनखा छोटी माँ देती हैं कि छोटे बाबू ? आप ही कहें।

भाड़ में जाए यह फ़िज़ूल की बात ! गुस्से से भूतनाथ का बदन जल उठा।

लोचन ने कहा—घर की मालकिन छोटी माँ थोड़े ही हैं, छोटे बाबू हैं, क्यों हुज़ूर ? खैर, मैं तम्बाकू दे आऊँ। टिकिया जलकर राख हो गई।

भूतनाथ ने पूछा—लेकिन छोटे बाबू लहू-लुहान कैसे हुए, मालूम है कुछ ?

लोचन बोला—मैं भी तो वही सोचता हूँ, हाथ में चाबुक लिये उन्हें मैंने गाड़ी ले जाते देखा। मैं मँझले बाबू के लिए चिलम भरकर ले जा रहा था। मेरा दिमाग़ उस समय सही नहीं था हुज़ूर ! और आज तो तम्बाकू आया, बिलकुल गोबर। जब-जब चिलम भरता, गोंद की तरह हाथ से चिपक जाता। तम्बाकू क्या, ठीक जैसे खजूर का पुराना गुड़ हो। खजूर का गुड़ देखा है ? वह भी नहीं, ठीक जैसे बरगद का दूध, हाथ में लगे तो···

आजिज़ आकर भूतनाथ वंशी की तरफ़ चला। वहाँ काफ़ी भीड़ जम गई थी। मधुसूदन खड़ा था। श्यामसुन्दर, बेनी, सब थे। नत्थूसिंह भी खड़ा-खड़ा तमाशा देख रहा था।

लोगों को ठेलते हुए भूतनाथ वंशी के पास जा पहुँचा। उसके सिर पर, पीठ में, हाथ में भीगे लत्ते की पट्टी पड़ी थी।

भूतनाथ पर नज़र पड़ते ही वंशी रो उठा।

समीप जाकर भूतनाथ ने कहा—रो मत वंशी !

वंशी ने कहा—आप आ गए हुज़ूर, छोटी माँ आई ?

—हाँ, आ गई हैं, आ गई। लेकिन तुझे यह हुआ क्या वंशी ?

वंशी फिर भी रोता रहा। रुलाई के आवेग में मुंह से बात नहीं निकल

रही थी।

भूतनाथ बोला—हुआ क्या है, मुझे यह बता तू ?

बेनी ने कहा—तो आप मुझसे सुनिए हुजूर, छोटे बाबू ने कोड़े से इसे भरपूर पीटा है; देख नहीं रहे है, सारे बदन मे दिदोरे पड गए है।

भूतनाथ ने बेनी की तरफ मुड़कर पूछा—लेकिन क्यों, अचानक उन्होंने इसे मारा क्यों ?

—जी, गाड़ी आकर लगी। छोटे बाबू ने कई बार पुकारा—उन्हें सहारा देकर उतारे कौन ? और बशी उधर ताश खेल रहा था। सोचा था, मालिक तो हैं नहीं। मैं जा रहा था, देखा छोटे बाबू के कपड़े-कुरते मे लहू लगा है, माथे से लहू बह रहा है, तर-बतर खून से ! मैंने जाकर सँभाला।

—उसके बाद ?

—उसके बाद दौड़ता हुआ बंशी पहुँचा। पहुँचना था कि कोड़े पड़ने लगे। एक-दो-तीन-पचास ! मारते-मारते छोटे बाबू जमीन पर गिर पड़े हुजूर !

—उसके बाद ?

—उसके बाद बशी ने पकडकर उनको उठाया। छोटे बाबू खडे हुए और फिर बंशी को मारने लगे। चारों तरफ से सब दौड़ आये। मेरा तो सारा शरीर थर-थर काँपने लगा हुजूर ! वह पिटता रहा और छोटे बाबू को जकड़े रहा कि कहीं वे फिर न गिर पड़ें, आखिर···

बशी जोर-जोर से रोकर कहने लगा—छोटे बाबू का हाल जो देखते आप हुजूर, खून से लथपथ···जाने क्या होगा !

मधुसूदन ने डाँट बताई—तू ठहर भी, पागल की तरह रो मत बशी !

बशी उसकी डाँट से चुप हो गया।

बेनी ने कहा—लेकिन उस हालत मे भी बशी छोटे बाबू को सँभालकर ऊपर ले गया। उसके बाद यह दशा। पानी की पट्टी दे रहे हैं। उस बार मुझे मँझले बाबू ने मारा था—याद है चाचा ? पानी की पट्टी से ही ठीक हुआ। बिगडने पर नवाबजादों को होश तो रहता नहीं ?

—लेकिन छोटे बाबू कैसे जख्मी हुए, कुछ पता है।

जवाब बंशी ने दिया। कहा—ओह, उन्हें जो तकलीफ हो रही है—आप देखते, तो आँखों से जरूर आँसू बहने लगता।

मधुसूदन डपट उठा—रुक भी, शर्म नहीं आती कहते ?

—शर्म कैसी चाचा ! मैंने तो कसूर किया, मार खाई। मगर छोटे बाबू की तकलीफ की तो सोच देखो।

भूतनाथ फिर भी ठीक-ठीक समझ नहीं सका कि बात क्या हुई। पूछा—छोटे बाबू घायल कैसे हुए बेनी ?

बेनी ने बताया—जी, शायद गाड़ी उलट गई थी। पिए हुए तो थे ही, ताल सँभाल नहीं सके।

रोते-रोते वंशी ने कहा—अब कैसे हैं छोटे बाबू? शशी डॉक्टर आ गए

मधुसूदन फिर डाँट उठा—तू पहले अपना ज़ख्म सँभाल। मर नहीं गय यही ग़नीमत। इस कदर मार खाई है···

अचानक दौड़ता हुआ लोचन पहुँचा। हाँफने लगा। कहा—गजब गया काका, पुलिस आई है, पुलिस! सब मानो एक ही साथ बोल उठे—पुलि क्यों?

लोचन ने कहा—देखो भी जाकर, बाहर महल का आँगन लोगों से ठसाट भर गया। दारोगा साहब सरकार बाबू से बतिया रहे हैं।

बेनी, श्यामसुन्दर, मधुसूदन—सभी दौड़ पड़े। अकेला लोचन खड़ा रह

वंशी भूतनाथ की तरफ़ देखकर फिर रो पड़ा।

भूतनाथ ने कहा—रो क्यों रहा है रे? ख़ूब दर्द हो रहा है?

—क्या होगा हुजूर?

—काहे का क्या होगा?

—पुलिस अगर छोटे बाबू को ले जाए?

—छोटे बाबू को क्यों पकड़ेगी पुलिस? उन्होंने क्या किया है कि उ पकड़ेगी?

—फिर पुलिस आई क्यों?

—पुलिसवाले तो साँझ-विहान यहाँ आते ही रहते हैं। दारोगा तो मँझले बाबू का दोस्त है।

वंशी को इससे भी तसल्ली नहीं हुई। कहा—ख़ून-फ़साद जो किया है।

भूतनाथ ने कहा—धत्तेरे की, गाड़ी उलट गई तो ख़ून नहीं बहेगा? छिल गया होगा।

—जी नहीं हुजूर!—लोचन करीब आ गया। आवाज़ धीमी करके बोला—जी नहीं, यह बात नहीं है।

लोचन का रंग-ढंग देखकर भूतनाथ को कैसा तो सन्देह हुआ जानें। बोला—फिर क्या बात है?

—जी, किसी से कहें नहीं—और उसने चारों ओर देख लिया।

—न, किसी से न कहूँगा—बता तू।

—छोटे बाबू ने ख़ून किया है।

—किसका?

—किसका ख़ून किया है, यह जवाब न मिल सका। शोर-सा हुआ। लगा, आँगन में काफ़ी लोग आ गए हैं। लोचन उसी तरफ़ भाग ।

भूतनाथ बोला—मैं देख आऊँ बंशी, बाहर क्या हो रहा है? बंशी ने कहा—न जाइए साले साहब, पुलिस का हंगामा! उसके बाद पूछा—छोटी माँ लौट आईं?

—हाँ, आ गईं।

—उन्होंने सब सुन लिया?

—क्या जानें! एक बार उनसे भेंट कर आऊँ।

—आप बल्कि छोटे बाबू को देख आएँ। उनके लिए कैसा तो कर रहा है जी। अच्छा वे बच तो जाएँगे हुजूर?

बाहर फिर हो-हल्ला हुआ। भूतनाथ उठ खड़ा हुआ। कहा—मैं अभी आया। देख आऊँ, उधर क्या हो रहा है?

वह बाहर आया। एक बार चारों तरफ निगाह दौड़ाई। शशी डॉक्टर की गाड़ी खड़ी ही थी। इब्राहिम छत पर खड़ा था। यासीन भी खड़ा होकर देख रहा था। मियाँजान, अब्बाम, इलियास भी आँगन में खड़े थे। लाल मुरैठावाले दो-चार सिपाही फाटक पर खड़े थे। हाथ में लाठी। खजांचीखाने के अन्दर रोशनी जल रही थी। वहाँ भी दरवाजे पर भीड़। शायद दारोगा साहब उसी के भीतर थे। घर-भर में एक दबी हुई हलचल। भूतनाथ सामने पहुँचा।

कोई जा रहा था। पास पहुँचने पर पता चला—मधुसूदन है।

—क्या खबर है मधुसूदन?

—गजब हो गया हुजूर!

—क्या हुआ?

—सुना, चुन्नी का खून हो गया। मैं एक बार वहाँ जा रहा हूँ।

—चुन्नी का खून!

—जी, सुन तो रहा हूँ। पता नहीं, क्या बात है?

—खून किसने किया?

मधुसूदन बोला—सुना कि नाटूदत्त से छोटे बाबू की मारपीट हुई।

—नाटूदत्त?

—जी हाँ। आज छोटे बाबू जान बाजार गये। देखा, चुन्नी के कमरे में नाटूदत्त बैठा है। छोटे बाबू गुस्सा न सँभाल सके शायद। दोनों में मारपीट हो गई। उस महल्ले के गुण्डे तो नाटूदत्त की मुट्ठी में हैं। छोटे बाबू थे अकेले। उस परिवार से इस घर का झगड़ा कुछ आज ही का तो नहीं है।

—लेकिन खून किसने किया?

—किसने किया, कौन जाने, या तो नाटू ने किया या छोटे बाबू ने।

भूतनाथ ने पूछा—चुन्नी मर गई?

मधुसूदन बोला—सुना तो कि अभी होश है। जरा देख आऊँ। बड़ी

अच्छी औरत थी बिचारी।—मधुसूदन चला गया।

भूतनाथ कुछ देर वहीं खड़ा रहा। चुन्नी की बात याद आई। उसी रोज़ की तो बात है, भेंट हुई थी और आज यह हाल? उस दिन वह लेकिन वैसी बुरी नहीं लगी थी भूतनाथ को। कितना अच्छा व्यवहार! कितनी इज्ज़त-ख़ातिर की! तम्बाकू के लिए पूछा। पानी माँगा, तो शरबत दिया। हो सकता है, शरबत में भंग मिली हो। भूतनाथ चूंकि कभी पीता नहीं, इसलिए चक्कर आ गया। जो पीते हैं, उन्हें नशा नहीं आता। लेकिन अपनी गोद में सिर रखकर चुन्नी ने कितनी हिफ़ाज़त की उसकी! आँचल से उसका मुँह पोंछ दिया! कौन इतना कर सकती है! भूतनाथ की ख़ातिरदारी से उन्हें क्या लाभ! छोटे बाबू न जाएँ तो बिचारी का काम कैसे चले! इतने नौकर, दाई, ख़ुद, फिर एक चिड़िया भी। खर्च क्या कम होता है! गाड़ी तक बेच देनी पड़ी।

भूतनाथ धीरे-धीरे बीच आँगन में पहुँचा।

नन्हे बाबू घर ही थे। ख़बर पाकर नीचे आये थे। हावुलदत्त रोज़ की तरह आया था। पीछे-पीछे वह भी आया।

दारोगा साहब से नन्हे बाबू की क्या-क्या बातें हो रही थीं। इतने में हलचल हुई।—हटो, हट जाओ सब, रास्ता छोड़ दो—

भीड़ में अब जैसे आशा का संचार हुआ—मँझले बाबू आ गए! आ गए, मँझले बाबू!

सबने जैसे सन्तोष की साँस ली। मँझले बाबू रहे होते तो इतनी देर लगती पुलिस से बतकही करने में? पहले ऐसी कितनी घटनाएँ घट चुकी हैं। सुखचर में ख़ून हो चुका है, रिआया ने कचहरी में आग लगाई है। यहीं उस बार दशहरे के वक्त नौमी पूजा के दिन मँझली मालकिन की दाई बिलासी गले में फन्दा डालकर झूल गई थी, वैसे आड़े वक्त भी मँझले बाबू ने ही थाने-पुलिस के झमेले से बचाया। उनके आ जाने से भूतनाथ को भी थोड़ा भरोसा हुआ।

मँझले बाबू की गाड़ी सरसराती हुई गाड़ी-बरामदे के नीचे पहुँची और नामी डॉक्टर की गाड़ी के पीछे खड़ी हो गई।

उनके आने की ख़बर मिलते ही दारोगा साहब लपके।

मँझले बाबू गाड़ी से उतरे। उनके पीछे भैरव बाबू।

सामने जाकर दारोगा साहब ने सलाम किया।

उसका कोई ख़याल न करके वे सीधे ऊपर चले गये। भैरव बाबू से बो—मैं ज़रा देख आऊँ छोटे बाबू कैसे हैं।

भैरव बाबू ने पूछा—क्या हुआ है दारोगा साहब?

दारोगा साहब बोले—शाम को जान बाजार में ख़ून हुआ है।

भैरव बाबू बोले—जान बाज़ार में ख़ून हुआ है, तो यहाँ क्या?

—कौस्तुभमणि चौधरी का स्टेटमेंट लेना है।

—खून किया किसने है?

—उसी की छानबीन के लिए तो आया हूँ।

जरा ही देर में बेनी आया। दारोगा साहब से बोला—मँझले बाबू आपको ऊपर बुला रहे हैं।

दारोगा के जाते ही सारी घटना पर मानो एक परदा-सा पड़ गया। सब अपनी-अपनी जगह लौट गये। अब कोई डर न रहा। मँझले बाबू ने दारोगा साहब को ऊपर बुलाया। वह चाहे दारोगा हो, चाहे लाट साहब, ऊपर नाचघर में पहुँचे कि सब ठीक। जानें कितनी बार कितनी समस्याओं का समाधान वहाँ हो चुका है। उस घर के एकान्त में कितनी बार कितने सन्देहों का अन्त हो गया है।

फिर धीरे-धीरे आँगन सूना हो गया। फिर निर्जन हो गया बड़ा महल। इब्राहिम के कमरे के सामने की बत्ती वैसी ही टिमटिमाने लगी। रात घनी हो आई। शशी डॉक्टर लेकिन तब भी वहीं थे। गर्दन झुकाए दाँतों से घास चबाते हुए घोड़े रह-रहकर पैर ठोक रहे थे। पक्की जमीन पर उनके पाँव पीटने की आवाज काफी दूर से सुनी जा रही थी। सिपाही तब भी गेट पर खड़े खैनी खा रहे थे।

अकेले अपने को बड़ा असहाय लगने लगा भूतनाथ को। इतनी उत्तेजना, ऐसी दुर्घटना में भी अपने को इतना कमजोर क्यों लग रहा था, पता नहीं। मानो कहीं कोई न हो। इतना बड़ा मकान, लेकिन लग रहा था घने जंगल का सन्नाटा हो। उसी आदिम कलकत्ते का प्रागैतिहासिक रूप मानो लौट आया हो। भूमिपति चौधरी ने जब इसे बनाया, उससे पहले का रूप। मानो चारों तरफ खाई-खन्दक हो, मेंढक टर्रा रहे हों। हिजल और होगले की दो-चार झाड़ियाँ। जुलाहों के कुछ झोंपड़े। शाम होते-न-होते बाघ के डर से अन्दर घुस पड़े है सब। लेकिन भूतनाथ के देखते-ही-देखते तो यह शहर फैल रहा है। यह हरीसन रोड उसके सामने बना। नल, बड़े-बड़े रास्ते, बिजली की बत्तियाँ, कलवाली ट्राम, धन और जन की कैसी भीड़ हो गई; बस्तियों की जगह नई-नई इमारतें बनी, खन्दक-खाइयों को पाटा गया, मैदान बने। पार्क बने। फिर भी इस समय बड़े महल में खड़े-खड़े उसे ऐसा मालूम हो रहा था कि वह शहर से बहुत दूर, बहुत पीछे निकल गया है। शहर, सभ्यता, समाज, परिचित, अपरिचित सबकी निगाहों से दूर एक दूसरे ही मुल्क में। लेकिन जिस रोज वह यहाँ आया था, कितनी उम्मीद थी उसके मन में! इस घर से कितना रश्क होता था उसे! कितना अदम्य कौतूहल था! रात को जगकर इस घर की हर आवाज को सुनना। अन्दर झनझनाकर किसी के हाथ से [illegible] काँसे की थाली छूट गई। छत के कोने में कबूतरों का बकबकम्। और [illegible] दासू मेहतर के झाड़ू लगाने तक की आवाज अच्छी लगती थी। [illegible] मसाला पीस रही है, सब्जी कूटते हुए सौदामिनी गालियाँ बके जा

के बाँध पर के आँवले पर किसी अजानी चिड़िया की बोली—सब, सब अच्छा लगा है। रात को गेट खुलता और धड़धड़ाती हुई मँझले बाबू की गाड़ी आती···यह भी अच्छा लगता। सब-कुछ अलौकिक हो जैसे। घोड़ों की मलाई, वलप-वलप हिस्-हिस् की आवाज़। इन सारी शब्द-तरंगों के परे भी किसी-किसी दिन और कोई आवाज़ आती। कौन जाने कहाँ की आवाज़! वह सुर सारे घर में घूमता रहता। उसे किसी ने नहीं सुना। दो ही जने शायद उसे सुना करते—एक वह, दूसरी छोटी बहू।

लेकिन जवा के यहाँ का हाल जुदा। वहाँ जाने से लगता, जिन्दगी की राह अभी बहुत बाकी पड़ी है। जवानी जैसे अभी शुरू हुई। सुविनय बाबू को जब दौलत थी, तब भी कहीं आडम्बर नहीं था। प्राचुर्य था, अपव्यय नहीं था। इसके सिवा आज तो मानो राह-घाट में भी नया जीवन लौट आया है। अन्दर-ही-अन्दर मानो किसी आन्दोलन की अनबुझ लौ जल रही है। कभी-कभी उसकी जोत दिखाई पड़ जाती है। सिस्टर निवेदिता ने बाग़ बाज़ार में स्कूल खोला है। कोई एक विदेशी औरत, उसका ऐसा अजीब ख़याल, लेकिन महज़ ख़याल ही! उस रोज़ जो छोकरे बड़ा बाज़ार में गाते और भाषण देते फिर रहे थे, वह भी क्या ख़याल ही था सिर्फ़! और कुछ नहीं! निवारण की जमात क्या बेवजह ही अन्दर-अन्दर जल रही है, घुल रही है!

शशी डॉक्टर शायद उतरे। सरकार बाबू ने दवा का बैग गाड़ी पर रख दिया।

जी में आया, सरकार बाबू से छोटे बाबू के बारे में पूछे। डर लगा। आदमी वह अजीब है। लेकिन उस रोज़ बद्री बाबू ने उसे ख़ूब सबक़ सिखाया! इधर इतना कुछ हो रहा है, मालूम नहीं बद्री बाबू क्या कर रहे हैं? खिड़की से उसने अन्दर झाँका।

एकाएक सारे शहर को हिलाती हुई ज़ोरों की आवाज़ हुई। शायद नौ बजे। किले की तोप छूटी। बद्री बाबू चित पड़े थे। चीख़कर उठ बैठे—बम काली कलकत्तेवाली। कमर से घड़ी निकाली और समय मिला लिया। उसके बाद बड़ी दीवारघड़ी की ओर ताका। उसमें भी टन्-टन् करके नौ बजे। भूतनाथ पर नज़र पड़ी। कहा—इधर आ।

भूतनाथ जाकर चौकी पर बैठा। कुछ देर बाद बोला—सुना आपने, क्या हुआ है?

निर्विकार की नाईं बद्री बाबू बोले—मैं जानता था।

—यह भी सुना है, बंशी भी मार खाकर बेहोश पड़ा है?

—मैं जानता था कि ऐसा होगा।

—और चुन्नी मार डाली गई है?

—यह भी होगा, मैं जानता था।

बद्री बाबू कैसे सब जानते थे, नही मालूम।

उन्होंने फिर कहा—और क्या-क्या होगा, यह भी बता सकता हूँ, सुनोगे ?

अचम्भे मे पड़े भूतनाथ की ओर ताककर बद्री बाबू कहने लगे—देख लेना, एक दिन छत की ये लकड़ियाँ टूट गिरेंगी, यह घर चकनाचूर हो जाएगा, इस घर की बुनियाद पर पोडकी चरेगी, दाने बिना कबूतर मरेंगे, नौकर-चाकर भाग जाएँगे, न भागेंगे तो ईंट के नीचे दबकर मरेंगे। फिर यहाँ की जमीन चौरस की जाएगी, उसी को खोदते-खोदते कभी मजूरो के मुँह से खून उबलेगा और अन्त में···

बद्री बाबू रुक गए।

भूतनाथ ने पूछा—और अन्त मे ?

—अन्त में मिट्टी खोदकर एक स्फटिक मिलेगा।

—स्फटिक ?

—हाँ, स्फटिक पत्थर। यकीन नही आ रहा है ?

—स्फटिक पत्थर क्यों ?

—सब नहीं बताऊँगा अभी, तू डर जाएगा। लेकिन तुझे भी रिहाई न मिलेगी, भोगना पड़ेगा ही तुझे भी, सिर फूटकर खून बहेगा, तेरा भी समय हो आया है, उस समय एक गिलास पानी के लिए तडपना रहेगा, कोई पानी न देगा। इस खानदान के खून की छूत लगी है न तुझे ! दर्पनारायण का अभिशाप झूठ हो सकता है, मरते-मरते एक बूंद पानी तक नही मयस्सर हुआ, मुर्शीद कुलीखाँ के 'वैकुण्ठ' में बैठा घुल-घुलकर मरा और अन्तिम क्षण तक केवल शाप देता गया कि···कहते-कहते उनका चेहरा खौफनाक हो उठा। आँखें फूल उठीं। भूतनाथ चुपचाप कमरे से निकल आया। आज मानो बद्री बाबू घातक-से हो उठे। घड़ी देख-देखकर हर पल अपने अन्नदाता को शाप दिए जा रहे है। लेकिन यह क्षोभ किस बात का ! कैसी शिकायत ! लेकिन किसे पता था कि बद्री बाबू की बात का एक-एक अक्षर आखिर तक फलेगा !

भूतनाथ वशी के पास गया। कपाल पर हाथ रखकर देखा। जल रहा था बदन।

अचानक मधुसूदन अन्दर आया।

भूतनाथ ने पूछा—क्या देख आए मधुसूदन !

मधुसूदन ने कहा—अस्पताल गया था—चुन्नी को चाँदनी के [illegible] में ले गये हैं।

—कैसी है अब ?

मधुसूदन ने कहा—कुछ होश हुआ है।

—बोलती है ?

—बोलती तो नहीं है, लेकिन मुझे देखकर पहचान गई, आँखों के कोने से आँसू ढुलक पड़े। डॉक्टर ने बताया, जान का खतरा नहीं, बच जाएगी, लेकिन समय लगेगा।

—क्या हुआ था ?

—क्या जानें हुजूर, ठीक-ठीक कोई बता नहीं पा रहा है। नाटूदत्त और छोटे बाबू में मारपीट हुई थी, छोटे बाबू के हाथ में चाबुक था और नाटूदत्त के गुण्डे महल्ले में तैयार ही थे, लेकिन असल में हुआ क्या था, कोई ठीक-ठीक नहीं कह पाता है।

धीरे-धीरे भूतनाथ अपने चोर कमरे में पहुँचा। आज तो बंशी है नहीं, खाने को कौन पूछेगा ? अपना बिस्तर डालकर वह पड़ रहा अँधेरे में। लगा, अन्धकार में कोई छायामूर्ति घूमती फिर रही है। जानें पिछले किस जमाने में से वह इटालियन कलाकार अपनी बीबी की सेज के पास लौटकर आया है। आज भूमिपति चौधरी को मानो उसने अपनी मुट्ठी में पा लिया है। आज नए सिरे से फिर उसका बदला चुकाएगा। आज उसके हाथ से पिस्तौल की गोली यों ही नहीं छूट जाएगी। बहुतेरे समन्दर और नदियों को पार कर फिर अपनी खोई हुई पत्नी की खोज में वह भारतवर्ष पहुँचा है। दीवार की बेजान तसवीरें फिर मानो सजीव हो उठीं। उड़ती परियों के नए डैने निकल आए हैं। इस कमरे में नए सिरे से फिर अभिसार होगा।

अचानक दरवाजे के पास से आवाज आई—बाबू···बहुत धीमी आवाज। समझ में नहीं आती कि किसकी है आवाज। लेकिन इतना समझ में आया कि गला किसी औरत का है।

दरवाजा खोलकर वह बाहर निकला कि नजर पड़ी, घूंघट काढ़े चिन्ता खड़ी है। हाथ में लालटेन। सादी साड़ी। मुँह और तरफ़ घुमाए खड़ी थी।

भूतनाथ ने कहा—मुझे पुकार रही थी ?—और क्या कहे, उसे कुछ न सूझा।

उसी तरह घूंघट काढ़े हुए चिन्ता ने कहा—आपका भोजन परोसा जा चुका है।

भूतनाथ ने कहा—चलो, मैं आता हूँ।

चिन्ता चल पड़ी। पीछे-पीछे भूतनाथ चलने लगा। गली-सा रास्ता। रसोई के बग़ल का हिस्सा। रसोई के बग़ल में ही भण्डार। उसके बाद एक दीवार का व्यवधान। सारी दीवार पर धुएँ के दाग। दिनों से चलते-फिरते जगह-जगह पर फ़र्श का सीमेंट उखड़ गया है। थाली ठीक से बैठती नहीं। घर में एक तेलचट्टा

सूंड हिला रहा था।

खाते-खाते भूतनाथ ने तेलचट्टे की तरफ़ देखा। लगा, वह तेलचट्टा भी उसी तरफ़ देख रहा है। गजब का बादामी रंग। आँखों के चारों ओर गोल पीला दाग़। बैठा-बैठा कौन-सा मनसूबा गाँठ रहा है, कौन जाने! शायद रोशनी देखकर खीज उठा है। या जूठी थाली चाटने के लोभ से बैठा है। क्या खाकर जीता है, राम जानें! कितना-सा प्राण! कहाँ रहता है? यहीं किसी गढे में रहता होगा। वहीं अंडा देता होगा और जूठन पर जीता होगा। उसे देख-देखकर बड़े-बड़े अजीबोगरीब ख़याल उसके दिमाग में आये। मैं भी तो इस घर का आश्रित हूँ। मुझसे इस तेलचट्टे का फर्क क्या है?

अचानक ऐसा लगा, वह तेलचट्टा हिलने लगा। उसकी थाली ही की तरफ आ रहा हो, ऐसा नहीं, लेकिन लक्ष्य मानो वही हो। पहले उत्तर की तरफ जा रहा था, फिर बेवजह पूरब की तरफ मुड़ गया। इधर-उधर देखकर फिर अपनी सूंड हिलाने लगा। उसके बाद थिर। लगा, अब इधर नहीं आयेगा।

भूतनाथ खाने लगा। न, अब उधर नहीं देखेगा। शरीर सिरसिराने लगा। कैसी अजीव-अजीव रचना! जिन्होंने आदमी को बनाया, यह तेलचट्टा भी तो उन्हीं का बनाया हुआ है। लेकिन एक ही हाथ से ऐसी विपरीत सृष्टि कैसे सम्भव हुई! अनमना-सा था। फिर उसकी नज़र उस ओर गई। अबकी लगा कि वह तेलचट्टा उसी की तरफ आ रहा है।

पास आया। और पास। अब खूब सावधानी से करीब आकर वह थाली में मुँह लगाने···

—भैया कैसे हैं, मालूम है?

भूतनाथ आपे में आया। वहाँ कोई न था। यह सवाल दरवाजे की आड़ से आया—कौन, वंशी? वंशी कैसा है, पूछती हो?

—हाँ।

—मैं देख आया, काफी बुखार हो आया है।

—आज कुछ खाएगा?

—न, आज रहे, आज उपवास ही ठीक है।

भूतनाथ को लगा, वह तेलचट्टा थाली में मुँह लगाकर कुछ खा रहा है, मुँह नहीं हिल रहा है, शरीर नहीं डोल रहा है। सिर्फ सूंड मानो कभी-कभी काँप उठती है। भूतनाथ ने एक बार थाली को हिला दिया। भाग जाए, तो जाए। मगर अजीब था वह। जरा भी हिल-डुल नहीं। थाली से लगा ही रहा। भूतनाथ का बदन फिर सुरसुराने लगा।

—छोटी माँ बेहोश हो गई थीं, मालूम है?

भूतनाथ ने सिर उठाया—बेहोश कैसे हो गई थीं?

दरवाजे की ओट से फिर वही स्वर सुनाई पड़ा—घर आई और छोटे बाबू के बारे में सुना कि बेहोश हो गई।

—उसके बाद ?

—सिर पर बर्फ़ थोपती रही। अब होश में आई हैं। आपके बारे में पूछ रही थीं।

—मुझे बुला रही थीं क्या ?

—जी हाँ। मैं आपको बुलाने गई थी। आप अपने कमरे में नहीं थे। मुझे लग रहा था। उनकी आँखें देखकर ऐसा लगता था कि छोटी माँ बचेंगी नहीं। मैंने मँझली मालकिन को खबर दी, बड़ी माँ से कहा···आखिर बर्फ़ मँगवाकर सिर पर देते-देते···

—अब कैसी हैं ?

—अब कुछ अच्छी हैं। दिन-भर तो उपवास रहा, एक दाना नहीं पड़ा पेट में। मैंने बेनी को छोटे बाबू का पादोदक लाने को भेजा था—छोटे बाबू ने पाँव से कटोरे को उछाल दिया, पत्थर का कटोरा था, टूट गया। उन्होंने भोजन नहीं किया। अभी ज़रा दवा पीना चाहती थीं।

—दवा ? कौन-सी दवा ?

—जो रोज पिया करती हैं।

भूतनाथ पहले तो समझ नहीं सका। उसके बाद अचानक खयाल हो आया। ओ !—उसने पूछा—वह क्या अभी तक रोज़ पिया करती हैं ?

—जी हाँ, रोज़ ही पीती हैं।

रोज पीती हैं ! कैसा तो लगा भूतनाथ को ! थाली से उठकर आते हुए उसने पीछे मुड़कर देखा। तेलचट्टा अब थाली पर जमकर बैठ गया था। मन घिन-घिन करने लगा। उसके बाद अँधेरे में बिस्तर पर पड़े-पड़े उसे लगा कि एक प्रकांड तेलचट्टा उसकी तरफ टुकुर-टुकुर ताकता रहा है। तुरत जी में आया, वह तेल-चट्टा नहीं, उसी का विकृत मन घिनौने जीव के रूप में शायद उसे ग्रास करने को आ रहा है।

दिन बीतता है, साँझ होती है। साँझ के बाद रात। और रात बीतने पर होता है सवेरा।

फिर भी और दिन के सवेरे से आज के सवेरे में बड़ा फ़र्क था। दासू जमादार के बुहारने की आवाज आज और दिनों से मानो मन्द थी। आज शोर कम था। सभी जैसे चौकन्ने-से, डरे हुए-से। अन्दर सौदामिनी के गले में आज वह तेज न था। घोड़े की मलाई तो आज भी चल रही थी, लेकिन आज थपकियाँ हल्की-फुल्की थीं। घोड़े भी मानो समझ गए थे। वे भी पाँव धीरे-धीरे ठोंक रहे थे।

भूतनाथ वंशी के पास पहुँचा। बुखार घट गया था। मगर वैसे ही चित पड़ा था वह। भूतनाथ ने पूछा—आज कुछ खाने को जी चाहता है?

वंशी ने कहा—छोटे बाबू कैसे हैं, पहले यह बताइए हुजूर! रातभर मैं छोटे बाबू का सपना देखता रहा।

मधुसूदन ने कहा—शशी डॉक्टर को तो फिर बुलाने गये हैं सरकार बाबू।

भूतनाथ ने पूछा—तुम जानते हो, छोटे बाबू कैसे हैं?

मधुसूदन बोला—शशी डॉक्टर की दवा और फायदा न हो! आप कहते क्या हैं हुजूर!

वास्तव में शशी डॉक्टर धन्वन्तरि हैं। हैं तो बूढ़े, पर कल रात घण्टे तक जख्मी के पास बैठे रहे और उसे चंगा कर गये। दर्द बहुत कम है।

भूतनाथ ने पूछा—और पुलिसवाले कब गये?

मधुसूदन ने कहा—आखिर पुलिस के बडे साहब आये कल।

—कब?

—रात के तीन बज रहे होंगे उस समय। मंझले बाबू ने बुलावा भेजा। रात-भर हममें से कोई सोया नही हुजूर, लोचन लगातार चिलम चढ़ाता गया, मैं और विधु सरकार खडे-के-खड़े; अन्दर बातें और ठहाके, खाना-पीना, उसी रात को गाड़ी निकली, सरकार ने जाकर खजांचीखाने को खोला।

—किसलिए?

—जी, दक्षिणा भी तो चाहिए। कुछ ले गए···जब सोने गया तो गंगा नहाने वालों का चलना शुरू हो गया। सरकार बाबू तो सोए ही नही। तड़के ही मछली के जुगाड़ मे निकल पडे···थाने मे भेंट भेजनी थी। मंझले बाबू ने कहा—अलमारी खोलो।

भूतनाथ चलने लगा। अचानक एक और बात याद आ गई। चुन्नी के बारे में कुछ खबर है मधुसूदन?

—उसकी खबर का मौका ही कहाँ मिला हुजूर! अब जा रहा हूँ—बाजार जाऊँगा और झट चाँदनी का एक चक्कर काट आऊँगा।

मधुसूदन के जाते ही वंशी ने पूछा—छोटी माँ ने क्या कहा साले साहब?

छोटी बहू की बात भूतनाथ के जी मे भी कई बार आई। कल जाते-जाते भी बरानगर जाना न हुआ, उसके बाद एक बार तो मुलाकात होनी चाहिए थी। चिन्ता से मालूम हुआ, फिर मे उसने वही सब खुराफ़ात की है। सारे दिन के उपवास के बाद जाने अब कैसी है।

चोर-कमरे के दरवाजे के पास जाकर एक बार वह खड़ा हुआ था। उधर [illegible] नहीं? के बरामदे से सिन्धु और गिरि का गला सुनाई पड़ रहा था

दरवाजे की ओट से फिर वही स्वर सुनाई पड़ा—घर आईं और छोटे बाबू के बारे में सुना कि बेहोश हो गईं।

—उसके बाद ?

—सिर पर बर्फ़ थोपती रही। अब होश में आई हैं। आपके बारे में पूछ रही थीं।

—मुझे बुला रही थीं क्या ?

—जी हाँ। मैं आपको बुलाने गई थी। आप अपने कमरे में नहीं थे। मुझे लग रहा था। उनकी आँखें देखकर ऐसा लगता था कि छोटी माँ बचेंगी नहीं। मैंने मँझली मालकिन को खबर दी, बड़ी माँ से कहा...आखिर बर्फ़ मँगवाकर सिर पर देते-देते...

—अब कैसी हैं ?

—अब कुछ अच्छी हैं। दिन-भर तो उपवास रहा, एक दाना नहीं पड़ा पेट में। मैंने बेनी को छोटे बाबू का पादोदक लाने को भेजा था—छोटे बाबू ने पाँव से कटोरे को उछाल दिया, पत्थर का कटोरा था, टूट गया। उन्होंने भोजन नहीं किया। अभी जरा दवा पीना चाहती थीं।

—दवा ? कौन-सी दवा ?

—जो रोज पिया करती हैं।

भूतनाथ पहले तो समझ नहीं सका। उसके बाद अचानक खयाल हो आया। ओ !—उसने पूछा—वह क्या अभी तक रोज़ पिया करती हैं ?

—जी हाँ, रोज ही पीती हैं।

रोज़ पीती हैं ! कैसा तो लगा भूतनाथ को ! थाली से उठकर आते हुए उसने पीछे मुड़कर देखा। तेलचट्टा अब थाली पर जमकर बैठ गया था। मन घिन-घिन करने लगा। उसके बाद अँधेरे में बिस्तर पर पड़े-पड़े उसे लगा कि एक प्रकांड तेलचट्टा उसकी तरफ टुकुर-टुकुर ताकता रहा है। तुरत जी में आया, वह तेल-चट्टा नहीं, उसी का विकृत मन घिनौने जीव के रूप में शायद उसे ग्रास करने को आ रहा है।

दिन बीतता है, साँझ होती है। साँझ के बाद रात। और रात बीतने पर होता है सवेरा।

फिर भी और दिन के सवेरे से आज के सवेरे में बड़ा फ़र्क था। दामू जमादार के कुड़कने की आवाज आज और दिनों से मानो मन्द थी। आज शोर कम था। सभी जैसे चौकन्ने-से, डरे हुए-से। अन्दर सौदामिनी के गले में आज वह तेज न था। घोड़े की मलाई तो आज भी चल रही थी, लेकिन आज थपकियाँ हलकी-फुलकी थीं। घोड़े भी मानो समझ गए थे। वे भी पाँव धीरे-धीरे ठोंक रहे थे।

भूतनाथ वंशी के पास पहुँचा। बुखार घट गया था। मगर वैसे ही चित पड़ा था वह। भूतनाथ ने पूछा—आज कुछ खाने को जी चाहता है?

वंशी ने कहा—छोटे बाबू कैसे हैं, पहले यह बताइए हुजूर! रातभर मैं छोटे बाबू का सपना देखता रहा।

मधुसूदन ने कहा—शशी डॉक्टर को तो फिर बुलाने गये हैं सरकार बाबू।

भूतनाथ ने पूछा—तुम जानते हो, छोटे बाबू कैसे हैं?

मधुसूदन बोला—शशी डॉक्टर की दवा और फायदा न हो! आप कहते क्या हैं हुजूर!

वास्तव में शशी डॉक्टर धन्वन्तरि हैं। हैं तो बूढ़े, पर कल रात घण्टे तक जख्मी के पास बैठे रहे और उसे चंगा कर गये। दर्द बहुत कम है।

भूतनाथ ने पूछा—और पुलिसवाले कब गये?

मधुसूदन ने कहा—आखिर पुलिस के बड़े साहब आये कल।

—कब?

—रात के तीन बज रहे होंगे उस समय। मंझले बाबू ने बुलावा भेजा। रात-भर हममें से कोई सोया नहीं हुजूर, लोचन लगातार चिलम चढ़ाता गया, मैं और विधु सरकार खड़े-के-खड़े; अन्दर बातें और ठहाके, खाना-पीना, उसी रात को गाड़ी निकली, सरकार ने जाकर खजाचीखाने को खोला।

—किसलिए?

—जी, दक्षिणा भी तो चाहिए। कुछ ले गए···जब सोने गया तो गंगा नहाने वालों का चलना शुरू हो गया। सरकार बाबू तो सोए ही नहीं। तड़के ही मछली के जुगाड़ में निकल पड़े···थाने में भेंट भेजनी थी। मंझले बाबू ने कहा—अलमारी खोलो।

भूतनाथ चलने लगा। अचानक एक और बात याद आ गई। चुन्नी के बारे में कुछ खबर है मधुसूदन?

—उसकी खबर का मौका ही कहाँ मिला हुजूर! अब जा रहा हूँ—बाजार जाऊँगा और झट चाँदनी का एक चक्कर काट आऊँगा।

मधुसूदन के जाते ही वंशी ने पूछा—छोटी माँ ने क्या कहा मालिक साहब?

छोटी बहू की बात भूतनाथ के जी में भी कई बार आई। कल जाने-जाने भी बरानगर जाना न हुआ, उसके बाद एक बार तो मुलाकात होनी चाहिए थी। चिन्ता में मालूम हुआ, फिर से उसने वही सब खुराफात की है। सारी रात के उपवास के बाद जाने अब कैसी है।

चोर-कमरे के दरवाजे के पास जाकर एक बार वह खड़ा हुआ था। उधर के बरामदे से सिन्धु और गिरि का गला सुनाई पड़ रहा था। शर्म होने लगी?

ही सब चीजें न हो पाईं।

—लेकिन दो महीने के करीब तो रह गया है अब ?

जवा बोली—एक काम और रह गया है। बाबूजी ने नाम-पते बताए हैं, उनकी एक सूची बनानी पड़ेगी और घर-घर जाकर न्योता दे आना पड़ेगा। यह जिम्मा आपका।

भूतनाथ बोला—बताओ सो करूँ।

—सब काम क्या आपके सामने रखना पड़ेगा ? दिन-भर तो आपको छुट्टी ही रहती है, सुबह खा-पीकर चले आयें तो क्या ?

—अब तक तो मुझसे कहा नहीं।

—सब-कुछ आपसे कहना पड़ेगा ? आपको खुद भी तो समझना चाहिए। मैं कौन-सा काम कब करूँ, आप ही कहिए। दिन-भर तो गिरस्ती में जुती रहती हूँ, ऊपर से बाबूजी का भी बहुत-सा काम करना पड़ता है—यह सब भी आप न कर दें, तो मेरा उपकार ही क्या हुआ।

भूतनाथ ने कहा—अब तक तो खोलकर यह बताया नहीं—मैं तो यही नहीं जानता था कि बार-बार मेरा यहाँ आना तुम्हें अच्छा लगेगा या नहीं।

—अच्छा लगेगा, लगेगा, लगेगा। ज़ोर से यह न कहूँ तो मानो आप समझते ही नहीं। इधर तो इतने सयाने हो गए और यह बात नहीं समझ सकते ?

—अब से समझ गया।

—हाँ, जान लीजिए ताकि भूल न जाएँ कभी। देखते नहीं हैं, आप आते हैं तो कितना काम करा लेती हूँ। सुपवित्र का तो हाल देखते ही हैं, बाबूजी भी अस्वस्थ हैं, ऐसा एक भी आदमी नहीं, जो मदद करे! आपके आने से मदद होगी, यह तो बड़ी सहज बात है।

—मैंने तो कही रखा था कि मुझसे तुम्हारा कोई काम कभी-कभी बन सके, तो मैं अपने को कृतार्थ समझूँगा।

—लेकिन यह क्या चीखकर कहना पड़ेगा कि आइए, मेरा कोई उपकार कर जाइए ?

—बिना कहे मैं समझूँ कैसे ?

—बिना कहे तो आपने मेरी इतनी बातें समझीं और हमें न समझ सकेंगे!

—फिर भी सुनने में अच्छा तो लगता है।

जवा ने कहा—अभी उस रोज की बात है, तीन दिन से सुपवित्र का पता नहीं। सोच रही थी, बीमार तो नहीं पड़ गया—ऐसा तो नहीं होता, कभी कम-से-कम उपासना के समय रोज आ ही जाता है। अकेली मैं जाती भी तो कैसे—आपको देख तो आना चाहिए था।

भूतनाथ चुप रहा। उसके बाद बोला—एक बार ज़बान से कह तो

सकती थी।

—मैं क्यों कहूँ, आपको तो समझना चाहिए था।

—लेकिन सबकी बुद्धि क्या एक-सी होती है जवा ! होती तो सभी सुपवित्र-जैसा एम० ए० और कानून पास कर सकते, तुम्हारी-जैसी स्त्री पा लेते ! —कहकर वह हा-हा हँस पड़ा।

जवा लेकिन हँस नहीं सकी। सिलाई करते-करते सिर उठाकर बोली —मैंने सुपवित्र से तुलना थोड़े ही की !

भूतनाथ बोला—तुम क्यों करो, तुलना मैंने खुद की—अचानक खयाल हो आया।

जवा ने कहा—अचानक ऐसी बात का खयाल कर लेना भी तो आपका अच्छा नहीं।

भूतनाथ ने कहा—ठीक कहती हो, मगर मन तो नहीं मानता।

जवा फिर सिलाई में लग गई—मन को वश में रखना सीखिए, उससे भला होगा।

भूतनाथ बोला—मेरे भले की ज़रूरत नहीं, फिर बात ऐसी है कि सबका भला ही हो, तो बुरा किसका हो ?

—किसी-न-किसी का बुरा होना ही चाहिए, क्यों ?

भूतनाथ ने कहा—बेशक ! आखिर भले की भी तो कोई हद है। सब भले को जब लोग चुन-बीन लेंगे, तो किसी के नसीब में तो बुरे बच ही जाएँगे। मैं उन्हीं में से हूँ।

जवा फिर हँसी। कहा—भली लड़की एक मैं ही नहीं हूँ भूतनाथ बाबू, ढूँढने में मुझ-जैसी बहुतेरी मिलेंगी।

भूतनाथ ने कहा—जब समझ ही रही हो, तो कह लूँ, उतनी भली की मुझे ज़रूरत भी नहीं।

जवा पहले तो कुछ न बोली। कुछ रुककर कहा—सच, आप जल्दी से अपना ब्याह कर लीजिए।

भूतनाथ बोला—और चाहे जिस वजह से भी आता होऊँ, कम-से-कम उपदेश के लिए तुम्हारे पास नहीं आता।

जवा ने कहा—उसके सिवाय कोई उपाय भी तो नहीं दीखता।

भूतनाथ अबकी ज़ोर से हँस उठा। बोला—उपाय ढूँढने के लिए मैंने गोया तुम्हें सिर की कसम दे रखी है।

जवा हँसी नहीं। बोली—तो फिर आज आपको खोलकर ही बताऊँ, सुपवित्र को बाहर से जैसा समझते हैं, वह वैसा नहीं है, सब समझता है बात केवल कम करता है, लेकिन वैसी तीखी अनुभूति कम ही आदमियों की है। मैंने आपसे जो

कहा, यही अगर उससे कहती तो वह शायद खुदकशी कर लेता, या संन्यासी हो जाता, पागल हो जाता। उसे आप ठीक से जानते नहीं।

भूतनाथ अब चुप हो गया।

सुपवित्र की चर्चा करते वक्त जवा सुध-बुध भूल जाती है जैसे। सुई जाने कब रुक जाती। लगता, जवा आप अपने से ही बात करती जा रही है। यह भी होश नहीं रह जाता कि सामने भूतनाथ बैठा है। वह बोली—जानते हैं, एक दिन मैंने ठीक से बातें नहीं कीं उससे, वह तीन रात नहीं सोया। उसकी माँ से पता चला, तमाम दिन जाने कहाँ-कहाँ भटकता रहा। तीन दिन खाया तक नहीं। जब मैंने बुलवा भेजा तो देखा, बाल बिखरे हैं, आँखें लाल हो रही हैं। मैंने पूछा—इतने दिनों तक आये क्यों नहीं ? उसने कोई जवाब न दिया। मैंने कहा—ऐसा पागल-पन करके क्या संसार में जिया जा सकता है ? दुःख सहना पड़ेगा, कष्ट उठाना होगा, जीवन तो तब है। जीवन सुन्दर भी है, कठोर भी। इतने थोड़े में जी खराब करने से कैसे चलेगा ? फिर तुम तो मर्द हो न ?—फिर भी उसके मुँह से बात न निकली।

जवा ने फिर कहा—वह ऐसा ही है। इस किस्म के मर्द आज की दुनिया में बेकार हैं, लेकिन वैसी निष्ठा भी किसी में नहीं देखी मैंने। ऐसा सच्चा प्रेम, इतनी एकाग्रता किसमें है भूतनाथ बाबू ?

भूतनाथ ने भी देखा है। जवा अपनी सिलाई में मशगूल है और सुपवित्र एकटक उसे देख रहा है। घंटों। बाहर का कोई ज्ञान ही न हो मानो। बात नहीं, चीत नहीं—एक चुपचाप अपने काम में लगी है और एक आदमी उसे देख ही रहा है।

जवा ने कहा—यह स्वभाव है उसका। प्रेम किसी-किसी का स्वभाव होता है। उसकी भी वही बात है।

भूतनाथ बोला—सुपवित्र को तो समझा, लेकिन तुम ? तुम भी क्या···

जवा एकाएक बोल उठी—लीजिए, सब्जी चढ़ा आई हूँ चूल्हे पर। जरा देख तो आइए, कड़ाही में पानी है या नहीं ? सूख गया हो तो थोड़ा-सा पानी डाल देंगे ?

आज भूतनाथ को देखते ही जवा बोल उठी—बाबूजी की चिट्ठी मिल गई थी ?

भूतनाथ बोला—हाँ। तभी तो आया हूँ।

सुविनय बाबू के कमरे में जाकर भूतनाथ ने देखा, वे उसी का इन्तजार कर रहे थे। बोले—आ गए भूतनाथ बाबू, आओ, मैं तुम्हारी ही बात सोच रहा था।

घड़ी-भर रुककर फिर बोले—चिट्ठी मिल गई थी न मेरी ? रूपचन्द बाबू खुद मेरे पास आये थे। कह रहे थे कि आदमी उन्हें तुरत चाहिए—अच्छे

आदमी है, वहाँ तुम्हें कोई तकलीफ नहीं होगी।

भूतनाथ बोला—नहीं जानता, कैसे अहसान जताऊँ। इधर बड़े अभावों में दिन बीत रहे थे।

—अहसान क्या, तुम्हारी नौकरी लगा देना तो मेरा फ़र्ज़ था। मैंने ब्रजराखाल को वचन दिया था। फिर तुमने मेरे यहाँ बड़ी निष्ठा से निभाया। काम यह भी सख्त नहीं है, लेकिन बाहर-बाहर चक्कर काटने पड़ेंगे—मकान बन रहे हैं, निगरानी करनी होगी, हिसाब रखना पड़ेगा। कभी किया है यह काम?

—जी नहीं। नौकरी मैंने आप ही के यहाँ पहली बार की। दफ्तर कहाँ है?

—भवानीपुर में काम करना पड़ेगा—मकान उधर ही बन रहे हैं। पहले वे सारे इलाके जंगल थे और अब वहाँ वकील-बैरिस्टरों के मकान बन रहे हैं। पहचानना मुश्किल है। कर सकोगे तो वह काम?

—आपके आशीर्वाद से सब कर लूँगा मैं।

—तो मैं चिट्ठी लिखे देता हूँ, ले जाओ।

जवा आई।

सुविनय बाबू बोले—दो कर्तव्य मेरे रह गए थे, एक भूतनाथ की नौकरी, वह हो गई; दूसरा रह गया तुम्हारा ब्याह—उसको भी अब देर नहीं है। उसके बाद मैं छुटकारा चाहूँगा। इसी बार का माघोत्सव शायद मेरे जीवन का अन्तिम उत्सव होगा।

भूतनाथ निकला। निकलकर सोचा, भवानीपुर काफी दूर है। कल सुबह जाया जाएगा।

उस तरफ़ कलकत्ता, इस तरफ भवानीपुर।

इधर नया शहर बन रहा है। सारे ही मकान नए। सारे रास्ते नये। शहर ने मानो यहाँ एक नई ही सभ्यता को जन्म दिया है। बीसवीं सदी का नवजातक। गंगा के किनारे-किनारे ऊँची-ऊँची चिमनी। चिमनीवाले कल-कारखाने से शहर का मानो कहीं सम्पर्क है। उस पार की धूल-मलिन भावनाएँ गोया रात को यहीं आराम करने के लिए आती हैं। और हाई कोर्ट के कूट विचार खत्म करके नथियाँ शायद यहीं आकर जरा सुस्ताया करती हैं। मकानों के सामने पटियों पर मालिकों के नाम-धाम। कोई बैरिस्टर, कोई वकील, कोई व्यापारी कोई दलाल। गंगा की जेटियों में जहाजों का जमघट। जूट और धान, लाह और रुई का बन्दर। किरानियों को कलम घिसने से फ़ुरसत नहीं। लगता है, दफ्तर चाहे जहाँ हों, उनकी कुंजियाँ मानो आजकल यहीं आती हैं। भवानीपुर।

आज पहले के गोविन्दपुर को कौन पहचान सकता है!

ब्रह्मचारी। कौन उनके दामाद भवानीदास। वही भवानीदास ही कालीघाट के सेवायत हालदारों के पूर्वज थे। आज अपने नाम की इस जगह को वही नहीं पहचान सकेगा।

बाँस की सीढ़ियों से भूतनाथ एक-एक अधूरे मकान पर चढ़ता और चारों तरफ निगाह दौड़ाता। जिस रोज़ यहाँ आया, उस रोज़ से भी आज का शहर नहीं मिलता। दिन को इंजीनियरों का गज-फीता, ठेकेदारों का लेखा-जोखा, कुली-मजूरों का सब्बल और रात को अधूरा शहर एक स्वप्न-सा दीखता। शाम को साइकिल से वह लौटता तो देखता हुआ जाता। वह बाजार की बुनियादी बाबत न हो चाहे, करीना है। मेद नहीं है, स्वास्थ्य है। इस मुहल्ले के मकानों की तरह मकानों के रहने वाले भी जुदे ढंग के। बच्चे-बच्चियाँ साफ़ घुले कपड़े पहनतीं। बड़ों में से कोई चपकन, कोई कोट-पैंट। देखने में स्वस्थ, सुन्दर। रास्ते में तार के खम्भे तक सभ्य-भव्य। और कुछ न हो, सुरुचि तो है। भूतनाथ को अच्छा लगता।

अच्छे आदमी थे रूपचन्द बाबू। पूछा था उन्होंने—तनख़ा के बारे में सुविनय बाबू ने आपसे कुछ कहा है?

भूतनाथ ने जवाब दिया था—काम देखकर जी चाहे सो दीजिए।

वे इस बात से खुश ही हुए थे। ईंट-चूना का लेखा रखना, मिस्त्रियों की निगरानी, काम की देखभाल—यही सब काम। चिलचिलाती धूप में पाँव-पयादे शहर जाना। रोटी के लिए करना ही था।

रूपचन्द बाबू ज़रूर खुश हुए थे, वरना साइकिल क्यों ख़रीद देते? बोले—चढ़ना सीख लीजिए, बड़ा काम देगा।

दो पहियों की गाड़ी, मगर इन्हीं दो चक्कों से जैसे दुनिया जीत सकते हैं। भूतनाथ सुबह ही बड़े महल से निकल पड़ता। दोपहर को खाने के लिए जाता और लौट आता। शाम को लौटते वक्त कभी-कभी जवा के यहाँ जाता। थका-माँदा होता, मगर अच्छा लगता।

उस दिन एक वारदात हो गई।

बड़े महल के फाटक में कदम रखते ही बिरिजसिंह ने कहा—मास्टर साहब आ गए हुजूर!

—मास्टर साहब!—भूतनाथ को यकीन न हुआ गोया। पूछा—ब्रज-राखाल बाबू?

सच ही ब्रजराखाल था। अस्तबल के ऊपर वाला कमरा खुला था। रोशनी जल रही थी। झटपट ऊपर पहुँचा वह। यह तो दूसरा ही ब्रजराखाल था।

वह कई लोगों से बातें कर रहा था। कदम भैया, निवारण, शिवनाथ। भूतनाथ को देखकर सिर्फ़ यह कहा—आओ भाई साहब!

भूतनाथ ने गौर किया—कुछ साल पहले के ब्रजराखाल से कोई समानता ही नहीं। रंग और निखर आया था। सारा सिर घुटा हुआ। बसन्ती रंग का मोटा कुरता। मोटा कपड़ा।

कदम से कह रहा था—मुझसे तुम लोगों का कौन-सा काम होगा ?

कदम ने कहा—देश के लोगों के मन का हाल तो आप समझ ही रहे हैं—अनुशीलन पार्टी की राय में दूसरा कदम उठाना है—सशस्त्र क्रान्ति।

ब्रजराखाल बोला—मैं लेकिन इस पर राजी नहीं। सिस्टर निवेदिता से मेरी बातें हो चुकी हैं। तुम लोगों ने अगर इसी उम्मीद पर मुझे बुलाया है, तो भूल की है। मैं राजनीति में न रहूँगा—अपने क्लब से बल्कि मेरा नाम काट ही दो।

कदम चुप रहा।

ब्रजराखाल ने कहा—राजनीति के सिवाय क्या दूसरा कोई काम ही नहीं? बम और पिस्तौल में ही मुक्ति छिपी पड़ी है ? आखिर तुम भी उसी राह के राही बनोगे ? वह किस्सा याद नहीं है ? बाग बाजार में प्लेग हुआ, सिस्टर निवेदिता खुद पनाला साफ करने लगीं। बस्तियों में बच्चे मर रहे थे। आठ साल के एक अरमराते बच्चे ने सिस्टर का कपड़ा पकड़ा और रोते हुए कहा—'माँ, माताजी—' सिस्टर अपने को रोक न सकीं। स्वामी सदानन्द उन्हें जबरन पकड़ लाए। लेकिन सिस्टर को हरदम यही जी में आता रहा—उसे वह बचा क्यों न सकीं ? उनके प्रेम में कोई कमी थी ? प्रेम से क्या मौत को नहीं जीता जा सकता ? सावित्री-सत्यवान की कहानी झूठ है ?

बोलते हुए ब्रजराखाल की आँखें दहकने लगीं। कहने लगा—एक बार मेरी भी यही दशा हुई थी कदम। फूलदासी के मरने की याद है तुम्हें ? मैंने भी ठीक यही सोचा था और जब कोई कूल-किनारा न मिला तो अलमोड़े चला गया। वहाँ भी अपने अन्तर्यामी से यही पूछता रहा। सिस्टर निवेदिता के साथ भी यही हुआ—सन् अट्ठारह सौ निन्यानवे में।

निवारण ने पूछा—क्या कहा उन्होंने ?

ब्रजराखाल ने कहा—उन्होंने जो कहा, वह तुम लोगों को नहीं जँचेगा। कोई कूल जब न मिला, तो सिस्टर ने स्वामी विवेकानन्द से पूछा—त्याग का वह मन्त्र क्या है ? कौन-सा त्याग जीवन-त्याग से भी बड़ा है ? स्वामीजी ने कहा—प्रेम से भी ऊपर जो कर्म है, उसे पहचानना सीखो। सृष्टि के आनन्द में स्रष्टा का जो प्रेम झर रहा है, वही उनका कर्म है। साँझ हो चुकी थी। सिस्टर ने कहा—मुझे उसी व्रत की दीक्षा दीजिए।

ब्रजराखाल की बातें गीत के सुर-सी हवा में तैरने लगीं। भूतनाथ जड़-सा खड़ा सुनता रहा।

—उसके बाद दीक्षा की बारी, कितना कठोर व्रत ! तड़के जगना, एक

शाम भोजन, और भी क्या-क्या। अपरिग्रह, शौच और व्रतनिष्ठा की शपथ लेंगी सिस्टर, होमाग्नि में सर्वस्व स्वाहा करना होगा। फल-फूल, घी की आहुति के साथ-साथ यह मन्त्र पढ़ा—जिन्होंने सब कामना-वासना को छोड़ दिया है, जो वीतक्रोध, सद्चेष्टा, सर्वभूतों में ब्रह्मदर्शी हैं, दान, शौच, सत्य और अहिंसा ही जिनका जीवन है, वही धन्य हैं, वही ईश्वर में लीन हैं, उनका सब ईश्वर को अर्पित है···उठके फिर सिस्टर ने स्वामीजी को प्रणाम किया। स्वामीजी ने उनके ललाट पर भस्म का तिलक लगा दिया। भस्म क्या, मानो स्वयं निवेदिता के ही जले जीवन की राख हो। उसके बाद गीत गाया गया—हे अग्नि, हे पावक, हे अमृत, हे वनस्पति, हे प्राण—देखो, पार्थिव जो कुछ भी है अपना, सबकी मैंने आग में आहुति दे दी। अहं की आहुति दी। हे अग्नि, मुझे ग्रास करो—हरि ओम् तत्सत्···

ब्रजराखाल बोला—ऐसे ही दस-बीस तरुण हों तो कोई राष्ट्र उद्बुद्ध हो सकता है। ख़ैर, आज अब जाओ। रात हो रही है।

कदम ने पूछा—फिर कब मुलाकात होगी ?

ब्रजराखाल बोला—मुझसे भेंट की क्या ज़रूरत रह गई ?

कदम बोला—शायद पड़ जाए कोई ज़रूरत।

—तो फिर बेलूड़ पहुँच जाना। हूँ दो-चार दिन अभी। उसके बाद कहाँ जाऊँगा, नहीं जानता।

सब खड़े हो गए। सबकी आँखें डबडबा आईं। सबने ब्रजराखाल के पैरों की धूल ली। चले गये। अब ब्रजराखाल ने भूतनाथ की तरफ़ नज़र उठाई। वह टुकुर-टुकुर सिर्फ़ ताक रहा था। बोलने का साहस नहीं हो रहा था।

भूतनाथ की पीठ पर एक चाँटा जमाकर वह हँस उठा—खबर क्या है भाई साहब ?

क्या जवाब दे, भूतनाथ को कुछ न सूझा। इतने दिनों तक इन्तज़ार करने का यही नतीजा !

जूते पैरों में डालकर ब्रजराखाल ने कहा—बोल नहीं रहे हो बात क्या है भाई साहब ?

भूतनाथ सिर्फ़ इतना ही कह सका—चल दिए क्या ?

—हाँ भई, चला।

—रहोगे कहाँ ? खाना-पीना ?

ब्रजराखाल बोला—रहने को तो यहाँ आया नहीं। खाना-पीना बेलूड़ में ही होगा। अब आऊँगा भी नहीं।—वह अपनी वैसी ही मधुर हँसी हँस उठा।

—तो फिर बेलूड़ में तो भेंट होगी न ?

—नहीं। मिलने न जाना। शायद अब भेंट न हो।

—क्यों ?

—अब, इतने दिनों के बाद मैंने दीक्षा ले ली—क्यों ली, यह तो सुन ही चुके।

गेट तक ब्रजराखाल ने कोई बात ही नहीं की फिर। भूतनाथ पीछे हो लिया।

बिरिजसिंह ने सलाम बजाया। हँसकर ब्रजराखाल ने उसे सन्तुष्ट किया। सड़क पर उतरकर बोला—तो अब तुम लौट जाओ भाई साहब!

उसके बाद भूतनाथ आगे बढ़ गया, मुड़कर पीछे की ओर ताका तक नहीं।

भूतनाथ को रुलाई छूटने लगी। ब्रजराखाल इतना कठोर कैसे बन सका! कहाँ से कौन-सी शक्ति ग्रहण कर रहा है वह! कौन-सा मन्त्र मिल गया उसे! प्रेम की कोई कीमत ही नहीं उसके लिए! या उसने उस परम कर्मचेतना को पहचान लिया है, जो प्रेम के बहुत ऊपर है—जो सिस्टर निवेदिता को मिली?

भूतनाथ ने दौड़कर पूछा—मुझे तो कुछ नहीं कह गए?

—तुम्हें क्या कहूँ? क्या सुनना चाहते हो तुम?

—जो चाहे कहो, वही मेरा पाथेय बनकर रहेगा।

—तो कहता हूँ, मैं आशीर्वाद देता हूँ, तुम्हारा कल्याण हो!

भूतनाथ चुप रह गया।

—खुश हुए तो?

भूतनाथ ने सिर हिलाया।

उसके बाद ब्रजराखाल धीर मन्थर चल पड़ा, मुड़कर देखा भी नहीं।

उस दिन ब्रजराखाल ने कहा, कल्याण हो। लेकिन सच ही क्या कल्याण हुआ था भूतनाथ का? कभी-कभी सन्देह हो आता उसे। फिर जी में आता, कल्याण ही तो हुआ है। पाप, प्रलोभन, कामना—सब-कुछ को वह छोड़ पाया, यह भी तो कल्याण ही है। जवा ने उसके जीवन में जो आँधी उठा दी, किस तरह उसने उसे दबाया? और छोटी बहू की इतनी निकटता भी उसे···लेकिन आज यह रहे।

साइकिल पर तगादे में पटलडाँगा जा रहा था। ननीलाल की याद हो आई। दिन हो गए, उससे भेंट नहीं हुई। और इस बात का भी राज न खुला कि उसे कहे बिना ही, ननी जवा के यहाँ क्यों जा धमका।

ननी ने मकान पर पहुँचकर दरवान से पूछा—साहब हैं?

दरवान बोला—साहब भवानीपुर की नई कोठी में हैं।

नई कोठी? समझ नहीं सका भूतनाथ। फिर पूछा—साहब दफ्तर से लौटे?

अब की दरबान ने अच्छी तरह समझा दिया—साहब ने भवानीपुर में नया

मकान बनवाया है। वहीं रहते हैं। महीने-भर से यहाँ उनकी विधवा सास और बड़े साले रहते हैं। बीच-बीच में आते हैं। यह तो उनकी ससुराल है। साहबों को यह मकान जँचता भी न था। बड़ी गाड़ी अन्दर नहीं आ सकती थी। इसीलिए भवानीपुर में एलगिन रोड वाले मकान में मेमसाहब के साथ रहते हैं।

—मकान का नम्बर?

जेब से नोटबुक निकालकर नम्बर दर्ज कर लिया। बिल के रुपए, ईंट, चूना, सुरखी के वाउचर, मिस्त्रियों की हाजिरी-बही, सब सरकार को रोज समझानी पड़ती। सरकार पक्की बही में सब उतार लेता, तब छुट्टी मिलती। इसी में रात के सात-आठ बज जाते। कभी-कभी रूपचन्द बाबू से भेंट हो जाती। जिस रोज वे काम की भीड़ में होते, भूतनाथ पर नजर ही नहीं पड़ती। सामने की खुली जगह में कुली, मजूर, मिस्त्री कतार बाँधकर बैठे रहते। हफ्तावारी हिसाब। बाबू के सामने बीड़ी नहीं पीते—शोर-गुल भी न करते। उनके आने से पहले ही हो-हल्ला होता।

मिस्त्री उनसे बताते—ये बाबू तो बड़े भले हैं हुजूर, बस काइयाँ हैं सरकार साहब!

काम की नापी इंजीनियर-ओवरसियर लिया करते। पक्की बही में उनका लेखा दर्ज हो जाता। कीमती सामान ओवरसियर बाबू लोग खरीदा करते। इंजीनियरों से उनकी साँठ-गाँठ होती। खरीदगी के कमीशन में उनका हिस्सा सुरक्षित रहता।

बूढ़ा मिस्त्री इदरिस पूछता—इस महीने में कितना मिला बाबू?

—वही बारह रुपए, जो मिलते हैं।

—यह नहीं पूछता मैं, दस्तूरी क्या मिली?

भूतनाथ अवाक् रह जाता। दस्तूरी किस बात की?

—आपको कुछ नहीं देते हैं, क्यों?

भूतनाथ को दस्तूरी का पता यहीं पहली बार चला।

—अबकी आप माँग लीजिए। बिना माँगे कौन तो देता है!

—गोली मारो। दस्तूरी मुझे नहीं चाहिए।

—गोली क्या मारिए, वाजिब पावना छोड़ देंगे? दूसरे बिल बाबू तो लेते हैं।

—रहने दो इदरिस! कहीं बाबू सुन लें, तो नौकरी भी जाएगी।

इदरिस बोला—नौकरी क्यों जाएगी? इसमें बाबू का तो नुकसान होता नहीं; दस्तूरी दुकानदार देते हैं।

—जो भी हो, ऐसे पथ पर पैर न रखना ही अच्छा। अपने को नुकसान भी क्या है? पहले सात रुपए मिलते थे, अब बारह। ट्राम का किराया भी नहीं लगता।

सरकार कहता—आपकी बात ही और है, आपसे किसी की तुलना क्या ?

—क्यों ?

—आप मालिक के दुलरुआ हैं। सभी बिल-बाबुओं को सात रुपए मिलते हैं, आपकी बहाली ही बारह पर हुई। आपका मुकाबला क्या ?

—ऐसी बात क्यों कहते हैं सरकार बाबू ? आप लोगों की दुआ से नौकरी बनी रह जाए तो भाग्य जानूं। कितनी तो पूजा की, कालीघाट में मन्नत मानी।

उस रोज सरकार बाबू को काम कम था। पान चबाते हुए हँस-हँसकर कहा—आपकी क्या बात ! लेकिन देखिएगा, हम लोगों की नौकरी कायम रह सके।

—कहते क्या हैं आप ?

—मैं बिलकुल सही कहता हूँ। आप क्या अब ज्यादा दिनों तक बिल-बाबू रहेंगे, हो गए ओवरसियर, देख लीजिएगा।

इसके मानी कि रहस्य सब पर खुल गया है, सुविनय बाबू की सिफारिश पर उसे यह जगह मिली। सभी उससे अदब से बात करते।

इदरिस ने कहा—दस्तूरी न दें, तो बाबू से कह दीजिए आप।

भूतनाथ बड़े महल की तरफ साइकिल से यही सोचते हुए लौट रहा था। घर-घर देखा यही लेखा। हर नौकरी में एक ही रश्क। मोहिनी सिन्दूर कार्यालय के रसोइए से कैसी तो हो गई !

उधर रास्ते पर उन नौजवानों की जमात सबको आगाह करती चल रही थी कि *तीस आश्विन को सब हड़ताल करें*···*रसोई बन्द रखें, उपवास करें*···*आदि-आदि*।

चार-पांच जवान। रास्ते में उनकी मौजूदगी का खास पता ही नहीं चल रहा था। मगर उत्साह कितना ! लगन कैसी ! रोज यही धुन, गो कि लोग खास दिलचस्पी भी नहीं दिखाते !

भूतनाथ वनमाली सरकार लेन में पहुँचा।

बड़े महल की अब वह रौनक न रही। फिर भी शाम को वहाँ आने के लिए उसका जी छटपटाता रहता। इन दिनों अकेले बिरिजसिंह ही ड्यूटी पर रहता।

एक दिन भूतनाथ ने पूछा—तुम्हारा साथी नत्थूसिंह कहाँ गया ?

—छुट्टी लेकर घर गया है। महीना पूरा हो गया, लेकिन आ नहीं रहा है।

—तो सरकार बाबू से कहते क्यों नहीं कि एक दूसरा आदमी रख लें ? अकेले रात-दिन कहाँ तक पहरा दोगे ?

पहरा भी आजकल वैसा ही पड़ता। बन्दूक को बगल में रखकर खड़ा-खड़ा

खैनी मलता रहता। गाड़ी-वाड़ी आती, तो होशियार-होशियार चीखा करता।

आजकल इब्राहिम के कमरे के सामने रेंड़ी के तेल की बत्ती नहीं जला करती। एक दिन आँधी में गिर गई, तब से अँधेरा ही रहता है। अस्तबल में गाड़ी-घोड़ों का आना-जाना भी वैसा नहीं रहा। छोटे बाबू की गाड़ी वही जो उस दिन अस्तबल में दाखिल हुई है, फिर निकली ही नहीं शायद।

—अब कैसे हो बंशी ?

बंशी धीरे-धीरे चलता। कमजोर था। वैसी दौड़-धूप नहीं कर पाता। बोला—जी, अब कुछ अच्छा हूँ।

—तुम्हारी छोटी माँ कैसी हैं ?

—कोई भी अच्छे नहीं हैं हुजूर, कोई भी अच्छे नहीं हैं। छोटे बाबू ने वही जो खाट पकड़ी है, अब तक नहीं उठे। मैं तो खैर चल-फिर लेता हूँ, आज भी शशी डॉक्टर कह गए, अभी भी समय लगेगा। उन्होंने शराब पीने को बिलकुल मना कर दिया है।

भूतनाथ ने कहा—करें मना, मगर छोटे बाबू क्या छोड़ सकेंगे ?

बंशी बोला—वही तो, मैं भी दंग रह गया हूँ, छोटे बाबू शराब अब नहीं छूते। कहते हैं, उस जहर को अब मेरे सामने न लाया कर। मैं माँगूँ तो भी न देना।

—सच ?

—जी, काली किरिया, एक दिन भी नहीं पीते। शराब की अलमारी की कुंजी तो अपने ही पास थी—सब झाड़-पोंछकर साफ कर दिया है।

—अच्छा ! भूतनाथ अचरज में आ गया। यह भी सम्भव है ?

—उनकी शक्ल देख लें तो और भी हैरान रह जाएँ। ऐसे हो गए हैं—कहकर उसने अपनी कानी उँगली दिखा दी।—जी हाँ, इतने दुबले हो गए हैं। चल-फिर नहीं सकते। पड़े ही रहते हैं। जब पीने की बड़ी इच्छा हो जाती है, तो सोडा पीते हैं। लेटे-लेटे पीठ में घाव हो गया है। मेरे बिना एक घड़ी भी नहीं चल सकता उनका। अकेला मैं किधर-किधर देखूँ, कहिए तो। बाजार तो मैं, तम्बाकू तो मैं। जूता-सिलाई से चंडी-पाठ तक।

—क्यों, लोचन कहाँ गया ?

—आपको पता नहीं। बड़ा बाजार कि कहाँ तो उसने पान-बीड़ी की दूकान की है। मधुसूदन घर जो गया सो आने का नाम नहीं। कैसा नमकहराम है देखिए ! सात पुश्त से इस घर का नमक खाते आए हैं हम—ऐसे समय छोड़ जाना ठीक है ? हाँ माना, कई महीनों से तनखा नहीं मिली—तनखा ही बड़ी चीज हो गई, सात महीनों से हम दोनों भाई-बहनों को भी तो तनखा नहीं मिली है, बोलता हूँ कुछ ?

आजकल मँझले बाबू भी रोज़ बाहर नही जाते। जिस दिन देर से निकलते, उस दिन भेंट हो जाती। साथ मे बड़ी मालकिन, मँझली मालकिन होती और होती हासिनी। पनवट्टा लिये गाडी पर सवार होती। भैरव बाबू भी रोज नही आते। उमर ज्यादा हो गई और वह मौज-मजा भी न रहा। बारह बजते-न-बजते मँझले बाबू लौट आते। नीद मे ही गेट खुलने की आवाज़ सुनाई पडती।

विधु सरकार के पास आजकल भीड ज्यादा होती। केवल बर्फवाला ही नही, बनिया, बजाज, ग्वाला, मिस्त्री, मजूर। सरकार का मिजाज और भी रूखा हो गया है। कहा—अरे बाबा, टे-पो काहे की, बाकी कभी मिला नही है, फिर ऐसी हेठी क्यों? मिलेगा, मिलेगा, मिलेगा—बस। इतना ही कह देता हूँ। बाबुओं की कमाई धर्म की है, ये अधर्म नही करेंगे। तुम्हारे थोडे-से पैसे बचाकर ये बड़े हो जाएँगे!

लेकिन आजकल रात को वह सुर मानो ज्यादा सुनाई पडता। खिडकी की तरफ के नारियल की जड़ के पास इकमंज़िले की सीढ़ी से पहले तो वह हलका-सा सुर उठता, फिर फैल जाता। सारे घर में घूम जाता। दक्षिण के बगीचे का चक्कर काटकर वह मानो एकबारगी आँगन मे आकर थम जाता। फिर छत पर चढता। तीव्र से तीव्रतर हो जाता। फिर सारे अन्तरिक्ष मे वह सुर आर्त्तनाद-सा गूँजता। उस आर्त्तनाद से बडे महल का अन्दर तक काँप उठता। उसके बाद बगीचे के आँवले की डाल पर चीख-चीखकर वह अजीब-सी चिड़िया जब कही उड जाती, तो धीरे-धीरे वह सुर थम जाता। शायद उसी अन्धकूप मे फिर जा घुसता। दिन की रोशनी में बाहर निकलने की मानो मनाही हो।

सुबह उठने मे भूतनाथ को आलस लगता। सर्वाङ्ग मे दर्द। और मन? मन क्या नही दुखता? मगर खबर किसे है मन की! मन के बारे मे सिर खपाने का कभी समय तो मिला नही। एक बार शायद ऐसा मौका एक जगह आया था, लेकिन उसे भूल जाना ही ठीक है। कभी-कभी पटेश्वरी बहू की बात याद आती। सोचते ही डर-सा लगता। इतनी रूपवती···जो इतना स्नेह करती हो, प्यार करती हो, उससे इतना डरना ही गलत है। फिर भी मुँह कैसे दिखाए! अगर छोटी बहू के चेहरे पर हँसी न दीखे—तो? कैसे बर्दाश्त होगा? अगर लगे कि छोटी बहू भी अनाचार, जागरण, निराशा और उसाँस मे दुबली हो गई है? इससे तो अच्छा है कि नही देखे उसे। कई बार चोर कमरे के दरवाज़े तक जाकर भी रुक गया है वह। क्या देखना है! क्या सुनना है आखिर!

लेकिन रात को कभी-कभी सपने मे वह छोटी बहू के कमरे में जाता। उनकी शक्ल देखकर चौंक पडता वह। कैसी हो गई है! वह रूप कहाँ चला गया! कहाँ गया वह सलोनापन! वे बुझती-दमकती आँखें! वह चितवन!

छोटी बहू ने कहा—तू बेईमान है भूतनाथ!

भूतनाथ अपराधी की नाईं चुप रह गया।

छोटी बहू बोली—मैंने तुझे खिलाया-पहनाया और तू एक बार भी मेरे पास नहीं आता, मैंने तेरा क्या बिगाड़ा ?

बड़ी देर बाद भूतनाथ ने कहा—तुम्हारा यह हाल क्यों हुआ बहू ? मैंने तुम्हारी यह हालत नहीं देखनी चाही थी।

छोटी बहू बोली—क्यों ? कुछ तो हुआ नहीं मुझे। अब तो मैं सुखी हूँ। छोटे बाबू तो अब घर ही रहते हैं। मुझे अब कोई दुःख नहीं—तू सोचता क्या है ?

भूतनाथ ने कहा—फिर तुम्हारा चेहरा ऐसा क्यों हुआ ?

—कहाँ, क्या हुआ है मेरे चेहरे को ?

—क्या हुआ है, सो मैं नहीं बता सकूँगा। लेकिन तुम अच्छी नहीं लगती हो, पहले जैसी तुम हँसती नहीं हो।

—हँस तो रही हूँ, देख—और वह ज़ोरों से हँस पड़ी। हँसते-हँसते वह हँसी अचानक रुलाई में बदल गई। भूतनाथ होश में आया। चारों तरफ़ देखा—कोई कहीं नहीं। अँधेरा चोर कमरा। भूमिपति चौधरी का अभिसार-कक्ष ! सारा कलकत्ता सन्नाटा, शब्दहीन। अस्तबल में घोड़ों का पैर ठोंकना तक बन्द, बगीचे के आँवले पर से रात को बोलने वाली वह चिड़िया भी चुप। लगा, यह बड़ा महल नहीं—प्रेतपुरी है।

लेकिन भवानीपुर में खड़े होते ही रात का सपना जाने कहाँ खो जाता। कतार-के-कतार मकान खड़े हो रहे थे रूपचन्द बाबू के। ईंट, चूना, लोहा-लक्कड़। छत की पिटाई। मानो यहाँ कलकत्ता की जवानी लौट आई है। छत-पर-छत, उस पर छत। एक मकान बन जाता और गाड़ी पर लद-लदाकर नए आदमी आते। खाट, मेज, कुरसी, असबाब।

इदरिस पूछता—दस्तूरी के बारे में कहा था बाबू से ?

—नहीं।

—कहें, तो आपकी तरफ़ से मैं कहूँ ?

—नहीं इदरिस, ज़रूरत नहीं।

—मैं ओवरसियर बाबू से कहूँगा। आखिर आपका वाजिब पावना देंगे क्यों नहीं ?

एक दिन भवानीपुर में एलगिन रोड के सामने भूतनाथ ठिठक गया। ननीलाल से भेंट न कर ली जाए।

जेब से ठिकाना निकाला। मकानों को देखने लगा। गज़ब देखिए, सामने का ही मकान ननीलाल का था। कितना बड़ा मकान ! प्रासाद भी कहा जा सकता है। भूतनाथ अपनी साइकिल से उतर पड़ा।

दरबान से पूछा—ननी बाबू हैं ?

दरवान ने भूल सुधारकर कहा—बाबू नहीं, साहब !

भूतनाथ ने सुधारकर पूछा—साहब हैं ?

दरवान बोला—साहब निकल गये हैं।

—कब लौटेंगे ?

—कोई ठीक नहीं।

दरवान की बातें रुची नहीं। मगर उसकी बात से बिगड़ना भी बेवकूफी ! फिर पूछा—कल साँझ को भेंट हो सकेगी ?

—नहीं।

—परसों सवेरे ?

—नहीं।

—उसके दूसरे दिन ?

—जी नहीं बाबू, नहीं। साहब कल विलायत चले जाएँगे।

विलायत ? ननी विलायत जायेगा ? फिर पूछा—कल ही जाएँगे ?

—जी हाँ।

लाचार भूतनाथ ने साइकिल सँभाली। कल ही जा रहा है। जाने से पहले एक बार मिल न लिया जाय ? एक ही क्लास, एक ही स्कूल में पढ़ा है। उस समय ननीलाल कितना अच्छा लगता था। उसके हाथ की चिट्ठी अभी भी टिन के बक्स में पड़ी है। क्या से क्या हो जाता है आदमी ! पलटकर फिर उसने मकान को देखा। कितना बड़ा ! बड़े महल से भी बड़ा। उत्तर रुख। दूर तक फैला। पीछे भी जाने कहाँ तक है ! हर खिड़की में परदा। ताँबे के प्लेट पर ननीलाल का नाम। हुआ कैसे यह ? उधर बड़े महल के बाबू लोग गिर रहे हैं, फिर ये कैसे उठ रहे हैं ? उन्हें तो अगाध रुपये थे। बल्कि ननीलाल को ही रुपये न थे। कितनी बार तो नन्हे बाबू से उधार माँग ले गया। फिर दिया भी नहीं शायद। आखिर ऐसा क्यों ? ननीलाल एक बार कह ज़रूर रहा था कि बाबू लोग बैठकर खाते हैं।

मगर ननीलाल ही क्या मसक्कत करता है ! गाड़ी पर घूमता रहता है। दोनों हाथों रुपये उड़ाता है। यह भी तो शराब पीता है, औरत रखता है। कितने घाट का पानी पिया ! नन्हे बाबू को मोतिया बाई के यहाँ यही तो ले गया था ! फिर ?

और ये रूपचन्द बाबू ! किस निष्ठा से व्यापार कर रहे हैं ! महीने-महीने तनखा देते हैं। इतने-इतने इंजीनियर, ओवरसियर, बिल-बाबू, मिस्त्री-मजूरे खटते हैं। भवानीपुर में नये शहर का निर्माण कर रहे हैं, लोहा ईंट, लकड़ी से मनुष्य के स्वप्न को साकार कर रहे हैं; भविष्य बना रहे हैं अपना, औरों का, सबका।

रूपचन्द बाबू कहते—बनना-बिगड़ना ही नियम है। नदी का यह किनारा टूटता है तो वह बनता है।

भवानीपुर के नये मुहल्ले के बच्चे पार्क में खेला करते। फुटवॉल खेलते, गाते—शायद वे वन रहे हैं। लेकिन एक ओर वनाने के लिए दूसरे को तोड़ना क्या जरूरी है?

उस रोज इदरिस नहीं आया। काम वन्द होने की नौवत।

दूसरे दिन आया कि सवाल हुआ। इंजीनियर, ओवरसियर नाराज। ओवरसियर ने कहा—काम खत्म होने को है और किस अक्ल से तुम गैरहाजिर रहे?

इदरिस ने कहा—रोजी तो अपनी गई, आप लोगों का क्या नुकसान हुआ?

—वावू को तो हरजाना देना पड़ेगा?

—काहे का? और देना भी हो तो दें। इतनी तरफ़ से तो मुनाफ़ा उठा रहे हैं—थोड़ा-सा हर्ज ही सही।

—यही वात मैं कहूँ जाकर उनसे?

—कहिए। मजूरी का डर नहीं लगा है। जहाँ जाएँगे, वहीं काम मिलेगा। सारा भवानीपुर पड़ा है—मकान-ही-मकान वनना है और जहाँ वनेगा, हम लोगों के विना चारा नहीं।

—लो-लो, काम करो, वात ही सिर्फ़···ओवरसियर वावू वुदवुदाते हुए चले गए।

भूतनाथ ने इदरिस से कहा—देखिए तो सही विल-वावू, ख़्वाहमख़्वाह झगड़ते हैं—खुद वड़े भले वने हैं। हमें खिजाएँ तो हम लोग भी विगाड़ना जानते हैं। ऐसा काम कर देंगे कि दो ही दिन में दीवार फटकर चौचीर। कम्पनी फेल हो जाएगी।

भूतनाथ दिलासा देकर वोला—जाने दो इदरिस, झमेले से क्या लाभ? लेकिन सच ही कल आये क्यों नहीं?

इदरिस वोला—आता कैसे वावू, जहाँ रहता था, कल वहाँ से डेरा-डण्डा हटाना पड़ा। वहाँ भी मकान वनेंगे। पाँच सौ की वस्ती—रातों-रात वाल-वच्चों सहित उठ जाया जा सकता है!

—वहाँ भी मकान वन रहे हैं?

—जी, विल-वावू। मकान वनने में अपने लिए तो अच्छा ही है, काम मिलेगा। लेकिन, अपना रहना तो न होगा न!

भूतनाथ ने कहा—यह तो मजे की वात है।

इदरिस वोला—यही तो सोचता हूँ, मकान हम वनाएँ, रहें और लोग! यह देखें कि भवानीपुर की वस्ती में रह रहा था, अव वालीगंज के धोवियों के मुहल्ले में जाना पड़ा। फिर वहाँ कुछ होगा, तो चेतला जाइए।

दूसरे दिन ननीलाल ने भी यही कहा था।

तड़के ही निकल पड़ा था भूतनाथ। चारों तरफ थोड़ा-थोड़ा कुहरा। रात रहते ही उठना पड़ा। बड़े महल में अब नौकर-चाकर ज्यादा हैं नहीं। भिस्तीखाने मे हर घड़ी पानी नहीं मिलता। तड़के नल में भी पानी नही आता। किसी की नजर पड़ने से पहले ही साइकिल लेकर निकल पड़ा। सड़क सूनी थी। एलगिन रोड पर पहुँचते-पहुंचते मौसम साफ हो गया। ननीलाल सदा सवेरे उठ जाता है। मिलने का यही समय है। लेकिन इतने ही मे उससे मिलने वाले और बहुत-से लोग पहुंच चुके थे।

जहाँ ले जाकर दरवान ने उसे बिठाया, उस कमरे में चार-पाँच बेंचें पड़ी थीं। और भी कई लोग बैठे थे। लेकिन बैठा-बैठा थक गया भूतनाथ।

बगल के आदमी ने उससे पूछा—आप कहाँ से आये हैं सर?

गरीब-सा आदमी। बेंच पर एक पैर रखकर बैठा था।

भूतनाथ ने कहा—बहू बाजार से।

—नौकरी के लिए?

—नही।

—तो फिर दलाली के लिए?

—नही।

दूसरे लोग उनकी बातें सुन रहे थे। कोई-कोई भलेमानस-से। एक आदमी कोट-पैंट मे। सब इन्तजार मे। नया घर। नई दीवारें। दीवार पर लिखा था—शोर न करें।

उस आदमी ने कहा—मैं बरानगर से आया हूँ।

—बड़ी दूर है वह तो!

—दूर है तो क्या करना? पेट के लिए लोग कहाँ-से-कहाँ जाते है, यह क्या है! रात रहते ही निकला हूँ—सुना, साहब आज चले जाएँगे।

भूतनाथ ने कहा—मैंने भी सुना है।

तब तो हरिहर बाबू ने ठीक ही बताया, वे यही काम करते हैं न! बताया साहब का पाँव पकड ले, कोई-न-कोई हीला हो ही जाएगा। आपका क्या ख्याल है?

कोट-पैंटवाले सज्जन ने तब तक सिगरेट सुलगा ली थी। पीते-पीते घड़ी देख रहे थे। पता नही, क्या काम है। नौकरी के लिए ही आये हो शायद।

इतने में अचानक सब जैसे चौकन्ने-से हो उठे। बगल के कमरे मे जरा खटका हुआ। कोट-पैंटवाले बाबू ने सिगरेट फेंक दी।

दरवान आया। कहा—अपना-अपना नाम-पता लिखा दे। कोट-पैंटवाले बाबू ने लिखा—एस० आर० मिटर।

बगलवाले ने कहा—मुझे तो लिखना नहीं आता सर, आप जरा लिख देंगे ?

सबसे अन्त में भूतनाथ ने लिखा—भूतनाथ चक्रवर्ती, बड़ा महल, बहू बाज़ार।

दरबान सब लेकर चला गया। सभी मानो तटस्थ होकर बैठे। एक-एक कर पुकार होगी अब। भूतनाथ को इतने लोगों में अपना ही नाम अजीब लगा। पता नहीं, फूफी ने ऐसा नाम क्यों रखा था! पिताजी का रखा हुआ अतुल नाम ही तो अच्छा था। बाबूजी जब तक जिन्दा थे, अतुल कहकर ही पुकारते थे।

अचानक दरबान आया। पुकारा—भूतनाथ बाबू—

इतने लोगों के होते सबसे पहले उसी की पुकार! वह जल्दी से अन्दर गया।

—अरे, तू ? खबर क्या है ?

क्या कहे, सोच न सका। इतनी जल्दी घट गई घटना! समय ही न मिला। और ननी का चेहरा कैसा तो हो गया है। उम्र मानो और भी बढ़ गई है। देखने से डर लगता है। सामने एक बहुत बड़ी टेबुल। चारों तरफ़ कागज-पत्तर। एक कागज़ पर कुछ लिख रहा था। हाथ में कलम थी। मुँह में सिगरेट। आँख पर ऐनक।

—बैठ, तेरी जगह खाली है। इतने दिनों से मिला ही नहीं तू! है कहाँ ?—एक साँस में बहुत-से सवाल पूछ गया।

भूतनाथ ने कहा—वहीं, बड़े महल में। और कहाँ रहूँ ?

—अभी भी वहाँ है···और नौकरी ?

—नौकरी तो एक कर ली है रूपचन्द बाबू की कम्पनी में। बिल-सरकार का काम।

—अच्छा ही किया। मैं भी आज जा रहा हूँ।

—कहाँ ?

—तुझे बताया था न, घूमने जाऊँगा। आज ही जा रहा हूँ, सिर्फ नन्हे की वजह से देर हो गई।

—नन्हे बाबू ?

ननीलाल ने दूसरी सिगरेट सुलगाई। बोला—अपना मकान मेरे पास गिरो रखा न—अपनी वैसी इच्छा न थी।

गिरो ? बन्धक! बड़ा महल! सब-कुछ कैसा तो गोल-माल हो गया! यह क्या रहा है ननी ?

ननी बोला—मैं चाहता न था, इतने दिनों की जान-पहचान, छुटपन में ही जाता रहा हूँ, कितना खाया-पकाया, नन्हे से कितनी बार रुपये उधार लिये···

मगर वही करना पड़ा। बड़ा संकोच हो रहा था।

भूतनाथ का मन कहाँ तो उड़ गया था! जो सुन रहा है, सब सच है! अस्तबल, खजाना, भिस्तीखाना···वैदूर्यमणि, हिरण्यमणि, कौस्तुभमणि, नन्हे बाबू भूतनाथ के आधे जीवन से उस घर का सारा कुछ जुड़ा हुआ है। भैरव बाबू! नन्हे बाबू का ब्याह! और वह छोटी बहू! छोटी बहू का क्या होगा?

छोटी बहू ने कहा था—ये बाबुओं की बातें हैं, अपने लोग इन पर दिमाग नहीं खपाती।

लेकिन अन्त तक ऐसा क्यों हुआ?

ननीलाल कहने लगा—पहले अपना इरादा न था, इतना पुराना खान-दान···जब नन्हे ने प्रस्ताव किया तो मैंने कहा—मुझसे यह न होगा भाई, कहो तो रुपयों के लिए कोई और आदमी ठीक कर दूँ!

नन्हे बोला—और कोई होगा तो बात खुल जाएगी। तू ही ले ले। साल-दो-साल में हम रुपये चुका देंगे। जितना कहेगा, सूद दूँगा।

अन्त में तैयार होना पड़ा—मगर जानता हूँ, रुपये वे चुका न पाएँगे। घर ही छोड़ना होगा।

—घर ही छोड़ना पड़ेगा?— भूतनाथ ने मानो अपने कानों अपनी फाँसी का हुक्म सुना।

—छोड़ना तो पड़ेगा ही। रुपया तो मेरा अपना ही नहीं है, परिवार का है। मेरे नाबालिग साले हैं, सास हैं—वे सूद क्यों छोड़ने लगे और घर ही क्यों छोड़ेंगे? अन्त तक मकान छोड़ना भी पड़ सकता है।

—आखिर वे लोग जाएँगे कहाँ? इतना पुराना वंश, इतने-इतने लोग, नौकर-चाकर, पूजा-पर्व, विग्रह —सबको लेकर···यह भी सम्भव है कहीं!

ननी बोला—नन्हे तो एटर्नीशिप पास न कर सका। ब्याह के बाद भी कोई इम्तहान पास करता है?

—फिर करेगा क्या?

—कह रहा था, फिर इम्तहान देगा। मगर पास नहीं कर सकेगा, देख लेना। अब उसे सिर्फ इन्हीं बातों की फिक्र है—जायदाद लौटाने का सपना देख रहा है—उनका बैंक भी फेल हो गया। जो थोड़ी-सी जमींदारी है, उससे कुछ नहीं होता। खान खरीदी, उसमें भी···

—उसमें क्या? कोलियरी क्यों न चली?

ननीलाल ने फिर दूसरी सिगरेट सुलगाई। बोला—उनका भाग्य ही खराब है। मुझे खबर तक न दी, पूछा तक नहीं। सोचा, इतने-इतने रुपए का मामला है, मैं कहीं दलाली मार लूँ। झूमंटमल को बुलाया—अब समझे। इतनी नमकहरामी तो कम-से-कम मुझसे न होगी—मैंने उनका बहुत खाया है, नन्हे के पैसों

गुलछर्रे उड़ाए हैं—मुझसे थोड़ी कृतज्ञता तो जरूर मिलती···खैर, हुआ ऐसा कि बाद में पता चला, खान में ऊपर-ही-ऊपर कोयला है, नीचे सब पत्थर···ननीलाल ने घड़ी देखी।

भूतनाथ बोला—तो मैं अब चलूं भाई, तुझे देर हो रही है।

वहाँ से निकला तो भूतनाथ को रुलाई आने लगी। जी में आया, तुरत वह बड़े महल जाए। छोटी बहू के पास पहुँचे बिना चैन नहीं पड़ रहा था। बड़े महल के हर प्राणी के लिए उसे माया होने लगी। नन्हे बाबू, मँझले बाबू, छोटी बहू, बंशी, चिंता, यासीन सबके लिए, यहाँ तक कि रसोई के उस तेलचट्टे के लिए भी। ऐसा क्यों हुआ? जाएँगे कहाँ सब? इससे बचने का क्या कोई उपाय नहीं? उसे अपनी चिन्ता नहीं लेकिन छोटी बहू! और छोटे बाबू, जो खुद उठ भी नहीं सकते, उन्हें पकड़कर उठाना पड़ता है, बैठाकर खिलाना पड़ता है, नहलाना पड़ता है। छोटे बाबू कहाँ जाएँगे? खानदानी आदमी, कभी अपने हाथ से ढालकर एक गिलास पानी तक न पिया। अपने कपड़े का हिसाब तक न रखा। कहाँ जाएँगे वे, जाएँगे कहाँ?

शाम को भूतनाथ रूपचन्द बाबू के यहाँ पहुँचा कि सरकार बाबू ने बुलाया—अरे भूतनाथ बाबू, बाबू आपको ढूंढ़ रहे थे।

—मुझको? क्यों?—डर लगने लगा। काम में कोई गड़बड़ी तो नहीं हुई, कोई चूक।

सरकार बाबू बोले—अरे, आपका क्या, मार दिया आपने तो!

—क्या हो गया?

—यों ही तो नहीं बुलाया है, और किसी को तो नहीं बुलाते। कहने को आप जो कहें, आप पर कुछ नेक नज़र है। दाँत निपोरकर निर्बोध-सा हँसने लगा। फिर बोला—आपको ठहरने को कह गए हैं—अभी आएँगे।

भूतनाथ सोचने लगा—ऐसा क्या काम है कि रुकने को कह गये हैं? कोई गलती हुई है?

सरकार बाबू बोले—डरने की बात नहीं, कोई नुकसान न होगा आपका।

—यह कैसे समझा?

—इतने दिनों से काम कर रहा हूँ, यह भी नहीं समझता। आपकी तरक्की हुई समझिए।

—कब आएँगे?

—तुरत आने की तो कह गए हैं। गाड़ी भी तैयार है।

भूतनाथ ने देखा, सच ही उनकी गाड़ी तैयार है। दोनों घोड़े उतावले रहे हैं।

सरकार बाबू बाउचरों को पक्की बही में उतारने लगे। जरा-जरा का हिसाब देना पड़ता। रूपचन्द बाबू की कम्पनी का काम बड़ा पक्का है। रोज़ का हिसाब रोज़। उसी बही से बकायावालों का भुगतान होता। कहाँ दो गाड़ी सुरखी गई, कहाँ कितनी ईंट गई, चूना कै बोरा दिया गया—सब लिखना पड़ता। जहाँ तो जरूरत होती, इंजीनियर-ओवरसियरों के निर्देशानुसार बिल-बाबू को सब देना पड़ता। दूकानों से माल लोडिंग से डिलिवरी तक बिल-बाबू का काम इसी से सीखते-सीखते ओवरसियर होना। नाप-जोख की जानकारी, नक्शा बनाना, कैसे मकान में किस हिसाब से क्या सामान लगेगा, इसका हिसाब लगाना।

इन्हीं कै महीनों में भूतनाथ पक्का हो गया। अब तो अकेले फीता पकड़कर हिसाब कर सकता है। चोरी पकड़ सकता है। इतने-इतने मकान बन रहे हैं—ओवरसियर भी बढ़ाए जाएँगे। रूपचन्द बाबू की कम्पनी भी पहले से बड़ी हो गई। नया शहर बनने लगा, बस्ती उजाड़कर नए मकान, नया समाज, नई सभ्यता। यहाँ मानो सब कुछ नया। नए लोग, नया समाज, नए मकान, नए प्राण! नए-नए वकील-बैरिस्टर। कुछ पैसा हुआ कि भवानीपुर में मकान बनना ही चाहिए।

उसी दिन की तो बात है।

तीन आश्विन। भूतनाथ ने सोचा था, कुछ होगा नहीं। लेकिन राखी बाँधने की कैसी धूम पड़ी!

इदरिस ने कहा—कलाई बढ़ाइए तो बिल-बाबू!

—क्यों?

—आप बढ़ाइए तो!

ओवरसियर और इंजीनियर भी न छूटे। रूपचन्द बाबू पहले कुछ न बोले। लेकिन हिम्मत बाँधकर भूतनाथ ही उनके पास पहुँचा।

—अरे, यह क्या! ओ, राखी! बाँधिए—उन्होंने बायाँ हाथ आगे बढ़ा दिया।

बिल की अदायगी को निकला, तो भीड़ देखकर भूतनाथ साइकिल से उतर पड़ा। तीखी धूप। फिर भी बहुत-से लोग खड़े। सुबह घर-घर रसोई बन्द थी। उपवास किया था लोगों ने। स्वयंसेवकों ने घर-घर जाकर कहा—एक दिन न ही बनाई, न ही खाया तो क्या बिगड़ता है? यहाँ भी बहुतों के यहाँ भोजन न बना। दूकानें भी बहुत बन्द रहीं। एक नया ही अनुभव।

बड़े महल में मँझले बाबू ने हुक्म दे रखा था—किसी को अन्दर न घुसने देना···बदमाश हैं सब।

और वहाँ घुसने का साहस ही कौन करता! भूतनाथ ने सोचा था, वह न खाएगा। सच ही तो, एक दिन न खाया तो क्या? नहा लिया। साइकिल पर सवार हो ही रहा था कि बंशी आया—चल दिए, खाएँगे नहीं?

—रसोई बनी है आज ?

—रसोई क्यों न बनेगी ?

—आज रसोई बन्द नहीं हुई ? स्वयंसेवक नहीं आये थे ?

—यहाँ आने की कौन हिम्मत करे ? मँझले बाबू ने बिरिजसिंह को गेट बन्द कर देने का हुक्म दिया है।

—बाजार खुला था ?

—कुछ-कुछ खुला था। बाजार किस दुःख से बन्द हो ! मछली आई, सब्जी आई, मधुसूदन के जाने के बाद से तो सरकार बाबू खुद ही बाजार जाते हैं···।

भूतनाथ को लगा, एक बड़े महल को छोड़कर उस दिन घर-घर की शायद एक ही अवस्था थी। कम-से-कम भीड़ में लोगों के चेहरे देखकर ऐसा ही लगा। उसे एक और ऐसी ही भीड़ की याद आई। जाड़े के दिन। स्यालदा स्टेशन में स्वामी विवेकानन्द उतरे थे। कुछ ही साल पहले।

भीड़ में से किसी ने कहा—आज प्रेसिडेंट नहीं आ पा रहे हैं, पता है ? आनन्दमोहन बोस बीमार हैं।

दूसरे ने कहा—आ रहे हैं वे, आ ही चले। स्ट्रेचर पर आ रहे हैं। खबर आई है।

और सच ही वे आ पहुँचे। सारी जनता जय-जयकार कर उठी। वंदे मातरम्। बहुत दिनों से बीमार। मुमूर्षु अवस्था। लेकिन यह घड़ी तो उनके जीवन में फिर नहीं आने की। चारों तरफ विशाल भीड़ अपने नेता को सुनने के लिए शान्त बैठी।

भूतनाथ को सब याद नहीं। कुछ-कुछ फिर भी याद आता है। इस दिन कलकत्ते के उस जन-समुद्र में खड़े होकर उसके जी में आया था कि सच ही वह एक जाति के महा-अभ्युदय को अपनी आँखों देख रहा है।

लेटे-लेटे ही आनन्दमोहन वसु ने कहा—आज मेरा वह दिन आ पहुँचा है, जब मुझे दुनिया से विदाई लेकर अनन्त की राह से जाना है : आज आप लोगों को इन आँखों देख लिया—शायद यही मेरा अन्तिम देखना हो···मैं कोई ऋषि नहीं, किसी ऋषि के चरणों की धूल लेने योग्य नहीं, फिर भी जो सबके पिता हैं, जो भारतीय और अंग्रेजों के पिता हैं, उन्हें मैं हृदय से धन्यवाद देता हूँ कि उन्होंने मुझे आज के दिन तक जीवित रखा; जाने के पहले मुझे एक जाति का अभ्युदय देख लेने का सौभाग्य मिला। जिस मिलन-मन्दिर की आज नींव पड़ी, उस बंग-भवन की नींव हम सबके आँसू-धुले गीले हृदय पर पड़ी, इस रक्तपातहीन नये युद्ध-क्षेत्र में फूल बरसाने के लिए ऊपर से देवगण आये हैं···

आनन्दमोहन के पास अपने कृपाणधारी अनुचरों के साथ सिक्ख नेता मौजूद

थे—कुँवरसिंह। बंगाल की तरफ से सुरेन्द्र बनर्जी ने उनकी कलाई पर राखी बाँध दी। बोले—बंगाल और पंजाब का प्रेम-बन्धन अटूट हो।

उनके बाद कवि रवीन्द्रनाथ खडे हुए। उन्होंने घोषणा की—चूँकि सारी जाति के सम्मिलित प्रतिवाद के होते हुए भी सरकार ने वंग-भंग करना तै कर लिया है, इसलिए हम भी प्रतिज्ञा करते है कि इस बँटवारे के दुष्परिणामों को मिटाने के लिए हम सभी बंगाली, अपनी शक्ति से जो भी हो सकता है, सब करेंगे। ईश्वर हमारे सहायक हों।

सुनते-सुनते भूतनाथ का भी कलेजा काँप उठा। एक दिन निवारण से उसने अँग्रेजों के जुल्मो की कहानी सुनी थी। किस तरह दगा से, धोखे से उन्होंने हिन्दुस्तान को हथिया लिया था। एक और आदमी से सुना था—बद्री बाबू से। जिस दिन वैदूर्यमणि को राजा बहादुर का खिताब मिला था, बद्री बाबू ने कहा था राजा बहादुर नही, बडे बाबू राजनाग बने है। और वे हिन्दुस्तान का सारा इतिहास जवानी उगल गए थे।

आज भी कान लगाने से भूतनाथ को सुनाई पडता है—वंदे मातरम्।

दो शब्द। समुद्र-तरंग की लगातार गर्जन जैसे सारे देश के हृदय मे, यही दो शब्द ध्वनित हो उठे। हजारों कंठ मे चढकर ये दो शब्द एक राष्ट्र का मर्म-संगीत बन गए। महाकाल के इंगित से वही दो शब्द एक दिन राष्ट्र की जाग्रत चेतना से अक्षय हो रहे।

सभा खत्म होने पर भूतनाथ बडे महल मे गया और जरा देर के लिए उदास-सा हो उठा। वशी छोटे बाबू के पास था। उससे भेट न हो सकी। अस्तबल मे अपनी साइकिल रखकर वह चोर-कमरे मे पहुँचा। छोटी बहू की याद आ गई। एक राखी बच रही थी। छोटी बहू को तो बाँधी नही गई है।

बरामदा आज अँधेरा था। मँझली बहू शायद अन्दर गिरि के साथ बाघ-गोटी खेल रही हों। और बड़ी बहू साबुन के चौंसठ टुकडे लिए हाथ धोने मे परेशान हों शायद। यहाँ नये समाज की आवाज पहुँच नही पाती। दरवान, डेवढी, सदर, अन्दर महल पार करके यहाँ तक आने मे शायद डर लगता है उसे।

धीरे-धीरे वह छोटी बहू के दरवाजे पर जा खडा हुआ था—धीरे-ही-धीरे आवाज दी थी—छोटी बहू…

अन्दर से जवाब आया—कौन ? भूतनाथ ? आ…

अन्दर जाते कितना डर लग रहा था उसे ! बहुत दिनो से आया नही। जाकर यह देखना पडे कि छोटी बहू के होठों पर वह हँसी नही है, आँखों की वह दीप्ति नही है अब ! स्वप्न मे दीखी छोटी बहू को देखने मे डर लगता। छोटी बहू उसके ध्यान की वस्तु थी—आत्मा का वैभव। उसकी कोई क्षति वह सह नहीं सकता।

लेकिन नहीं। सब-कुछ वैसा ही था। घर की हर चीज, हर बात। यहाँ तक कि छोटी बहू के यशोदादुलाल भी। अलमारी की घाघरावाली मेम खिलौना भी। और छोटी बहू ! उनकी तरफ देखने से पहले जैसी ही आँखें जुड़ा जातीं।

छोटी बहू लेटी थी। बोली—मैं लेकिन तुझ पर नाराज हूँ भूतनाथ !

भूतनाथ धीरे-धीरे आगे बढ़ गया। कहा—तुमने भी तो कभी बुलवा नहीं भेजा।

—मैं यह देख रही थी कि बुलाए बिना तू आता भी है या नहीं।

भूतनाथ बोला—नौकरी कर रहा हूँ इन दिनों। पहले की तरह समय नहीं मिलता।

—वह भी बंशी से सुन चुकी हूँ। वह कह रहा था—साले साहब को बुलाऊँ ? मैंने कहा—जरा तेरे साले साहब का अपना विचार भी तो देख लूँ···एक-एक कर सब तो जा ही रहे हैं, तू ही क्यों रह गया है ? चला जा। छोटे बाबू बीमार—सुना है, नौकरों को समय पर वेतन नहीं मिलता···खूब जानती हूँ, बड़े महल के आड़े वक्त में कोई न रहेगा। तुम लोग तो सुखी कबूतर हो—फिर तू ही क्यों रहेगा—जा।

भूतनाथ का कलेजा टूक होने लगा, रुलाई आने लगी। कहा—तुम भी यही कहोगी बहू ?

छोटी बहू हँसने लगी। बोली—आखिर तुझसे इस घर का नाता भी क्या ! एक दिन अचानक आ पहुँचा था, फिर एक दिन अचानक ही चला जाएगा। तू मेरा है कौन कि तुझे जबर्दस्ती रख सकूँगी ! मेरे न भाई है, न बहन, न माँ, न बाप—न हो तो यही सोचूँगी कि मैं अकेली हूँ। जब तक छोटे बाबू हैं, मैं भी हूँ, फिर जो करें अपने यशोदादुलाल।—कहकर छोटी बहू हँसने लगी। अजीब हँसी।

भूतनाथ ने कहा—अपना ही कौन है ?

—तू मर्द है, तेरे सब हैं।

—नहीं, तुम जानती नहीं छोटी बहू, मेरे कोई नहीं। संसार में अपना कहने को कोई नहीं, एक तुम्हारे सिवा।

अब छोटी बहू उठ बैठी। हीरे का करनफूल झकमका उठा। हाथों की चूड़ियाँ और गहने झनक उठे। बोली—सच ही तू मुझे अपनी-जैसी समझता है ?

भूतनाथ फर्श पर ही बैठ गया। बोला—विश्वास करो, तुम्हारे-जैसा अपना मेरा कोई नहीं। आज अगर तुम लोग मुझे यहाँ से निकाल दो, तो जाने को कोई जगह नहीं।

छोटी बहू उठ बैठी। कहा—आज लेकिन तू मुझे डाँट मत भूतनाथ—आज जरा-सी पीऊँगी।—छोटी बहू अलमारी से बोतल और गिलास निकाल लाई।

—अभी भी पीती हो तुम ?

—हर रोज तो नही पीती। कभी-कभी पिए बिना कष्ट होता है, तब रह नही सकती।

भूतनाथ ने कहा—लेकिन मैंने तो सुना कि छोटे बाबू ने पीना छोड दिया है एकबारगी ?

—उन्होंने तो छोड़ दिया, जिनके लिए मैंने पीना शुरू किया था, उन्होंने छोड़ दिया, लेकिन मुझसे अब नही छोडा जाता।

—लत लग गई ?

गिलास को मुँह में उलटते हुए बोली—हाँ भैया, लगता है, लत ही लग गई। तुझसे क्या छिपाना ? स्वामी को घर लाने के लिए शुरू किया था, शुरू-शुरू कितनी घिन लगती थी, जी मिचलाता था—पर अब पिए बिना नहीं रह सकती। आज तू मना न कर—आज मैं जी भरकर पिऊँगी।

—नही पियो तो न चले ?

छोटी बहू ने इसका कोई जवाब नही दिया। बोतल को हाथ में लेकर एक बार गौर से देखा। थोडी ही-सी बच रही थी। बोली—एक काम कर दोगे भूतनाथ ?

—क्या ?

—और एक बोतल के बिना काम न चलेगा।

—तो मैं क्या करूँ इसका ?

—छोटे बाबू तो अब पीते नही। शराब है नही। जो दो-चार बोतल बच रही थी, आज चुक गई। एक बोतल ला देनी पडेगी।

—पगली तो नही हो गईं ?

छोटी बहू ने कहा—यह पागलपन नही है, मैं बिलकुल दुरुस्त हूँ। उस दिन छोटे बाबू तक ने कहा—बडा हत्यारा नशा है यह, इसे छोड दो छोटी बहू। मर्द तो छोड़ भी सकते हैं, लेकिन कहीं औरत को यह लत लगी तो राम मालिक।

भूतनाथ बुत-सा छोटी बहू को देखता रहा।

छोटी बहू की आँखों से आँसू बहने लगे। बोली—आखिर पति को तो मैंने पाया भूतनाथ, लेकिन इस तरह का पाना किसने चाहा था ?

भूतनाथ ने छोटी बहू को इस तरह से रोते कभी नही देखा था। आँखों से एक-एक कर आँसू की बूँदें टपक रही थीं, मानो हीरे के टुकड़े हों। कहने लगी—कभी-कभी छोटे बाबू के कमरे मे जाती हूँ, बड़ा ही दु:ख होता है देखकर। हिल-डुल नही सकते। पंगु हो गए हैं। वैसा रूप, वैसी तन्दुरुस्ती, वह मन और ऐसी बीमारी—मगर आँख मे एक बूँद भी आँसू नही भूतनाथ। मैंने आँसुओं से उनके पैर डुबो दिए···मैंने अपने यशोदादुलाल से कहा—देवता, मेरे पति को जब लौटा

ही दिया, तो उसका सर्वस्व क्यों छीन लिया प्रभू ? मैंने कौन-सा अपराध किया ? यह कैसा न्याय तुम्हारा ?

मेरी रुलाई देख छोटे बाबू पत्थर-से हो गए। जानते हो, एक बात तक नहीं बोले। बोलने का मुँह नहीं रहा शायद।

भूतनाथ ने पूछा—किसी दिन फिर चलोगी वहाँ ?

—कहाँ भैया ?

—वहीं वहाँ, बरानगर।

छोटी बहू ने कहा—तेरी इच्छा है तो चल, लेकिन अब मैं सारा विश्वास खो बैठी हूँ। मुझे लगता है, यशोदादुलाल की इतनी विनती, इतनी पूजा, इतना व्रत-उपवास, जो भी हो सकता था, सब किया और इतना करने से जब न हुआ तो अब किसी भी बात से न होगा। आदमी पर, देवता पर, यहाँ तक कि अपने ऊपर भी विश्वास नहीं रहा।

भूतनाथ बोला—मेरा कहा मानोगी, अपना सब-कुछ वापस पाओगी, एक शराब की लत को छोड़ दो।

छोटी बहू बोली—पीने का अपने को शौक थोड़े ही है भैया, लेकिन कहा न, अब अपने आप पर भी विश्वास न रहा। बहुत बार सोचा, अब न पीऊँगी, जिसके पति बीमार हों, उसे यह पीना नहीं चाहिए, शपथ खाई, देवता के पैर छूकर कसम खाई, कहाँ निबाह सकी ! मुझसे न हो सकेगा भूतनाथ। आज-भर तो तू ला ही दे, मेरे भैया !

भूतनाथ बोला—खैर, आज ला देता हूँ मैं, लेकिन फिर कभी न कहना।

छोटी बहू बोली—फिर जो कभी पीऊँ तो तू शाप देना भूतनाथ। तू ब्राह्मण है, तेरा शाप बेकार न जाएगा।

भूतनाथ हँसा—तुम्हें शाप दूँगा तो वह मुझे न लगेगा, क्यों ?

छोटी बहू ने कहा—सच कह रही हूँ तुझसे, जीने को अब जी नहीं चाहता। जीकर बहुत देख चुकी, अब देखना है मरने में कितना सुख है।

भूतनाथ बोल उठा—मुझे भी अब जीने की इच्छा नहीं होती।

—तू किस दुःख से मरना चाहता है, मैं तुझे किसी बात की कमी नहीं रहने दूँगी। जो कुछ भी मेरे पास है, मैं सब तुझको दे जाऊँगी। सास अपने सारे ज़ेवर मुझको दे गई हैं, मैं छोटी बहू थी, बड़ी दुलरुआ थी घर की—अपना सब मैं तुझको दे दूँगी।

बोतल की रही-सही गिलास में ढालकर गटक गई छोटी बहू। फिर कहा—अच्छा जा, एक बोतल ला दे—कल से न पीऊँगी—वचन देती हूँ—कहकर उसने भूतनाथ के दोनों पांव छुए और बोली—ले, वचन देती हूँ तुझे।

भूतनाथ ने झट अपने पैर हटा लिए और छोटी बहू की हथेली को दबाकर

कहा—छि:छि', यह क्या किया तुमने'''नशे में आदमी बुद्धि बेच खाता है।

छोटी बहू ने हाथों को सिर से लगाकर कहा—नही रे, तू ब्राह्मण है, इसमें कोई दोष नही।

भूतनाथ बिगड उठा। बोला—अब कभी ऐसा हरगिज़ न करना छोटी बहू, नही तो मैं यहाँ आऊँगा ही नही।

छोटी बहू ने रोना शुरू कर दिया। आँखें बन्द किए चुपचाप बैठी। दोनों गालों पर आँसू की धारा बहने लगी। भूतनाथ उसके दोनों हाथों को तब भी पकड़े हुए था। छोड़ते ही मानो छोटी बहू गिर पड़ेगी। उसका शरीर मानो अवश हो गया हो। छोटी बहू ने कहा—सच ही एक दिन बरानगर चलूँगी भूतनाथ।

भूतनाथ ने पूछा—कब चलोगी?

छोटी बहू बोली—कुछ अच्छे हो लें छोटे बाबू'''अभी बड़ा डर लगता है, जाने कब क्या हो जाए—तमाम दिन वे रोग से कातर होकर पड़े रहते हैं, कैसा तो करता है जी'''शायद पुकारें मुझे'''आजकल बहुत बुलाया करते हैं, बहुत बातें करते हैं।

मैं कहती हूँ—घबराओ नही, चगे हो जाओगे।

वे कहते हैं—शायद चगा न हो सकूँ छोटी बहू।

मैं दिलासा देकर कहती हूँ—चंगा तो तुम्हें होना ही पडेगा, नही तो मेरा पूजा-पाठ, मेरा व्रत-त्यौहार सब झूठा जो होगा।

कभी-कभी मेरे मुँह से महक मिलते ही उनकी नज़र कड़ी हो जाती है, कहते हैं—अभी तक छोड़ नही सकी तुम उसे?

मैं पूछती हूँ—कैसे छोड़ूँ बताओ?

—छोड़ना तो अपने ही मन के जोर से हो सकता है, अपनी इच्छा न हो तो कोई छुड़ा नही सकता।

तब से जाने कितनी कोशिश कर रही हूँ। बार-बार अपने देवता के चरणों में लुट पड़ती हूँ, रोती हूँ, फिर कब तो सो जाती हूँ। इन फूटी आँखों को नींद भी तो आ जाती है। फिर सारी प्रतिज्ञा काफ़ूर हो जाती है—स्वामी, ससार और देवता, सबको भुला बैठती हूँ। तब ऐसा लगता है कि जाने कब से सो नही सकी हूँ, कब से नही पी है और फिर खुद से बोतल को उतार लेती हूँ, पीती हूँ, बाद में पछताती हूँ।

छोटी बहू ने कहा—जा सन्दूक खोलकर रुपया निकाल ले। आज ही आखिरी बार पीऊँगी, कल से नही, वचन देती हूँ।

मगर सन्दूक खोलकर उस दिन भूतनाथ के अचरज की सीमा न रही। उसने एक दिन इस सन्दूक को और खोला था, जब सुविनय बाबू के दिये पाँच सौ रुपये रखने थे। उस दिन सन्दूक में दौलत की बहार देखकर आँखें चौंधिया गई थी

उसकी। कितने गहने, कितनी अशर्फियाँ बिखरी पड़ी थीं। आज सन्दूक बहुत-कुछ खाली था। अँधेरे में ठीक-ठीक दीख नहीं रहा था—बहुत खोजने के बाद भी उसने रुपया न मिला।

भूतनाथ ने कहा—रुपए तो इसमें नहीं हैं।

—नहीं हैं?—कहकर छोटी बहू खुद पलंग पर से उतरी। कहा—सामने ही पड़े हैं रुपये और नहीं मिले तुझे? लेकिन जब निकालने गई तो वह भी अवाक् रह गई। बोली—रुपये हो क्या गए, बता तो! इसी चाँदी के कटोरे में तो रखे रहते थे। बहुत ढूंढ़ा। बोली—खैर, जाने दे रात हो रही है। तू इसे ले जा। और छोटी बहू ने कान से मोती का फूल उतारकर दिया।

—मुक्ता का फूल? इसकी तो बहुत कीमत होगी?

—होने दे, ऐसे बहुत हैं और ज़िन्दा रही तो ऐसे बहुत हो जाएँगे। तू अब ना-नू न कर, जा, देर हो रही है।

उसे हैरत हुई थी, पर छोटी बहू के हुक्म को टालने का साहस न था। आज भी याद है कि सुनार के यहाँ गिरवी रखकर कैसे उसने रुपये लिये थे। बोतल छोटी बहू को पहुँचाकर जब वह लौटा, तो काफ़ी रात हो चुकी थी।

बाहर कदम रखते ही मानो किसी ने टोका—कौन?

मँझले बाबू की-सी आवाज़।

अन्धकार में दुबककर भूतनाथ तुरत चोर-कमरे में भाग गया था। मँझले बाबू तब भी पूछ-ताछ कर रहे थे—कौन भागा उधर? कौन था?

चोर-कमरे में पहुँचने पर भी भूतनाथ का दिल धड़कता रहा। पकड़ा गया होता, तो? कोई देख लेता कहीं! तब जो गति होती, उसकी कल्पना से ही पड़े-पड़े उसका सर्वांग सिहरता रहा। लेकिन किसे पता था कि मँझले बाबू ऐसे वक्त ज़नानखाने में आएँगे! कभी तो आते नहीं ऐसे। उनकी गाड़ी रात के बारह से पहले कभी नहीं लौटी। उनके आते ही घर में हलचल होती, पास-पड़ोस को पता चल जाता। दरबान से लेकर सब नौकर चौकन्ने हो जाते। सिर्फ मँझली बहू अपने कमरे में बेहोश सोती होती।

दूसरे दिन वंशी ने कहा—कल तो आप बाल-बाल बच गए हुजूर!

—मँझले बाबू खोज रहे थे न?

वंशी ने कहा—उन्होंने बुलाकर मुझसे पूछा—कौन गया उधर?

—तुमने क्या कहा?

—मैंने कहा, जी, मैं ही तो था। मगर फिर भी वे कहते रहे, बरामदे को अँधेरा क्यों रखता है, कोई पहचान में नहीं आता?

—तुम्हारी छोटी माँ ने क्या कहा?

वंशी बोला—सुनकर वह बोली, अब से कभी कोई पूछे तो भूतनाथ की

बात कहना, कहना मेरा गुरुभाई है। भाग्य कहिए कि सब सो रहे थे, नहीं तो बड़ा अनर्थ हो जाता। मँझले बाबू यों गम्भीर आदमी हैं, ठीक हैं तो ठीक, बिगड़े तो उन्हें कोई खयाल नहीं रहता।

—लेकिन मँझले बाबू कल इतना सवेरे कैसे लौटे ?

—कल तो वे निकले ही नहीं। भैरव बाबू आए, तो साँझ हो चुकी थी। हासिनी भी आई···सब लौट गए। मँझले बाबू ने किसी से भेंट ही न की। नाच-घर में बैठे-बैठे तम्बाकू पीते रहे। मिज़ाज इधर ठीक नहीं है उनका। छोटे बाबू भी बीमार हैं—घर में चैन नहीं है।

—ऐसा आखिर हुआ क्यों वंशी ?

वंशी ने कहा—झूठ या सच, सुनते हैं, बाबुओं का खान का कारोबार फेल हो गया। उधर खजाने में बकाएदारों की भीड़ नहीं देखते। सुनते हैं, घर बेच देंगे। अब झूठ है कि सच, राम जानें।

—घर बेचेंगे, तो जाएँगे कहाँ इतने-इतने लोग ? दो-चार हैं ?

निराशा में वंशी ने दोनों हथेलियाँ फैला दीं। कहा—नन्हे बाबू तो ससुराल चल देंगे, कहे देता हूँ। शादी के बाद से ही दत्त बाबू ने रात-दिन एक कर रखा है और कभी-कभी नन्हे बाबू भी ससुराल में रात बिताते हैं। इतने दिनों में हूँ, इस घर में ऐसा होते तो नहीं देखा कभी। और कोयले का कारोबार तो नन्हे बाबू ने ही कराया—वही ले डूबा। मँझले बाबू और छोटे बाबू की इच्छा नहीं थी।

—ठीक पता है तुम्हें, कोयले का कारोबार फेल हो गया ?

—लोग तो कहते हैं हुजूर !

—कौन लोग कहते हैं ?

—हम सबसे कुछ छिपा रहता है हुजूर ! बालक बाबू को ज़्यादा आते देखकर ही समझ गए कि कुछ-न-कुछ अनर्थ होगा। अब मँझले बाबू का कबूतर उड़ाना भी बन्द है।

—मँझले बाबू कहाँ जाएँगे ?

—जी, उन्हें क्या फिक्र पड़ी है ? कलकत्ता में उनके ससुर के तीस-तीस मकान हैं, कोई लड़का नहीं, मँझली माँ ही एक लड़की। बस। देख नहीं रहे हैं, सभी बच्चे साल-भर नाना के ही यहाँ रहते हैं। ससुर की सारी जायदाद मँझले बाबू ही तो पाएँगे। चिन्ता तो छोटे बाबू और छोटी माँ के लिए होती है। किसी के छ-पाँच में नहीं, मगर सारा दुःख-तकलीफ उन्हीं पर। उन्हें देखकर आँसू बह आते हैं। क्या ही बाबू थे ! एक कपड़े को दुबारा कभी नहीं पहनते, एक कुरते को दुबारा बदन पर नहीं रखते—और वही आदमी है कि गन्दा तो गन्दा ही सही। कोई खयाल नहीं। पहले चुनन ठीक न होती तो जूतों से मेरी मरम्मत करते। उसी आदमी को देख आइए, महादेव-से पड़े हैं। पैरों पर सिर रखकर कभी रो

पड़ता हूँ मैं—रोक नहीं सकता खुद को।

इन सबसे भूतनाथ को लगता'''अब कै दिन और! लेकिन किसी को लक्ष्य करके वह प्रार्थना करता, वैसा इन आँखों न देखना पड़े—वैसी नौवत आने से पहले ही जिसमें यह घर छोड़कर वह चल दे सके! ओह, बड़ा मर्मभेदी होगा वह!

उस रोज़ एक और घटना इससे भी मार्मिक लगी। सामने से एक गाड़ी आ रही थी। साइकिल से उतरते ही अवाक्-सा हो गया। साँझ का समय। ठीक से अँधेरा भी न हुआ था। फिर भी बगल की दूकानों में बत्ती जल चुकी थी। साइकिल की रोशनी जलानी थी। मोड़ पर पान-बीड़ी की एक दूकान से सलाई लेने को वह रुका।

पीछे से किसी ने आवाज़ दी—साले साहब!

पलटकर शक्ल देख दंग रह गया। वह शक्ल न पहचान सकना ही तो वाजिब था। वृन्दावन की शक्ल बदल गई थी बिलकुल। बाल छँटे। मुँह में पान। साफ़-सुथरा घुटा हुआ चेहरा।

भूतनाथ बोला—तुम? वृन्दावन?

—जी। जा रहा था, रास्ते से, आप पर नजर पड़ी। चुन्नी ने कहा, सज्जन बाबू हैं न?

भूतनाथ ने पूछा—चुन्नी? कहाँ है?

—वह रही।

भूतनाथ ने इधर-उधर ताका। कहीं दिखाई न पड़ी।

—वह, वहाँ। गाड़ी पर।

अब देखा। नीले रंग की मोटर। उसी में बैठी थी।

—चलिए आपको बुला रही है।

साइकिल को टिकाकर भूतनाथ पास गया। दंग रह गया। इतने गहने! मोटर कब खरीदी! वृन्दावन की भी साज-पोशाक खासी।

चुन्नी के हाथ में चाँदी का पनडब्बा। गालों में दबा पान। पीककर हँसती हुई बोली—हमें पहचान रहे हैं सज्जन बाबू?

भूतनाथ कैसा तो सकपका गया! उसने हँसने की चेष्टा भी की तो मुँह कैसा तो बन गया!

—मैं तो चल ही बसी थी सज्जन बाबू, दो महीने अस्पताल में रही, अब कुछ दिन हुए कि उठ सकी हूँ। डॉक्टर ने गंगा-किनारे हवाखोरी के लिए कहा है—वहीं घूमने गई थी। दिन हो गए एक बार आए थे मेरे यहाँ, अब क्या नहीं आ सकते?

भूतनाथ ने कहा—समय ही नहीं मिलता; इस नौकरी में बड़ा खटना पड़ता है।

वृन्दावन ने कहा—पहले मधुसूदन काका या लोचन से बड़े महल की खबर मिल भी जाती थी—अब उसका भी उपाय नहीं। मधुसूदन काका तो अब लौटते नहीं।

—लोचन ने तो बड़े बाज़ार में पान की दूकान कर ली है।

—क्यों न करे, बना लिया और खिसक पड़ा। खैर, उनकी जगह पर आजकल काम कौन करते हैं?

—कोई नहीं। यों ही काम चल रहा है।

वृन्दावन ठठाकर हँस पड़ा—मैंने उसी समय चुन्नी से कहा था—छोटे बाबू कि छोटे बाबू! अब देख लो। दत्त बाबू ठीक ही कहते हैं।

—कौन दत्त बाबू?

—नाटू बाबू। चुन्नी को तो जान के लाले पड़े थे। हज़ारों-हज़ार रुपये तो दवा में उड़ गए। कोई उम्मीद ही नहीं थी। छोटे बाबू तो एक बार देखने तक नहीं आए।

चुन्नी ने बाधा दी। पूछा—छोटे बाबू कैसे हैं?

ओठग कर बैठी थी चुन्नी। शान्तिपुरी साड़ी का जड़ाऊ आँचल छाती पर लोट रहा था। इतनी देर बाद भूतनाथ को लगा—चुन्नी कुछ दुबली दीख रही है। हीरे की कील, पाउडर और गहनों की चमक से पता ही न चला था। पूछा—डॉक्टर ने क्या बताया?

—बताया कि अब अच्छा न होगा।

—कह क्या रहे हैं सज्जन बाबू? कोई खयाल नहीं रखता होगा। छोटी बहू क्या ठीक से सेवा-जतन नहीं करती?

चुन्नी की आँखें करुण हो उठीं। बोली—पहले बीमार होने पर मेरे पास आते ही चंगे हो उठते थे। मगर मैं क्या करूँ, अपने हाथ-पैर बँधे न होते तो जाकर उन्हें लिवा लाती।

वृन्दावन झुंझला उठा—बक-बक रहने दो चुन्नी दत्त···बाबू थे कि बच गई, याद रखना!

चुन्नी ने इस पर कान ही न दिया बोली—रोग केवल दवा से ही नहीं जाता सज्जन बाबू, सेवा-जतन भी चाहिए। बड़े महल में जो सेवा होगी, जानती हूँ—मैं रह चुका हूँ वहाँ। दिन में बहुओं से मिलना मना। बस, जो करे वंशी। उस कम्बख्त को फूटी आँखों भी नहीं देखा चाहती।

वृन्दावन ने कहा—आप ही सोचिए न हुज़ूर, दत्त बाबू थे, तभी तो अपनी चुन्नी को मोटर मिली, गहने मिले। छोटे बाबू के भरोसे होती तो हो चुका था। चलो चुन्नी, दत्त बाबू आ चुके होंगे।

चुन्नी ने कहा—एक काम करेंगे सज्जन बाबू?

—क्या ?

—छोटे बाबू को शराब के साथ पीने के लिए एक दवा दूँगी। वे बराबर उसे पिया करते थे।

भूतनाथ ने कहा—पीना तो उन्होंने छोड़ दिया।

—छोड़ दिया ?

वृन्दावन भी अवाक् रह गया—छोड़ दिया !

दोनों कुछ देर तक बोल न सके। लगा, बड़ी चोट लगी। वृन्दावन बोला—चलो-चलो, दत्त बाबू बैठे-बैठे सिर मार रहे होंगे।

जाने के समय चुन्नी एक शब्द भी न बोली। मानो इस खबर से उसे काठ मार गया हो। धुआँ उड़ाकर गाड़ी निकल गई। उस बार लेकिन चुन्नी ने भूतनाथ को आने का बारम्बार आग्रह किया था। खैर, न कुछ बोली तो ठीक ही हुआ। पिछली बार उसके यहाँ से लौटकर घर जो पहुँचा, यही अचरज है। सारे कलकत्ता शहर का चक्कर काटता रहा था। घर जब पहुँचा, तो रात खत्म हो रही थी। बिरिजसिंह फाटक पर खड़ा-खड़ा ऊँघ रहा था। आहट मिलते ही पूछ बैठा था—कौन है ?

बंशी माथे पर बर्फ थोपकर उसे होश में लाया था। कहा—कैसा अनर्थ कर बैठे थे कहिए भला !

भूतनाथ ने पूछा—वे लोग भाग गए ?

—कौन लोग ?

—जो पीछा करते आ रहे थे, गुण्डे ?

—कोई तो नहीं आया।

भूतनाथ को तब भी ऐसा लग रहा था कि मछुआ बाजार के काफी गुण्डे उसका पीछा करते आ रहे हैं। उनके पैरों की आहट, कानाफूसी, बुदबुदाना—सब सुन रहा था वह। कलेजे में तब भी धड़कन हो रही थी।

इन बातों को ज्यादा दिन न हुए, लेकिन देखते-ही-देखते बड़ा महल क्या हो गया ! क्यों तो किसकी सलाह से खान खरीदी बाबुओं ने ! उस समय मधुसूदन था। एक रोज वह खान देखने के लिए गया था। एक ही दिन बाद लौटा। बोला—अभी कुछ भी नहीं हुआ है साले साहब; ऑफिस खुला है, नाप-जोख चल रही है, नल से पानी निकालकर फेंका जा रहा है और हजारों-हजार मजूरे माटी कोड़ रहे हैं— चारों तरफ खुला मैदान, धुआँ और धूल।

—धुआँ क्यों ?

—कच्चा कोयला जला रहे हैं, उसीसे रसोई बनेगी।

—तुम लोगों ने खाया-पीया कहाँ ?

—बैहार में एक ओर बैठकर पका लिया। एक ही दिन तो था। अ

वहाँ बडी देर है, क्रेन बैठेगा, इंजन चलेगा—कुली लोग मिट्टी के अन्दर पैठेंगे··· रात-दिन काम चलेगा।

मधुसूदन बाबुओं की ज़मींदारी पर गया था, कोलीयरी से भी हो आया। ऐसी खान ठप्प हो जाएगी यह कौन जानता था! जाने कितने लाख रुपए पानी में गए, फूटी पाई भी घर नही पहुँची।

सोचते-सोचते काफ़ी देर हो गई। अचानक सरकार बाबू बोल उठे—आ गए, बाबू आ गए।

—कहाँ?

—गाड़ी की आवाज़ सुन नही रहे हैं?

सच ही रूपचन्द बाबू आ पहुँचे। गाडी से उतरते ही बोले—भूतनाथ बाबू कहाँ हैं?

—जी, मुझे कुछ कह रहे थे?

रूपचन्द बाबू रुक गए। बोले—आप ही को ढूँढ रहा था। आपने सुना, सुविनय बाबू बीमार हैं।

—बीमार हैं? जी, मैं तो कल भी गया था वहाँ। कुछ बुरा तो न दीखा।

—अभी-अभी खबर मिली। हालत नाजुक है। समाज के सभी वहाँ गए। मैं भी जा रहा हूँ। आप चलेंगे क्या?

सुविनय बाबू की बीमारी की बात सुनते ही भूतनाथ को जवा की याद हो आई। वह बोला—जी, मुझे तो थोडी देर होगी। वाउचर समझाकर जाऊँगा।

—अच्छा, तो मैं चलता हूँ।

रूपचन्द बाबू चले गए। भूतनाथ को कैसा तो डर लगने लगा। महज़ कुछ दिन तो रह गए थे जवा की शादी के। तैयारियाँ हो चुकी थी। निमन्त्रण-पत्र तैयार। ऐसे में सुविनय बाबू पड गए बीमार! वाउचरों के लेखा-जोखा में काफी देर हो गई। रुपये-पैसे का मामला। जल्दबाजी से काम नही चलता।

सरकार बाबू बोले—अरे साहब, आप लोगों को क्या है, दफ्तर से निकले कि छुट्टी। मगर मुझे तो करम कूटना है। सब मिला लूँगा, तब कहीं छुट्टी होगी। कभी-कभी तो घर पहुँचकर भी रात को नींद नही आती।

लेकिन भूतनाथ को उतना सोचने का वक्त कहाँ था! बार-बार जवा की याद हो आती थी। भले-भले सुविनय बाबू चंगे हो जाएँ, तो ब्याह निर्विघ्न हो जाए। जवा के ब्याह मे भूतनाथ की ही क्या कुछ कम ज़िम्मेदारी है? बाहर के सारे काम तो उसे ही करने हैं।

सुविनय बाबू ने कहा था—सारी जिम्मेदारी तुम्हें ही लेनी पडेगी भूतनाथ बाबू!

जवा ने कह रखा था—छुट्टी की आप फ़िक्र न करें, पिताजी हरचन्द बाबू से कह देंगे।

सच ही तो। छुट्टी के लिए उसे भी फ़िक्र न थी। सुविनय बाबू की सहज बात पर उसकी तनख्वाह बारह रुपए हो गई थी। बाकी सभी बिल-क्लर्कों को सात ही रुपए मिलते हैं।

सुविनय बाबू के घर शादी यही पहली बार है। बड़े-बड़े अरमान हैं। जलसे तो उन्होंने कई बार किये। माघ का उत्सव हर साल मनाया जाता है। जवा ही सब-कुछ करती-धरती है। समाज का एक-एक आदमी उस दिन आता है। इतने-इतने लोगों के खान-पान का प्रबन्ध, प्रार्थना। कितनी बार भूतनाथ सुबह से शाम तक वहाँ काम करता रहा है। कितने जवान, कितनी तरुणियाँ आतीं। बीस-बीस, बाईस-बाईस साल की लड़की और सर पर घूंघट नहीं। जरा भी संकोच नहीं। नजर मिलाकर उनसे बातें करते बल्कि भूतनाथ को संकोच होता। कीमती साड़ियाँ दामी ब्लाउज। माथे में सिंदूर नहीं। उस रोज बड़ा वाला कमरा फूल-पत्तों से सजाया जाता। उन दिनों फलहारी पाठक था। मोहिनी-सिंदूर का कार्यालय उस दिन बन्द रहा करता। नौकर-दरबानों के साथ घर सजाने का भार भूतनाथ लिया करता। सबके लिए खिचड़ी पकती। गीत गाए जाते। कई गीतों की कड़ियाँ तो उसे आज भी याद हैं।

इस बार भी जवा की शादी के बाद माघ-उत्सव होने की बात थी। लेकिन उनकी बीमारी से सब गड़बड़ हो गया। अब शादी का ही जानें क्या हो! पिछली बार भी सुविनय बाबू बीमार पड़ गए थे और ठीक होने में दिन लगे थे। कहीं अबकी भी वैसा ही हो, तो शादी का दिन जरूर टल जाएगा।

कहाँ भवानीपुर और कहाँ बार-शिमले!

साइकिल से जाते-जाते कितनी ही बातें याद आने लगीं। रूपचन्द बाबू अब पहुँच गए होंगे। उस बार सुपवित्र गया था डॉक्टर को बुलाने, लेकिन करना सब-कुछ पड़ा था भूतनाथ को ही। अबकी भी उसे ही करना होगा! अपना सगा कहने को उन्हें है भी कौन! एक है सुपवित्र। वह भी निरीह-सा। ज्यादा बोलता नहीं। चुपचाप सुना करता है। काम करने का आग्रह तो है, पर है बड़ा शर्मीला। इतने दिनों के इन्तजार के बाद यह घड़ी आई तो बाधा!

तंग गलियों में कहीं-कहीं साइकिल से उतर जाना पड़ता। दोनों तरफ़ पनाले—बीच में टिमटिमाती बत्ती जलाए कोई बैलगाड़ी खड़ी। इस तरफ़ तबले की दुकान—पास में लटक रही हैं हिरण, भालू, बाघ की खाल। रास्ते पर ही अँगीठी सुलगाकर कोई खाना पकाने बैठ गया है। इतनी रात हो गई, मगर नल के पास भीड़ नहीं घटी। कहीं-कहीं बूढ़े लैम्प-पोस्ट के नीचे ही शतरंज बिछाकर जुट गए थे। अगल-बगल उनकी हार-जीत देखने वालों का मजमा। रास्ते में चलना

मुश्किल। साइकिल की घण्टी बजाते हुए सँभलकर चलना पड़ता।

किले की तोप छूटी। खैर, रात ज्यादा नहीं। लेकिन अभी भी बड़ी दूर है। पैडिल मारते-मारते पाँव दुखने लगे। यही साइकिल जब शुरू-शुरू चली थी, टक लगाए देखा करते थे लोग। दंग भी रह जाते। दो चक्कों की गाड़ी···गिरती कैसे नहीं। सर्र-सर्र निकलती। लोग किनारे हो जाते। किसी से लड़ जाए, दबा बैठे तो खैर नहीं। किड़िंग-किड़िंग बजती घण्टी। हाथ के काम छोड़कर घर के औरत-बच्चे खिड़की पर जा खड़े होते। अब वह दिन न रहा। कोई पलटकर ताकता भी नहीं अब।

वह बाजार के पास ही स्यालदा का मोड़। यहाँ रोशनी है। भीड़-भाड़ भी ज्यादा। पहली बार जब भूतनाथ कलकत्ता उतरा था तो इस सड़क पर ठोकर खाकर गिर पड़ा था। तब हरीमन रोड नहीं बना था। इस पर भीड़ बहुत ज्यादा रहती थी। शहर के ही चारों तरफ़ उस समय कितने पोखरे थे। एकाएक सब भर दिये गये। दुनिया-भर का कचरा उनमें डाला गया। मारे बू बगल से जाना मुश्किल। पंखों की डोरियों पर मक्खियाँ बैठतीं। डोरी काली हो जाती। चैत-बैशाख में हवा के झोकों से वही कचरे उड़-उड़कर घर-आँगन में पहुँच जाते।

बार-शिमले के रास्ते पर वह साइकिल से उतर पड़ा। इस रास्ते पर अभी रोशनी नहीं आई है। अँधेरे में कुछ सूझता नहीं। फिर भी जरा दूर जाते ही उसे लगा, जबा के दरवाजे पर कुछ बग्घियाँ खड़ी हैं। सुविनय बाबू की बीमारी सुनकर लोग शायद आये हैं।

दरवाजा खुला ही था। अन्दर कैसा तो एक जमा-जमा-सा भाव। अँधेरी सीढ़ी पर चढ़ते ही दवा की गन्ध लगी। तीखी गन्ध। आजकल बड़े महल में छोटे बाबू के कमरे के पास भी ऐसी ही गन्ध आती है। उपासना-घर में फर्श पर बहुत-से लोग थे। सबके दाढ़ी। सभी उम्र वाले आदमी। धीमे-धीमे बोल रहे थे। रूपचाँद बाबू भी दीखे। किसी डॉक्टर से बात कर रहे थे।

भूतनाथ ने सुविनय बाबू के कमरे में झाँका।

उनके सिरहाने जबा बैठी थी। उसके पास ही बैठा था सुपवित्र। वह भी आज उद्विग्न-सा था। एक डॉक्टर सुविनय बाबू की नाड़ी देख रहे थे। वे बिस्तर पर पड़े थे। आँखें मुँदी थी।

पाँव दबाकर भूतनाथ अन्दर गया और एक किनारे खड़ा हो गया। जबा ने उसकी तरफ ताका। सुविनय ने भी देखा। मगर किसी के मुँह से कोई बात न निकली।

मौत!

मौत को भूतनाथ आमने-सामने देख चुका है। कठोर, सफ़ेद, साफ़। मौत को उसने इतना साफ देखा है कि एक बार देख लेने पर पहचानने में भूल नहीं हो

सकती। उसकी पुरानी शक्ल पहचान में आ जाती है। चीन्ही जाती है पैरों की आहट। पहले तो अँधेरे की धुँधली आवहवा में हलचल-सी होती है, फिर अँधेरा गाढ़ा हो उठता है। उसी गहरे अन्धकार में साफ़ झलकने लगती है उसकी शक्ल। धीरे-धीरे हिंसक पशु-जैसी सतर्कता से वह उतरती है यहाँ के अवसाद-भरे घर में। चारों तरफ सजग आँखों देख लेती है और सेवा में लगे हुए लोगों के मस्तिष्क के कोप-कोप में ज़हर भर देती है। नजर को अन्धा कर देती है। अच्छे दिमाग़ को ख़राब किये देती है। रोते-रोते जब लोगों की आँखें धुँधली हो जाती हैं, विचार बिखर जाते हैं, तो मौका पाकर वह पास आ बैठती है। छिपकर मरणासन्न के बदन पर हाथ फेर देती है। हिमशीतल होता है वह स्पर्श! सारा शरीर धीरे-धीरे बर्फ हो आता है। गला रुँधता आता है। रोगी बोलने की कोशिश करता है, आँख खोलने की चेष्टा करता है। दोनों हाथ फैलाकर जकड़ लेना चाहता है। उसकी कोशिशों की सीमा नहीं रहती। बारम्बार निगाहें लक्ष्यहीन हो पड़ती हैं। अनुभूति के तीव्र आवेग से वह चीखने की कोशिश भी करता है। लेकिन सारी कोशिशें हो जाती हैं बेकार। सारी चेतना पड़ जाती है मन्द।

मौत की पहली अभिज्ञता उसे अपने पाले हुए नेवले से हुई। बेबोल जानवर। लेकिन अन्तिम क्षणों में उसने भी मानो बोलने की चेष्टा की थी। साफ़ भाषा में उसने अपनी तकलीफ़ बतानी चाही थी। दाँतों से काटकर उसने अपना अन्तिम प्यार जताना चाहा था। लेकिन धीरे-धीरे सुस्त पड़ गया। ज़रा-सी शक्ति की कमी से आदमी से उसका निवेदन करना व्यर्थ हो गया।

उसके बाद फूफी।

पहले ही दिन से हर पल वह मौत के पैरों की आहट सुनता रहा। हर पल के श्वास-प्रश्वास में उसे मृत्यु का परोक्ष स्पर्श मिलता रहा। कैसे शिरा-उपशिराएं शिथिल हो जाती हैं, कैसे बुझ जाती है जोत आँख की, किस तरह इस संसार की सारी चेतना, सारी अनुभूति लुप्त हो जाती है, इसका लेखा उसे मुखस्थ है। ठीक उस नेवले ही की तरह एक दिन फूफी का बदन भी उसके हाथों पर ठण्डा और सख्त हो उठा। शायद उसकी अनुभूति आज भी इन हाथों के स्पर्श में खोजने पर मिल सकती है। आदमी की सारी कोशिशें, सारा आवेदन-निवेदन, सम्पूर्ण प्यार कभी किस तरह मूल्यहीन हो उठता है, यह भूतनाथ को जबानी याद है।

इसके सिवाय भी एक अभिज्ञता है। वह लेकिन अभिज्ञता नहीं, अनुभूति है।

वह है उसके पिता की मृत्यु! मृत्यु नहीं, मृत्यु का संवाद। मौत की ख़बर भी मनुष्य के मन को इस तरह जड़ बना सकती है, यह भी एक अजीब अनुभूति है। उस रोज उसे लगा था, कलेजा जैसे खाली हो गया हो, सारा आवेग मानो ठण्डा पड़ गया हो, निःशेष हो गया हो जैसे सारा जीवन।

आज सुविनय बाबू की रोगशय्या के पास खड़े होकर, लोग, बर्फ और दवा की तीखी बू के बीच भी पुरानी स्मृतियाँ लौट आईं। वही कठोर, साफ और बेरहम मौत! अभियोगहीन, प्रतिकारहीन एक अवश्यम्भावी दुर्घटना!

धीरे-धीरे रात ज्यादा हो गई। एक-एक कर सभी जाने कब चले गये। अपने अन्तिम कर्तव्य को चुराकर डॉक्टर भी कुछ देर के लिए चला गया। एक ओर जबा और सुपवित्र पत्थर की मूरत-जैसे बैठे। भूतनाथ माथे पर बर्फ डाल रहा था। हाथ से तो वह काम करता जा रहा था, लेकिन जाने कहाँ अँधेरी रात में एक अशरीरी के आविर्भाव की आशंका से धडक रही थी उसकी छाती। गफलत हुई नहीं कि वह आई! पल-भर मे सारी कोशिशो को बेकार करके चल देगी!

अचानक सुविनय बाबू का ज्ञान लौटा। बोल उठे—कौन? बड़ी ही धीमी आवाज।

मुँह के पास मुँह ले जाकर भूतनाथ बोला—मैं हूँ भूतनाथ।

—जबा, जबा कहाँ है?

—बाबूजी! जबा की रुआँसी आवाज बड़ी करुण लगी। भूतनाथ उठ पड़ा। जबा उनके सामने जाकर बैठी।

—बेटी!—सुविनय बाबू ने बाकी दोनो को भी एक बार देखा।

—कुछ कहना है बाबूजी?

फिर भी मुमूर्षु दृष्टि मे उन्होने दुविधा दिखाई। आँखें एक बार बन्द कर ली। फिर खोली। सुपवित्र की तरफ ताका। आँखो से स्नेह मानो छलका पड़ रहा था। कुछ बोलने की चेष्टा करते हुए रुक-से गए।

जबा ने कान के पास मुँह ले जाकर पूछा—मुझे कुछ कहेगे? उन्होने मानो अपराधी की नाईं एक बार जबा की ओर देखा—बेटी!

—तकलीफ हो रही है?

—नही।—उनकी दोनो आँखे आँसू मे भर आईं। अब की भी कुछ कहते-कहते रुक गये। सुपवित्र की ओर देखा।

सुपवित्र ने भी झुककर पूछा—मुझसे कुछ कहना है? सुविनय बाबू ने हाथ हिलाया—नही।

इशारे से भूतनाथ ने सुपवित्र को बुलाया। जबा से बोला—हम लोग बगल के कमरे में है। जरूरत हो तो बुला लेना।

सुविनय बाबू ने अब जैसे चैन महसूस की। निगाह कुछ सहज हो आई। आँखो से वे भूतनाथ और सुपवित्र का अनुसरण करते रहे।

जबा तब भी एकटक उन्हे देख रही थी।

भली तरह भोर नही हुई थी। बार-शिमले की कम आबादीवाले मुहल्ले में

तब भी घना अँधेरा था। केवल खिड़की से पूर्व की तरफ़ लग रहा था कि जहाँ आसमान ने माटी को छू लिया है, वहाँ अँधेरा कुछ पिघल-सा आया है। भूतनाथ फिर कान लगाकर सुनने लगा कि सुविनय बाबू के कमरे से कोई आवाज़, चेतना का कोई आलोड़न सुनाई पड़ता है या नहीं।

वह जबा के कमरे की एक-एक चीज़ को ग़ौर से देखने लगा। उसकी मेज़ पर रखी थी सुपवित्र की तसवीर। एक-एक किताब साफ़-सुथरी और ढंग से सजी थी। अलगनी पर उसकी साड़ियाँ तक सहेजकर रखी थीं। कहीं भी ज़रा अपव्यय नहीं। तमाम रात बैठे-बैठे उसे थकावट हो आई। उसने एक बार सुपवित्र की ओर देखा। जबा के बिस्तर पर, जबा के ही तकिए पर सिर रखे वह तब से सो रहा था। सोने पर भी सुपवित्र जगा हुआ-सा ही कैसा तो असहाय दीखता है। कैसा निश्चिन्त आदमी! ऐसी परिस्थिति में भी सो गया!

घड़ी में घंटा कटता ही जा रहा था। भूतनाथ को लगा, जाने कब रात खत्म होगी। इन्तज़ार के आलस में वह मानो बेचैन हो उठा।

सुबह अचानक जबा आई।

दरवाज़ा खुला ही था। उसकी शक्ल देख भूतनाथ मानो चौंक उठा। इस जबा को पहचानना मुश्किल था। सारी रात जगने से सहसा उसकी उमर दस साल बढ़ गई थी मानो।

अधीर आग्रह लिये भूतनाथ ने पूछा—पिताजी अब कैसे हैं?

जबा ने लेकिन इस सवाल का जवाब नहीं दिया। बोली—डॉक्टर बाबू आ गए—लेकिन सुपवित्र! कहाँ है वह?

—सो रहे हैं।

—आप एक काम कीजिए भूतनाथ बाबू, सुपवित्र को उसके घर पहुँचा आइए।

—घर नहीं गये तो क्या, रहें। सो रहे हैं। उनकी माँ से तो कह आया हूँ।

—उँह। आप उसे जगाइए।

उसकी आवाज़ से भूतनाथ को भी कैसा डर-सा लगा। जबा कभी ऐसे सुर में तो नहीं बोलती! रात ऐसी बात क्या हो गई! अकेले में सुविनय बाबू ने कहना क्या चाहा था!

भूतनाथ ने फिर एक बार विनती की—जगाने से लाभ क्या जबा···सो रहे हैं, सोएँ···ख़ामख़ाह।

जबा और भी रूखी और कठोर हो उठी। बोली—जो कह रही हूँ, करेंगे कि नहीं आप?

भूतनाथ विनय करते हुए खाट से उतर पड़ा। कहा—उनकी सेहत तो ख़राब नहीं हो रही है, फिर ऐसे वक्त वे ही क्या तुम्हें अकेली छोड़कर जाना

चाहेंगे ?

जवा ने कहा—इतनी वातो का मुझे समय नही है भूतनाथ वावू, वह न भी चाहे, तो भी उसे जाना ही पडेगा।

—क्यों, ऐसा क्यों कह रही हो तुम ? उसका भी तो अपना फर्ज है।

जवा गला फाडकर चीखने को हुई, लेकिन रुलाई से गला रुँध गया उसका। बोली—नही, उसका कोई फर्ज नही।

—ऐसा क्या ?

जवा सुविनय वावू के कमरे की तरफ चली जा रही थी, लेकिन उलटकर खड़ी हो गई। बोली—आप इस समय तर्क न करें। मुझे सब गडवड लग रहा है—मेरे लिए उसका अब कोई कर्तव्य नही और मेरा भी उससे मिलना-जुलना ठीक नही।

—ऐसा क्यो ?

जवा पागल-सी तडप उठी। बोली—भूतनाथ बावू, मेहरबानी करके उसे घर छोड आइए। कहिएगा—वह अब कभी यहाँ न आये, कभी नही।

सुनकर भूतनाथ को काठ मार गया। जवा पगली-सी अपने पिता के कमरे मे घुस गई।

पीछे-पीछे भूतनाथ भी गया। अचानक उसका सारा हिसाव ही गडबड हो गया। जवा के चेहरे पर एक अस्वाभाविक कठिनता। लेकिन आँखो मे वही सजलता। मानो अपने-आपको वह बडी मुश्किल से ज़ब्त किए हो।

सुविनय वावू के कमरे मे एक नि.शब्द भयावनापना। डॉक्टर उनके मुँह की तरफ देखते हुए चुपचाप वैठे। उस चरम क्षण के लिए उद्ग्रीव-से। मानो तुरत अवश्यम्भावी पदसचार शुरु होगा। छाया-छाया भोर। नीला अँधेरा। भूतनाथ ने उन्मुख आग्रह से डॉक्टर की तरफ ताका, लेकिन उस चेहरे पर विरक्ति न थी, व्यतिक्रम न था कोई।

और सुविनय वावू ! उनकी मुँदी आँखे मानो इस दुनिया से परे किसी और लोक मे लीन थी। वहाँ जीवन नही, मृत्यु नही, है एक अवाङ् मानसगोचर अलौकिक स्वाद ! उनके चेहरे पर एक बारीक रेखा थी हँसी की।

खड़े-खड़े भूतनाथ को बहुत-सी बातें याद आने लगी।

एक दिन सुविनय वावू ने कहा था—आत्मा में परमात्मा, जगत् के बीच जगदीश्वर को पाना चाहिए। वात यह बहुत सहज है भूतनाथ वावू, लेकिन इससे कठिन भी कोई वात नही। जैसे एक सहज बात है—स्वार्थ का त्याग करके—सभी भूतों पर दया बढाकर, हृदय से वासना को निकाल फेंकने से ही मनुष्य की मुक्ति होती है—इसी सहज बात के लिए एक राजकुमार को राज-पाट छोडकर दर-दर की खाक छाननी पड़ी।

और एक दिन माघोत्सव के अन्त में कहा था—नदी जब चलती है, तो दोनों तटों से केवल पाती ही चलती है—'पाना' ही होती है साधना उसकी, लेकिन जब समुद्र से जा मिलती है, तब आती है उसकी देने की बारी—देना ही हो जाता है उसका ध्यान। अपना सब-कुछ देते चलने का यह जो अन्तहीन दान है, यही तो पूर्णतया पाना है। इसमें रिक्त होने पर भी क्षति नहीं होती। अपना क्षय करके ही अक्षय की उपलब्धि होती है। संसार में इसीलिए क्षय है। मृत्यु है, इसीलिए हम अमृत को जानते हैं, क्षय है, इसीलिए अक्षय को समझ पाते हैं।

आज इसीलिए मौत के सामने पड़कर भी उनके चेहरे पर से हँसी की रेखा नहीं मिटी।

भूतनाथ ने जवा की ओर देखा। वह चाँद के एक टुकड़े-सी दीख रही थी। तेज न था, मगर वही स्निग्धता, वैसी ही छाया। शीतल। चेहरे पर बिखरी उदासी। एक ही जगह एक-सी बैठी उसने रात बिताई। भूतनाथ ने समीप जाकर कहा—तुम जाकर आराम कर लो जवा, मैं तो हूँ ही।

उसने कोई जवाब नहीं दिया।

बाहर पूर्व आसमान साफ़ होता आ रहा था। भूतनाथ दुतल्ले के बरामदे पर ही कुछ देर खड़ा रहा। आज सुबह से ही जवा की गिरस्ती ठप पड़ी थी। कहीं भी शब्द का कोई आडम्बर नहीं। मौत की छाया यहाँ घनी हो आई थी, इसीलिए सारी दुनिया मानो मुरझाई पड़ी थी—सारी सृष्टि बिखरी-बिखरी।

बगल के कमरे में सुपवित्र अब भी सो रहा था।

भूतनाथ ने पास पहुँचकर पुकारा—सुपवित्र बाबू, सुपवित्र बाबू—

अनाड़ी शिशु-जैसा वह निर्भय सो रहा था। पुकारने से फड़फड़ाकर उठ बैठा। चारों तरफ़ देखने पर परिस्थिति याद आ गई। आँखें पोंछते हुए पूछा—बाबूजी अभी कैसे हैं?

भूतनाथ ने कहा—डॉक्टर बाबू आये हैं—हालत वैसी ही है।

सुपवित्र मन-ही-मन जैसे लजाया। सब-कुछ पहने-ओढ़े ही सो पड़ा था। बिछौने पर नज़र पड़ते ही पूछा—और···

—जवा को पूछ रहे हैं? वह भी वहीं है।

—क्या बजे?

थोड़ी देर पहले जवा जो कह गई थी, वह बात कैसे कहे, कहे भी या नहीं, इसी चिन्ता में भूतनाथ अनमना-सा हो पड़ा था। इतने में सुपवित्र ने कपड़े सँभाल लिए। जवा की कंघी से वह बाल सँभाल रहा था। एक दिन इस घर पर वह अधिकार करेगा। आज भी जो बिराना है, दो दिन के बाद ही वह अंतरंग हो जाएगा।

सुपवित्र ने कहा—आपने मुझे पहले ही क्यों न जगा दिया भूतनाथ बाबू?

भूतनाथ के जवाब से पहले ही जवा अन्दर आई।

भूतनाथ भी जवा को देखकर ठीक से पहचान नही सका। सोए-सोए भी क्या कोई चल सकता है! लगा, जवा का लम्बा शरीर अभी-अभी अवश हो पड़ेगा। छाया-शरीर ही मानो। रक्त-मांसहीन, स्पर्श-गन्ध-रंगहीन एक विवर्णता!

जवा ने कहा—भूतनाथ बाबू—

उसका कंठ-स्वर सुन सुपवित्र भी उसकी ओर मुड़ा। पूछा—बाबूजी कैसे हैं?

वह छाया-शरीर अब मानो जरा हिली। बोली—सुपवित्र, तुम अभी तक गए नही हो?

इस सवाल से सुपवित्र मानो कुछ विचलित हुआ। क्या जवाब दे, सोच न सका।

जवा ही फिर बोली—अब तुम घर चले जाओ सुपवित्र!

—घर जाऊँ?—वह ऐसे सवाल के लिए बिलकुल तैयार न था।

—हाँ, अपने घर जाओ।

—लेकिन मुझे तो कोई तकलीफ नही है?

—न हो तकलीफ, तुम घर जाओ—फिर कभी यहाँ न आना। बने तो मुझे भूलने की कोशिश करना। भूतनाथ बाबू, आप आइए—बाबूजी न रहे!

भूतनाथ को आज भी स्पष्ट याद है। बाबूजी! बड़े महल के खंडहरों के साथ ही यह भी क्या भूलने की बात है! जो जीवन से लिपटे-चिपटे हैं, उन्हें भूलें तो अपने को भी भूलना पड़ता है जो! उस रोज सुबह के धुँधलके में जवा की वह स्पष्ट उक्ति मानो भूतनाथ को आज भी सुनाई पड़ती है।

बाबूजी न रहे!

सच ही आज बहुतेरे नही रहे। तब के लोगों मे से आज बहुतेरे नही है। जाने कहाँ हवा मे खो गए! कहाँ है ननीलाल! कहाँ वंशी! कहाँ चिन्ता! कहाँ गये नन्हे बाबू! कहाँ गए विधु सरकार, इब्राहिम और बद्री बाबू! और कहाँ तो गई छोटी बहू! बड़े महल से भूतनाथ के जीवन-परिच्छेद मे जो यति आई थी, उसकी समाप्ति हुई जवा के साथ-साथ।

आज भी उस रास्ते से गुजरते हुए ऊपर की ओर ताकने से दिखाई पड़ता है। दिखाई पडता है एक और ही रूप। एक नया ही रूप लिए समूचा मकान दोनों रास्तों के मोड़ पर खड़ा है। ऊपर की खिड़की खुली रहती है। अन्दर जलती रहती है रोशनी। बीच-बीच में तिरती आती हैं गीत की कड़ियाँ। अन्दर आर्गन बजाकर शायद जवा ही की लड़की गाती है। वैसी ही मीठी आवाज। रुक जाने को जी

चाहता है। जी चाहता है, ज़रा देर सुने। अन्दर घुसने का लोभ हो आता है। चलते-चलते गीत के शब्द मानो उसका पीछा करते हैं—

जीवन के कुंज में तुम्हारी ही रागिनी सदा गुंजित हो
हृदय के कमल पर सदा तुम्हारा ही आसन सज्जित हो
तुम्हारे नन्दन-गन्ध-नंदित सुन्दर भुवन में घूमा करूँ
तुम्हारे चरणों की रेणु मलकर यह तन सदा रंजित हो।

जवा की बिटिया ने भी ठीक जवा-सा ही गाना सीखा है। और सुपवित्र ? यह चर्चा अभी रहे।

उस दिन बड़े महल में लौटा तो वहाँ भी एक परिवर्तन देख वह अवाक् रह गया। वहाँ भी मिस्त्रियों का मेला। आँगन में ईंटों का ढेर। अस्तबल में चूना-बालू का पहाड़। चारों तरफ कूड़ा-कतवार। नाचघर से बालक बाबू वकील कागज-पत्तर लेकर बाहर निकले। अलाउद्दीन के दीये-सा इन्हीं कै दिनों में बड़े महल में गज़ब का परिवर्तन हो गया।

वंशी उसके पास आया—कै दिनों तक कहाँ ग़ायब रहे आप ?

आँगन के बीचों-बीच वहाँ से यहाँ तक दीवार खींची जा रही थी। यहाँ-वहाँ सूता तना था। पन्द्रह इंच मोटी दीवार। बीच में छः फुट का दरवाजा। दासू जमादार के कमरे की तरफ भी लकीर खींची गई थी। वहाँ भी बीच में दीवार खड़ी हो रही थी। चारों तरफ हलचल।

वंशी ने कहा—आपस में बँटवारा हो रहा है साले साहब। हाँडी अलग हो चुकी है।

इन्हीं कै दिनों में इतना परिवर्तन हो गया। माथे पर ईंटों का बोझ लिये कुली चिल्लाते—होशियार—और दूसरे ही क्षण मचान पर ईंट गिरने की आवाज़ होती है। उस छोर पर एक मिस्त्री सूता पकड़ता, दूसरे छोर पर दूसरा उसे ताने रहता। ओलन से जाँच-परख करते—टेढ़ी-मेढ़ी न रह जाए दीवार। ऊँची दीवार होगी। उधर के लोग इधर न देख सकें। अस्तबल के भी तीन हिस्से हो गए। एक हिरण्यमणि का, एक कौस्तुभमणि का और एक चूड़ामणि का।

वंशी बोला—सब बदल गया हुज़ूर ! बड़े महल में अब जी नहीं टिकता।

भूतनाथ ने पूछा—छोटी बहू का क्या हाल है वंशी ?

—जी, अच्छा नहीं है हुज़ूर !

—एक बार उनसे मिलना चाहता था। बहुत दिनों से भेंट नहीं हुई है।

वंशी के चेहरे पर कैसी तो दुविधा फूट उठी।

भूतनाथ ने कहा—तू उनसे कह रखना, शाम को आऊँगा।

वंशी बोला—भेंट नहीं करें, तो क्या ?

—क्यों, तबीयत ठीक नहीं है ?

वंशी बोला—जी, तबीयत तो उनकी कई दिनों से खराब चल रही है, कल तो एकबारगी बदहोश हो गईं। अब गईं, तब गईं—ऐसी दशा।

—क्यों ?—भूतनाथ सिहर उठा।

—जी, कई दिनों से कुछ खाती-पीती नहीं और उसी खाली पेट में वह जहर। कब तक बर्दाश्त हो भला। रात चिन्ता मुझे बुलाने आई। गया आखिर। बर्फ नहीं थी। बेनी से मँगा ली बर्फ। माथे पर दिया। मगर उससे क्या होता है ! अन्त में पिछली बार जो किया था, वही किया। इमली घोलकर पिला दी जबर-दस्ती। तब कहीं सोईं। नहीं तो पूछिए मत, जो तड़प रही थीं। आँखें उलट गई थीं।

—बहूजी को तुम वह सब देते क्यों हो ?

वंशी ने कहा—मैं क्यों देने लगा भला ! मुझसे लाने को कहती हैं तो मैं 'ना' कह देता हूँ। इसी के लिए मुझे क्या नहीं सुनातीं ! रुपया नहीं रहता है, तो सोने की चूड़ी, कान की बाली खोलकर देने लगती हैं। इस तरह उन्होंने कितना जो गँवाया, क्या बताऊँ ! आखिर यह सब आता कहाँ से है, आप ही कहिए ?

भूतनाथ ने पूछा—छोटे बाबू कुछ नहीं कहते ?

—जी, खुद तो उन्होंने छोड़ दिया है। सबको बारहा मना कर दिया है कि छोटी माँ को कोई शराब न दिया करे। आपे में रहती है तो छोटी माँ भी कहती हैं, माँगूँ भी तो मुझे न दिया करना। लेकिन कभी-कभी ऐसा कर बैठती है न ! दोनों हाथ पकड़कर गिड़गिड़ाने लगती हैं—बस, एक बोतल ला दे। फिर कभी न कहूँगी। होश में कितनी भली और जब मदहोश हो जाती है, हाथ-पाँव पकड़ने लगती हैं, तो देखकर माया होने लगती है। अभी-अभी उस रोज, मँझली चाची तो अब छोटे बाबू की तरफ ही है।

—ले कौन आया ?

—जी, बेनी। वह तो मँझले बाबू की तरफ है। उसे क्या पड़ी है ! पराया ही तो ठहरा। बस उस दिन पी कि वही हाल हुआ। हाथ-पाँव खींचने लगीं, आँखें उलट गईं। और बदन में ताकत। कहिए मत। मैं और चिन्ता हलुआ हैरान। मुँह में फेन निकलने लगा। जान जाने की नौबत। मैंने बेनी को सुनाया भी खूब। कह दिया—अरे, अलग तो आज हुआ है, आज तक नमक तो छोटे बाबू का ही खाता रहा। छोटे बाबू और मँझले बाबू कोई दो हैं। भाई ही हैं। एक माँ के पेट के।

बोलते-बोलते वंशी कह उठा—अरे जा—

भूतनाथ ने पूछा—क्यों ?

वंशी बोला—इतना काम पड़ा है और मैं गप्प में मशगूल हो गया हूँ। छोटे बाबू साबू खाएँगे। बाजार जाना है।

भूतनाथ ने पूछा—आजकल बाजार तुम्हीं जाते हो ?

—केवल बाज़ार ही ? जी, अकेले ही सब करना पड़ता है। हाट-बाज़ार, झाड़ू-बुहारू। है ही कौन ? मधुसूदन काका जो वही घर गये हैं, सो नहीं लौटे। और लोचन ने पान-बीड़ी की दूकान खोल दी है, जानते ही हैं। बेनी और श्याम-सुन्दर उनके हिस्से में चले गये हैं। नन्हे बाबू ने सबको निकालकर ससुराल के आदमी को रखा है। पुरानी में से बड़ी माँ की नौकरानी सिन्धु रह गई है। हमारी तरफ पकाती-चुकाती हैं मँझली चाची। रसोई के सिवाय सब तो मुझे ही करना पड़ता है।

अचानक उसके हाथ में झटका देकर वंशी ने कहा—हट जाइये साले साहब, चटपट खिसक पड़िए।

भूतनाथ वंशी की यह घबराहट समझ नहीं सका। पूछा—क्यों, हुआ क्या ?—उसने इधर-उधर देखा।

—सरकार बाबू आ रहे हैं। चल दीजिए यहाँ से।

—क्यों ? विधु सरकार मेरा क्या कर लेगा ?

—चलिए भी। आदमी यह बेहद बुरा है हुजूर !—चोर-कमरे के पास जाकर बोला—आप तो काम पर जाएँगे ? आपका भोजन बनाने को कहूँ।

—नहीं। मुझे कै दिनों की छुट्टी है। देर से जाऊँगा। विधु सरकार ने वही से मेरा नाम काट दिया है।

वंशी बोला—आप तो हम लोगों की तरफ़ हैं हुजूर, सरकार क्या बिगाड़ सकता है ? मगर आदमी वह अच्छा नहीं। झूठ-मूठ की निन्दा करता फिरता है। उसने मँझले बाबू से आपके बारे में सब कहा है।

—क्या कहा है ?

—दुनिया-भर की झूठी बातें। उस दिन आप छोटी माँ के कमरे से निकल रहे थे, मँझले बाबू ने देख लिया था, मगर आपको पहचान नहीं सके थे। मुझसे पूछा—कौन था रे ? मैंने कहा, मैं ही तो हूँ। इस पर वे बोले, बरामदा अँधेरा क्यों रहता है, रोशनी जलाया कर ? बस, बात यहीं खत्म हो गई। लेकिन सरकार ने मँझले बाबू को आपका नाम बता दिया। कह दिया, वह आदमी रोज़ रात को छोटी बहू के पास जाता है। गाड़ी पर उसके साथ बाहर जाता है। एक दिन आप छोटी माँ के साथ गये थे न बाहर, वही।

—फिर क्या हुआ ?

—हंगामा हो गया। मँझले बाबू कहने लगे—है कहाँ वह आदमी ? भाग्य से आप उस समय तक आये नहीं थे। मँझली माँ को भी कम न जानिए। गिरि ने कहा—हाँ-हाँ, मैंने भी देखा है। इस पर छोटी माँ ने कहा—वह मेरा गुरुभाई है। आता है। उससे क्या ? बड़ी माँ ने भी छींटे कसे···वह सब-कुछ मैं बता नहीं सकता

हुजूर ! मँझली माँ और बड़ी माँ ने छोटी माँ को जो मुँह में आया, वही सुनाया। कई दिन जो लड़ाई हुई है···वह सब सुनें तो कान में उँगली देनी पड़ेगी। खैर। आप ज़रा यहाँ बैठें, मैं बाज़ार से हो आऊँ।

यह सब सुनकर भूतनाथ को जाने कैसा डर लगने लगा। बोला—वंशी, इसके बाद भी इस घर में मेरा रहना ठीक होगा ?

वंशी चला जा रहा था। मुड़कर खड़ा हो गया। बोला—कहते क्या हैं आप ! आई-गई बात हो गई। अब तो हम अलग हो गए हैं।

—लेकिन छोटे बाबू ने तो सब सुना होगा ?

—छोटे बाबू भी क्या आदमी है हुजूर ! उन्हें अपने हाथों खिलाना पड़ता है, पकड़कर सुलाना पड़ता है। वे न तो किसी के छ: में हैं, न पाँच मे। हाथ-पाँव झूल गए हैं। बेबस। आदमी नही रह गए हैं वे। लेकिन जब तक छोटी माँ न कहें, मैं आपको जाने तो नही दे सकता।

—आज एक बार उनसे मुलाकात करा दोगे ? बस एक बार।

—करा दूँगा, लेकिन काफी रात होने पर, जब सो जाएँगे।

—तो मुझे बुला ले जाना। मैं जगा रहूँगा।

—वह देखा जाएगा। अभी आप बैठिए, मैं आया।—वंशी चला गया।

बिस्तर पर पड़े-पड़े भूतनाथ आकाश-पाताल सोचने लगा। यह घर छोड़कर चल देना होगा, यह सोचते ही कैसी तकलीफ होने लगी। यह क्या सिर्फ आश्रय है उसका ! केवल आश्रय का ही लोभ है ! चार दीवारें और उन पर एक छत—इसीका प्रलोभन ! और खाना ! बस इतना ही ? और कुछ नही ? दिन-भर भूत के समान मेहनत करने के बाद यहाँ आकर सोने से शान्ति क्यो मिलती है ? कारण देकर इसे साफ-साफ समझाया नही जा सकता। लेकिन अगर छोटी बहू का आकर्षण ही इसका एकमात्र कारण हो, तो छोटी बहू ही कौन होती है उसकी ? सम्बन्ध क्या है ? किस तरह का सम्बन्ध ? कितनी बार छोटी बहू के भले की कोशिश की है उसने। छोटी बहू ने भी जाने कितनी बार उसे क्या-क्या कहा है। बेईमान कहा है। लेकिन तो भी जाने कहाँ से एक आत्मीयता हो आई थी ! उस दिन दोनों हाथों छोटी बहू को उसने जकड़ जो लिया, तो सारे शरीर मे रोमाच नही हो आया ? छोटी बहू का सपना नही देखा ? जवा बेशक उसकी पहुँच के बाहर है। जवा को पाने का सपना देखने की उसे हिम्मत नही हुई कभी। लेकिन छोटी बहू के लिए भी क्या यह बात अक्षर-अक्षर सत्य है ! खैर। अच्छा ही हुआ, सारे प्रलोभनो से छूटकर, स्नेह-प्यार के आश्रय से बिछुड़कर और कही चला जाएगा वह। नए सिरे से शुरू होगी ज़िन्दगी। नए ढग से काल काटना। लेटे-लेटे उसे जवा का गाया हुआ गीत याद आ गया। यदि कभी कही भूल की हो, तो तुम मुझे माफ न करना—मेरा विचार करना। अपने हाथों विचार करना। सारे ससार मे

भूतनाथ जिन लोगों से मिला, जिन-जिनको प्यार किया, जिन्होंने प्यार नहीं किया—आज सब उसकी नज़रों में भीड़ लगा बैठे। अन्ना, राधा, हरिदासी, जबा, छोटी बहू—सब। सबसे विदा लेकर चला। शायद ज़िन्दगी में फिर कभी भेंट न हो। मगर तुम सब मेरा विचार करना। अगर मुझसे ग़लती बन पड़ी हो, तो मुझे माफ़ न करना, सज़ा देना, वह सज़ा मैं सिर नवाकर स्वीकार करूँगा।

याद है, एक माघोत्सव में जबा ने गाया था—

मेरा करो विचार प्रभो तुम अपने हो कर
लाया दिन का कर्म तुम्हारे ही विचार-घर।
झूठी पूजा करूँ कहीं जो
मिथ्याचार धरूँ सिर पर तो
करूँ पाप मन से अविचार किसी के ऊपर।
दिया लोभ से पर को दुख जो
हुआ त्रास से धर्म-विमुख जो
पर की पीड़ा से सुख जो पाया हो क्षण-भर।

वहाँ से आने के दिन भूतनाथ ने जबा से पूछा था—सुपवित्र को तो तुमने निकाल दिया, क्या मुझे भी आने से मना करती हो?

घर-भर में विधवापन-सी एक अकरुण निर्जनता। जबा की वह प्रखरता खो गई थी। वैसी व्यस्तता, चलने-बोलने में वह चंचलता नहीं रही। प्रत्येक पदचाप में सुविनय बाबू की अनुपस्थिति प्रखर हो उठी थी।

जबा ने अब तक एक भी बात का जवाब नहीं दिया। अपने ही में खोई बैठी थी। इतनी-इतनी सिलाई, इतना इन्तज़ार—सब मानो समाप्त हो गया। अतिथि आने के पहले ही बुझ जानेवाले दीये जैसे अपार सूनेपन ने मानो जबा को ढक लिया था। गो कि उसका यह व्यवहार जैसा आकस्मिक था, वैसा ही युक्ति-हीन। इस सूने घर में आखिर उसकी निगरानी कौन करेगा? किससे बातें करके वह समय काटेगी? किसकी सेवा करके दिन बिताएगी? इन प्रश्नों का उत्तर देना मानो जबा का काम नहीं।

अन्त में खुद भूतनाथ ने ही सारी व्यवस्था कर दी। नौकरानी से कहा—देखो, जब तक दूसरा कोई इन्तज़ाम नहीं हो जाता, तब तक तुम्हें दीदीजी के पास रात-दिन रहना पड़ेगा।

नौकरानी राज़ी हो गई। बोली—लेकिन दीदीजी के व्याह में मुझे नया कपड़ा देना पड़ेगा।

भूतनाथ ने कहा—यह उस समय देखा जाएगा—अभी ज़रा सावधान रहना। घर का दरवाज़ा खुला न रहे—घर में कोई मर्द नहीं है—अपना जैसा घर सम्हालना, काम-काज करना। जानती तो हो, दीदीजी के अपना कोई नहीं।

जवा ने इस व्यवस्था पर न तो हामी भरी, न ना कहा। गूँगी-सी बैठी सुनती रही केवल।

समाज के आचार्य धर्मदास बाबू आये थे। कह गए—बेटी, कोई जरूरत पड़े, तो मुझे खबर देना। मैं तुम्हारे पिता के समान हूँ, मुझसे संकोच न करना।

समझा भी गए—तुम तो सभी जानती हो बेटी, तुम्हें क्या बताऊँ? जीवन का तत्व ही यही है—मौत में से नवीनता का प्रकाम। संसार का सचय इसीलिए दिन-दिन क्षय हो जाता है। इस संसार की शुरुआत शिशु से होती है और वही संसार एक दिन उसे बूढ़ा बना छोड़ता है। इसलिए उपनिषद् की मैत्रेयी ने कहा था—येनाहं नामृतास्याम किमहम् तेन कुर्याम्।

रूपचाँद बाबू भी आये थे। बोले—मेरी बच्चियाँ तुम्हारी हम-उम्र हैं। यहाँ अगर तकलीफ हो तो तुम मेरे घर चल सकती हो। दोनों ही घर तुम्हारे हैं, जो अच्छा समझो।

भूतनाथ ने कहा—लेकिन जवा, सुपवित्र को तो तुमने खदेड़ दिया, क्या इसी तरह जीवन बिताने की सोच रही हो?

जवा ने कहा—मैं आपके पैरों पड़ती हूँ भूतनाथ बाबू, मुझे जरा देर एकान्त मे रहने दीजिए।

उसका धीरज देखकर भूतनाथ को अवाक् रह जाना पड़ा। लोग जब सुविनय बाबू को वहाँ से ले गए, तब भी उसकी आँखो मे एक बूँद आँसू नही गिरा। एक भी शब्द नही बोली वह। रोने की बात तो अलग, सोचा भी नही जा सकता कि वह अपने को संयम से इस कदर जब्त रख सकेगी।

सुपवित्र तो भी आया था एक बार। अन्तिम सस्कार के समय वह शुरू से आखिर तक एक तरफ खड़ा था। उसने किया कुछ नही, चेहरे पर जाने कहाँ तो एक संकोच-सा, एक अपराधी-सा भाव था। एक-एक-कर जब सब लोग चले गये, तो वह भी चला जा रहा था। मानो उसे करने को कुछ न रहा।

भूतनाथ को कैसी तो तकलीफ हुई। पूछा—आप भी जा रहे है?

—हाँ।—कहकर ही वह रास्ते पर जा रहा।

भूतनाथ ने लपककर उसे पकड़ा। कहा—ऐसे मे आप भी अबूझ न बन जाएँ। जवा को देखने वाला कोई नही, इसे आप न भूलें।

सुपवित्र जरा ठिठका, फिर चल पड़ा।

भूतनाथ ने कहा—रूठकर जवा ने जाने क्या कहा, उसीसे अगर आप भी रूठ जाएँ तो काम कैसे चले?

शाम हो चुकी थी। गलियों की गैस-बत्तियाँ जलाई जाने लगी थीं। ... का चेहरा साफ दीख नही रहा था। उसने सिर्फ इतना कहा—इसके ... आने को कहते हैं?

सान्त्वना देते हुए भूतनाथ बोला—उसने ऐसा कहा भी क्या ! मैं उसे छुटपन से ही जानता हूँ, उसकी बात पर आप नाराज़ न हों, यही स्वभाव है उसका। क्या कहती है, यह खुद भी नहीं जानती। उसे माँ का प्यार न मिला। तिस पर आठ-नौ साल तक गँवई-गाँव में पली। मुझसे तो कितनी ही बार कितना-कुछ कहा है, मगर आये बिना रहा गया मुझसे कि मैंने गुस्सा किया ?

—गुस्सा ?—सुपवित्र मानो हँसा। वह हँसी थी या रूठना था, अँधेरे में ठीक-ठीक पता न चला। कहा—नाहक गुस्सा मैं क्यों करूँ भला, गुस्सा नहीं किया है—एक साथ इतनी बात बोलकर वह हाँफ-सा उठा।

भूतनाथ ने पूछा—फिर, कल आ रहे हैं न ?

सुपवित्र ने कहा—मुझे तो आने की मनाही है।

—फिर तो आपने जरूर गुस्सा किया है।

सुपवित्र बोला—यकीन मानें भूतनाथ बाबू, गुस्सा नहीं किया है—सच ही मुझे आने की मनाही है।

भूतनाथ बोला—गुस्से में वह क्या कह गई, उसी को आप क्यों पकड़ बैठे हैं। अभी तो बहुत-कुछ करना बाकी है।

सुपवित्र फिर ठिठक गया। कुछ कहने जा रहा था—किन्तु···

—किन्तु-परन्तु रहने दीजिए, बहाना मैं नहीं सुनने का। आप कल आइए, मैं सब झगड़ा मिटा दूँगा।

सुपवित्र की आँखें जैसे जल उठी हों। गैस की रोशनी में भूतनाथ को उसकी शक्ल साफ दिखाई दी। सुपवित्र ने गर्दन झुका ली। बोला—शायद आपने सुना नहीं, जवा के पास जाने का मुझे अब चारा भी तो नहीं।

—ऐसा क्या ?—भूतनाथ के मन में एक साथ ही बहुत-से प्रश्न उठ आए।

लेकिन सुपवित्र तब तक काफी दूर निकल गया। काठ का मारा-सा भूतनाथ कुछ देर वहीं खड़ा रहा। भूत ने पकड़ा हो, ऐसे आदमी की तरह विह्वल दृष्टि से वह सुपवित्र को देखता रहा। उसके बाद जवा के यहाँ लौट गया।

जवा उपासना-घर में चुपचाप बैठी थी। तीसरे पहर से जैसी बैठी थी, ठीक वैसी ही। जरा भी नहीं हिली। जिसका तमाम दिन व्यस्तता में बीता है, जो कामों में डूबी रहती है, इस-उस कमरे के चक्कर काटती रहती है, बातों में, गीतों में, सुबह से शाम तक खोई रहती है, उसकी यह परिणति आँखों को खटकती है। दीवार पर सुविनय बाबू की तस्वीर राजा-रानी के फोटो के नीचे टँगी थी। जवा की उधर भी नजर नहीं थी। भूतनाथ को देखकर भी मानो देख नहीं रही थी।

भूतनाथ ने कहा—जवा, दिन-भर तुमने कुछ खाया नहीं, खा लेतीं तो अच्छा होता।

जवा बोली—आप बल्कि कुछ खा लीजिए—और वह उठने लगी।

भूतनाथ ने बाधा दी। बोला—ठहरो, उठने की जरूरत नही। अपने खाने का प्रबन्ध मैं कर लूँगा। लेकिन उससे पहले तुमसे एक बात पूछूँ?

जवा ने भूतनाथ की आँखों में आँखें गड़ाई। फिर भी जब भूतनाथ की जबान पर कोई प्रश्न नही आया तो बोली—पूछिए।

भूतनाथ बोला—तुम्हारे पिताजी की इच्छा थी कि तुम्हारा भार सुपवित्र ही ले—लेकिन उसे तो तुमने हटा दिया।

जवा ने सिर झुका लिया। बोली—सुपवित्र को पता है कि मैंने उसे—वह और न बोल सकी।

भूतनाथ ने कहा—लेकिन सिर्फ सुपवित्र को बता देने से ही क्या सारे मसलों का हल हो जाएगा? तुम्हारा अपना भविष्य, सुपवित्र का भविष्य…तुम कुछ न सोचोगी?

जवा कुछ देर चुप रही। फिर बोली—आप क्या सोच रहे हैं कि सुपवित्र को आने की मनाही करके मैं बहुत खुश हूँ?

—तुम भी खुश न रहो और सुपवित्र भी दुःख उठाए—तो यह दुर्गति आखिर किसलिए?

जवा बोली—यह क्या मैं नही जानती भूतनाथ बाबू, जानती हूँ, सुपवित्र घर जाते हुए रास्ते का चक्कर काटेगा। इन दिनो वह सो भी न सका हो शायद। और इतना ही क्यों, शायद वह मेरे ही दरवाजे पर खड़े-खड़े जिन्दगी काट देगा—फिर भी मैं उसे यहाँ आने को नही कह सकती—आना उसका उचित भी न होगा।

आखिर क्यों?

जवा रो पड़ी। सुविनय बाबू के मरने से जो पत्थर-सी सख्त बन गई थी, उसकी यह कमजोरी अचरज मे डालने वाली थी।

बड़ी देर बाद भूतनाथ बोला—मुसीबत है अपनी—इस हालत मे तुम्हे छोड़कर कैसे जाऊँ?

जवा जरा रुककर बोली—आप फ़िक्र न करें, मैं आप अपनी राह तै कर लूँगी।

भूतनाथ बोला—लेकिन जब तक कुछ तै न कर लो, तब तक तो मैं निश्चिन्त नही हो सकता।

जवा ने फिर गर्दन उठाई। रुलाई से पलकें भारी हो उठी थी। बोली—भूतनाथ बाबू, आपका ऋण मैं जीवन में न चुका सकूँगी।

—ऋण की तो चर्चा ही बेकार है। संसार में कौन किसका ऋण चुका सकता है! इतने बड़े अहंकार की क्षमता संसार में है किसे?

—ना, आज सोचती हूँ कि आप पर कितने जुल्म किये हैं मैंने!

—जुल्म की बात छोड़ो जबा, मैंने तो एक दिन कहा था तुमसे, यह अपना नणा नहीं, कर्तव्य है और सिर्फ कर्तव्य ही नहीं, व्रत है। तुम्हारे किसी काम आ सकूं, तो अपने को धन्य समझूंगा। मैंने तो प्रतिदान कभी माँगा नहीं।

जबा ने सिर झुका लिया—भाग्य जिस पर विरूप हो, उससे प्रतिदान माँगना भी तो विडम्बना है।

—आखिर तुमने भी भाग्य का सहारा लिया ?

—जिसे उसकी विडम्बना सहनी पड़ी है, वही भाग्य का सहारा लेता है।

भूतनाथ बोला—सोचा था, दुर्भाग्य सिर्फ अपने ही हिस्से है—खैर। तुम जल्द कोई राह चुन लो, तो मैं निश्चिन्त हो सकूं।

जबा बोली—मुझे थोड़ा समय दीजिए। दो ही एक दिन में मैं तै कर लूंगी।

—अपना संकल्प मुझे बताने में कोई रुकावट है ?

जबा बोली—मैं अस्पताल में काम करूँगी।

—कहाँ ?

—पिताजी ने बाग़ बाजार वाले मकान में जो अस्पताल खोला है, उसी में। सोच रही हूँ। आप मुझे दो-चार दिन का समय दीजिए।

कुछ क्षण चुप रहकर भूतनाथ बोला—मैं एक बात पूछना चाहता हूँ। साफ-साफ जवाब दोगी ?

—पूछिए।

—सुपवित्र से व्याह करने में रुकावट क्या है ?

जबा ने सिर उठाया। असहाय की तरह ताका। उसके बाद फिर सिर झुकाकर बोली—पता नहीं, आप विश्वास भी करेंगे या नहीं, पर आदमी के जीवन में बहुत बार जो घटित होता है, उसमें उसका कोई हाथ नहीं रहता। बाबूजी के आखिरी दिन की बात आपको याद है ? आप लोग दूसरे कमरे में चले गए, मैं उनके पास रह गई—कहकर चुप हो गई वह।

भूतनाथ ने कहा—फिर ?

—उसके बाद जो हुआ, सब सपने-सा लगता है—वह सपना बलरामपुर का। वहाँ रही भी कितने दिन ! दादाजी ने प्रतिज्ञा की थी, वे बाबूजी की शक्ल न देखेंगे। बाबूजी के ब्रह्मसमाजी बन जाने के अपराध को वे क्षमा न कर सके—मरने तक भी नहीं। लेकिन तब मेरी उम्र महज दो महीने की थी···उसी समय···

अचानक नौकरानी आयी। बोली—कोई बाबू आये हैं दीदीजी !

भूतनाथ ने पूछा—कौन बाबू ?

—सो मैं नहीं जानती।

भूतनाथ ने नीचे जाकर देखा, धर्मदास बाबू थे। बोला—ऊपर चलिए।

उन्होंने पूछा—जवा बिटिया कैसी है ?

ये रोज एक बार आ जाते थे। सुविनय बाबू के पुराने मित्र। जभी आते, काफी उपदेश दे जाते। कहते माँ-बाप किसी के सब दिन नहीं रहते बिटिया—लेकिन नितान्त अपने की मौत में ही हम वास्तव में इस बात की उपलब्धि करते है कि हम जिसे भी पिता कहकर क्यों न पुकारें, वही हमारे पिता हैं—इसीलिए उपनिषद् में आया है 'पिता नोहमि'—पिता में पिता-रूप जो सत्य है, वह भी वही हैं—वही हैं निराकार परम पिता। माता में जो माता-रूप सत्य है, वह भी वही हैं—वही परम पिता। उसी परम पिता की उपलब्धि करो।

जवा ने पूछा—आप मुझे एक बात समझा दें कि जो मुझे अच्छा लगता है, उसके सचय और भोग मे कुछ पाप है ?

उन्होंने कहा—जो वस्तु हमारे स्पर्श-दृष्टि-श्रुति-बोध को तृप्त करती है, वह निन्द्य नही होती। दरअसल बुराई अपने मे ही होती है। जब हम सब-कुछ को छोड़ खुद को ही अपनाते हैं, तो वह अपवित्र हो उठती है—यही स्वार्थपरता असत्य है। अन्न को अगर हम बदन मे मले तो वह अपवित्र है, खाएँ तो कुछ बुराई नही। असल मे अन्न को बदन मे लगाना व्यवहार्य नही है।

जवा ने फिर पूछा—एक बात और। मुझे यह समझा दें कि अतीत सत्य है या वर्तमान ?

धर्मदास बाबू ने कहा—इस बात का जवाब कठिन नही है बेटी, तुम जब शोक से ऊपर उठ जाओगी तो खुद समझोगी—सत्य सदा का है—सत्य का अतीत और वर्तमान नही होता।

जवा ने कहा—लेकिन जो सत्य मेरे अनजाने घट चुका हो, मेरे अगोचर मे, यों समझिए कि जब मैं मात्र दो महीने की थी—उस सत्य को भी क्या परम सत्य ही मानना पड़ेगा ?

उन्होंने कहा—बात एक ही है, चाहे जितने दिन पहले, चाहे जिस उम्र में घटे···जब अपनी दिशा एकान्त हो उठती है तो वह अपवित्र हो उठता है क्योंकि मैं तो केवलमात्र अपने मे ही सत्य नही।—कुछ क्षण रुककर वे फिर बोले—आत्मा पतिव्रता स्त्री जैसी है—उसका सर्वस्व अपने स्वामी से ही सत्य होता है। उसके इस स्वामी के बारे मे उपनिषद् ने कहा है—'एयास्य परमागति', एयास्य परमा सम्पत्, एयोहस्य परमोलोकः, एयोहस्य परम आनन्द'—यही उसकी परम गति, परम सम्पद्, आश्रय, आनन्द—सब हैं।

धर्मदास बाबू के चले जाते ही जवा उठ खड़ी हुई। बोली कुछ नहीं। सीधे जाकर दरवाजे की कुण्डी बन्द कर दी।

भूतनाथ ने इतना ही पूछा—कुछ खाओगी नही ?

जवा ने जवाब न दिया। किन्तु देखने से ऐसा लगा, उसके सारे शरीर का

लहू उसके चेहरे पर सिमट गया है। बिस्तर पर पड़कर तुरत वह रोना ही शुरू कर देगी।

चोर-कमरे के अन्दर पड़े-पड़े यही बातें सोच रहा था भूतनाथ। बड़े महल में रात का सूनापन दमक उठा था। लेकिन चारों तरफ पहले से भी ज्यादा सन्नाटा। दक्षिण के बगीचे से अब वे आवाजें नहीं आतीं। दासू जमादार के बेटे की बांसुरी की आवाज न आई। वह अजानी चिड़िया न चीखी बाग के आँवले पर। धीरे-धीरे रात काफी हो गई। लेकिन बंशी कहाँ आया ?

बंशी कह गया था, खूब होशियार रहिए साले साहब, मँझले बाबू बहुत बिगड़े हुए हैं। कहा है, महल की बहू से बाहर का आदमी मिले-जुले, यह कैसी बात !

भूतनाथ ने इस पर कहा था—ऐसे में मैं यहाँ क्यों रहूँ बंशी, मैं कल ही यहाँ से चल दूं।

बंशी बोला था—जब तक छोटी माँ हैं, तब तक रहिए हुजूर ! अब तो सब अलग हो गए हैं। मैं भी अब नहीं रहूँगा हुजूर, आखिर किसके लिए रहूँ !

बात सही है। यों बड़े महल के ऐश्वर्य का आकर्षण भूतनाथ को नहीं है। शुरू-शुरू में था। वहाँ के गाड़ी-घोड़ा, नौकर-चाकर, व्याह-पूजा—सबसे अपने को उसने एकात्म कर दिया था। औरों के साथ-साथ उसके लिए भी जूता-कपड़ा मँगाया जाता था। सबके साथ वह भी अपने को इस घर का एक सदस्य समझता था।

बंशी ने कहा था—अब की से शायद पूजा भी बन्द हो जाएगी हुजूर ! हिस्सेदारी की पूजा—कौन भार ले ?

हुआ भी यही। इतने दिनों से चली आती थी पूजा। कितनी स्मृतियाँ जुड़ी थीं। इतने-इतने लोगों के कल्याण को तिलांजलि देकर पुरखों से चली आने वाली पूजा बन्द हो गई। यह घटना जैसी अचरज की थी, वैसी ही मार्मिक भी। कलकत्ते में इसके लिए बाबुओं की बदनामी हुई। छोटे बाबू की चुन्नी को नादूदत्त ने अपने पास रख लिया। शायद उसे गाड़ी खरीद दी है। आँखों के आगे बड़े महल की ऐसी हार देखकर भी किसी को होश न आया। और ननीलाल ! उसी ननीलाल को यह घर बची-खुची जायदाद लिख देने में चौधरी बाबुओं की आत्म-मर्यादा को ठेस न लगी। हर महीने सूद की वसूली के लिए ननीलाल का आदमी आता। इस अवश्यम्भावी सर्वनाश को कैसे रोक सकते हैं ये !

आधी रात को दरवाजे पर थपकी पड़ी—साले साहब !

बिछौने से लपककर भूतनाथ ने दरवाजा खोल दिया। बोला—आ गया बंशी ! मैं तब से यही सोच रहा हूँ।

—चलिए। लेकिन मँझले बाबू आज मँझली माँ के कमरे में हैं।

—तुमने छोटी बहू से कह तो दिया है न ?

—कह दिया है। मगर खूब धीरे-धीरे हुजूर ! बरामदे के बीच में दीवार खड़ी हो गई है, लेकिन उस पार से आवाज़ सुनी जाती है।

पांव दबाए भूतनाथ छोटी बहू के कमरे के सामने खडा हुआ जाकर।

शायद सो रही थी। भूतनाथ के आने की सुन उठ बैठी। आंखों में अभी नींद थी। भूतनाथ को देखकर गम्भीर हो गई। कहा—इतने दिनो तक कहां था भूतनाथ ?

भूतनाथ बोला—नाराज न हो, मैं यहां था ही नही। आज ही आया हूं। सिवाय रात के तुमसे भेंट भी तो नहीं की जा सकती।

छोटी बहू ने कहा—जहां था, वहीं रहता। अब क्यों आया—क्या देखने के लिए ?

भूतनाथ ने गौर किया। छोटी बहू के बदन पर गहने कम-से दीख रहे थे। नाक की कील कहां गई ? हीरे की वह बाली भी नही। उसकी जगह पर सोने का दूसरा ही ज़ेवर था कान में।

भूतनाथ बोला—तुमने एक दिन बरानगर जाने की बात कही थी। उसी के लिए आया हूं चलोगी ?

—सच ही मुझे ले चलेगा तू ? पलक मारते-भर में छोटी बहू फिर दमक उठी। बोली—छोटे बाबू की जो दशा हो गई है, वह देखी नहीं जाती। दिन-दिन बदतर होती जा रही है। अब शायद ठीक न हो। शशी डॉक्टर देख रहा है, रुपया भी काफ़ी ले जा रहा है। मैं बरानगर जाकर सिर्फ यही कहूंगी कि छोटे बाबू अच्छे हो जाएं। बस, और कोई मन्नत नही।

भूतनाथ ने पूछा—शराब छोड़ दी तुमने ?

—छोड कहां सकी ! लुक-छिपकर अभी भी पीती हूं। बंशी भी आजकल मेरी बात नही सुनता, कोई नही सुनता, फिर भी बिना पिये नही रह सकती—जाने छोटे बाबू बिना शराब के कैसे रह लेते हैं ?—छोटी बहू तकिये से ओठंग गई।

भूतनाथ बोला—मैं भी तुम्हारे लिए मन्नत करूंगा छोटी बहू कि तुम भली हो जाओ। मेरे लिए भी पान-सुपारी मंगाकर रख लेना।

—तो फिर कब चलता है ?

भूतनाथ जवाब देने ही जा रहा था कि बाहर कुछ शोर मचा। शोर [illegible] और दौडता हुआ बंशी आ धमका—साले साहब, सर्वनाश हो गया—चलिए।

—क्या हुआ रे बंशी ?

छोटी बहू की बात का बंशी ने जवाब नहीं दिया। सिर्फ इतना [illegible]
आप बाहर न निकलें मांजी, मैं आया।

बाहर जाकर बंशी ने कहा—आप लोग कमरे में घुस पड़े हैं [illegible]

आग लगा दी है।

आग ?—भूतनाथ अवाक् हो गया—किसने लगाई ?

वंशी बोला—आप बाहर न निकलें हुजूर—आँगन में सभी इकट्ठे हुए हैं। बेनी मँझले बाबू को बुलाने गया है।

—आग लगाई किसने वंशी ?

जाते-जाते वंशी ने कहा—बद्री बाबू ने।

—बद्री बाबू ने ? क्यों ?

भूतनाथ के अचरज की सीमा न रही। इतनी चीजों के होते अन्त में बद्री बाबू ने आग लगा दी ?

वंशी ने कहा—इधर उनका दिमाग खराब हो गया था न।

—दिमाग कब खराब हुआ ?

—जी, उस दिन मँझले बाबू ने उन्हें फटकारा था। घर में पन्द्रह-पन्द्रह घड़ियाँ हैं, एक भी ठीक समय नहीं देती—वे दिन-रात पड़े ही रहते हैं। इसीलिए मँझले बाबू ने कहा था—निकाल देंगे। सरकार बाबू ने कहा था—घड़ी के लिए आदमी रखने की जरूरत नहीं। हम लोग आप ही देख लेंगे। आदमी पर खर्च क्या कम पड़ता है।

उधर वंशी गया कि इधर चोर-कमरे से बाहर निकलकर भूतनाथ अँधेरे में खड़ा-खड़ा देखने लगा। अँधेरे आँगन में लाल आभा। घड़ों से सब बैठके में पानी उँडेल रहे थे। यह कैसा बदला ! सबके साथ वंशी भी घड़े में पानी ढो रहा था। पानी से बह गया आँगन। चारों तरफ़ धुआँ भर गया। एक अजीब बू हवा को गन्दी कर रही थी। भूतनाथ ने नाक पर कपड़ा रखा।

इतने में लगा, सब मिलकर किसी को बैठके से बाहर निकाल रहे हैं। अँधेरे में सब छाया-मूर्ति से दीख रहे थे। साफ़ पहचानना मुश्किल। आसमान धुँधला। चाँद की कहीं निशानी भी नहीं। डरी हुई रात सहसा और डरावनी हो उठी।

वंशी फिर आया। बोला—आप अन्दर रहिए हुजूर ! वहाँ मँझले बाबू हैं—आपको देख लेंगे।

भूतनाथ ने पूछा—लोगों ने किसे अन्दर से खींचकर निकाला रे वंशी ?

—जी, बद्री बाबू को। जलकर बैंगन का भुरता हो गए हैं। अभी भी जरा-जरा होश है। कीं-कीं कर रहे हैं।

—ऐसा कैसे हुआ ?

वंशी बोला—घर में एक भी घड़ी नहीं बची हुजूर, पन्द्रह घड़ियों को बैठके में बटोरा, उन पर अपना कपड़ा-लत्ता भी रख दिया और अन्दर घुसकर आग लगा दी। गजब का जोर है—कब जो यह सारा कुछ किया, किसी को पता नहीं। वंशी दौड़कर फिर उधर ही चला गया।

अब शायद दमकल आ गई। घण्टा बजाते हुए महल के अन्दर दाखिल हुई। उस पर मुहल्ले वालों की चीख-पुकार से अँधेरी रात मुखर हो उठी। पास-पड़ोस की छतों पर लोग जमा हुए थे। आग बुझ जाने पर भी धुएँ में आँख खोलना मुश्किल। भूतनाथ की आँखों में जलन होने लगी। दमकल ने सों-सों करके पानी डालकर आग ठण्डी कर दी। सब ठीक हो गया। भूतनाथ ने कमरे में जाकर अन्दर से कुण्डी लगा दी। क्या करता! कहीं देख न लें मँझले बाबू! कल काम भी बहुत है। तड़के ही उठकर जवा के यहाँ जाना है। शाम को छोटी बहू को लेकर बरानगर जाना। अब रात भी बाकी न थी। भूतनाथ ने एक झपकी लेने की कोशिश की।

लेकिन अँधेरे में भी आँखों पर वद्री बाबू की शक्ल खिंच जाने लगी। घड़ियों से वद्री बाबू को इतना गुस्सा क्यों? जो आदमी हर रोज हर घण्टे घड़ी मिलाया करता था, समय की पद-ध्वनि सुनने के लिए रात-दिन कमर में घड़ी रखा करता था, उसने यह क्या किया! क्या वद्री बाबू ने समय का गला घोंटना चाहा था? या समय ने ही आखिर में वद्री बाबू को दगा दिया? कौन जाने!

अजीब रात। न ठीक-ठीक नींद, न जागरण। नींद-जागरण के बीच ही ऐसा लगा कि वद्री बाबू की आत्मा सारे घर में घूमने लगी। मानो वह हर कमरे में यह देखने लगे कि जल तो गईं सारी घड़ियाँ। पन्द्रह घड़ियाँ। दीवार-घड़ी। आज तक काल की नाप पर समय देती आईं। भूमिपति चौधरी के समय से ये किले की तोप के साथ घण्टा बजाती रही हैं। विजय की घोषणा सुनाती रही है—विजय-गौरव के किस्से सुनाती रही हैं। शायद इसीलिए आज वद्री बाबू ने डाँट बताई—झूठी कहीं की, बस भी कर।

बंशी ने बताया—मँझले बाबू ने कसकर डाँटा था।

—क्यों?

—सभी देखते रहे, कोई काम नहीं करते थे। पड़े रहते थे। मँझले बाबू ने सिर्फ इतना कहा—घड़ियों पर गर्द-कालिख पड़ी है, देखते नहीं?

वद्री बाबू ने कहा—जी, गर्द नहीं है, वह पाप जमा है।

—पाप? काहे का पाप?—मँझले बाबू ने पहेली समझी नहीं। वद्री बाबू ने कहा—हर तरह का पाप हुजूर—अन्याय, अत्याचार, अपव्यय, आलस्य—इस घर में क्या पाप का अन्त है?

मँझले बाबू फिर भी न समझ सके। उन्होंने जाकर विधु सरकार से कहा—घड़ी बाबू क्या पागल हो गया है?

सरकार बाबू तो पहले से ही खार खाए बैठे थे। जिस रोज घर में मोटर आई थी—इब्राहीम के लड़के ने मुँह में थूक दिया था। उन्हें याद थी। बोले—ये तो शुरू से पागल ही हैं सरकार। आपकी तो नजर सभी तरफ रहती नहीं। सिर्फ खाने में गरज है—चार सेर चावल का भात अकेले चट कर जाते हैं। और नाम

आग लगा दी है।

आग ?—भूतनाथ अवाक् हो गया—किसने लगाई ?

बंशी बोला—आप बाहर न निकलें हुजूर—आँगन में सभी इकट्ठे हुए हैं। बेनी मँझले बाबू को बुलाने गया है।

—आग लगाई किसने बंशी ?

जाते-जाते बंशी ने कहा—बद्री बाबू ने।

—बद्री बाबू ने ? क्यों ?

भूतनाथ के अचरज की सीमा न रही। इतनी चीजों के होते अन्त में बद्री बाबू ने आग लगा दी ?

बंशी ने कहा—इधर उनका दिमाग खराब हो गया था न।

—दिमाग कब खराब हुआ ?

—जी, उस दिन मँझले बाबू ने उन्हें फटकारा था। घर में पन्द्रह-पन्द्रह घड़ियाँ हैं, एक भी ठीक समय नहीं देती—वे दिन-रात पड़े ही रहते हैं। इसीलिए मँझले बाबू ने कहा था—निकाल देंगे। सरकार बाबू ने कहा था—घड़ी के लिए आदमी रखने की जरूरत नहीं। हम लोग आप ही देख लेंगे। आदमी पर खर्च क्या कम पड़ता है।

उधर बंशी गया कि इधर चोर-कमरे से बाहर निकलकर भूतनाथ अँधेरे में खड़ा-खड़ा देखने लगा। अँधेरे आँगन में लाल आभा। घड़ों से सब बैठके में पानी उँडेल रहे थे। यह कैसा बदला ! सबके साथ बंशी भी घड़े में पानी ढो रहा था। पानी से बह गया आँगन। चारों तरफ़ धुआँ भर गया। एक अजीब बू हवा को गन्दी कर रही थी। भूतनाथ ने नाक पर कपड़ा रखा।

इतने में लगा, सब मिलकर किसी को बैठके से बाहर निकाल रहे हैं। अँधेरे में सब छाया-मूर्ति से दीख रहे थे। साफ़ पहचानना मुश्किल। आसमान धुँधला। चाँद की कहीं निशानी भी नहीं। डरी हुई रात सहसा और डरावनी हो उठी।

बंशी फिर आया। बोला—आप अन्दर रहिए हुजूर ! वहाँ मँझले बाबू हैं—आपको देख लेंगे।

भूतनाथ ने पूछा—लोगों ने किसे अन्दर से खींचकर निकाला रे बंशी ?

—जी, बद्री बाबू को। जलकर बैंगन का भुरता हो गए हैं। अभी भी जरा-जरा होश है। कीं-कीं कर रहे हैं।

—ऐसा कैसे हुआ ?

बंशी बोला—घर में एक भी घड़ी नहीं बची हुजूर, पन्द्रह घड़ियों को बैठके में बटोरा, उन पर अपना कपड़ा-लत्ता भी रख दिया और अन्दर घुसकर आग लगा दी। गजब का जोर है—कब जो यह सारा कुछ किया, किसी को पता नहीं। बंशी दौड़कर फिर उधर ही चला गया।

अब शायद दमकल आ गई। घण्टा बजाते हुए महल के अन्दर दाखिल हुई। उस पर मुहल्ले वालों की चीख-पुकार से अँधेरी रात मुखर हो उठी। पास-पड़ोस की छतों पर लोग जमा हुए थे। आग बुझ जाने पर भी धुएँ में आँख खोलना मुश्किल। भूतनाथ की आँखों में जलन होने लगी। दमकल ने सों-सों करके पानी डालकर आग ठण्डी कर दी। सब ठीक हो गया। भूतनाथ ने कमरे में जाकर अन्दर से कुण्डी लगा दी। क्या करना! कहीं देख न लें मँझले बाबू! कल काम भी बहुत है। तड़के ही उठकर जवा के यहाँ जाना है। शाम को छोटी बहू को लेकर वरानगर जाना। अब रात भी बाकी न थी। भूतनाथ ने एक झपकी लेने की कोशिश की।

लेकिन अँधेरे में भी आँखों पर बद्री बाबू की शक्ल खिंच जाने लगी। घड़ियों से बद्री बाबू को इतना गुस्सा क्यों? जो आदमी हर रोज़ हर घण्टे घड़ी मिलाया करता था, समय की पद-ध्वनि सुनने के लिए रात-दिन कमर में घड़ी रखा करता था, उसने यह क्या किया! क्या बद्री बाबू ने समय का गला घोंटना चाहा था? या समय ने ही आखिर में बद्री बाबू को दगा दिया? कौन जाने!

अजीब रात। न ठीक-ठीक नींद, न जागरण। नींद-जागरण के बीच ही ऐसा लगा कि बद्री बाबू की आत्मा सारे घर में घूमने लगी। मानो वह हर कमरे में यह देखने लगे कि जल तो गईं सारी घड़ियाँ। पन्द्रह घड़ियाँ। दीवार-घड़ी। आज तक काल की ताल पर समय देती आईं। भूमिपति चौधरी के समय से ये किले की तोप के साथ घण्टा बजाती रही हैं। विजय की घोषणा सुनाती रही है—विजय-गौरव के किस्से सुनाती रही है। शायद इसीलिए आज बद्री बाबू ने डाँट बताई—झूठी कहीं की, बस भी कर।

वंशी ने बताया—मँझले बाबू ने कसकर डाँटा था।

—क्यों?

—सभी देखते रहे, कोई काम नहीं करते थे। पड़े रहते थे। मँझले बाबू ने सिर्फ इतना कहा—घड़ियों पर गर्द-कालिख पड़ी है, देखते नहीं?

बद्री बाबू ने कहा—जी, गर्द नहीं है, वह पाप जमा है।

—पाप? काहे का पाप?—मँझले बाबू ने पहेली समझी नहीं। बद्री बाबू ने कहा—हर तरह का पाप हुजूर—अन्याय, अत्याचार, अपव्यय, आलस्य—इस घर में क्या पाप का अन्त है?

मँझले बाबू फिर भी न समझ सके। उन्होंने जाकर विधु सरकार से कहा—घड़ी बाबू क्या पागल हो गया है?

सरकार बाबू तो पहले से ही खार खाए बैठे थे। जिस रोज़ घर में मोटर आई थी—इब्राहीम के लड़के ने मुँह में थूक दिया था। उन्हें याद थी। बोले—ये तो शुरू से पागल ही हैं सरकार। आपकी तो नज़र सभी तरफ रहती नहीं। सिर्फ खाने में गरज है—चार सेर चावल का भात अकेले चट कर जाते हैं। और काम भी

क्या—घड़ियों में चाबी तो मैं खुद दे सकता हूँ। यह कौन-सा काम है!

मँझले बाबू ने कहा था—तो इसे निकाल दो।

बस, इसी निकाल देने की बात पर ऐसा किया। कब जो सारी घड़ियों को दीवार पर से उतारा, कब सबको एक जगह इकट्ठा किया, कब आग लगाई—किसी को कोई पता नहीं। और उस कमरे की तरफ़ जाता भी कौन है!

भूतनाथ को लगा—समय मानो एक ही साथ स्तब्ध हो गया है। बड़ी बाबू के जाने के साथ-साथ बड़े महल का मानो कुछ भी नहीं चलता। सब अचल हो गया। सब। काल का चक्का गोया टूट गया। लँगड़ाकर थोड़ा-बहुत चलता भी है तो मानो ठोकर खाकर गिर पड़ने के लिए। गिरस्ती का दम घुटता आ रहा है। तीन परिवारों की बारह दीवारों के अंदर बड़े महल की आत्मा मानो निस्तेज, मरणासन्न हो उठी है। बाहर से कुछ समझ में नहीं आता। बिरिजसिंह फाटक पर खड़ा-खड़ा आज भी पहरा देता है—भूले-भटके कभी मँझले बाबू की गाड़ी निकलती है, तो चीखता है—होशियार⋯लेकिन टूटी-टूटी आवाज़। गाड़ी के निकलते ही सामने के खोमचेवाले को बुलाकर बैठा गप्पें मारता है। खैनी खाता है। पहले की तरह अब कोई खातिर नहीं करता। सब दिन मुरैठा बाँधने की भी याद नहीं रहती। बहुत दिन पहले गेट से लगा पीपल का एक पौधा उगा था, वह अब फैल गया है। उसी की छाँह में खड़ा बिरिजसिंह शुरू कर देता—क्यों भुवन भैया, मुलुक का क्या हाल है—

भुवन पास आता। ज़रा देर बातें करता। चुटकी-भर खैनी देता और अपने काम में चला जाता।

आँगन के बीचों-बीच जो दीवार खड़ी की गई थी, उसके माथे पर काई जम गई। जाड़ों की दोपहर में कौओं का झुण्ड उस पर आ बैठता। जूठन के लिए छीना-झपटी। आँगन में बिखर जाती जूठन। पहले दासू जमादार दो बार आँगन बुहारा करता था। अब वह जूठन तीन दिन यों ही पड़ी रहती। सूखकर ऐंठ जाती। लोग जिधर से चलते, वही राह पैरों से साफ़ रहती केवल। घूंघट काढ़ती हुई सौदामिनी बाहरी आँगन के दरवाजे के पास आती और अगल-बगल झाँक-ताक-कर जूठन को दीवार के पार डाल देती।

कहीं सद्दू की माँ की नजर पड़ जाती तो कहती—तेरी अक्ल की बलिहारी—मछली के छिलके घर-भर बिखेर दिए—अब इस साँझ-पहर छलाओ और नहाओ।

विधु सरकार सुबह एक बार आता। कैश बक्स को खोलकर गंगाजल छिड़कता, धूप जलाता और कुछ देर लिखता-पढ़ता। एकाध कोई आ जाता तो कहता—आज नहीं भई, आज विपके है, विपके। कलजुग है तो क्या धर्म-कर्म भी गया!

उसके बाद खजाना-घर में ताला डालकर दोपहर को कचहरी चल देता। मामले-मुकदमे की पैरवी। एक साथ कई-कई मुकदमे लगे रहते। दिन-भर घूम-फिरकर शाम को लौटता। उसके बाद देर तक मँझले बाबू से राय-मशविरा चलता।

कहता—आज फिर तारीख पड़ गई हुजूर?

मँझले बाबू का चिलम ठीक से सुलगा नहीं होता। बेनी बगल में फूँकता होता। वे कहते—नाटूदत्त क्या बोला विधु?

विधु ने कहा—जी, बड़े बाबू का हिस्सा तो वसूल हो गया। अब आपका और छोटे बाबू का भी हो जाए तो मुकदमा उठा लेगा।

मँझले बाबू बोले—तुम एक बार ननी बाबू के यहाँ जाओ तो।

—जी, ननी बाबू तो विलायत में हैं।

—रहें। उनके नातेदार हैं, सास है—सभी हैं। उनसे कह आओ कि इस महीने का पावना अगले महीने चुकाऊँगा। न कहोगे तो जाने कब मामला दायर कर देगा।

विधु सरकार उलटे पाँवों लौट पड़े। तम्बाकू पीते-पीते मँझले बाबू ने बेनी को आवाज दी। बेनी गिरस्ती के और काम कर रहा था। रसोई के आँगन में मँझले बाबू की आवाज नहीं सुनाई पडती। आँगन बुहारते हुए बोला—मैं कल ही गाँव चला जाऊँगा गिरि!

गिरि मँझली मालकिन के लिए पान लगाने आई थी। बोली—जाना, जाना। धमकी किसे दे रहा है! उनके वंशी को देख, साल-भर से तनखा नहीं मिली।—काम कर रहा है कि नहीं? मैं क्या काम से डरती हूँ? तू जा न, काम पड़ा थोड़े ही रहेगा?

काम भला बन्द रहता है! कहाँ से सामान आ जाता है, कौन जाने! समय पर मँझले बाबू के लिए तम्बाकू पहुँच जाता। शराब भी। हासिनी आ जाती, बड़ी मालकिन आ जाती, मँझली मालकिन। आजकल सब नाचघर में बैठते बीच-बीच में घुँघरू की आवाज भी आती है अन्दर से। गीन की कडी। घडी-घड़ चिलम दे आता है बेनी। कभी-कभी रात के बारह बज जाते। कभी एक।

एक दिन मुन्नालाल आ पहुँचा। पैरों में नागरा जूता। माथे में पगडी पूछा—सरकार साहब कहाँ हैं?

खजांचीखाने में ताला पडा। यह सब देखकर मुन्नालाल हैरत में आ गया इसी जगह वह जाने कितनी बार आ चुका है। जाने कितनी बार विधु सरकार के कमरे में बैठा है। लेकिन अब अजीब-सा लगता है। आँगन में दीवार देखकर उसके मन में कुछ सन्देह हुआ।

बेनी जा रहा था। बोला—क्यों भैया, क्या खबर है? नन्ही बाई आई है क्या?

—बाबू साहब कहाँ हैं ?

बेनी ने मँझले बाबू को खबर दी।

मँझले बाबू बोले—उसे यहाँ बुला ला।

नाचघर में पहुँचकर जमीन तक झुककर मुन्नालाल ने सलाम किया—हुजूर !

—क्यों बे मुन्नालाल—नन्हीं बाई कहाँ ?

—जी, एक दिन गाना-बजाना नहीं होगा ?

—जरूर होगा, जरूर। किस अहमक ने कहा कि नहीं होगा ?—मँझले बाबू की तबीयत उस समय रंगीन थी। मुन्नालाल की बात से उनके नवाबी मिजाज में बिजली खेल गई। बोले—नन्हीं बाई को ले आ—

—जो हुकुम सरकार !

आई नन्हीं बाई। जमाने के बाद बड़ा महल फिर से हँस उठा। नाचघर में फिर से झाड़-फानूस जल उठे। चाँदी के थाल पर फिर अशर्फी पड़ी। सारंगीवाला सिर हिला-हिलाकर बजाने लगा और उड़ने लगा नन्हीं बाई का घाघरा। इत्रदान की खुशबू की बहार। भैरव बाबू आज नहीं हैं, तारक बाबू, मोती बाबू, कोई नहीं, नहीं तो नहीं, मँझले बाबू का कुछ आता-जाता नहीं। वे अकेले ही सौ के बराबर। पाँवों का पम्प जानें कहाँ गिर गया खुलकर। धोती कमर से सरक गई। दिनों बाद नाचघर गुलजार हुआ। दिनों बाद रूप और रूपा की बहार आई।

मँझले बाबू चीख उठे—क्या कहने···क्या कहने···

मँझले बाबू की नजर से नजर मिलाकर नन्हीं बाई गाने लगी—

नयना ना मारो राजा

घूँघट पट खोले—

अचानक सारंगी का तार टूट गया।

मँझले बाबू अस्फुट स्वर में आर्तनाद करके तकिए पर पट पड़ गए। डरकर नन्हीं बाई ने गाना बन्द कर दिया। सारंगीवाला थम गया।

करीब जाकर बेनी चिल्ला उठा—बाबू···मँझले बाबू···

ये घटनाएँ भूतनाथ की सुनी हुई हैं। वह रोज सवेरे निकल पड़ता। लौटता वही रात को। मँझले बाबू की नजर बचाकर चलना पड़ता। मँझले बाबू ही क्यों, बिधु सरकार ही क्या कम ! दोनों मानो यम की तेज निगाह लिये देखते। कोई ताक बैठ जाए तो भूतनाथ इस घर को छोड़ देगा। लेकिन जी में आता, ऐसे समय में छोटी बहू को छोड़कर चल देना उचित होगा ?

छोटे बाबू की तरफ़ रसोई में कभी-कभी देर हो जाती। सुबह चूल्हा सुलगाकर मँझली चाची चुपचाप बैठी रहती। बाजार आने में देर होती। छोटे बाबू का बिछौना साफ़ करके, उनका मुँह धुलाकर, दवा पिलाकर फ़ुरसत पाने में बंशी

को देर हो जाती। फिर कहीं बाजार जाता।

कभी-कभी पैसे के बदले सोने की बाली लेकर ही उसे बाजार जाना पड़ता। उसी को बेचकर सामान आता, छोटी माँ की शराब भी। बोतल छोटी माँ को चाहिए ही। सुबह जगने पर वह न मिले तो उनका मिजाज खराब हो जाता है। जम्हाई आने लगती है। बदन में अजीब थकावट।

छोटी माँ बोली—इतनी देर क्यों वंशी?

वंशी ने कहा—सुनिए, साले साहब, एक अकेला मैं, कहाँ-कहाँ देखूँ—हाथ तो दो ही है।

छोटी बहू ने कहा—बोतल देकर तब बाजार जा सकता था।

इधर मँझली चाची और उधर बुढ़िया दादी। बुढ़िया दादी इतने दिनों से भंडार देखती रही। बुढ़ापे में रसोई करने में बेशक असुविधा होती है। एक दिन चूल्हे पर से भात की हाँडी उतारने लगी कि गरम माँड़ गिर पड़ा हाथ पर। फोले उग आए। उसी हालत मे काम करना पडता है। कहती है—काम की न कहो··· एक काम है। लोग ही घट रहे हैं, काम तो नही घटता। भगवान् जाने, कब इस जेलखाने से छुटकारा मिलेगा!

सौदामिनी कहने लगी—भगमान के मुँह मे आग, झाड़ू मारूँ ऐसे भगमान को। भोला का बप्पा कहा करता था—फूल बहू, आँखे रहते तिरभुवन को चीन्ह लो···भोला का बप्पा होता तो फिकर थी अपने को—भगमान को अक्कल-शऊर है; मैं आज किसके घर दीया जलाती हूँ और अपने खसम का घर घुपघुप अँधेरा।

दीवार के उस पार से सद्दू की माँ बोल उठती—हाँ री सौदी—गरहन कब लगेगा?

दीये की बत्ती बाँटती हुई सौदामिनी कहती—अरी, तू तो बाँझ-बेवा है। गरहन की खोज तुझे क्या! सारी बहुएँ जब शामिल थी तभी तो तेरे हाथ का पानी नही पीती थी कोई—अब तू भी सती हो गई। जाने क्या-क्या देखूंगी।

उधर से बुढ़िया दादी पूछती—आज क्या-क्या पकाया मँझली?

मँझली चाची बोली—गिने-गिनाए दो तो आदमी है ··कितना क्या पके? छोटे बाबू तो नाम को भात मुँह से लगाते है और छोटी बहू का तो परब-त्यौहार लगा ही रहता है साल-भर।

मँझली चाची काफी पकाने की आदी रही—थोडा-बहुत पकाने मे जी नही लगता। नमक ज्यादा पड जाता। मसाले, चीनी ज्यादा पड जाती।

छोटे बाबू को खिला देना पडता। मुँह मे जायका है फिर भी। कहते—थू.-थू:। पहले-सा स्वाद नहीं आता। पहले जब वे खाने बैठा करते थे, तो थाली के चारों तरफ कटोरों की कतार होती। ऐसा नही कि खाते बहुत थे। जरा-जरा चख लेते सब। रसोई की तारीफ करते थे। रसिक आदमी। कद्र समझते थे। लेकिन

आजकल कुछ भी अच्छा नहीं लगता।

मँझली काकी कहती—यह क्या रे वंशी, नमक जहर हो गया है!

यही सब देख-सुनकर हाबुलदत्त ने अपनी बेटी से कहा—यहाँ तेरी सेहत खराब हो जाएगी—चल, घर चल!

बेटी ने कहा—मगर मेरी सास का क्या होगा?

नन्हे बाबू इस बार भी फेल हो गए। बार-बार फेल होने से कैसे मुरझा-से गए! पहले के दोस्त-मोहिम, अपने-विराने सब बिखर गए। खान में नुकसान से और भी चोट लगी। उन्हीं की जिद थी। चाचाओं को उन्हीं ने राजी किया था। अब लाज लगती है। कहीं कोई उम्मीद नहीं। चारों तरफ से बुरे समाचार। लोगों से मिलना-जुलना बन्द कर दिया है। पुराने जी-हुजूर दोस्तों ने कोशिश की थी शुरू-शुरू। साँझ के अँधेरे में आँगन में आकर खड़े हो जाते। खबर भेजते—कह दो, विश्वम्भर आया है।

ऊपर से नन्हे बाबू कहला भेजते—मैं अभी नीचे न आ सकूँगा।

ऐसे ही दिन बीत रहे थे। लेकिन नन्हीं बाई के नाचवाले दिन मँझले बाबू के पेट में अचानक दर्द जो उठा, सो नन्हे बाबू राजी हो गए।

दूसरे दिन सवेरे बड़े महल के प्रांगण में चार-पाँच बग्घियाँ आ लगीं। सामान लादा गया। नन्हे बाबू सवार हुए। उनकी स्त्री सवार हुई और सवार हुई बड़ी मालकिन। सिन्धु का हाथ पकड़कर बड़ी माँ रोती-रोती गाड़ी पर सवार हुई। लेकिन रोते-रोते भी उन्होंने कहा—नन्हे, कोचवान से कह दे, गाड़ी को सड़क के बीच में ले चले। कहीं किनारे जो-सो होकर चले, तो कुबेला को नहा-नहाकर मरने की नौबत आएगी मुझे।

बनारसी साड़ी की कोर से आँखें पोंछती हुई इस घर की लक्ष्मी विदा हुई। बड़ी बहू। मुहल्ले के लोग, बहू, नौकरानियाँ खिड़की से झाँक-झाँककर देखने लगे।

मँझले बाबू नाचघर में तकिए के सहारे पड़े थे।

बेनी ने जाकर कहा—बड़ी माँ आज चली जा रही हैं।

मँझले बाबू चुपचाप तम्बाकू पीने लगे। मानो सुना ही नहीं। बेनी फिर से कहने जा रहा था।

मँझले बाबू जोर से डपट उठे—चुप रह हरामजादा—

ये घटनाएँ भी वंशी की जुबानी सुनी हैं। ऐसा ही होगा, मानो भूतनाथ को यह मालूम था। कुछ भी अविश्वसनीय नहीं। अप्रत्याशित नहीं। वह मानो प्रतीक्षा की आशंका से जर्जर हो उठा है। आँगन की फाँकों में घास उग आई थी। अस्तबल की दीवार में जाले पड़ गए थे। मियाँजान नहीं, यासीन नहीं, अव्वास नहीं। एक इब्राहिम ही टिमटिमा रहा था, वह भी कै दिन!

एकाएक वंशी ने खबर दी—पता है साले साहब, कल मँझले बाबू भी जा रहे हैं ?

—कहाँ ?

—गरानहट्टा। अपनी ससुराल।

दूसरे दिन सुबह ही बहुत-से ठेले आ गए। विधु सरकार मुस्तैद था। उँहूँ, ठीक नहीं हुआ। वैसे रखने से लकड़ी के सामान में दाग आ जाएगा।

हाथीदाँत का काम किया हुआ पलंग। उसके साथ मच्छरदानी लगाने की छतरी। दामी चीज। होशियारी से रखना चाहिए। बक्स-पिटारा, सन्दूक-अलमारी, मँझली बहू के खिलौनों का बक्स; कबूतर का दरबा, मँझले बाबू के गायबैल, तकिया-बिछौना, बर्तन-बासन, सूप-डलिया—। सब-कुछ का बटवारा हो चुका था पहले ही। उफ, सामान। सामान का तो मानो अन्त ही नहीं। सुबह से शाम तक ठेलों का ताँता। ठेले आते रहे, माल लदता गया। सरकार बाबू ने सवेरे से न नहाया, न खाया। एक-से खड़े रहे।

तीसरे पहर के करीब इब्राहिम गाड़ी लेकर आया। आज उसने वर्दी पहनी थी, तमगा लगाया था। घण्टी बजा दी एक बार।

हाथ में छड़ी लिये जीने से उतरते-उतरते जाने क्या सोचकर मँझले बाबू मुड़ पड़े। दुतल्ले के बरामदे से होकर छोटे बाबू के कमरे के सामने जाकर खड़े हुए। कितने सालों के बाद वे इस कमरे के सामने आकर खड़े हुए, याद नहीं। छुटपन में जब साथ खेलते थे, तभी दोनों वास्तव में अपने थे। बड़े हो जाने पर, और खासकर ब्याह हो जाने के बाद बात करने की कभी जरूरत ही नहीं हुई। सुखचर से मालगुजारी आती रही और खजाने में जमा होती रही। जमींदारी की आमदनी सन्दूक में पहाड़-सी जमती रही। हर कोई आप अपने में व्यस्त। कोई किसी की राह का रोड़ा न बना, किसी के बिना किसी को कोई रुकावट न पड़ी—मजे में सब चलता रहा। लेकिन आज मँझले बाबू बहुत-कुछ कहने को ही तैयार थे शायद।

पहले वंशी की ही नजर पड़ी। बोला—जी, छोटे बाबू सो रहे हैं।

—सो रहा है—जाने क्या सोचकर मँझले बाबू बोले—तो रहने दो।

वंशी बोला—जी, मैं जगा देता हूँ, आप बैठें।

वंशी छोटे बाबू के कान के पास मुँह ले जाकर आवाज देने लगा—छोटे बाबू···छोटे बाबू···

उनके पलंग में भी हाथीदाँत का काम किया हुआ था। बाद में छोटे बाबू ने उस पर मीनाकारी कराई थी। वंशी ने उनके कपड़े सम्हाल दिए। कई दिनों से नाई शायद हजामत बनाने नहीं आया था। फर्श पर पीकदान। मालिश की शीशी। खरल।

छोटे बाबू ने आँखें खोलीं। सामने ही मँझले बाबू पर नजर पड़ी। छोटे

बाबू की उदास-उदास निगाह।

क्या कहें, कुछ न सूझा तो छड़ी घुमाकर मँझले बाबू बोले—मैं चला मिट्ठू!

इतने दिनों बाद अपनी पुकार का नाम सुनकर छोटे बाबू का जैसे सब गड़बड़ हो गया। गौर किया, लेकिन मँझले भैया तब तक जा चुके थे।

मँझली बहू पिछले दरवाजे से निकलेंगी। जहाँ पर बाघगोटी का घर बना था, वहीं खड़ी थीं। सामान सब जा चुका था। गिरि ने कहा—माँजी, चलिए। बेनी पुकार रहा है—

मँझली बहू ने जाकर दीवार के दरवाजे को खोला। पूछा—क्या कर रही है छोटी?

चिन्ता ने देखा। बोली—छोटी माँ, जरा बाहर आइए।

छोटी बहू शायद सो रही थी। आँखें मलती हुई उठी और माथे का घूँघट सरकाती हुई बाहर आई।

उनकी ठुड्डी छूकर मँझली बहू ने कहा—होशियारी से रहना छोटी, और क्या कहूँ!

—जा रही हो मँझली दीदी?

—उपाय क्या है? बड़ी दीदी चली गई। घर जैसे खाँ-खाँ कर रहा है। इस घर में भी अब रहा जा सकता है?

—मैं लेकिन रहूँगी। मैं किस भाड़ में जाऊँ!—वह खिलखिला उठी।

मँझली बहू ने कहा—उनकी सेहत भी तो ठीक नहीं रहती। इसीलिए बाबूजी ने न माना। उसके बाद चिन्ता की तरफ देखकर बोली—अपनी छोटी म का खयाल रखना, और क्या कहूँ?

अचानक गले में आँचल डालकर दूर से ही चिन्ता ने जमीन पर माथ टेका।

उनके बाद पिछले द्वार से मँझली बहू की और सदर दरवाजे से मँझले बा की गाड़ी निकली। बेनी भी गया। बुढ़िया दादी भी गई। सौदामिनी भी गई।

बंसी ने कहा—अब?

सूने आंगण में खड़े-खड़े भूतनाथ को रुलाई छूटने लगी। बर्बादी जब शु हुई, तो इसका अन्त कैसे होगा, कौन कह सकता है! एक बार जी में आया— भाग जाए। किसी को बिना कहे, बिना ठिकाना बताए। इस इलाके से दूर भा जाए। केवल जबा का कोई हिल्ला लग जाए, तो उसकी जिम्मेदारी खत्म हो जाए अब फतेहपुर में ही डेरा ले लेगा। वहाँ ये बातें न याद आएँगी। नये सिरे शहरी जीवन शुरू करेगा। आज भी याद है उसे, उस दिन उसे बड़ा बुरा ल रहा था, सब झूठ है। प्रेम, प्यार, स्नेह, आत्मीयता, स्वार्थ, त्याग, सब झूठ है

संसार में किसी चीज की कोई कीमत नहीं। इतने बड़े मकान के तिमंजिले के एक कोने में केवल एक जीव और दुमंजिले के एक कमरे में एक मौत की घड़ियाँ गिनता हुआ बीमार। कैसे रहे यहाँ !

वंशी ने कहा—छोटी माँ का कोई हीला हो जाए तो चिन्ता को लेकर मैं भी घर चल दूँगा।

भूतनाथ ने पूछा—और छोटे बाबू—उन्हें कौन देखेगा ?

—बस, जबानी जमा-खर्च समझिए। अन्त-अन्त तक मैं जा थोड़े ही सकूँगा हुजूर !

भूतनाथ की भी यह समस्या थी। बद्री बाबू ने पहले ही चेता दिया था। उसी वक्त कहीं चल दिया होता, तो अच्छा था। मगर जाता भी कहाँ ! जाने को एक ही जगह थी—निवारण का अड्डा ! उन लोगों से मिल गया होता, तो जिन्दगी शायद और तरफ मुड़ गई होती। वह उस कलकत्ते को नए सिरे से देख पाता, जिसका आदि इतिहास बद्री बाबू से उसने सुना था। जिस कलकत्ते के दीवान थे गोविन्दराम मित्र, आज वही कलकत्ता भारतवर्ष का केन्द्र हो गया है। भूतनाथ ने वह दृश्य देखा है। एक दिन किंग्सफोर्ड साहब टहलने निकले थे। साथ में थे दो अंगरक्षक।

पीछे से कौन लोग तो बोल उठे—वंदे मातरम्—

किंग्सफोर्ड साहब रुक पड़े।—कौन है ? कौन है ?

लेकिन जिन्होंने नारा लगाया था, वे लोग गायब हो चुके थे। साहब ने बुदबुदाकर गालियाँ दीं—साला, नेटिव, रासकल—

अचानक उधर से दो छोटे-छोटे लड़के फिर चिल्ला उठे—वंदे मातरम्।

साहब की निगाह पड़ गई। बोले—पकड़ो बम्बख्तों को, पकड़ो !

मगर हाथ कोई नहीं लगा।

साथ के अंगरक्षक ने कहा—साहब, घर चलिए।

साहब चीख उठे—चुप रहो।

इतने में एक लड़का उनके सामने आकर बोला—साहब, सलाम ! साहब ने जेब से चॉकलेट निकालकर कहा—गुड बॉय।

लड़के ने चॉकलेट ले लिया। लेकिन लेते ही बोला—वंदे मातरम्। छड़ी लेकर साहब उसे मारने दौड़े—रासकल ! लड़का नौ-दो ग्यारह। साहब ने कहा—This horrible Bendematram will make me mad.

एक दिन निवारण से भेंट हुई थी। बड़ा व्यस्त-सा। बोला—भूतनाथ बाबू ! भूतनाथ दफ्तर से लौट रहा था। मार्ग किनारे में उतर पड़ा। पूछा—क्या खबर ?

निवारण बोला—काम तो हमारा शुरू हो गया, आपने देखा नहीं ? देखा क्यों नहीं ? अखबार खोलते ही नजर पड़ती। बड़े-बड़े हरूफों में ...

होता—'ढाका के मजिस्ट्रेट ऐलेन साहब पर गोली।' कभी रहता—बंगाल में स्वदेशी डाकुओं के उत्पात्। तो कभी रहता—छोटे लाट साहब की गाड़ी में बम।

निवारण ने देशी कपड़े पहन रखे थे। बहुतों ने विलायती कपड़ों का बायकाट कर दिया था।

निवारण बोला—बारिशाल में कान्फ्रेंस हुई थी, जानते हैं?

—सुना है।

—रसूल साहब सभापति थे। कैम्प साहब को खासा सबक दिया है।

—कैम्प साहब कौन?

—पुलिस के प्रधान। एमर्सन साहब मजिस्ट्रेट। कह रखा था—कं वंदेमातरम् नहीं बोल सकता। सुरेन्द्र बनर्जी ने आम सड़क पर खड़े होकर कहा-वंदेमातरम्। लम्बी दास्तान है। अखबार में सब तो छपा नहीं। मैं अपनी आंर देख आया था। उसी पर काव्यविशारद ने गीत लिखा।

—कौन-सा गीत?

—गीत तो बहुत-से लिखे, मगर यही सबसे अच्छा बन पड़ा है—

लाठी खाकर बारिशाल हो गया पुण्यमय!
गाते-जाते हैं मां की जय।
बहे खून की धारा
चल न सके बेचारा
खाकर मार न मां को भूले
चोट सहे दोबारा!
पड़ती लाठी बहता शोणित
फिर भी रोष न भय।

बड़े महल के प्रांगण में खड़े-खड़े भूतनाथ को निवारण की बात भी या आ गई। थोड़ी-सी पूंजी, मामूली-सी कामना, कभी उसने कोई बड़ा सपना नहं देखा। लेकिन कैसा तो डर लगता! डर मौत का नहीं। उससे बन पड़ेगा! ब्रजराखाल ने तो इस रास्ते पर जाने को नहीं कहा। उसका भी अपना अलग हं रास्ता! मगर कौन बताए, कौन-सा रास्ता सही है।

उसी रोज भूतनाथ ने पूछा भी था निवारण से—ब्रजराखाल की कुछ खोज-खबर है?

—ऊँहूँ।

—मेरी इच्छा होती है तुम्हारे दल में शामिल होने की।

निवारण ने कहा—मैंने तो कहा था, मगर तब आप आये नहीं।

—अब मैं बदल गया हूं। विवेकानन्दवाली राह मुझे कठोर लगती है, तुम लोगों वाला काम मैं कर सकूंगा।

निवारण बोला—स्वामी विवेकानन्द ने गलत तो नहीं कहा है। आपने अरविंद की रचनाएँ पढी हैं ?

भूतनाथ ने कहा—'वंदेमातरम्' पत्र में जो लिखते हैं, वह तो पढ़ा है—पर, आप गौर करें, अरविन्द जो कह रहे हैं, वही बातें स्वामीजी ने चार-पाँच साल पहले कही थी। पढ़ देखें आप, मैं आपको किताब दूँगा।

रूपचन्द बाबू के पुस्तकालय से वह किताब भूतनाथ ने पढ़ी थी। उस समय उसे पढने का नशा था। अरविन्द घोष ने लिखा था—

Vivekanand was a very lion among man. We perceive his influence still working gigantically. We know not well how, we know not where, in something not yet formed, something leonine, grand intutive uphearing that has entered the soul of India and we say—Behold ! Vivekanand still lives, in the souls of the mother and In the souls of the children.

एक और भी सवाल पूछा था भूतनाथ ने—अच्छा, यह जो बग-भग हुआ, क्या समझते हो कि यह रद्द होगा ?

पाँव के जूते से जमीन पीटकर निवारण ने कहा था—रद्द करना ही पड़ेगा। स्वामीजी ने कहा है—साधना करो तो सिद्धि जरूर मिलेगी। यह भी तो साधना है अपनी। कदम भैया और शिवनाथ को पुलिस पकड ले गई है—लेकिन हम सब तो नही दबे—हमारे युवक सघ मे आज कितने सदस्य हैं, जानते हैं आप ? पाँच सौ इकत्तीस। लेकिन शुरू में महज़ तीन-चार जने थे हम।

भूतनाथ ने पूछा—यानी तुम लोग स्वामी विवेकानन्द को मानते हो ?

—मानते हो का मतलब ? वही हमारे गुरु हैं। जो हमारे सघ के सदस्य बनते हैं, उन्हें पहले उन्ही की किताब पढ़ने को देते है। उन्हे न मानें, कहते क्या हैं आप !

—लेकिन व्रजराखाल भी तो उन्ही का भक्त है, उसने तुम्हारा साथ क्यों नही दिया ?

निवारण हँसा। बोला—आपने बडा टेढा सवाल पूछा। लेकिन रास्ते पर इसका निराकरण हो सकता है कभी ? कभी हमारे यहाँ आइए, क्यों ?

लेकिन जिस दिन मुरारीपुकुर की खबर पहले-पहल अखबार में छपी, याद है—बत्तीस न० मुरारीपुकुर रोड ! कैसी भयानक बात !

निवारण से बातें करके भूतनाथ जो चला, तो लगा, कोई उसके पीछे-पीछे चल रहा है। वह भी साइकिल पर है। गर्दन फिराकर भूतनाथ ने देखा। आ रहा था। भूतनाथ ने साइकिल तेज़ की। गली-कूचो से घूम-घूमकर जब वह घर पहुँचा, तो कोई न था।

लेकिन दूसरे दिन शाम को बड़े महल के सामने उस आदमी को चक्कर काटते देखा गया। बदन पर नारंगी रंग का एक अलवान। चेहरे पर जैसे चेचक के दाग। ठीक उसी दिनवाली शक्ल।

एक दिन वंशी से पूछा—वह आदमी है कौन वंशी, रोज खड़ा रहता है और मेरा पीछा करता है?

वंशी ने ज़रा ग़ौर से देखा। बोला—कोई राहगीर है, और क्या!

—राहगीर है तो मेरे पीछे-पीछे क्यों चलता है?

इन कुछ दिनों भूतनाथ जहाँ-जहाँ भी गया, वह पीछे लगा गया। उनके बाद नन्हे बाबू, मँझले बाबू—सब जब घर छोड़कर चले गये, सूना घर खाँ-खाँ करता है, गेट पर पहरा नहीं, तो भी लगा, कोई उसे देखते ही झट सामने से हट गया। उस दिन भूतनाथ ने फिर कहा—वंशी, वह देखो, वही तो है!

वंशी ने कहा—कहाँ, किधर?—वह अँधेरे गेट की तरफ़ ताकने लगा।

अब साँझ होते ही वंशी गेट पर ताला लगा देता। कोई जाने-आनेवाला तो रहा नहीं। शाम को ही बड़े महल में सन्नाटा हो जाता। बत्तियों को वंशी बुझा देता। नाहक खर्च। छोटे बाबू भी तो कहीं जाते नहीं। कौन रात गँवाकर लौटे! भूतनाथ को कभी लौटने में देर हो जाती, तो उसके पास कुंजी रहती एक। खुद ताला खोलकर अन्दर आता, खाता-पीता और चोर-कमरे में जाकर सो रहता। वहाँ सहूलियत न हो तो कितने तो कमरे पड़े हैं, जी चाहे जहाँ सोओ। बैठका उसी दिन से बन्द पड़ा रहता। वही उस दिन से, जिस दिन बद्री बाबू ने आत्महत्या की। वहाँ कोई नहीं जाता। जाने की जरूरत भी नहीं होती। बद्री बाबू ने अस्पताल की राह में ही अन्तिम साँस ली। फिर भी लगता, यहीं, इसी कमरे में उसकी आत्मा छिपी है। किसी मनसूबे से यहीं-कहीं घूमती-फिरती है। सबको डर लगता।

उस दिन बनमाली सरकार गली में फिर वैसा ही कोई आ खड़ा हुआ। भूतनाथ ने कहा—वह देख वंशी, वह—

—कहाँ? कौन है?

—अरे, वह, वहाँ—

अबकी वंशी ने देखा। झटपट जाकर उसने गेट खोल दिया। कहा—ये तो ननीबाबू के मैनेजर हैं हुजूर!

मैनेजर की काफ़ी उम्र हो गई है। हाथ में कनवास का एक थैला। दुबला-दुबला आदमी। होंठों के दोनों छोरों पर नुकीली मूँछें। अँधेरे में उस अलवानवाले आदमी-सा ही दीख रहा था। अन्दर आकर उस आदमी ने पूछा—मँझले बाबू कहाँ हैं? मँझले बाबू?

वंशी ने बताया—वे तो अब इस घर में नहीं रहते।

—नहीं रहते? अजीब मुसीबत है! फिर कहाँ रहते हैं?

—गरानहाटा मे।

उस आदमी ने ज़रा देर कुछ सोचा।

वंशी ने पूछा—आज रात को कैसे मैनेजर बाबू ?

—अरे भाई, निकला तो सुबह का ही हूँ। सारे कलकत्ते की खाक छानता रहा, अब कही बहू बाज़ार पहुँचा। यहाँ से पटलडागा। वहाँ हिसाब-किताब समझाकर तब घर। खैर। आजकल यहाँ रहता कौन है ?

वंशी ने कहा—नन्हे बाबू भी पथरियाघट्टा चले गए। यहाँ हैं सिर्फ छोटे बाबू, बीमार हैं, बिछावन से उठ नही सकते।

मैनेजर ने कहा—तो फिर रुपये कौन देगा ? तीन महीने का बाकी पड़ गया, इसका खयाल कौन करेगा ? झमेले में डाल दिया देखता हूँ।

जाने मैनेजर थैले में क्या ढूँढ़ने लगा ! बोला—ज़रा बत्ती तो जला—अँधेरे मे सूझ नही रहा है। रोशनी के पास जाकर मैनेजर ने एक मुड़ा हुआ कागज़ निकालकर वंशी के हाथ में दिया।

—कैसा कागज़ है मैनेजर बाबू ?

—अपने छोटे बाबू को दो। पढ़ते ही वे समझ जाएँगे। न साँप है न बिच्छू। साफ़-साफ लिखा है।

वंशी ने कहा—अरे, खोलकर ही न कहिए कि क्या है ?

मैनेजर खीज उठा। बोला—अरे बाबा, नोटिस है, नोटिस ! मकान छोड़ देने का नोटिस ! सब-कुछ क्या नौकर को जानना ही चाहिए ! मैं चलूँ। मरे बिना पाप नही जाने का। माँ तारा ब्रह्ममयी—

मैनेजर चला गया।

वंशी ने कहा—ज़रा देखिए तो हुज़ूर, क्या लिखा है ?

भूतनाथ पढने लगा—बज़रिये नोटिस हाज़ा के यह इत्तिला दी जाती कि ···आदि-इत्यादि। गिरवी जायदाद की बाबत कुल इतने रुपये का बकाया होता है, चूँकि पिछले तीन महीनो से कोई वसूली नही हुई, इसलिए मकान छोड देने का नोटिस दिया जाता है, नही तो अदालत की मदद से दखलदारों को निकाल बाहर किया जाएगा।

वंशी ने पूछा—घर छोड़ना पड़ेगा क्या हुज़ूर ?

—लिखा तो कुछ वैसा ही है।

—यह कैसे हो सकता है···घर छोड़कर चल देंगे ?

भूतनाथ भी किंकर्तव्यविमूढ़-सा हो गया। अन्त मे क्या यही होगा ! भूतनाथ ने पूछा—मैनेजर क्या चला गया ?

—बुलाऊँ क्या हुज़ूर ?

—हाँ, बुला तो ज़रा।

वंशी वहीं से पुकार उठा—मैनेजर बाबू, अरे ओ मैनेजर बाबू !

मैनेजर तब तक काफ़ी दूर निकल गया था। वंशी पीछे से दौड़ा। बनमाली सरकार लेन में अँधेरा गाढ़ा हो चुका था। उधर की दो-एक दूकानों में बत्ती जलाई गई थी। बड़े महल का प्रांगण लेकिन सबसे ज्यादा सन्नाटा। विमूढ़-सा इस सूने में खड़े-खड़े भूतनाथ को कुछ डर लगने लगा। मँझले बाबू के कबूतर के खाली दरबे पड़े थे कई। उन्हीं में कबूतरों के कुछ जोड़ों ने बसेरा लिया था। अँधेरे में अचानक कभी-कभी वे वक-वकम् कर उठते। डैनों की फड़फड़ाहट होती। फिर सब सन्नाटा। इब्राहिम के कमरे के सामने जो चौकोर बत्ती लटक पड़ी है, सो लटकी ही पड़ी है। अँधेरे में चमगादड़ का भ्रम होता। चमगादड़-सा ही झूलता रहता। हवा में डोला करता। कोई चूहा इधर-से-उधर जाता कि पैरों से पत्ते खड़खड़ा उठते। भूतनाथ ही क्यों, खुद वह चूहा भी चौंक जाता। रसोईघर के पीछे जब वंशी हथौड़े से कोयला तोड़ता तो तमाम घर में उसकी प्रतिध्वनि गूंज जाती। लोहे की जंजीरें और कड़े झनझना उठते। भूतनाथ को लगता मानो बद्री बाबू कह रहे हों—क्यों, कहा था न मैंने ! कैसा !

डेवढ़ी पर पहले-सा कोई घड़ियाल नहीं बजता अब। घण्टा तो झूल ही रहा था, पर बजाए कौन ! घड़ियों को तो बद्री बाबू ने फूंक दिया था, लेकिन उससे समय थोड़े ही रुक गया था ! हाँ, अब समय जानने की किसी को जरूरत ही नहीं पड़ती। न कोई स्कूल ही जाता, न कोई दफ्तर। समय पर जगकर रसोई चढ़ाने की दरकार नहीं होती। दरबान भी नहीं रहे कि समय के अनुसार पारी बदला करे। नन्हे बाबू भी नहीं कि इम्तहान की पढ़ाई के लिए घड़ी देखें या घड़ी देख-देखकर राग-रागिनियों का क्रम उनके अड्डे पर चले। अब तो सूरज जब माथे के ऊपर आ जाता तो समझना पड़ता कि बारह बज गए—चक्का अस्त होने पर सांझ। घड़ी नहीं है, मगर समय क्या बैठा है ? माना कि बद्री बाबू ने बड़े महल की सारी घड़ियां जला दीं, लेकिन सूरज क्या नहीं उगता ?

भूतनाथ खूब समझ रहा था कि यहां का सूरज यद्यपि डूब गया, लेकिन कहीं और एक दूसरे मुहल्ले में उग रहा था। वहां रूपचाँद बाबू के हजारों-हजार मकान बन रहे थे। वहां आदमी की एक टोली एक नई ही सभ्यता की नींव डाल रही थी। शायद कि वे लोग इतने बड़े नहीं, ऐसे अभिजात नहीं, उनके घर इतने घोड़े, पालकियां, औरत, ग्रूहम, लैंडोलेट नहीं, उनकी बीवियां नाक में हीरे की कील नहीं पहनतीं, गुड़ियों के ब्याह पर हजार-बारह सौ रुपये नहीं उड़ाया करतीं, तीन सौ पर चीनी ऑर्किड का पौधा लेकर बांट नहीं देतीं, मर्दों को राजाबहादुर का खिताब नहीं—तो भी रात को वे सोया करते हैं, सुबह जगा करते हैं, औरों की कमाई कौड़ी का हिस्सा नहीं बँटाते। वे पांव-पयादे दफ्तर जाते, झड़ीपानी में छाता ओढ़ते और कमाकर खाते हैं। उनमें से सभी ननीलाल जैसे धनी शायद नहीं, पर

कोई स्वल्पवित्त, कोई मध्यवित्त, कोई वकील, कोई बैरिस्टर, तो कोई बैंकर हैं।

सोचते-सोचते सोच ही में खो जाता भूतनाथ। वही सन् तेरह सौ पैंतालीस का साल। जाने किस गिरजे की घड़ी में यन्त्रयुग के स्वागत का घण्टा बजा था। किन्तु किसे पता था कि एक दिन वही घड़ी मध्ययुग के महाकाल के कल्पना-सौध को जमींदोज़ कर देगी? घण्टा, मिनट और सेकेंड में महाकाल को टुकड़े-टुकड़े करके समय के क्षय का अक्षय इतिहास तैयार करेगी? महाकाल को खंडित कर अभिजातों के अभिजात्य का हरण करेगी? महाकाल की कल्पना को चूर-चूर करके शायद इसी घड़ी ने पहली बार यह बताया कि आकाश चूमते गिरजों की गुम्बदें, मस्जिदों की मीनारें, मन्दिरों के शिखर न तो शाश्वत हैं, न सनातन। उसने बताया—धर्म, देवता और ब्राह्मणों के रौब-दाब सब कल्पना है, छलना है, सत्य हैं सिर्फ़ पाँवों तले की ज़मीन और भले-बुरे की मिलावटवाले मनुष्य। 'सर्वोपरि सत्य मनुष्य है'—यह बात चण्डीदास से बहुत पहले कह गई है घड़ी। वह कह गई, सत्य केवल मनुष्य ही नहीं उसके चौबीसों घण्टे सत्य हैं, चौदह सौ चालीस मिनट सत्य हैं, छियासी हज़ार चार सौ सेकण्ड भी सत्य हैं। घड़ी ने और भी कहा—हिसाब के घेरे में समय को नाप-नापकर चलना होगा, और-और चीज़ों की तरह मनुष्य का भी मूल्य है। वैदूर्यमणि, हिरण्यमणि और कौस्तुभमणि चौधरी की तरह समय का अपव्यय करने से वह उसका बदला ज़रूर चुकाएगा।

बद्री बाबू की बातें आजकल इस घर की आबहवा में मुखर हो उठती हैं।

बद्री बाबू कहा करते थे—Time is money.

और ननीलाल कहता था—God is money.

सच ही तो, समय रुका नहीं रहता। घड़ियों को जलाकर बद्री बाबू ने क्या अपने से ही बदला चुकाना चाहा था? लेकिन समय तो अपनी ही राह चलता गया। उसने किसी की तरफ नहीं ताका। उसने जैसे चौधरी बाबुओं का मुंह नहीं जोहा, वैसे ही लार्ड कर्ज़न का मुँह नहीं जोहा।

अठारह सौ निन्यानवे की छठी जनवरी को कर्ज़न बड़े लाट होकर आये। जिस कर्ज़न की सूझ से बंगाल के दो टुकड़े हुए, समय के फेर से उसी कर्ज़न को इस्तीफा देकर अपने देश लौट जाना पड़ा। बारह अगस्त उन्नीस सौ पाँच ई० में। लेकिन समय चुप न बैठा रहा। गाँव-गाँव में अनुशीलन समिति बनी। निवारण की जमात ने विलायती कपड़े जलाए, बम फेंके, लाठी सीखी। सोचते बदन सिहर उठता। वह दृश्य आँखों पर नाच उठता।

राजा सुबोध मल्लिक का घर। झुटपुटे में अन्दर सब-कुछ दिखाई नहीं पड़ता। अन्दर तीन जने बैठे। अरविंद घोष, सुबोध मल्लिक और पी० मित्र। इधर-उधर और भी कुछ लोग। उनमें एक ओर बारीन घोष भी।

अचानक बारीन घोष बोल पड़े—किंग्सफोर्ड साहब के जुल्म दिनोंदिन

बढ़ते जा रहे हैं—आप लोग इसका कुछ कीजिए, कोई उपाय, कोई किनारा—

पी० मित्र बोल उठे—Yes, Kingsford must die !

अरविंद घोष ने कहा—I concur.

कमरे का अँधेरा अचानक और घनिष्ठ हो उठा ।

यह बात घटना के अनेक दिन बाद निवारण की ज़बानी सुनी थी। लेकिन वह शायद सन् उन्नीस सौ ग्यारह के बाद की बात। उसी साल दिल्ली-दरबार हुआ। बंगाल फिर एक हुआ। राजधानी कलकत्ते से दिल्ली ले जाई गई। उसी बारह दिसम्बर की रात को अचानक रास्ते में निवारण से भेंट हो गई थी। खैर। अभी वह बात छोड़िए।

मैनेजर से अचानक एक दिन और मुलाकात हो गई। भूतनाथ बार-शिमले जा रहा था और मैनेजर उधर से आ रहा था। हाथ में वही कनवास का थैला। दुबला-दुबला। ओंठ के ऊपर नुकीली मूँछें। भूतनाथ ने पुकारा—मैनेजर साहब !

मैनेजर आवाज़ पाकर इधर-उधर देखने लगा।—कौन हो भाई, किसने मुझे पुकारा ?

भूतनाथ बोला—जी मैं हूँ। बड़े महल में रहता हूँ।

मैनेजर मानो पहचान गया। बोला—अच्छा ही हुआ, भेंट हो गई। आज ही कोर्ट में दरखास्त दी है, पता नहीं होगा शायद। अब बाबू लोग कोर्ट ही में जवाब दें। घर भी नहीं छोड़ेंगे, रुपए भी नहीं चुकाएँगे—अच्छा रवैया है यह तो !

भूतनाथ बोला—छोटे बाबू तो बेचारे मरने दाखिल हैं—घर छोड़ें तो कैसे !

—तो फिर रुपये क्यों रखे हुए हैं ?—कहकर हनहनाता वह जाने लगा

भूतनाथ ने कहा—सुनिए-सुनिए, इतनी जल्दी में क्यों ?

मैनेजर रुक गया—कहिए, जल्दी कहिए, मुझे बड़ा काम है।

भूतनाथ ने पूछा—ननी बाबू कब तक लौटेंगे, बता सकते हैं ?

—लौटने की बात तो थी, उसके भी छः महीने हो गए। जानें कब लौटें लेकिन साहब की खोज क्यों ?

—यों ही पूछा।

—साहब को कहने से कुछ न होगा, सुन रखो। साहब के पाँव भी पक तो फूटी पाई की माफ़ी नहीं मिल सकती। साहब तो साहब ही हैं। बस, एक बार ज़रूरत हो तो दान-खैरात कर सकते हैं, पर सूद की कौड़ी नहीं छोड़ सकते। सा की उम्मीद तो छोड़ ही दो भैया ! तारा ब्रह्ममयी···

भूतनाथ ने फिर पूछा—उनका पता दे सकते हैं आप ?

—कहाँ का पता ?

—विलायत का।

—बाप रे!—कहकर मैनेजर दस डग पीछे हट गया। बोला—तुम लोग मेरी नौकरी खोना चाहते हो। उससे तो यह करो कि मैं गर्दन बढ़ा देता हूँ, कटार मार दो।

लम्बी डगें भरता मैनेजर चला गया। भूतनाथ एकटक देखता रहा। दिन-भर घूम-घूमकर जाने कहाँ-कहाँ तकाजा करता है। हैरत होती है; कभी रुपये के लिए ननीलाल ऐसे ही घूमता रहा है। किस-किस बहाने से सारे कलकत्ते की खाक छानता रहा है। जब कहीं कुछ नहीं मिला तो नन्हे बाबू के सामने हाथ फैलाया है। आज उसका रवैया देखो! जो भगवान् को मानता तक नहीं था, उसी पर भगवान् के आशीर्वाद का ढंग तो देख लो!

कहाँ बहू बाजार और कहाँ बार-शिमले! रोज-रोज का यह जाना-आना अब नहीं चलता, कुछ दिनों के बाद जब छुट्टी खत्म हो जाएगी, तो यह देखना-सुनना बन सकेगा। खत्म तो हो ही गया, मगर खत्म होने का नशा नहीं जाता। किन्तु भूतनाथ के जी में आता, उसके मन की छिपी हुई इच्छा संसार से सदा छिपी रहे। वह बात किसी से कहने की नहीं, बताने की भी नहीं। सुनकर लोग हँसेंगे।

बहुत पहले जबा ने एक बार कहा था—अच्छा, आप जो रोज इतनी दूर आया करते हैं, सो किस उम्मीद से? ऊब नहीं आती?

भूतनाथ तुरत उसका कोई उत्तर न दे सका। फिर भी बोला—शायद यह मेरा स्वभाव बन गया है जबा! अब जब तक तुम मना नहीं करतीं, मेरा आना बन्द नहीं होगा।

उसके बाद जबा ने कहा—लेकिन सच ही आप आना बन्द न कर बैठें!

फिर भी भूतनाथ को डर होता। डर होता कि किसी कारण से कभी उसका यहाँ आना कहीं बन्द हो जाए! जबा जब उपासना करने बैठती, तो कभी-कभी भूतनाथ भी साथ देता। जब तक वह आँखें बन्द किए रहता, तब तक आँखों में जबा की सूरत ही तैरती होती। भूतनाथ जानता है। अपने अधिकार की सीमा की तरफ़ से वह सचेत है। लेकिन लगता, वहाँ मानो कोई और नहीं। फतेपुर की मंगलचण्डी, बाग बाजार की शीतला, सभी देवताओं की याद करके वह भूलने की चेष्टा करता। जिन्दगी से पोंछ डालना चाहता। सारी स्मृतियाँ नोंच फेंकना चाहता। भूतनाथ समझता कि यह अनधिकार चेष्टा है उसकी। यहाँ उसका सम्बन्ध सिर्फ़ कर्तव्य और परोपकार का है। यह नाता उपकार और उपकृत का है। दाता और ग्रहीता का है। मालिक और नौकर का है। याद है, जिस दिन जबा के ब्याह की बात उसने सुनी थी, उस दिन कोई अनजानी पीड़ा उसकी सारी चेतना को निस्पन्द कर गई थी। याद है, अपने मन के कान को मलकर उसने कहा था—यह अपराध है, अपराध। जब भी जानते में यह बात मन में आती, वह अपने को डाँट—

दिया करता। अपनी इस दुराशा पर उसे शर्म आती। औरों से कहने की बात तो दूर रहे, अपने इस अपराध के लिए मन-ही-मन वह आप ही सज़ा भोगता रहा है।

फिर भी क्या वह कलेजे पर हाथ रखकर ऐसा कह सकता है कि यह उसका स्वभाव है, उसके सिवाय कुछ नहीं !

उस रोज वह ज्यों ही जवा के यहाँ पहुँचा, नौकरानी ने कहा—मैं अब यहाँ काम न कर सकूँगी।

—क्यों, तुम्हें फिर क्या हुआ ?

नौकरानी कुछ बोली नहीं।

—दीदीजी ने कुछ कहा है ?

नौकरानी बोली—नहीं।

—फिर ?

—जी, मुझे अच्छा नहीं लगता। रोज पकाती हूँ, रोज ही सब फेंकना पड़ता है। आखिर यह गिरस्ती किसकी है, किसके लिए मैं जी-जान से खटती हूँ !

भूतनाथ अवाक् हो गया। बोला—क्यों, दीदीजी खाती नहीं ?

—कहाँ खाती हैं ! दो कौर मुँह में डालती हैं और सब छोड़ देती हैं। फिर पकाने की क्या पड़ी है ? मैं तो विधवा हूँ, मेरे लिए मछली-माँस···इतने प्रकार की क्या जरूरत है !

भूतनाथ बोला—अच्छा, मैं उनसे कहूँगा—तुम दरवाजा बन्द कर लो।

उस रोज भी जवा सुविनय बाबू की तस्वीर के नीचे चुप बैठी थी।

भूतनाथ ने कहा—तुम्हारी यह क्या हरकत सुनी मैंने ! सुना—तुम खाती ही नहीं हो !

जवा ने नजर उठाकर देखा। शान्त आँखें। उन आँखों में कोई अभियोग, कोई अनुयोग, ऐसा कोई प्रश्न भी न था। मानो देखना भले आदमी का काम है, इसलिए देख लिया। बस।

भूतनाथ बोला—आज तुम्हें खिलाकर ही मैं लौटूँगा, चाहे जितनी भी रात हो। मेरे सामने खाना पड़ेगा।

जवा कुछ न बोली।

भूतनाथ ने कहा—तुम्हारा क्या खयाल है, इस तरह करने से पिताजी की आत्मा को शान्ति मिलेगी···पता नहीं, तुम लोग दूसरे जन्म पर विश्वास करती हो या नहीं, लेकिन इतना मैं बेशक कह सकता हूँ कि इससे सर्वज्ञ को तकलीफ होती है। तुम्हारे चलते वे स्वर्ग में भी कष्ट पा रहे हैं।

जवा ने कहा—मैं और सोच नहीं सकती भूतनाथ बाबू—कहकर धीरे-धीरे वह अपने कमरे में चली गई।

रोज यही हुआ करता। कोई बात उठती और जवाबदेही का समय आता

कि अपने कमरे मे जाकर दरवाजा बन्द कर लेती।

उस दिन लेकिन इसका व्यतिक्रम हुआ। अँधेरी गली में से होकर भूतनाथ जवा के घर मे पाँव रखने को ही था कि उसे लगा, बगल से झट कोई निकल गया। पहचानी-सी शक्ल। गैसपोस्ट के नीचे जाते ही थोड़ी-सी रोशनी उसके चेहरे पर पड़ी। साफ दीख पड़ा—सुपवित्र था। वह जल्दी-जल्दी चला जा रहा था। भूतनाथ भी खूब अवाक् हुआ। वह चिल्लाकर उसे पुकारने जा रहा था, लेकिन सहम गया। सुपवित्र क्या जवा के घर से निकला? ऐसे समय वहाँ गया ही क्यों था?

जवा उस दिन भी यथास्थान चुपचाप बैठी थी।

भूतनाथ ने जाते ही पूछा—सुपवित्र यहाँ आया था क्या?

नाम सुनकर जवा कुछ विचलित-सी हुई।

भूतनाथ ने फिर पूछा—अभी सुपवित्र को देखा, तुम्हारे पास आया था?

सिर झुकाए जवा बोली—नही।

—मैंने इसी गली मे उसे देखा। सोचा, शायद तुम्हारे पास आया होगा।

सिर उसी तरह झुकाए जवा बोली—वह तो रोज ही आता है।

—रोज आता है? तुम्हारे पास?

जवा जरा देर चुप रही। बोली—मैं जानती थी कि उससे रहा नही जाएगा। लेकिन अन्दर तो आ नहीं सकता, इसलिए रास्ते पर ही खड़ा रहता है, वही से खिड़की की तरफ देखता रहता है।

भूतनाथ ने पूछा—तुमने देखा है?

जवा ने कहा—दो-तीन दिन देखा था, लेकिन अब नही देखती। इसलिए अब उस खिड़की को नही खोलती, बन्द ही रखती हूँ।

भूतनाथ ने देखा, रास्ते की तरफ की खिडकी बन्द थी, भूतनाथ ने कहा—बारहा पूछता रहा, तुमसे कोई जवाब नहीं मिला, फिर भी पूछता हूँ, आखिर यह सजा क्यों भोग रही हो, कुछ कहोगी?

जवा चुप रही।

भूतनाथ ने कहा—दुहाई है, जवाब देने से बचने के लिए कमरे मे जाकर दरवाजा बन्द न कर लेना। तुम्हारे भले के लिए ही कह रहा हूँ।

अब जवा ने सिर उठाया। बोली—मेरी भलाई की चेष्टा के लिए आपको धन्यवाद! लेकिन तकलीफ क्या मुझे नही होती—आप क्या यह कहना चाहते हैं कि सुपवित्र को कष्ट देकर मैं सुखी हूँ?—कहते-कहते उसकी आँखें गीली हो आईं।

भूतनाथ चुप।

जरा देर मे जवा बोली—आप मेरी भलाई चाहते हैं, तो मेरा एक उपकार करेंगे आप?

—कहो।

—आप उसके घर जाकर उससे कह दें, वह मेरे घर के सामने इस तरह घूमा-फिरा न करे—इससे मुझे तकलीफ होती है।

—कह तो मैं आऊँगा मान लो, लेकिन तुम्हारी इस बेवजह की जिद का वह कारण पूछे तो क्या कहूँगा मैं ?

जबा बोली—उसे सब मालूम है। मैंने उसे बताया है।

भूतनाथ ने कहा—मुझे क्या वह नहीं जानना चाहिए ?

करुणा-भरी निगाह से एक बार भूतनाथ को ताककर जबा ने आँखें झुका लीं। उसके बाद बोली—आप भी तो सब जानते हैं। उसी दिन तो धर्मदास बाबू आपके सामने ही सब बता गए। पतिव्रता स्त्री का धर्म ही एकनिष्ठता है—एषास्य परमागतिः···

भूतनाथ फिर भी कुछ समझ न सका। बोला—पतिव्रता स्त्री से तुम्हारा क्या नाता जबा ?

नजर झुकाकर जबा बोली—मेरा भी विवाह हो चुका है।

भूतनाथ बोला—अच्छा !

जबा उसी तरह सिर झुकाकर बोली—हाँ। लेकिन मुझसे और कुछ न पूछें आप।

अभिभूत होकर भूतनाथ आकाश-पाताल सोचने लगा। इतने दिनों की तैयारी, इतनी लम्बी इन्तजारी—सब बेकार ! शादी भी हो चुकी है तो यह बात उसे इतने दिनों के बाद जताने के लिए कौन आया ! छः ही महीने की उम्र में शादी हो गई थी, यह बात इतने दिनों तक पोशीदा क्यों रही ? भूतनाथ ने जबा की ओर ताका। अचानक वह तपस्विनी जैसी लगी। सिर झुकाए वह चुपचाप रोज की जगह पर निर्विकार बैठी थी। भूतनाथ को ऐसा भी लगा कि जबा का तन-मन एक अद्भुत अनुभूति से आच्छन्न है, जिस अनुभूति में से सूरज धरती को खींचा करता है, जिस अनुभूति में से आलोक-तरंगें लोक से लोकान्तर तक तरंगित होती रहती हैं। शोक के आये हुए आघात को झेलकर मानो वह शोक से परे पहुँच सका है। भूतनाथ ने पूछा—लेकिन ये बातें तुमने सुनी किससे ?

जबा ने कहा—पिताजी से।

भूतनाथ और भी हैरान हो गया। बोला—यही ठीक है तो वे सुपवित्र को आशीर्वाद कैसे दे गए ? इस ब्याह में उन्होंने आपत्ति की थी ?

—नहीं।

भूतनाथ ने समझा नहीं। पूछा—उनकी क्या राय थी ?

—उनकी राय थी, लेकिन मेरी नहीं है। एक स्वामी के रहते स्त्री की दुबारा शादी नहीं होनी चाहिए।

—तुम्हारे पति हैं ?

—हैं ।

—फिर यह सम्भव कैसे हुआ ? सुपवित्र को ही उन्होंने इतने दिनों तक प्रश्रय क्यों दिया ?

सिर उठाकर जवा बोली—पिताजी तो इसे संस्कार कहते थे—इस पर उन्हें विश्वास न था । दादा के किए कामो पर वे अनुताप करते रहे हैं, कभी कुछ ज़ाहिर नही होने दिया ।

भूतनाथ ने पूछा—उन्हे सब मालूम था ?

—हाँ, जानते थे । लेकिन उन्होने स्वीकार नही किया ।

—स्वीकार नही किया ? फिर मरते वक्त वे बता क्यो गए ?

जवा ने कहा—स्वीकार वे नही करते थे, मरने से पहले जब उन्होंने मुझे बताया तो कहा—तुमने तो धर्म बदला है, तुम्हारे लिए वह विवाह झूठा है । मैं सम्मति देता हूँ, तुम कोई संकोच न करो । उसके बाद उन्होने मुझे चिट्ठी दिखाई ।

—चिट्ठी ?

—हाँ, वह चिट्ठी, जो दादी ने पिताजी को लिखी थी ।

जवा कहने लगी—पिताजी ने कहा—अब तक तुम्हे मैंने बताया नही था बेटी, दुनिया में किसी को नही बताया । लेकिन अगर यह पूछो कि फिर आज क्यो बता रहा हूँ, तो कहूँगा, जिन्दगी मे मैंने अपने जानते कोई मिथ्याचार नही किया, अब तक मन मे बड़ी दुविधाएँ थी, सकोच था; सोचता था सुनकर तुम्हें बडी चोट लगेगी । फिर भी आज कहे बिना रहा नही जाता । मेरे भगवान् मुझसे कह रहे हैं, यह झूठ है, अन्याय है—न कहूँ, तो मुक्ति नही होगी मेरी । तुम्हे तो पता है, बाल-विवाह का मैं समर्थक नही, पर यह तो शैशव-विवाह है, तुम्हारे ज्ञानोदय से पहले ही हुआ था ।

भूतनाथ को उस रात की बात याद आई । आधी रात का समय होगा । अचानक सुविनय बाबू ने आँखें खोली—पुकारा—बिटिया—

भूतनाथ सुपवित्र को लेकर बगल के कमरे मे चला गया । उसी समय मौत के पहले बहुत दिनों की गोपनीयता को उन्होंने जवा पर ज़ाहिर कर दिया । जवा उस दिन की सारी बातें एक-एक कर सुना गई ।

सुविनय बाबू ने कहा था—मेरा जन्म आँधी-तूफान के लग्न मे हुआ था—वह एक महा दुर्दिन । सारी जिन्दगी आँधी की ही तरह बीती । मैंने सोचा था, तुम्हें उस अन्धड के झोकों से दूर ही रखूँगा । लेकिन तुम्हारी पैदाइश के एक ही महीने बाद मैंने तुम्हें खो दिया । और जब फिर से पाया, तो पहले ही तुम्हारे जीवन की चरम दुर्घटना घट चुकी थी ।

जवा की जबानी सुनी हुई उस दिन की सारी घटनाएँ आज भी याद आती

हैं। कितने साल पहले की घटना ! रामहरि भट्टाचार्य उसी रोज़ जवा को चुराकर बलरामपुर ले गये थे।

पत्नी ने कहा—माँ की गोद छुड़ाकर इसे उठा जो लाए, पालोगे कैसे ?

उन्होंने कहा—तुम पालना। एक बच्चे को जैसे पाला था, वैसे ही।

—लेकिन इसने तो अभी माँ का दूध पीना छोड़ा नहीं है ?

—दूध का इन्तज़ाम मैं किए देता हूँ—और चादर लेकर वे निकल पड़े। गाँव-भर में प्रभाव था उनका। वही पत्रा देखकर बताते तब गाँव के ज़मींदार के यहाँ कोई शुभ काज होता। उन्हीं के बताए सन्धि-पूजा होती, शादी-ब्याह होता, वर-वधू की विदाई होती। पेड़ का पहला फल पहले रामहरि भट्टाचार्य को देकर बाद में यजमान खाते। मानो उनके पहले पौधे का बैंगन, पोखरे की मछली, गाय का दूध खुद ग्रहण करना पाप हो।

सूरज सवेरे से ही बरामदे पर बैठा था उनके इन्तजार में। वे बगीचे गये थे। उनके बगीचा जाने के माने और भी कुछ। इस-उस घर में घूमकर यह-वह चीज़ लेकर लौटने में दस बज जाते। लौटकर तम्बाकू पीते, फिर बरामदे में बैठकर एक-एक सारी पोथियों को धूप में सूखने देते, गंगाजल छींटकर उन्हें पवित्र करते। लेकिन घर आते ही वे बोले—कौन है वहाँ, सूरज ?

ज़मीन तक झुककर सूरज नें दण्डवत् किया। बोला—जी, बच्चे को पाठशाला भेजने का इरादा हो रहा है—कोई दिन देख दें।

—अबे, तुझे गले में फन्दा डालने को रस्सी नहीं जुटती ! ग्वाला है, बच्चे को दूध बेचना सिखाएगा कि लिखना-पढ़ना ! लिखा-पढ़ाकर उसे ब्रह्मसमाजी बनाने का इरादा है ?

—हम लोग तो मूरख रह गए। बच्चे को भी काला अच्छर भैंस बराबर ही रहने दें ! आजकल तो सभी लिखा-पढ़ा रहे हैं।

—फिर तू भी लिखा-पढ़ा। मेरा गोपी ब्रह्मसमाजी बनकर गाय का मांस खाने लगा है, तेरा भी लड़का वही करेगा। मुझे दोष न देना। हाँ, दक्षिणा क्या देगा ?

—जी, जो भी है, सब तो आप ही के आशीर्वाद से है। आप लेंगे तो ऐसी क्या बात हुई ?

रामहरि पण्डित पोथी-पत्रा खोलकर बैठ गए। बोले—अच्छा, एक दुधारू गाय दे जाना—दूध चाहिए।

—खैर, प्रणामी में चार-पाँच सेर दूध ही दे जाऊँगा।

—नेन्न, सिर्फ़ दूध से मेरा काम नहीं बनेगा। बाद में तुम्हारी गैया तुम्हें लौटा दूँगा। असल में मेरी नन्हीं पोती के लिए चाहिए।

—पोती के लिए ?—सूरज अचरज में पड़ गया।

—हाँ, पोती के लिए। मेरे गोपी की बेटी।

दूसरे दिन नारायण हलवाई से भेंट हो गई। प्रणाम करके उसने कहा—मैंने सुना आप अपनी पोती को ले आए हैं ?

—हाँ, ले आया हूँ। ब्रह्मसमाजी तो मेरा लड़का हुआ है, इस बच्ची ने कौन-सा कसूर किया ? महीने-भर की है, उसकी नसों में अपना ही तो लहू है, वंश तो नहीं डूबा, अभी भी लहू में खासा ब्रह्मतेज है।—उन्होंने हाथ में जनेऊ लेकर नारायण की तरफ कसमसाकर ताका।

उसके बाद एक-एक कर सबने पूछा। सब हैरान रहे। जब लड़का ब्रह्म-समाजी हो गया, तो उसके बाल-बच्चे भी ब्रह्मसमाजी ही होंगे ! और लड़का अगर गोमांस खाएगा, तो भगवान् न करे, वह पाप उसकी सन्तान को भी लगे।

रामहरि ने कहा—अरे नहीं, दो महीने की उमर तक बच्चा बिलकुल निष्पाप रहता है—सभी तरह की छूत से सर्वथा परे। उसकी तो अभी कोई जात ही नहीं—जैसी मेरी काली, वैसी वह—शुद्ध, अपापविद्ध।

—लेकिन जब वह बड़ी होगी ?

रामहरि ने कहा—उससे पहले ही मैं ब्राह्मण से उसकी शादी कर दूंगा। जबा पूरे दो महीने की भी नहीं हुई थी। वैशाख का महीना। साँझ ही से वैशाखी अन्धड़ के झोंके चलने लगे थे। रात होने से पहले ही पण्डिताइन ने खिड़की-दरवाजा बन्द कर लिया था, खाना-पीना खत्म कर लिया था। दो महीने की पोती को अपनी बगल में लिए सो गई थी। आधी रात को पण्डितजी की पुकार से नींद खुल गई। देखा, हाथ में दीया लिये रामहरि खड़े हैं। देवीथान के पास बहुतेरे लोगों की आवाज सुनाई पड़ी। पूछा—क्या है ? कब आये ? यह शोर-गुल कैसा ?

रामहरि ने कहा—लोग-बाग आ गए हैं। जबा को दो, लाओ !

—क्यों, जबा को कहाँ ले जाओगे ?

रामहरि के एक हाथ में रोशनी थी। दूसरा हाथ बढ़ाकर बोले—जल्दी करो, साइत टल जाएगी।

पण्डिताइन रोने लगी—कैसी साइत, कैसी ?

रामहरि को समय कहाँ ? उन्होंने स्त्री की गोद से जबा को छीन लिया। बोले—जबा का विवाह है।

—ब्याह है ? और उसके बापको खबर भी न दी—उसी की लड़की और'''

रामहरि चले जा रहे थे। जाते-जाते बोले—समझ लो कि अपना गोपी मर चुका है।

एक अजाने आतंक से स्त्री काँप उठी। पूछा—किससे ब्याह कर रहे हो ?

—उसकी फिकर न करो तुम, जात-कुल सब देख लिया है, तब कर रहा हूँ।

—दूल्हे को देख तो लिया है ठीक से। मुझे जो डर लग रहा है।

बाहर अन्धड़ दूने ज़ोर पर आ गया मानो। रामहरि ने उसकी कोई परवाह न की और निकल गये। बाहर शंख की आवाज़ हुई। घण्टा बजा। मन्त्रोच्चार सुनाई पड़ा। बड़ी दुविधा में पण्डिताइन की रात कटी। रात बीतने को आई तो रामहरि लौटे। जवा को स्त्री की गोद में दिया। उसकी माँग में सिन्दूर था। लेकिन गजब, बच्ची जरा भी न रोई। वह शुरू से आखिर तक रामहरि की गोद में सोई रही।

उसके दूसरे ही दिन दूल्हा कहाँ गया, किसी को पता नहीं। रामहरि कहा करते थे—मैंने अपना कर्त्तव्य निवाहा है। अपनी पोती को ब्रह्मसमाजी के हाथों नहीं सौंपा।

सुनते-सुनते भूतनाथ अभिभूत हो पड़ा था। बोला—फिर? जवा ने कहा—उसके बाद कुछ नहीं। पिताजी बोले, इस घटना का उल्लेख दादी ने अपने पत्र में किया था—लेकिन तब कोई चारा नहीं रह गया था। पिताजी बोले—इस विवाह को मैं जायज नहीं मानता। जिसमें तुम्हारी राय नहीं थी, वह व्याह, व्याह नहीं। भूतनाथ ने पूछा—उसके बाद?

बार-शिमले की राह पर उस समय अंधेरा और भी घना हो उठा। एक मालगाड़ी स्यालदा स्टेशन की ओर हाँफती हुई दौड़ी जा रही थी। बार-बार सीटी दे रही थी। सारी पृष्ठभूमि की शुचिता को वह टुकड़े-टुकड़े कर देना चाह रही थी। भूतनाथ को लगा, लाख योजन दूर का कोई उनींदा तीर रुँधी सांस से वर्तमान की ओर तेज़ी से आ रहा है। वह जवा की सारी शान्ति को नष्ट कर देगा। किसी अदेखे तीरन्दाज का अचूक निशाना मानो खाली नहीं जाएगा। भूतनाथ की सारी शक्ति की उपेक्षा करके वह तीर जवा को सर्वनाश की शेष सीमा पर पहुंचा देगा।

जवा बोली—पिताजी ने यह भी कहा, आज अपने अन्तिम दिन इसे मैं छिपाए न रख सका, मेरे सत्य-बोध को यह बात खलती रही थी, इसी से मैंने किसी से न कहा, तुम्हारी मां से भी नहीं। वह तो कहने पर न समझतीं। तुम्हारी उम्र हुई, तुम अपनी ही बुद्धि से समझना—यह झूठ है, नाजायज़ है।

जवा कहती गई—मैं चुप रही। पिताजी ने कहा—तुम सुपवित्र को ही अपनाओ बेटी, मैं आशीर्वाद देता हूँ।

मैं फिर भी कुछ न बोली। पिताजी की सांस तेज हो आई। बोलकर थकावट से बड़ी देर तक वे आच्छन्न हो रहे। मैं उनकी छाती पर हाथ फेरने लगी। रात खत्म होने को थी। उन्होंने फिर एक बार आँखें खोलीं—सुपवित्र को तुम अपनाओगी तो बेटी?

मैंने कहा—नहीं।

उनकी आंखों से आंसू बहने लगा। मेरा जवाब सुनकर कुछ कहते न बना

उनसे। बाद में बोले—लेकिन मुझे तो क्षमा करोगी तुम ?

मुझसे और न रहा गया। उनकी छाती पर मुँह रखकर छिपाकर आँखें पोंछ लीं। अपनी उस समय की हालत मैं आज बता नहीं सकती हूँ भूतनाथ बाबू, ऐसा लगा कि सारा आसमान भी टूटकर सिर पर आ रहे तो ऐसी असहनीय पीड़ा न होगी। लेकिन उस समय मैं यह बात किससे कहती, कौन समझता मुझे ? मैंने सोचा, सुपवित्र को अब अपने यहाँ आने देना उचित नहीं—जिसे हृदय में अपनाया, उसी को दूर हटाना—यह जो क्या तकलीफ है, मैं कैसे समझाऊँ आपको ? मैं पिताजी की छाती में मुँह गाड़े रही। वे शायद समझ गए। मुझसे उन्होंने भी कुछ न कहा। जरा देर में उनके कलेजे में कैसा तो आलोड़न शुरू हुआ'''पिताजी धीरे-धीरे कहने लगे'''असतो मा सद्‌गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय, मृत्योर्मामृतं गमय—ओम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः—हरिः ओम्—

—उसके बाद ?

आसमान में उस समय गाडी की चीख कर्कश होकर गूँज रही थी। कहीं थम गई थी गाड़ी। स्टेशन में दाखिल होने की इजाजत नहीं मिली थी। बार-बार वह चीखकर गन्तव्य स्थान के प्रति करुण निवेदन कर रही थी। भूतनाथ चुप था। उसकी भी युक्तियाँ मानो चुक गई थी। फिर भी उसने पूछा—उसके बाद ?

जवा ने उस बात का जवाब न देकर कहा—अगर सुपवित्र से आपकी भेंट हो, तो उससे कह देंगे, वह इस रास्ते पर न आए, मेरे घर के सामने उस तरह अब खड़ा न रहा करे। मुझे पीड़ा होती है। मैं उसे भूलने की ही कोशिश करती हूँ।

—लेकिन क्यों ? तुम क्या सचमुच विश्वास करती हो कि तुम्हारा वह विवाह जायज है ?

जवा ने कहा—इसका जवाब तो मैंने पिताजी को दे दिया है भूतनाथ बाबू ! भूतनाथ ने कहा—लेकिन ठीक से सोच देखो तुम।

—ठीक से सोच देखा है, रात-दिन सोचा है। कभी-कभी ऐसा लगा है कि सारा कुछ सपना है, सपने-सा ही सब झूठा है, लेकिन पिताजी की बात याद आते ही उसे अविश्वास करके टाल नहीं सकती मैं।

भूतनाथ ने पूछा—तुम तो ब्रह्मसमाजी हो, तुम भी क्या हिन्दू धर्म में विश्वास करती हो ?

—मेरा ब्रह्मसमाजी होना भी तो सोलहो आने सच नहीं भूतनाथ बाबू, मन-प्राण से तो मैं हिन्दू हूँ। हिन्दू के यहाँ मेरी शादी हुई है—अगर यह बात [illegible] जान पाती तो कम-से-कम सुपवित्र को तो अपने यहाँ नहीं आने देती।

—और तुम्हारे पति ?

जवा ने कहा—उनके बारे में मुझे जानकारी नहीं। बड़ी [illegible] दादाजी चल बसे, दादी भी गुजर गईं, पिताजी मुझे यहाँ लिवा [illegible]

उनकी खोज-खबर की कोई ज़रूरत नहीं समझी पिताजी ने।

—लेकिन कहाँ के हैं वे? नाम क्या है उनका? कोई परिचय पाने का उपाय नहीं?

—वह परिचय है, लेकिन उसे सोचते हुए भी डर लगता है भूतनाथ बाबू, फिर नए सिरे से ज़िन्दगी शुरू करनी पड़ेगी। अपने प्रत्येक आदर्श से पग-पग पर संघर्ष होगा।

—फिर उस रास्ते पर क्यों कदम बढ़ा रही हो?

जवा ने कहा—जाने क्यों तो ऐसा लगता है कि अपना सच्चा परिचय वहीं है, वहीं अपना सच्चा आश्रय है; मेरा संस्कार, मेरी शिक्षा, मेरी मुक्ति मेरे स्वामी के पास है, विधाता की यही इच्छा शायद थी···नहीं तो···

भूतनाथ ने तो भी पूछा—जिसे तुम जानती नहीं, चीन्हती नहीं, जिसकी अवस्था से तुम्हारी अवस्था, तुम्हारी शिक्षा का शायद कोई मेल नहीं—ऐसे को ग्रहण करके सुखी हो सकोगी?

—मेरी अन्तरात्मा कह रही है, मेल न हो सामंजस्य न रहे चाहे, लेकिन उसी में मेरा मंगल है, उसी में मेरा कल्याण है।। पिताजी से मैंने यह सुना है कि स्वच्छन्दता ही बड़ी बात नहीं, बड़ी बात है कल्याण। लता-पौधे सहज ही लता-पौधे हैं, पशु-पंछी यों ही पशु-पंछी हैं, लेकिन आदमी जी-जान से कोशिश के बाद आदमी होता है। अब तक तो आराम ही चाहती रही हूँ भूतनाथ बाबू, कहाँ मिला? अब कल्याण की कामना करूँ, देखूं, पाती हूँ कि नहीं।

—सच ही क्या तुम यह सोचती हो जवा कि यह पथ कल्याण ही का है, मंगल ही का है?

जवा ने कहा—बस इतना ही जानती हूँ कि केवल आराम में ही कल्याण नहीं है। पिताजी ने इसीलिए अपने सारे आराम को लात मारकर कल्याण के पथ को अपनाया था।

भूतनाथ ने पूछा—लेकिन एक और दिशा की बात सोची है क्या?

—कौन-सी दिशा?

—यही कि अगर तुम्हारे पति ने दूसरी शादी कर ली हो—कर तो सकते हैं—तुम्हारे धर्म-परिवर्तन के समाचार से हो सकता है, वह तुम्हारी उम्मीद छोड़ बैठे हों।

जवा बोली—ऐसा भी हुआ हो, तो भी मैं उन्हीं को ग्रहण करूँगी। जब तक वे जीवित हैं तब तक उन्हें स्वीकार करना ही पड़ेगा—तब तक वही मेरे स्वामी हैं।

—इतने पर भी तुम सुपवित्र को नहीं अपना सकोगी?

—उँहूँ, नहीं अपना सकूँगी। मेरा संस्कार, मेरी शिक्षा मुझे बताती है कि

ब्याह धर्म है, धर्म का ही अग है, यह न तो महज विलासिता है न लोकाचार ही।

—कही यह पता चले कि तुम्हारे पति गरीब हैं, फ़रेबी हैं।

—फिर भी वे मेरे स्वामी हैं।

—लेकिन कही उनकी मौत हो चुकी हो?

जवा कुछ क्षण चुप रही। उसके वाद बोली—ऐसी दशा मे हिन्दू धर्म मे ब्याह का विधान है, लेकिन कुलीन से नही, मौलिक से। ऐसी स्त्री को···मगर आप इतना सब पूछ क्यो रहे हैं? मैं तो हर हालत के लिए तैयार हूँ भूतनाथ बाबू?

भूतनाथ ने कहा—जो भी हो, खोज करना तो जरूरी है।

—आप खोज करेंगे?

भूतनाथ ने कहा—मैंने तुमसे कहा था जवा कि मैं अगर कभी तुम्हारे किसी काम आ सकूँ, तो अपने को धन्य समझूंगा—आज वह अवसर मिला है।

जवा के आँखें सजल हो उठीं। जरा देर उसी तरह चुप बैठी रही। उसके बाद धीरे-धीरे बोली—आपका ऋण जीवन मे चुक नही सकेगा।

भूतनाथ ने कहा—छोड़ो भी वह बात, मुझे उनका पता दोगी?

जवा ने कहा—वड़ी दूर है भूतनाथ बाबू, कलकत्ते से बाहर, किसी गाँव में।

भूतनाथ ने कहा—जितनी भी दूर हो चाहे, मैं जाकर खवर लाऊँगा। लेकिन उन लोगों ने कभी तुम्हारी खोज नही ली?

जवा बोली—पिताजी ने कहा, दूल्हे के घरवालों की राय के बिना ही दादाजी ने शादी कर दी थी। उसके वाद उन लोगो ने हमारे ब्रह्मसमाजी हो जाने की खबर सुनी। खोज की जरूरत ही न रही।

भूतनाथ ने पूछा—फिर तुम इतनी बेचैन क्यों हो रही हो? यह भी तो हो सकता है कि विधर्मी कहकर वही तुम्हे ग्रहण न करें।

जवा ने कहा—फिर भी वही मेरे स्वामी है—स्वामी स्त्री को ग्रहण न भी करे, तो स्त्री की और कोई गति नही।

भूतनाथ ने कहा—तुम्हारी स्वतन्त्र इच्छा मे बाधा न दूंगा, पर मुझे उनका पता-ठिकाना दो।

जवा उठी। उठकर कमरे के कोने मे पडे काठ के सन्दूक से कागज का एक टुकड़ा निकाला। भूतनाथ के पास जाकर बोली—इसी मे पता है। यह चिट्ठी दादी ने छिपाकर पिताजी को लिखी थी।

बहुत पहले की चिट्ठी। हर मोड फट गया था। सफेद कागज काला हो गया था। फिर भी टेढे-मुड़े हरूफो को पढकर भूतनाथ ने सब सार निकाला। जवा ने जो घटना सुनाई, हू-ब-हू वही कहानी। अन्त में दूल्हे का नाम-पता। भूतनाथ ने पढा—दूल्हे का नाम था श्री अतुल चक्रवर्ती, बाप का नाम श्री सतीश-चन्द्र चक्रवर्ती, स्वभाव कुलीन, मुकाम फतेपुर, पोस्ट गाजना, जिला नदिया। पढते-

पड़ते भूतनाथ का हाथ हिम हो उठा। यह किस की कहानी सुन रहा है! उसी का डाकखाना, उसी के पिता का नाम और उसी के पिता का दिया हुआ उसका नाम अतुल। पिता उसके होश सम्हालने से पहले ही चल बसे थे। उनकी बहुत थोड़ी-थोड़ी याद आती है। पिता के साथ सोया करता था। फूफी से भी यह सुना था। पिता ज़मींदार के यहाँ काम करते थे। गाँव-गाँव घूमा करते। इससे ज्यादा याद नहीं। लेकिन यह घटना उसके जीवन में कब और कैसे घटी, किसी ने तो नहीं बताया। अथ च यह भूतनाथ के सिवा दूसरा भी कोई नहीं, इसमें सन्देह की गुंजाइश नहीं। अब उस मुकाम में होगा भी कौन! अपने पिता का वही तो इकलौता है!

हैरान होने की ताकत भी जाती रही भूतनाथ की। अचरज भी नहीं, आनन्द भी नहीं, दुःख भी नहीं, अवसाद भी नहीं। यह एक अनोखी ही अनुभूति। यह संवाद कहाँ और कैसे अब तक छिपा हुआ था, कौन जाने। कब किस अदृश्य के इशारे से वह यहाँ आ पहुँचा था, कौन बताए। कौन कहे, यह कोई संवाद है या दुःसंवाद! वह क्या साफ़-साफ़ अपना परिचय कबूल कर ले? अपने अधिकार का दावा करे। जो उसके स्वप्न की वस्तु थी, वही जब सत्य होकर सामने आई, तो क्या वह त्याग की महिमा दिखाकर जीवन-भर विडंबना का शिकार हो? जबा के सामने वह स्वीकार कर ले कि यह नाम मेरा ही है! पता-ठिकाना, पिता का नाम, मेरा नाम—सब मेरा है। पिताजी ने नाम रखा था अतुल, फूफी ने भूतनाथ।

उसने जबा की तरफ़ ताका। उसके चेहरे में कोई विलक्षणता न थी। किन्तु लगा आज जबा बड़ी ही खूबसूरत है। आज संसार के सारे सौन्दर्य ने मानो इसी मुखड़े पर आश्रय लिया है। इतने दिनों की देखी-जानी जबा आज इस घड़ी नई लग रही थी। अब तो यह जबा उसकी अपनी है। अभी-अभी वह उसका दावा कर सकता है। उस पर मानो उसका बहुत दिनों का अधिकार है। न केवल अधिकार, अधिकार से भी ज्यादा कुछ। जन्म-जन्मान्तर के परिचय से मानो दोनों के हृदय का विनिमय हुआ है। मानो बहुत युग से जबा ही उसकी संगिनी होकर बार-बार पृथ्वी पर पैदा होती रही है और और भी युगों तक बार-बार पैदा होती रहेगी।

बड़ा अच्छा लगा भूतनाथ को। जबा का सान्निध्य भला लगा। आज इस सान्निध्य में कोई अन्याय नहीं, कोई अनुपात नहीं। यह भला लगना आज अब अपराध नहीं। आज तक मन की जिस प्रवणता को वह छिपाता आया, अपनी शिक्षा, अपने धर्म से उसे अगोचर रखा—आज अब उसका कोई प्रयोजन नहीं। वह प्रयोजन समाप्त हो गया। आज गर्व के साथ वह सारी दुनिया को यह जता सकता है। छत के कंगूरे पर खड़े होकर अपने सौभाग्य की कहानी की घोषणा कर सकता है।

खयाल नहीं, कब वह बार-शिमले से निकलकर चला आया। अँधेरी राह में वह अपनी इसी अवस्था की चिन्ता में मग्न रहा।

निकलने के समय जवा ने पूछा था—फिर कब आयेंगे ?

भूतनाथ बोला—यह खबर लेकर आऊँगा किसी दिन।

—आप क्या उनके गाँव जाएगे ?

—वह तो अपना ही इलाका है।

जवा भी जैसे ताज्जुब मे पड गई। एक अचरज-भरे कौतूहल से मुखड़ा दमक उठा। पूछा—आपका घर भी क्या वही है ?

—सिर्फ घर नही, एक ही जगह, एक ही डाकघर, एक ही गाँव, एक मुहल्ला, एक ही···कहने जा रहा था—एक ही नाम। वह कहता जा रहा था, भूतनाथ और अतुल एक ही आदमी का नाम है। लेकिन ऐन वक्त पर अपने को सम्हाल लिया। अचानक कुछ कर बैठना ठीक नही। अपने चोर-कमरे में अकेले पड़े-पड़े वह सोचेगा। सोचेगा कि यह सम्भव कैसे हुआ। उसके जीवन में कहाँ से, किस अदेखे ईश्वर के इंगित से यह सम्भव हुआ। यह उनका आशीर्वाद है या अभिशाप !

कलकत्ते की राह सूनी पड़ी थी। केवल एक बार ऐसा लगा कि अलवान-वाला वह आदमी दूर से उसके पीछे-पीछे आ रहा है। पीछा कर रहा है उसका। अजीब आदमी है। जहाँ भी भूतनाथ गया, वही उसके पीछे लगा रहा। लेकिन अचानक चमक कर खड़ा हो गया भूतनाथ। आज मानो उसकी हिम्मत लौट आई। आज पता नही क्यो, मानो संसार मे किसी से वह डरने वाला नही। आज मानो वह किसी भी आफत के आगे सिर ऊँचा किए खड़ा हो सकता है।

वनमाली सरकार लेन के मोड पर आकर भूतनाथ उस आदमी के आमने-सामने खडा हो गया। पास आयें कि पूछे—तुम हो कौन ? क्या चाहते हो ? दिन-रात मेरे पीछे क्यों घूमा करते हो ? इरादा क्या है ?

मगर आश्चर्य ! भूतनाथ को खडा होना था कि वह आदमी पास की एक गली में गायब हो गया।

भूतनाथ बडी देर तक उसी तरह वहाँ खडा रहा। नरहरि महापात्र के देवी-देवता जहाँ पर रहते थे, वहाँ पर अब वह पीपल का पेड न था। एक दिन जड़ पर बनी वेदी को लिए-दिए मूल-सहित उखड गया। भूतनाथ गली मे घुसा और वही पर पीछे मुडकर खड़ा हो गया। वह आदमी जैसे गली के मोड पर आकर फिर खड़ा हो गया। भूतनाथ ने सोचा—गोली मारो, यह ज़रूर कोई स्पाई है।

निवारण छिपकली कहा करता था। छिपकली ही कहिए। कई बार रास्ते में भूतनाथ ने निवारण से बातें की थी। इसी से उस पर सन्देह हुआ है। नरेन गोसाइँ को जिस दिन गोली मारी गई, उसी दिन से इनकी हरक़तें बढ़ गई हैं। घर-बाहर कही चैन नही।

निवारण ने कहा था—मैट्रिकुलेशन में अंग्रेज़ी इतिहास की पढ़ाई बन्द हो गई, जानते हैं ?

भूतनाथ को मालूम न था बोला—क्यों, हम लोगों ने तो पढ़ा है ?

निवारण ने कहा—वेकर और फुलर साहब ने सोचा, शायद अंग्रेजी इतिहास पढ़कर ही हम लोगों का दिमाग बिगड़ गया है। मैगनाकार्टा, स्टुआर्ट राजाओं के कारनामे, हैंपडेन, कामवेल, चार्ल्स फर्स्ट—ये बातें तो हमने इतिहास से ही जानी हैं। लेकिन बन्द करने से क्या हुआ, अब तो उन्होंने भी पढ़ना शुरू कर दिया, जो कि कभी इतिहास छूते तक न थे।

भूतनाथ को याद है, इतना कुछ करके भी कोई राह नहीं निकली। जिस दिन केवड़ातला के घाट में जलाने के लिए कन्हाई दत्त की लाश लाई गई थी, उफ़, किस कदर भीड़ थी ! सिर्फ़ एक नज़र देखे, इसके लिए सुबह से पचास हज़ार लोग रास्ते के किनारे खड़े थे। नरेन गोसाई के खून के जुर्म में दो आदमियों को फांसी हुई थी—कन्हाई दत्त और सत्येन बोस को। भीड़ के डर से सत्येन बोस की लाश जेल के अन्दर ही फूंकी गई थी ! भूतनाथ ने अपनी उमर में एक जगह इतनी भीड़ कभी न देखी थी। स्वामी विवेकानन्द जब आए थे, तब स्यालदा स्टेशन में, फिर पारसी बगान में आनन्दमोहन बोस की सभा में और फिर यही देखी भीड़ उसने। यह भीड़ मानो सबसे ज्यादा थी।

बगल के किसी घर में घड़ी टन-टन करके बहुत बजा गई। रात काफ़ी हो गई थी। अब खड़े होने से लाभ। जेब से कुञ्जी निकालकर भूतनाथ ने बड़े महल का गेट खोला और अन्दर चला गया।

सवेरे किसी ने दरवाज़े पर धक्के दिए। खोलकर देखा, वंशी था।

—कल आप कितनी रात में आये हुज़ूर, खड़े-खड़े मेरे पांव दुख ग[illegible] अरे, आपकी आंखें सुर्ख हो रही हैं। नींद नहीं आई शायद ?

जूठे बर्तनों को उठाकर वंशी ने जगह को लीप दिया। बोला—कल बड़ी परेशानी में पड़ गया हुज़ूर, अदालत से नोटिस आया था। छोटे बाबू के [illegible] ले गया। वे पढ़कर बोले—मॅझले बाबू के पास ले जाओ। अकेले सारा काम क[illegible] ठहरा, सब कर-कराके आखिर मरते-मरते पहुंचा गरानहाटा। जाकर दिखल[illegible] मॅझले बाबू को। उनका जो मिजाज, पूछिए मत। बोले—मैं क्या देखूं, मैंने घर छोड़ दिया है। वे लोग चाहें सो करें। घर मुझे नहीं चाहिए।

मैंने कहा—छोटे बाबू ने तो आप ही के पास लाने को कहा।

मॅझले बाबू बोले—मेरे पास लाकर क्या होगा, मैं क्या घर में रहता [illegible]

उनके पैर पकड़कर मैं बोला—जी, उनकी हालत आप तो जानते [illegible] ऐसे में घर कैसे छोड़ें !—ज़रा मॅझले बाबू का विचार देखिए।

भूतनाथ ने पूछा—उसके बाद ?

—उसके बाद मैं पथरियाघट्टा गया। नन्हे बाबू ननीलाल के दोस्त थे न ! कभी ननीलाल को इस घर में बार-बार आते देखा है। सोचा, उनके कहे अगर ननीलाल कुछ करें। मगर नन्हे बाबू से भेंट न हुई। काम पर गये थे।

—किस काम पर ? नन्हे बाबू कौन-सा काम करने लगे ?

वशी ने कहा—मुझे क्या पता ? उन्हीं लोगों के सरकार बाबू ने बताया नन्हे बाबू शायद वकालत करते हैं। रोज अदालत जाते हैं।

—वकालत करते हैं। आखिर वकील हुए ?

वशी बोला—इसीलिए आपकी तलाश कर रहा था। आप जाकर नन्हे बाबू से कहें तो ननीलाल से कहकर मुकदमा उठवा लें। मुकदमा बाबुओं के नाम पर है, मगर सब तो घर छोड़कर चले गये हैं, हैं सिर्फ छोटे बाबू और छोटी माँ। ये कैसे घर छोड़ें ! जो हालत है, ऐसे में कहाँ जाएँ। अभी भी छोटे बाबू को अपने से खिला देना पड़ता है !

भूतनाथ जरा देर चुप रहकर बोला—लेकिन मैं तो कल घर जा रहा हूँ।

—घर ! वंशी अवाक् हो गया। हुजूर भी गाँव चल दिए ! आपने तो कहा था, वहाँ कोई नहीं है ?

—नहीं है कोई, फिर भी एक बार जाना है। पुराना घर तो है। जंगल हो गया होगा, हो सकता है, उसमें बाघ बसता हो।

डर से वशी ने आँखें फाड़ीं। बोला—ऐसे आड़े वक्त में आप चले जाएँगे, तो कैसे चलेगा हुजूर, दो दिन बाद जाएँ तो हर्ज है ?

—न। तारीख कब है मुकदमे की ?

वशी ने कहा—कल।

भूतनाथ चुप हो रहा।

वंशी ने कहा—कल-भर रुक ही गए तो क्या !

भूतनाथ फिर भी चुप रहा। वह कर भी क्या सकता है।

वशी ने कहा—मैंने लेकिन छोटे बाबू से आपके बारे में कहा है।

—छोटे बाबू से ? क्यों ?

—जी, वे बड़े मायूस हो गए हैं। मैंने कल नन्हे बाबू के यहाँ से लौटने पर कहा—आप कुछ सोचें न सरकार, अपने साले साहब पढ़े-लिखे आदमी हैं, सब करेंगे। आप एक बार मिलेंगे उनसे ?

—छोटे बाबू से ?

—जी हाँ। हर्ज क्या है ! आफत में हैं। हम लोग उन्हें न देखें तो कौन देखे !

भूतनाथ की ख्वाहिश तो न थी, फिर भी बोला—खैर, चल [illegible] ने

कहा—जरा देर रुकें, मैं इन जूठे बर्तनों को रख आऊँ।

आज भी याद है भूतनाथ को, दोपहर को बड़े महल का श्रीहीन चेहरा देखकर उस रोज़ उसकी आँखों में पानी भर आया था। छत पर अनगिनती कबूतरों ने बसेरा लिया था। कौन उन्हें दाना देता, कौन उन सबकी देख-भाल करता, कौन जाने! कभी इन्हीं कबूतरों के चलते ठनठनिया के छेनीदत्त से कितने मुकदमे हुए। इन्हें पालने में जाने कितने पैसों का श्राद्ध हुआ। भैरव बाबू सीटी अच्छी बजाते थे। उसी सीटी पर मँझले बाबू के कबूतर कलकत्ते के आसमान पर एक दिन छाती फुलाकर उड़ा करते थे।

सारा मकान जैसे खाँ-खाँ कर रहा था। तीन हिस्सों में इसका बँटवारा हो रहा था। पूरी तरह हिस्सा होने के पहले ही सब अलग हो गए। दीवारें तक पूरी न उठ सकीं। पलस्तर नहीं हो सका। दीवार की फाँकों में काई जम गई। फटी जगहों में जाने कैसे-कैसे जंगली गाछ उग आए। उनमें कैसे-कैसे फूल लगे। अजीब-अजीब जंगली फूल। पीले, लाल, नीले। रसोई के जूठन दीवार के कोने में जमते।—अकेले बंशी से सफ़ाई पार नहीं पड़ती।

कोई चील खुले आसमान में उड़ती। बीच-बीच में चिल्ल-गर्रर करती। वह आवाज़ यहाँ से सुनाई पड़ती। उसके बाद कब तो बेला झुक पड़ती, धीरे-धीरे छाया बड़ी हो जाती और फिर धूप की अन्तिम आभा भी धरती से पुंछ जाती। ऐसे में शशी डॉक्टर की गाड़ी गाड़ी-बरामदे में आकर खड़ी होती। लाठी के सहारे जीने से ऊपर जाता। दवा का बैग लिये पीछे-पीछे चलता बंशी।

आज भी उसे याद है, छोटे बाबू के कमरे के पास जाकर भूतनाथ चौंक उठा। पहले तो उसकी इच्छा ही नहीं थी जाने की। कभी आमने-सामने उसने छोटे बू से बातें की तो नहीं थीं। लेकिन बंशी के बहुत कहने पर 'ना' न कर सका।

बंशी ने कहा था—आप हुजूर यह कह देंगे कि मैं सब इन्तजाम करूँगा, कचहरी जाना-आना मैं ही करूँगा, जिसमें छोटे बाबू कुछ सोचें नहीं।

भूतनाथ बोला—लेकिन मैं जो कल गाँव जा रहा हूँ!

—छोटे बाबू से आप यह न कहें, उन्हें बड़ी तकलीफ होगी।

भूतनाथ ने पूछा—वे क्या मुझे पहचानते हैं?

—पहचानते नहीं हैं, मगर मैंने आपके बारे में सब बताया है। बताया है कि आप मास्टर साहब के साले हैं और यहाँ बहुत दिनों से रह रहे हैं। सुनकर वे चुप रहे। वे ज्यादा बोलते तो हैं नहीं, कभी नहीं बोलते थे, अब तो वह भी बन्द कर दिया है। आँखें बन्द किए सोचते रहते हैं, क्या सिर-पैर सोचते हैं, क्या जानें।

कमरे के अन्दर पहले बंशी गया। झाँककर देख लिया, फिर हाथ के इशारे से भूतनाथ को बुलाया।

भूतनाथ सामने जाकर खड़ा हुआ।

हाथीदाँत का काम किया हुआ पलग। मोटे गद्दे पर विछौना। सामने सफेद संगमरमर की मेज पर दवा की शीशियाँ। कमरे मे छाई एक उदासी। जमाने से रोग और दवा की गन्ध से कमरे की हवा जहरीली हो उठी थी। कमरे में जाते ही कोई तीखी बू नाक में घुस जाती। दीवार पर बने फूल-पत्ते तक धुएँ मे काले हो गए थे।

छोटे बाबू मलमल का कुरता पहने थे। उसकी चुनन में लेकिन पहलेवाली बहार न थी। मैला हो गया था पहनते-पहनते। कई दिनो से हजामत नही बनी थी। दीवार से लगे तकिये के सहारे वे बैठे थे। खिड़की से बाहर ताक रहे थे और कुछ सोच रहे थे।

भूतनाथ के अन्दर जाते ही बंशी ने कहा—जी, साले साहब आ गए, जिनके बारे में मैंने कहा था।

छोटे बाबू ने गर्दन फेरी।

भूतनाथ ने हाथ जोड़कर नमस्कार किया।

भूतनाथ ने देखा, वही छोटे बाबू है, जिनके सामने होने मे डर लगता था। क्या विशाल शरीर था! रौबदार आदमी। मारते-मारते एक दिन बंशी को लगभग मार ही डाला था। भूतनाथ को माया-सी हो आई। उसे बहुत पहले के एक बरगद की याद आई। फतेपुर के देवीथान में एक विशाल बरगद था। चार-पाँच पुश्त का पुराना पेड। देवीथान को डाल-पत्तों से एकबारगी छाप लिया था। एक रात को आँधी मे वह पेड उखड़ गया। सवेरे सारे गाँव के लोग उसे देखने पहुँचे। कोई कट्ठा-भर जमीन लिये पेड उखडा पडा था। सब अवाक्। पेड क्या, वह तो एक विराट वनस्पति था।

तारक सुनार कुल्हाडी चलाने जा रहा था कि नन्द काका ने रोक दिया—खबरदार···

भूषण काका ने भी कहा—इसे कोई काटो न—यह मगलचण्डी का पेड़ है—

तारापद्दो बोला—पेड़ को नदी मे बहा देना ही ठीक है।

नन्द काका प्रवीण आदमी थे। बोले—न, जैसा है, वैसा ही पडा रहे। देवी का पेड़ है, उनकी जो इच्छा होगी, वही होगा।

देवी की क्या इच्छा हुई, पता नही! वह पेड वही पडा रहा। लोग-बाग पूजा करने आते और उसमे भी सिन्दूर पोत जाते। औरते आती, पूजा करती और जल चढाती। ऐसे जाने कितने दिन बीते। धीरे-धीरे उस पर मिट्टी जमी और पेड़-पौधे जन्मे। और वही पेड़-पौधे बडे हुए। एक दिन उन्होंने उस तने को ढँक दिया।

बहुत दिनो के बाद जब बाघ के उत्पात से जंगल साफ करने का हल्ला पड

गया गांव में, तो पता चला, उस पेड़ की निशानी भी नहीं। जाने कब सारा पेड़ मिट्टी हो गया। अब पौधों की भीड़ उसे घेरे थी।

छोटे बाबू को देखकर भूतनाथ को यही बात याद आई।

वंशी ने कहा—साले साहब हैं, कचहरी की खोज-खबर रखेंगे, दौड़-धूप करेंगे, सब करेंगे। आप सोच-सोचकर सेहत को चौपट न करें।

छोटे बाबू कुछ न बोले। मुंह से केवल 'हुम' किया।

कितनी गहरी थी वह आवाज़! लगा, उसके साथ एक लम्बी सांस भी निकली।

भूतनाथ ने लेकिन कुछ न सुना। वह सिर्फ़ छोटे बाबू को देखता रहा। उसे फतेपुर के बरगद की याद आती रही। कभी उसकी डालों पर कितनी चिड़ियों ने पनाह ली थी! बरसात में फल खाने के लिए कितने प्रकार की चिड़ियाँ आती थीं। फिर जब उखड़ गिरा, तब भी वही संजीदगी।

वंशी ने कहा था—छोटी माँ आप पर बहुत गुस्सा हैं हुजूर!

—क्यों?

वंशी ने कहा—आपने एक दिन बरानगर ले जाने की कही थी।

भूतनाथ थमक गया। बोला—अब आज नहीं वंशी, छोटी माँ से कह देना, गांव से लौटने पर किसी दिन ले जाऊँगा।

वंशी बोला—लेकिन नन्हे बाबू के पास एक बार नहीं जाएँगे?

दोपहर को नन्हे बाबू कचहरी जाते हैं। लौटने में रात ज़रूर हो जाती होगी। नन्हे बाबू से कोई चिट्ठी ले जाने से शायद कुछ लाभ हो सकता है। उस दिन मैनेजर से मालूम हुआ था कि एलगिन रोडवाले मकान में कोई नहीं रहता। ननीलाल की सास पटलडांगा में रहती हैं। किसी तरह से उनके पास पहुंच सके, तो काम हो सकता है।

ठीक ही हुआ। भूतनाथ के जी में कभी-कभी होता—ठीक ही हुआ है। इसकी भी शायद ज़रूरत थी। दक्षिणी हवा के झोंके जब झरोखों से लगते हैं, तो अजीब-सी आवाज़ होती है। सब थर्रा उठते हैं। लगता, ओट में खड़े होकर बद्री बाबू हँस रहे हैं। दोनों हाथों से भूतनाथ अपने कान बन्द कर लेता। सुनने से बेहद तकलीफ़ होती। बद्री बाबू की हँसी में एक प्रकार का पैशाचिक उल्लास होता। लगता, न सुने वही अच्छा। कभी-कभी सहा नहीं जाता। बाहर निकल पड़ता भूतनाथ। दूकान, भीड़, रोशनी देखकर भूल जाने की कोशिश करता।

पटलडांगा में ननीलाल के घर के सामने पहुंचकर कैसी तो हिचक होने लगी। कल गांव जाना है। आज अन्तिम कोशिश कर लेनी चाहिए।

पहले ननीलाल के साथ वह यहाँ बहुत बार आ चुका था। लेकिन ननीलाल के सिवा और किसीसे उसका परिचय न था। किसे पुकारे, किससे आग्रह विनती

करे !

नन्हे बाबू के पास भी गया था। वह सोच भी नहीं सका था कि नन्हे बाबू की ऐसी शक्ल देखने को मिलेगी। काला कोट। एडी-चोटी वकील की पोशाक। घोड़ागाड़ी से उतरा।

उतरकर धप्प से तख्त पर बैठ गया। शुरू से अख़ीर तक सुनकर बोला—ऐसा होता तो बेशक अच्छा होता, मगर ऐसा होता कैसे है !

भूतनाथ बोला—आप अगर ननीलाल को ख़त लिख दें, तो वह 'ना' नहीं कर सकेगा।

—ननीलाल !

भूतनाथ ने कहा—ननीलाल ही तो मालिक है—वह कहे तो, सब होगा।

नन्हे बाबू बोले—लेकिन ननीलाल तो इस समय कलकत्ते में नहीं है। वह तो बाहर गया है।

—जहाँ है, वहीं चिट्ठी लिख दीजिए।

नन्हे बाबू कुछ सोचने लगे, फिर बोले—तारीख कल है और वहाँ चिट्ठी पहुँचने में एक महीना, जवाब आने में एक महीना। यही है ? दो महीने से पहले तो उत्तर ही नहीं आ सकता।

भूतनाथ ने पूछा—लेकिन वह आ क्यों नहीं रहा है ?

नन्हे बाबू बोले—अब तो वह लौटेगा नहीं, आप नहीं जानते ?

—नहीं लौटेगा ?

—नहीं। उसने वहाँ मेम से शादी कर ली है। मज़े में है। बाल-बच्चे भी हुए हैं। सुना, शायद वहाँ भी कारोबार शुरू कर दिया है। जवान है काइयाँ, प्रिंस द्वारकानाथ ठाकुर उसके आदर्श थे—वह अक्षर-अक्षर उन्हीं का अनुसरण करता है।

सुनकर भूतनाथ धक् रह गया। वही किसनगंज के डॉक्टर का लड़का ननीलाल ! उसकी वह चिट्ठी शायद आज भी कहीं पड़ी होगी बक्स में। उसका यह रूप होगा, यह कौन जानता था ! अजीब लगता है। यहाँ भी तो आराम से रह सकता था। एलगिन रोड पर उतना बड़ा मकान बनाया था। जूट की मिलें। कोयले की खान। उतने-उतने कर्मचारी, उतनी आमदनी, ऐसी खातिर। इतने पर भी सन्तोष नहीं हुआ। इन ननी लालों को शायद किसी बात में सन्तोष नहीं !

भूतनाथ ने पूछा—उसका यहाँ कारोबार कौन देखता है ?

—उसके साले। ननीलाल चला गया, चल रहा है।

कहाँ का पानी कहाँ बह जाता है, कौन कह सकता है। ननीलाल के समाचार से निखालिस खुशी नहीं हुई। उसमें कहीं कोई वेदना छिपी थी। ठीक-ठीक बताया नहीं जा सकता कि ऐसा क्यों होता है। लेकिन यों ननीलाल के गौरव से उसे

ख़ुशी ही होनी चाहिए थी।

नन्हे बाबू से मदद की कोई उम्मीद न देख भूतनाथ खुद ननीलाल के मकान पर पहुँचा। ऊपर से नीचे तक एक बार समूचे मकान को देखा। किसी आदमी का कोई आभास न मिला। दरबान को बुलाकर पूछा—बाबू लोग घर में हैं?

—कौन बाबू? छोटे कि बड़े?

—कोई भी।

दरबान ने कहा—इस कागज़ पर अपना नाम-ठिकाना लिख दें—अन्दर मैं बाबुओं को दे दूँगा।

भूतनाथ ने अपना नाम और बड़े महल का पता लिख दिया। कागज़ लेकर दरबान अन्दर चला गया। भूतनाथ को बड़ी देर तक खड़ा रहना पड़ा। उसे लगा, यह कोशिश छोटी बहू के लिए है वरना बड़े महल के लिए उसे सिरदर्द भी क्या! अगर घर छोड़ देने की नौबत आए तो कहाँ जाएगी छोटी बहू! लेकिन आश्चर्य, छोटी बहू कभी यह सोचती भी नहीं! बंशी से मालूम हुआ है, वह आज भी उसी तरह तिमंज़िले के कमरे में पलंग पर बैठी रहती है, यशोदादुलाल की पूजा करती है, पाँवों में महावर लगाती है, उसी तरह बेफिक्र सोती और चिन्ता से बातें करती है। गहने बेचती है।

बंशी ने बताया—सन्दूक तो लगभग खाली हो गया हुज़ूर!

भूतनाथ ने कहा—तू लाकर देता क्यों है बंशी?

बंशी ने कहा—भुवन सुनार तो मुझ पर शक करता है। सोचता है, शायद चुरा ले भागा हूँ मैं। उसी दिन वह मुझे पुलिस के हवाले कर रहा था। मैंने कहा भई, रोज़-रोज चोरी कहाँ कर सकता हूँ?

भूतनाथ ने पूछा—आजकल कितनी पी लेती हैं रोज?

बंशी ने कहा—नशा दिन-दिन बढ़ता ही जा रहा है हुज़ूर! सुबह एक बोतल लाता हूँ, तीसरे पहर तक खत्म हो जाती है। तिस पर अब कीमती शराब की चाट लगी है। पहले तो मैं लाता नहीं था, लेकिन समझता हूँ कि उन्हें बेहद तकलीफ़ होती है। न पिएँ तो जी ख़राब हो जाता है, दिन-भर झीमती रहती हैं, मन-मरी-सी। फिर मुझे ही कष्ट होता है देखकर। सोचता हूँ, उन्हीं का क्या दोष है, नशे की लत हो गई है।

बंशी कहता गया—उधर दिन-भर मँझली चाची बुदबुदाती रहती हैं—कोई खाए ही नहीं, तो यह पकाना-चुकाना क्या? अन्न की ऐसी बर्बादी से गृहस्थ का अमंगल होता है! सच भी है, इधर तो इतना अभाव है मगर इतने प्रकार का बनाना पड़ता है कि क्या बताऊँ! छोटे बाबू के सामने सभी प्रकार का रखना पड़ता है—तीता, खट्टा, दाल, शोरबा—सब, जैसा कि पहले होता था। और

मुँह में रखते ही थू-थू करने लगते हैं।

मोदी का बकाया। माँग रहा है। छ. महीने से कुछ दिया नहीं गया। वह तो माँगेगा ही। छोटी माँ से कहिए कि सन्दूक से कोई-न-कोई जेवर निकालकर बढ़ा देती हैं—जा, दे दे।

ननीलाल के मकान के सामने बडी देर तक इन्तज़ार करना पड़ा। दरबान ने आकर खबर दी—बाबुओं को समय नहीं है। भेंट न हो सकेगी।

क्या कहे, कुछ सोच न सका भूतनाथ। पूछा—बाबू लोग हैं? दरबान बोला—जी हाँ, हैं मगर मुलाकात न होगी।

न होगी, तो न होगी। बड़े लोगों की बात ही जुदा है। या तो बैठकर गप्पें मार रहे होंगे या लेटे होंगे। मिल लेते तो क्या बिगड़ जाता! महज़ दो बात। समय भी कितना लगता! मगर क्या दरकार! जिनके समय का आज इतना दाम है, हो सकता है कभी उन्हें समय काटने का जरिया न मिले। बड़े महल के बाबुओं की क्या कम धाक थी! देखते-ही-देखते कपूर जैसा उड़ गया सब! सुविनय बाबू कहा करते थे—भोग ही मौत है, त्याग ही जीवन है—तेन त्यक्तेन भुंजीथा., त्याग करके भोग करना, यह भारत की अपनी उपलब्धि है, यह किसी दूसरे देश में ढूँढ़े न पाओगे।

लेकिन ननीलाल या कि चौधरी बाबू लोग, किन्हीं ने तो इसे न माना। ब्रजराखाल की तो बात ही और है।

वहाँ से लौटते हुए उस दिन अचानक प्रकाश हलवाई से भेंट हो गई। कन्धे पर नया अँगोछा। साफ घुटी हुई मूँछ-दाढ़ी। शक्ल भी पहले से कुछ अच्छी हो गई थी।

बोला—दण्डवत्।

भूतनाथ बोला—तुम इतनी रात को कहाँ प्रकाश?

—जी क्या बताऊँ, क्या नौकरी, क्या व्यवसाय—किसी में नहीं पोसाया। आखिर फिर अपनी वही घटकगिरी अपनाई। कल आपकी तरफ जा रहा हूँ, एक ब्याह है, चलिएगा?

भूतनाथ के जी में कैसा तो एक सवाल उठा। पूछा—अच्छा, तुमने तो अब तक बहुत-सा ब्याह कराया है, क्यों?

—जी। बही देखकर आपको पक्का हिसाब बता सकता हूँ।

भूतनाथ ने हिसाब नहीं जानना चाहा। जरूरत भी न थी। सिर्फ इतना पूछा—नहीं, बच्चों या बच्चों का भी ब्याह कराया है?

—जी हाँ। अभी-अभी सावन में बेगमपुर के विधु गांगुली की बच्ची का ब्याह करवा दिया। महज़ दो साल की थी।

—दो साल की?

खुशी ही होनी चाहिए थी।

नन्हे बाबू से मदद की कोई उम्मीद न देख भूतनाथ खुद ननीलाल के मकान पर पहुँचा। ऊपर से नीचे तक एक बार समूचे मकान को देखा। किसी आदमी का कोई आभास न मिला। दरबान को बुलाकर पूछा—बाबू लोग घर में हैं?

—कौन बाबू? छोटे कि बड़े?

—कोई भी।

दरबान ने कहा—इस कागज पर अपना नाम-ठिकाना लिख दें—अन्दर मैं बाबुओं को दे दूंगा।

भूतनाथ ने अपना नाम और बड़े महल का पता लिख दिया। कागज़ लेकर दरबान अन्दर चला गया। भूतनाथ को बड़ी देर तक खड़ा रहना पड़ा। उसे लगा, यह कोशिश छोटी बहू के लिए है वरना बड़े महल के लिए उसे सिरदर्द भी क्या! अगर घर छोड़ देने की नौबत आए तो कहाँ जाएगी छोटी बहू! लेकिन आश्चर्य, छोटी बहू कभी यह सोचती भी नहीं! वंशी से मालूम हुआ है, वह आज भी उसी तरह तिमंजिले के कमरे में पलंग पर बैठी रहती है, यशोदादुलाल की पूजा करती है, पाँवों में महावर लगाती है, उसी तरह बेफिक्र सोती और चिन्ता से बातें करती है। गहने बेचती है।

वंशी ने बताया—सन्दूक तो लगभग खाली हो गया हुजूर!

भूतनाथ ने कहा—तू लाकर देता क्यों है वंशी?

वंशी ने कहा—भुवन सुनार तो मुझ पर शक करता है। सोचता है, शायद चुरा ले भागा हूँ मैं। उसी दिन वह मुझे पुलिस के हवाले कर रहा था। मैंने कहा भई, रोज़-रोज़ चोरी कहाँ कर सकता हूँ?

भूतनाथ ने पूछा—आजकल कितनी पी लेती हैं रोज़?

वंशी ने कहा—नशा दिन-दिन बढ़ता ही जा रहा है हुजूर! सुबह एक बोतल लाता हूँ, तीसरे पहर तक खत्म हो जाती है। तिस पर अब कीमती शराब की चाट लगी है। पहले तो मैं लाता नहीं था, लेकिन समझता हूँ कि उन्हें बेहद तकलीफ़ होती है। न पिएँ तो जी खराब हो जाता है, दिन-भर झीमती रहती हैं, मन-मरी-सी। फिर मुझे ही कष्ट होता है देखकर। सोचता हूँ, उन्हीं का क्या दोष है, नशे की लत हो गई है।

वंशी कहता गया—उधर दिन-भर मँझली चाची बुदबुदाती रहती हैं—कोई खाए ही नहीं, तो यह पकाना-चुकाना क्या? अन्न की ऐसी बर्बादी से गृहस्थ का अमंगल होता है! सच भी है, इधर तो इतना अभाव है मगर इतने प्रकार का बनाना पड़ता है कि क्या बताऊँ! छोटे बाबू के सामने सभी प्रकार का रखना पड़ता है—तीता, खट्टा, दाल, शोरबा—सब, जैसा कि पहले होता था। और

मुँह में रखते ही थू-थू करने लगते हैं।

मोदी का बकाया। माँग रहा है। छ महीने से कुछ दिया नहीं गया। वह तो माँगेगा ही। छोटी माँ से कहिए कि सन्दूक में कोई-न-कोई जेवर निकालकर बढ़ा देती हैं—जा, दे दे।

ननीलाल के मकान के सामने बड़ी देर तक इन्तजार करना पड़ा। दरबान ने आकर खबर दी—बाबुओं को समय नहीं है। भेंट न हो सकेगी।

क्या कहे, कुछ सोच न सका भूतनाथ। पूछा—बाबू लोग हैं? दरबान बोला—जी हाँ, हैं मगर मुलाकात न होगी।

न होगी, तो न होगी। बड़े लोगों की बात ही जुदा है। या तो बैठकर गप्पें मार रहे होंगे या लेटे होंगे। मिल लेते तो क्या बिगड़ जाता! महज दो बात। समय भी कितना लगता! मगर क्या दरकार! जिनके समय का आज इतना दाम है, हो सकता है कभी उन्हें समय काटने का जरिया न मिले। बड़े महल के बाबुओं की क्या कम धाक थी! देखते-ही-देखते कपूर जैसा उड़ गया सब! सुविनय बाबू कहा करते थे—भोग ही मौत है, त्याग ही जीवन है—तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा., त्याग करके भोग करना, यह भारत की अपनी उपलब्धि है, यह किसी दूसरे देश में ढूँढे न पाओगे।

लेकिन ननीलाल या कि चौधरी बाबू लोग, किन्हीं ने तो इसे न माना। ब्रजराखाल की तो बात ही और है।

वहाँ से लौटते हुए उस दिन अचानक प्रकाश हलवाई से भेंट हो गई। कन्धे पर नया अँगोछा। साफ घुटी हुई मूँछ-दाढ़ी। शक्ल भी पहले से कुछ अच्छी हो गई थी।

बोला—दण्डवत्।

भूतनाथ बोला—तुम इतनी रात को कहाँ प्रकाश?

—जी क्या बताऊँ, क्या नौकरी, क्या व्यवसाय—किसी में नहीं पोसाया। आखिर फिर अपनी वही घटकगिरी अपनाई। कल आपकी तरफ जा रहा हूँ, एक ब्याह है, चलिएगा?

भूतनाथ के जी में कैसा तो एक सवाल उठा। पूछा—अच्छा, तुमने तो अब तक बहुत-सा ब्याह कराया है, क्यों?

—जी। वही देखकर आपको पक्का हिसाब बना सकता हूँ।

भूतनाथ ने हिसाब नहीं जानना चाहा। जरूरत भी न थी। सिर्फ इतना पूछा—नहीं, बच्ची या बच्चों का भी ब्याह कराया है?

—जी हाँ। अभी-अभी सावन में बेगमपुर के विधु गांगुली की बच्ची का ब्याह करवा दिया। महज दो साल की थी।

—दो साल की?

गप्प मिल जाए, तो प्रकाश थमने वाला नहीं। बोला—दो साल तो गनीमत है, दो महीने की बच्ची की शादी कराई है।

—दो मास की बच्ची ?

—जी हाँ, दो मास की। बनर्जी बाबू ने कहा था, मेरे दो साल के लड़के के लिए कोई कन्या खोज सकते हो ? मैंने कहा—जी, अपने हाथ में सब प्रकार की पात्र-पात्री हैं। खोज दी। बनर्जी बाबू बड़े खुश हुए। बड़ी धूमधाम की। तीन तरह की मिठाई, मछली, दाल, पूरियाँ—सब तरह का इन्तज़ाम किया। बनर्जी बाबू को नहीं जानते ? आप ही के ज़िले के तो हैं !

प्रकाश वही कहानी सुनाने लगा—फिर सुन ही लीजिए, बड़े मज़े का किस्सा है। बलरामपुर के काली मुखर्जी के दो लड़कियाँ थीं।

—बलरामपुर ? जानते हो बलरामपुर तुम ?

—बखूबी जानता हूँ। वहीं के काली मुखर्जी की छोटी लड़की का ब्याह कराया है मैंने। वही किस्सा तो सुना रहा हूँ।

भूतनाथ ने पूछा—वहाँ के रामहरि भट्टाचार्य का नाम सुना है ?

—रामहरि भट्टाचार्य ? जरा ठहरिए, बही में देखना पड़ेगा।—प्रकाश सचमुच ही बही खोलने लगा।

भूतनाथ ने कहा—बही उलटने की ज़रूरत नहीं। यह बता सकते हो कि उनके खानदान का कोई है ?

प्रकाश बोला—बिना बही देखे कैसे कह सकता हूँ और अगर इस बही में न मिले तो दूसरी देखनी पड़ेगी। वंशतालिका न रखें तो हमारा चल ही नहीं सकता। जिस रोज़गार का जैसा नियम ! इस बही में आपके पुरखों का भी नाम-गाम मिल जा सकता है। ठीक से बही रखी जाए, तो कितने काम आती है। यह देखिए न, काली मुखर्जी की लड़की की उमर महज़ दो महीने की, उन्होंने कहा, एक लड़का ढूंढ़ दो। कुलीन लड़का। होगा तुमसे ?

मैंने कहा—यह कौन-सी बड़ी बात है ! उन्होने राह-खर्च के लिए एक रुपया दिया।

—दो महीने की लड़की ?

—जी हाँ। पहली लड़की के साथ एक दुर्घटना हो गई थी न। पाँच साल की उम्र में वह चोरी चली गई थी। एक भंग कुलीन उसे चुरा ले गया और अपने लड़के से उसकी शादी कर दी। इसी डर से इस लड़की की शादी छोटे में ही कर दे रहे हैं।

प्रकाश किस्सा जमाना जानता है। लिकिन रात हो गई थी। भूतनाथ को लौटना था। इन्तजार करते-करते बंशी अब तक सो चुका होगा। चोर-कमरे में उसका खाना ढंका रखा होगा। गेट खोलकर अंधेरे में जाना पड़ेगा। बाहर से वह

मकान आजकल भूतिया-महल-सा दीखता है। लेकिन चोर-कमरे में घुसते ही सब भुला जाता है। सारे मन पर आजकल जवा छा गई है। उसे अपने पास कल्पना करके सम्भव-असम्भव सब तरह की घटना घटाई जा सकती है। सोच ले सकता है कि जवा उसके इस चोर-कमरे में आई है। आकर उसी के बिछौने पर बैठी है। कभी जो मालकिन थी, आज उसकी स्त्री है। सोचते भी बदन सिहर उठता है। कितनी बार कितनी तरह की अप्रिय बातें हुई हैं। गँवई कहकर उसका मज़ाक उड़ाया है जवा ने। उसके हाथ की रसोई तक कभी नहीं खाई भूतनाथ ने। लेकिन···

अँधेरे में जवा की साड़ी की खस-खस आवाज आई, ऐसा लगता। लगता कि कमरे की हवा में उसके बाल की खुशबू भर गई है।

उसके बाद चोर-कमरे के सख्त तख़्त पर वह आँख मूँदकर सोने की कोशिश करता। सारी रात एक अजीब असह्य पीड़ा में कटती। दिमाग गोलमाल हो जाता। लगता—सारा कुछ सपना है—अपने जैसा अविश्वसनीय, असम्भव, अलौकिक!

दूसरे दिन वंशी भी उसे देखकर अवाक् रह गया। बोला—अरे, आपने तो कहा था, गाँव जायेंगे?

भूतनाथ बोला—कहाँ जा सका? कल मुकदमे की तारीख है। नन्हे बाबू के पास कल गया था—सारा दिन तो उसी में नष्ट हो गया।

—क्या हुआ मुकदमे के बारे में?

भूतनाथ बोला—नन्हे बाबू के आगे मैं बड़ा गिड़गिड़ाया कि आप मुहलत ले लीजिए, नहीं तो घर की बदनामी है। कल को कहीं पुलिस-प्यादे जाकर घर दख़ल करें तो अच्छा होगा?

—कब की तारीख पड़ी?

भूतनाथ ने कहा—बाद में बताई जाएगी। उस समय जैसा होगा, किया जाएगा। अभी तो ननीलाल के पास तार भेजा है। नन्हे बाबू का पुराना दोस्त है, उनकी बात क्या नहीं रखेगा! नन्हे बाबू से जाने कितने रुपये लिये हैं, जरूर याद होगा उसे।

वंशी ने कहा—मैं छोटे बाबू को बता आऊँ। बहुत सोच में पड़े थे।

—कुछ कहते हैं?

—जी नहीं। आसमान देखते हुए सोचा करते हैं। मगर मैं तो जानता हूँ, यह सुनकर बहुत खुश होंगे।

—और छोटी बहू? वह कुछ नहीं सोचती?

—जी, उन्हें सोच-फिकर की बला नहीं। केवल यशोदादुलाल की पूजा और वही···

—शराब?

—जी, जैसे-जैसे दिन जा रहा है, लत बढ़ती जा रही है। ऐसी दशा क्यों हुई, भगवान् जानें।

ऐसा क्यों होता है, यह अब भूतनाथ भी नहीं समझ पाता। लेकिन सुविनय बाबू की बातें बार-बार याद आतीं। वे कहा करते थे—हम अपने को बहुत छोटा समझा करते हैं, इसीलिए छोटी चिन्ता, छोटी वासना और मौत के घेरे में घिरे रहते हैं। जीवन का अमृतरूप प्रत्यक्ष नहीं होता, इसीलिए न तो शरीर में दीप्ति है, न मन में निष्ठा। कामों की व्यवस्था नहीं, चरित्र में शान्ति नहीं। मौत ही चरम भय-सी लगती है, क्षति को ही हम सबसे बड़ी विपदा समझते हैं। हम धन बचाते हैं, निन्दा बचाते हैं पर सत्य को, धर्म को, आत्मा के सम्मान को बचाने नहीं चलते। लेकिन भूतनाथ ने आँखों के सामने ही ब्रजराखाल को देखा है, सुविनय बाबू को देखा है—फिर भी उनकी तरह हृदय से वह क्यों नहीं कह सकता कि नाश को स्वीकार नहीं करूँगा, मृत्यु को नहीं मानूँगा—मुझे अमृत चाहिए—नमस्तेहस्तु।

उस दिन रूपचाँद बाबू ने पूछा था—आप उधर फिर गये थे क्या, सुविनय बाबू के यहाँ? जबा बिटिया कैसी है?

भूतनाथ ने कहा—दो-तीन दिनों से नहीं जा सका हूँ, लेकिन वह अच्छी ही हैं।

रूपचाँद बाबू बोले—सोच-सोचकर भी नहीं जा पाता हूँ मैं, इस वक्त कामों की भीड़ में हूँ। उसे कोई असुविधा हो तो मुझसे कहिएगा। संकोच मत कीजिएगा। जबा को शर्म लग सकती है।

उस रोज़ सरकार बाबू बोले—आइए-आइए भूतनाथ बाबू, क्या किस्मत लेकर आये थे आप—बुलंद!

—क्यों, बात क्या है?

—बात क्या होगी, लीजिए, यहाँ पर सही बनाइए।

—यह क्या?

—जी हाँ, अब से आपका नाम ओवरसियरों की सूची में आ गया। मैं कहा था न आपसे कि आप क्या ज़्यादा दिनों तक बिल-बाबू रहेंगे? ऐसी किस्मत देखकर भी खुशी होती है। बाबू का हुक्म है—देख क्या रहे हैं, सही बनाइए।

तनखा बारह से एकबारगी बीस रुपये! भूतनाथ के शरीर में रोमांच आया। सरकार बाबू ने कहा—कालीघाट जाकर माँ की पूजा कर आइएगा। विपिन बाबू, विजय बाबू—ये लोग बिल-बाबू के बिल-बाबू ही रह गए। तीन साल में एक पाई तनखा न बढ़ी। आपके तो पौ-बारह हैं!

सरकार बाबू की बातें निखालिस खुशी की न थीं। फिर भी चुप रह जाना ही अच्छा था।

भूतनाथ ने पूछा—और मेरी छुट्टी की दरखास्त का क्या हुआ ?

—छुट्टी तो कब की मिल चुकी है—सात दिन की तो ? कब से जा रहे हैं आप ? आपकी सब स्पेशल बात है—आपकी छुट्टी रोक कौन सकता है ?

इदरिस मियाँ भी बड़ा खुश हुआ। बोला—सो चाहे जो हो ओवरसियर साहब, अब से आप अपनी दस्तूरी न छोड़ा करें। इंजीनियर लोग तक लेते हैं, आप ही का लेना गुनाह होगा। हर महीने पाँच ही रुपये हो तो साल में कितना होना है; हिसाब कर देखिए।

भूतनाथ बोला—नौकरी बच जाए तो गनीमत जानो इदरिस, तुम्हें क्या पता, किन कष्टों की है यह नौकरी !

इसी कलकत्ते की कामना से छुटपन में भूतनाथ एक दिन मित्रों के चालता गाछ की फुनगी पर चढ़ गया था। लेकिन सपने के उस कलकत्ते से साक्षात् कलकत्ते का कोई मेल भी है ? शायद है, शायद नहीं है। किन्तु ऐसा लगता है, अगर वह कलकत्ता नहीं आया होता तो मनुष्य की महायात्रा के जुलूस को इतना स्पष्ट नहीं देख पाता। वह ब्रह्मसमाज, भारत सभा—उन्नीसवीं सदी की संस्थाओं द्वारा वंग-भंग आन्दोलन के माध्यम से जो महायात्रा शुरू हुई, उसकी जानकारी नहीं होती। जान ही नहीं पाता कि किस प्रकार धीरे-धीरे मानसलोक से मर्त्यलोक का समन्वय होता है। कैसे सनातन से आती हुई व्यवस्था टूटकर चूर-चूर हो जाती है। आज उसे यह मालूम हो गया कि मनुष्य से मनुष्य का विच्छेद नहीं होता, भेद नहीं होता। सभी मनुष्य एक हैं। इसीलिए एक के पाप की सजा दूसरे को भोगनी पड़ती है, बलवान का अत्याचार कमजोर को सहना पड़ता है। एक के पाप का फल सबको बाँट लेना पड़ता है। अतीत, भविष्यत, दूर-दूरांतर, हृदय-हृदय से मनुष्य एक-दूसरे से अभिन्न है। यह क्या कोई मामूली शिक्षा है। सुविनय बाबू कहा करते थे, 'विश्वानि दुरितानि परासुव'। विश्वपाप क्षमा करो। इसीलिए आज भी भूतनाथ अपने मेस के कमरे में तखत पर पड़े-पड़े प्रार्थना करता है—जिस देवता ने मनुष्य-मात्र के दुःख को ग्रहण किया है, जिनकी वेदना का अन्त नहीं, जिनके प्यार का भी अन्त नहीं, उनके प्रेम की वेदना को हम सभी मानव-सन्तान मिलकर ग्रहण कर सकें। इसीसे तो यह लगता है कि प्रेम जहाँ सबसे अधिक गाढ़ा है, चोट मानो वहीं सबसे ज्यादा कठोर लगती है। जिसका कलेजा कोमल है, सारी वेदना उसी को ढोनी पड़ती है। जिन पर पुलिस की लाठियाँ पड़ती हैं, उनकी तकलीफ उतनी कठिन नहीं, लेकिन घर के कोने में पड़ी छोटी बहू की चोट ही मानो सबसे करुण, सबसे कठिन है। शहर न आता तो परम सत्य को वह कभी इस तरह जान सकता था !

उफ्, उस रोज किस कदर बिगड़ी थी छोटी बहू ! कहा—एक बार तूने

मोहिनी सिन्दूर खरीद दिया, उसी की कृपा से मैंने छोटे बाबू को फिर से पाया—लेकिन फिर कभी तुझसे कुछ माँगा है मैंने ?

भूतनाथ अपराधी-सा चुप खड़ा रहा।

छोटी बहू ने फिर कहा—सिर्फ़ तुझी से क्यों, किसी से भी अब कभी कुछ न मागूंगी भूतनाथ—माँगने का समय मेरा खत्म हो चुका। अब छोटे बाबू भले-चंगे हो जाएँ, बस, मैं सुखी हूँ—और कोई कामना नहीं है मुझे—तुम सभी लोग बेईमान हो।

भूतनाथ चुप रहा।

छोटी बहू फिर बोली—तुझे कोई तकलीफ़ हुई है, तो मुझसे बताया क्यों नहीं ? खाने-पीने में तकलीफ़ होती है ? यहाँ सोने-रहने में असुविधा होती है कोई ?

भूतनाथ फिर भी चुप रहा। छोटी बहू की ज़बान का बाँध मानो लाज टूट गया था। आँखें अड़हुल के फूल-सी लाल। दिन-भर शायद पीती रही। बिछौने पर पांव फैलाए बैठी थी। पाँवों में महावर लगाया था। अभी-अभी शायद जूड़ा बाँधा था। ललाट पर सिन्दूर का टीका। फाड़ी हुई माँग। नाक में हीरे की कील। सुडौल शरीर नशे में टलमल।

लेकिन ऐसा कहा भी क्या था भूतनाथ ने ! वह तो सिर्फ यह कहने गया था कि वह गाँव जाएगा।

गाँव क्यों जाएगा, कितने दिनों के लिए जाएगा, यह बिना जाने ही छोटी बहू ने बहुत-कुछ सुना दिया।

छोटी बहू ने कहा—किसी ने तुझसे कुछ कहा है ? जब तक मैं हूँ, तब तक कोई कुछ कह तो ले तुझे ! दरवान से उसको गरदनिया दिला कर तुरत निकलवा बाहर करूँगी। यहाँ इतने-इतने लोग आखिर हैं किसलिए ? बैठे-बिठाए सब तनखा ले रहे हैं—बड़े महल के बाबू लोग क्या मर गए ? उसके बाद ज़ोर से पुकारा—बंशी—

सूने मकान में उस पुकार ने प्रतिध्वनि पैदा की।

बंशी आया। छोटी बहू ने कहा—जाकर सरकार बाबू से कह दे, भूतनाथ को कपड़ा-लत्ता, जो भी ज़रूरत हो, ला दें और खर्च मेरे हिसाब में लिख लें।

—जी, मैं जाकर कह देता हूँ।

—हाँ, और भी सुन ले।

बंशी रुक गया।

—मियाँजान से कह दे, गाड़ी जोते, मैं बाहर जाऊँगी।

—आप बाहर जाएँगी।

—हाँ, जाऊँगी। इतने सारे लोग सेंत ही तनखा लेते हैं। काम-धाम कुछ नहीं। तमाम दिन करते क्या हैं ये लोग, मैं जानना चाहती हूँ। छोटे बाबू बीमा

हैं, इसलिए सबने चकमा देना शुरू कर दिया क्या ?

उसके बाद भूतनाथ से बोली—तैयार हो जा, मेरे साथ चलना है।

भूतनाथ को डर-सा लगने लगा। पूछा—कहां ?

—बरानगर।

भूतनाथ कुछ कहने जा रहा था, लेकिन वंशी ने धीरे से कहा—कह दीजिए, चलूंगा।

बाहर जाकर भूतनाथ ने पूछा—छोटी बहू को कुछ मालूम नहीं है वंशी, घर बिक जाने की बात का पता नहीं है ?

वंशी बोला—जी, नशे में छोटी मां को कुछ भी याद नहीं रहता हुजूर ! उन्होंने गाड़ी जुतवाने को कहा—मगर कहां है गाड़ी ! घर तो खाली हो गया है। सरकार बाबू तो मँझले बाबू के साथ कबके जा चुके, छोटी मां को कुछ भी याद नहीं है।

भूतनाथ ने पूछा—कहीं मुझे फिर बुलाएं ?

वंशी ने कहा—जी नहीं, अब नहीं बुलाएंगी। सो जाएंगी बस, सब भूल जाएंगी। देखते नहीं, साज-पोशाक की वैसी बहार नहीं है। गहने-पाते, रुपए-पैसे, क्या कहां है, यह भी याद नहीं रहता। चिन्ता ने बदन धुला दिया है, महावर लगा दिया है, जभी इतना भी देख रहे हैं, नहीं तो खुद कुछ होश नहीं है।

भूतनाथ की आंखों में आंसू उमड़ आने लगे। छोटी बहू को यह जानकारी भी न होगी कि बड़े महल का क्या सर्वनाश हुआ है। जानना वह चाहती भी नहीं शायद। लगता है, सब पहले-सा ही है। वैसा ही एकान्तवर्ती परिवार। लोग-बाग, दाई-नौकर, गाड़ी-घोड़ा, पालकी-कहार, बाग-बगीचा, सब-कुछ है। अन्दर महल के पर्दे के अन्दर से बाहरी दुनिया की कोई खबर जानने की जरूरत ही नहीं महसूस करती। सोचती हैं, आज भी बन्दूक लिये ड्योढ़ी पर बिरिजसिंह पहरा दे रहा है। आज भी सुखचर से तहसील के रुपये आते हैं। आज भी हुक्म करने में तामील करनेवाले लोग हाजिर होंगे।

वंशी ने कहा—हम दो जने दो आदमियों की निगरानी करते हैं हुजूर ! मैं छोटे बाबू की और चिन्ता छोटी मां की। नशे में कभी-कभी चिन्ता को बेहद फटकारती हैं। कहती हैं—अब सब चकमा देने लगे हैं। इन्हें यह कहां मालूम है कि हम तनखा के लोभ से यहां नहीं पड़े हैं। तनखा तो जाने कब से नहीं मिली।

—बगैर तनखा के इस तरह कब तक चला ले जाओगे वंशी ?

—पिछले जन्म में छोटे बाबू का कुछ कर्ज खाया होगा हुजूर, वही भर रहा हूं। घर में लोग कैसे दिन काट रहे हैं, भगवान् जानें। ब्याह के बाद से जाने कितने सालों से घर नहीं गया। ससुर ने बार-बार आने को लिखा, मगर इस हालत में कैसे जाऊं आप ही कहें। और छोटी मां भी ज्यादा दिन नहीं जीने की। [illegible]

ही किसी दिन पट् से दम निकल जाएगा, देख लीजिएगा।

सुबह की गाड़ी। ज़रा तड़के ही उठना था। टिनवाले वक्से को भूतनाथ ने सहेज रखा। छोटी बहू के दिए कपड़े भी सम्हाल रखे। वक्सा सहेजते हुए देखा, ननीलालवाली वह चिट्ठी वक्स के नीचे एक तरफ़ पड़ी है। अजीब है! आज वह ननीलाल ही कहाँ! धीरे-धीरे कहाँ से कहाँ जा पहुँचा। अपना देश, अपना समाज छोड़कर, पत्नी, परिवार, अपने-विराने को त्यागकर कितनी दूर चला गया। लेकिन किस खिचाव से? अन्त तक प्रिंस द्वारकानाथ ठाकुर वह हो सका क्या? द्वारकानाथ ने जिस प्रकार नील और रेशम की कोठियाँ की थीं, उस प्रकार ननीलाल ने जूट और कोयले से अपने जीवन को घुला-मिला दिया था क्या? उसके बाद? उसके बाद का रास्ता क्या ननीलाल का जाना हुआ है? ननीलाल का ही कहा है कि इस युग के ईसा, चैतन्य और बुद्ध सेठ, शील और मल्लिक हैं। भूतनाथ यह सोचने की कोशिश करता कि ननीलाल को क्या अपने इष्ट देवता का पता मिल गया है? मेम की खूबसूरती पर भूलनेवाला तो वह है नहीं! एक रोज़ उसने कहा था—औरतों का नशा उतर गया है भैया, जो बिन्दी वही मिसेस ग्रियर्सन। अब चाहिए सिर्फ़ रुपया! रुपया का नशा उसका उतरा? तृप्ति मिली? शान्ति मिल गई?

फिर लगा मानो जवा कमरे में आई। उसके आते ही सारा कमरा खुशबू से भर गया। माघोत्सव में जैसे बनती-ठनती थी, वैसा ही शृंगार। लेकिन सिर पर घूँघट और माँग में सिन्दूर। सिर्फ इतना फर्क। अन्दर से किवाड़ की चिटकिनी लगाकर वह बिछौने के पास आकर खड़ी हुई। हाथ में एक गिलास पानी।

जवा बोली—मुझे माफ करो।

भूतनाथ ने कहा—मुझे ही क्या खाक पता था!

—लेकिन मुझे माफ करो।

भूतनाथ ने कहा—मेरी दुनिया में तुम क्यों आई?

जवा बोली—इस बात का जवाब तो मैं दे चुकी हूँ।

—महज संस्कार, महज़ मन्त्र की दो कड़ियाँ और साज़िश के चलते ही तुम्हारी ज़िल्लतें, वरना तुम्हारा जीवन तो और ही कुछ होता और उसमें शायद तुम वास्तव में सुखी होती।

जवा ने कहा—बार-बार तुम ऐसी बात क्यों कहते हो?

भूतनाथ ने पूछा—सच कह रही हो?

—और क्या झूठ कह रही हूँ! झूठ मैं नहीं कहती, मुझ पर विश्वास करो, मुझे कोई दुःख नहीं है।

—लेकिन ऐसी बात कहना तुम्हें सिखाया किसने?

—यह तो मैं होश सम्हालने के साथ-साथ सीखती आई हूँ; दादी के साथ शिव की पूजा की, कितने व्रत किए, कितने देवता को प्रणाम किया—दादी मुझे सब सिखाया करती थीं।

—लेकिन सुपवित्र, उसे तुम भूल सकोगी तो ?

जवा के हाथ से अचानक गिलास छूट गिरा। उस आवाज़ मे भूतनाथ की नींद टूट गई। देखा, अँधेरे चोर-कमरे मे वह अकेला पड़ा है। कहीं कोई नहीं। रात के अन्तिम पहर का निस्तब्ध कलकत्ता। रास्ते मे केवल कुछ ठेलों के चलने की आवाज़। शायद छिडकाव हो रहा था। दो-एक आदमी जग रहे थे। उस तरफ बडी दूर पर गंगा में एक जहाज़ का भोंपू बज उठा। शायद जूट-मिल का भोंपू हो। उस तरफ कल-कारखाने बहुत खुल गए हैं। शायद ननीलाल की ही जूट-मिल हो। कौन जाने !

भूतनाथ ने सपने को फिर से सोचा। अजीब-सी बात ! कैसे होता है यह ! अपनी ही गढी हुई बातों को उसने जवा के मुँह से कहला लिया है। लेकिन गज़ब तो यह है कि आठ-नौ साल तक जवा बलरामपुर मे रही, पर वह जान भी न सका।

एक दूसरी चिट्ठी मे जवा की दादी ने सुविनय बाबू को लिखा था—"यह चिट्ठी तुम्हें छिपाकर लिख रही हूँ। कहीं उन्हे मालूम हो जाए तो आफत मचा देंगे। यहाँ किसी को बताया नही गया है। वरपक्ष के लोग और पुरोहित ही इसे जानते है। नही जानती, जवा के नसीब मे कितना दुःख लिखा है। वे तो जवा को हरदम निगाहो में रखते है। बाहर नही निकलने देते। कहीं तुम या तुम्हारे आदमी उसे ले न भागें। जवा की ससुरालवाले फिर भी नही आये। चूँकि यह ब्याह लाचारी का है, इसलिए वे खोज भी नही करते। हम लोगो ने आदमी भेजा था। पता चला, वर के पिता की मृत्यु हो गई है—घर मे केवल उसकी फूफी है।"

सुविनय बाबू की माँ ने ऐसी बहुत-सी चिट्ठियाँ भेजी थी। खुद तो लिखना जानती न थी, टोले के किसी से चुपचाप लिखवाकर भेजी थी। सुविनय बाबू ने सारी चिट्ठियो को हिफाजत से रखा था।

एक दूसरी चिट्ठी मे जवा की दादी ने लिखा था—"सुनने मे आया है कि वरपक्षवालो को पता चल गया है, जवा हमारी पोती तो है पर हिन्दू नही है। इससे वे बहुत नाराज़ हुए हैं कि हमने धोखा दिया है। यह भी सुना कि वे लडके का दूसरा ब्याह करेंगे। तब से जी बड़ा दुखी रहता है। अच्छा-बुरा कुछ समझ नही पाती। हम तो नासमझ मनुष्य हैं, माँ की लीला समझने की हमे सामर्थ्य नही। रात-दिन उन्हे पुकारता हूँ—अब जो करें माँ।"

सुबह गाडी। तड़के ही उठकर चल पड़ा भूतनाथ।

बंशी ने पूछा—फिर कब लौटते हैं हुज़ूर ?

भूतनाथ ने कहा—कल ही, नही तो परसों तो ज़रूर।

स्यालदा स्टेशन पहुँचा, तो सवेरा हो चुका था। गाड़ी खुलने में देर थी। टिकट-विकट कटाकर इत्मीनान से गाड़ी में सवार होने का समय था। स्टेशन की सफाई चल रही थी। गाड़ी तीसरे पहर तक माजदा पहुँचेगी। वहाँ से पैदल फतेपुर। बीच में इच्छामती नदी। नाव चलती है। गाँव पहुँचने में रात। साँझ होते-न-होते आधी रात का सन्नाटा।

बहुत जोर तो देवीथान के पास निताई घोष की दूकान में रेड़ी के तेल की दीवालगीर टिमटिमाती होगी। उतनी रात को रास्ते पर पैरों की आहट सुनकर निताई शायद ज़ोर से पुकारकर पूछे—कौन है ?

—मैं हूँ निताई, मैं।—भूतनाथ जवाब देगा।

—मैं कौन, घर कहाँ है ?

—मैं भूतनाथ हूँ भैया।

—अरे रे, भूतनाथ भैया, कब आये ?

नन्द काका भी हैरान रह जाएँगे। आँगन के पास ही जो शरीफे का पेड़ है, वहीं से पुकारेगा भूतनाथ—चाची—ओ चाची !

काका तो शायद बेखबर सो रहे होंगे। चाची इतना सवेरे नहीं सोती। कथरी सीती होगी बैठी-बैठी। या कि दीये की बत्तियाँ बना रही होगी। अन्दर से ही पूछेगी—कौन है ?

—मैं भूतनाथ हूँ चाची।

—अरे, भूतनाथ कहाँ से ! और वह दौड़ी-दौड़ी आएगी दीया लिये। कहेगी—खबर तो कर देनी चाहिए थी। आ। हाथ-पाँव धो ले। लोटे में पानी है। हाँ-हाँ, रहने दे, हुआ। अच्छा तो है ?

भूतनाथ चाची के पाँव छुएगा। छूकर पूछेगा—काका कहाँ, सो रहे हैं, क्यों ?

मुँह-हाथ धोकर वह बरामदे पर बैठेगा। इसी बरामदे पर छुटपन में राधा से बातें हुआ करती थीं। कितनी बार तो वह वहीं सो गया। चाची ने जगाया—भूतनाथ, फूफी बुला रही हैं। घर जा।

कब की बात ! सारा गाँव चित्र-सा उसकी आँखों पर नाच उठता। नदी जाने की राह में बरगद के टूसे तोड़े हैं। झड़ी की रातों में आम चुने हैं। ढेरों आम। कच्चे आम फट-फटकर चौचीर हो जाते। फूफी उन आमों को तख्त के नीचे पत्ते बिछाकर रखा करती। कहती—डंठलवाले आमों को डोरी बाँधकर लटका दे।

रात को बँसबिट्टी में भड़-भड़ की आवाज़ होती। चारों तरफ सन्नाटा। सुनसान। अचानक कोई बाँस भड़भड़ा उठता। फूफी कहा करती है—भूत है, बाँस के सहारे भूत नीचे उतरा।

शाम को रसोई की तरफ जाने में कैसा तो डर लगता। सवेरे फिर वही

का यही। मद्दू गाय-गोरू चराने के लिए उसी रास्ते होकर जाता। हाथ में लाठी। तेल-पिलाई हुई वैसी लाठी के लिए भूतनाथ ने उसकी कितनी खुशामद की। लाठी जैसी एक मामूली चीज के लिए।

फूफी कहती—तेरी शादी होगी तो वैसी एक लाठी बनवा दूंगी।

शादी से लाठी का कौन-सा सम्बन्ध है, वह नही समझ पाता।

फूफी कहती—तेरा ससुर यों तो खाने देगा नही, काम करना पड़ेगा—शायद ढोर चराना पड़े—फिर ? फिर लाठी कहाँ पाएगा तू ?

भूतनाथ को डर लगता। छाती धधक उठती। कहता, तो मैं शादी नही करूँगा फूफी।

फूफी कहती—शादी नही करेगा तो पकाकर खिलाएगा कौन तुझे ! मैं एक दिन मर जाऊंगी।

फूफी मर जाएगी, यह सुनकर उसे डर लगता। नेवले के मर जाने की बात वह भूला न था। आँखों मे पानी भर आता। वह फूफी की गोद में अपना मुंह छिपा लेता।

फूफी दिलासा देती। सिर पर हाथ फेरकर कहती—अच्छा-अच्छा, तेरा ब्याह न करूँगी, हुआ ?

नन्द काका महीने में पन्द्रह दिन बाहर का ही चक्कर काटा करते। कोई खबर नही कि अचानक किसी दिन मोटिये के माथे पर असबाब-पत्तर लादे हाजिर। दो-एक कटहल, एक बोरा नारियल, एक गट्ठर झाड़ू, किसनगज का कदमा[1], मुगे मूंग की दाल, मिट्टी का तेल। कहते—बच्चे सब अलग रहो, इसमे मिट्टी का तेल है।

उन दिनों मिट्टी के तेल से अजीब डर लगता था। लगता था, कही छू गया कि जल जाएगा।

सामान खोलते ही काका कहते—भूतनाथ और राधा को दो-दो कदमा दो तो !

नन्द काका कहते—तेरा बाप कदमा खूब पसन्द करता था। एक बार श्रीनाथपुर के गाजन के मेले मे उसने कहा, भैया, कदमा खाना चाहिए। मेरा काम बाकी पड़ा था, सतीश का भी, लेकिन भूख लगने से काम की याद नहीं रहती। सतीश ने कहा—रेल बाजार का चूड़ा, मसारखपुर का दही, मिल की चीनी, किसन हलवाई के रसगुल्ले और किसनगज का कदमा···खूब बनता है। हाँ रे भूतनाथ, तुझे बाप की याद है ?

भूतनाथ को कुछ भी याद नही।

नन्द काका कहते—कहाँ याद होगा, तुझे एक बार टुगी ले जाकर क्या

---

१. एक तरह की चीनी की मिठाई।

परेशानी हुई थी। रात को बिस्तर पर साँप···कई···तू बेहोश सोया था और उधर···

जरा रुककर काका फिर कहते—मगर लड़का तू अलबत्‌ था—पाँच-छ: साल की उमर—मगर पैदल चलता कितना था! तेरा बाप कहा करता था, बड़ा होने पर इसे डाकिया बना दूँगा।

स्यालदा स्टेशन में शोर-गुल बढ़ने लगा। हुसहुसाकर गाड़ियाँ आईं। हुड़हुड़कर लोग उतरने लगे।

एक से पूछा—पोड़दा की गाड़ी को और कितनी देर है भई?

नन्द काका से सब-कुछ मालूम हो जाएगा। ये भी पिताजी के साथ-साथ गाँव-गाँव घूमा करते थे। ये बाबुओं के यहाँ नायब थे और पिताजी थे गुमास्ता जमींदार की वसूली, मामला-मुकदमा के लिए बहुत-बहुत जगह जाना पड़ा। औ कभी-कभी कहने-सुनने पर इस टूअर लड़के को भी साथ ले गए।

अचानक किसी ने पीछे से आवाज़ दी—पण्डितजी?

—कौन, प्रकाश? कहाँ से?

प्रकाश ने कहा—जी, फतेपुर से आ रहा हूँ। वहाँ जाने पर मालूम हुआ, वर के दादा कलकत्ता आए हैं। मुफ्त में डबल खर्च लग गया। मगर आप कहाँ चले?

—अपने गाँव!

—गाँव! तो शाम की गाड़ी से साथ ही चलिये! वर के दादा भी मेरे साथ चलेंगे। आप ही के गाँव के हैं! बड़े सज्जन। गऊ। मैंने लड़की की माँ से कह दिया है, ऐसा ददिया ससुर मिलना मुश्किल है—बहू को सिर पर रखेंगे···

भूतनाथ ने पूछा—मेरे गाँव के हैं? क्या नाम है भला?

—नन्द चकरवरती।

—नन्द काका?

प्रकाश बोला—होंगे। सुना, बाबुओं के जूट की आढ़त में उतरे हैं। आप उन्हें चीन्हते हैं?

भूतनाथ ने कहा—खूब! उन्हीं से मिलने के लिए तो गाँव जा रहा हूँ। बड़ा जरूरी काम था।

—ठीक ही तो है। चलिए, मैं भी जा रहा हूँ।

इतनी आसानी से सारी घटनाओं का हल निकल जाएगा, यह कल्पना भी न थी। नन्द काका को जरूर सब बात मालूम होगी। पिताजी के गहरे दोस्त थे। पिताजी उन्हें बताए बिना कोई काम नहीं करते थे।

भूतनाथ बोला—तो चलो। मेरा भी खर्च और समय बच गया। मगर उनके यहाँ किसका ब्याह है।

—उनके नाती का। उनके एक विधवा लड़की है न, उसी के बेटे का। मैंने लड़की वालों से कह दिया है, लड़के को देखेंगे तो टकटकी बँध जाएगी।

भूतनाथ को आज भी याद है। उस दिन नन्द काका को देखकर वह जितना अवाक् हुआ, नन्द काका भी उसे देखकर उतने ही अवाक् हुए। मगर बता न दिया जाता तो उन्हें पहचानना मुश्किल था। वह शक्ल ही नहीं रह गयी थी। जूट की आढ़त में एक तरफ लोगों के रहने की जगह थी। नाव से जूट आता। आढ़त में जमा होता। यहाँ से व्यापारियों को बेचा जाता।

नहर में नावों का मेला। एक-एक गाँठ उतरती और बाबू के कारिन्दे गिनते जाते—रामजी राम···

···दो···ए···दो···

आढ़त में काँटे पर तौल होती—एक मन सैंतीस सेर तीन कच्चा···

एक ओर कोई रसोई कर रहा था। बड़ी-बड़ी कवै मछली भून रहा था। अँगोछा पहने रसोई कर रहा था। बाएँ हाथ में हुक्का। बोला—अरे ओ भूखन हरी मिर्च होगी?

भूषण बोला—यह क्या फतेपुर है! हरी मिर्च कहाँ से लाऊँ? यहाँ तो खरीदकर लाना पड़ता है।

—फिर तो बनी मछली! बगैर हरी मिर्च के कवै मछली क्या?

भूतनाथ को मालूम न था कि इधर जूट की इतनी आढ़तें खुल गई हैं। यही जूट शायद ननीलाल की मिलों में पहुँचेगा। वहाँ से जहाजों पर विलायत भेजा जायेगा। कैसे-कैसे कारोबार चल पड़े हैं। क्या नहीं कर रहे हैं लोग! मगर बड़े महल के बाबुओं ने कुछ नहीं किया। खान का काम शुरू भी किया तो वह ठप्प हो गया। नसीब का फेर!

प्रकाश को देखते ही नन्द काका झल्ला उठे। बोले—यही तुम्हारी जवान है···उधर···अचानक भूतनाथ को देखकर उन्होंने पहचाना। एकबारगी उनके चेहरे का भाव बदल गया। देर तक गौर किया। बोले—अतुल हो न?

भूतनाथ ने उनके चरणों की धूल ली। कहा—आपसे एक काम है काकाजी!

उन्होंने भूतनाथ को जकड़ लिया। कहा—मेरा अतुल, गाँव से एक बार निकला और निकला। खबर तक न दी कभी। घर तेरा जंगल हो गया—सतीश का उतना प्यारा मकान। उसने सागवान की लकड़ियाँ लगाई थीं छत में। उस घर की तरफ जाते आज डर लगता है।

उनकी आँखें भी भर आईं। कर क्या रहा है आजकल? सतीश कहा करता था—अतुल को मैं डाकिया बना दूंगा—बना तू डाकिया?

भूतनाथ ने सिर झुकाकर कहा—ओवरसियरी कर रहा हूँ—अब तो

बाबू का काम करता था—कुछ दिन हुए, ओवरसियर हुआ हूँ—एक बंगाली बाबू के दफ्तर में···

नन्द काका सुनकर मानो बहुत खुश हुए। बोले—खैर, सतीश का लड़का आखिर आदमी बना। तेरा बाप देख गया होता, तो खुश होता। अच्छा हाँ, तनखा कितनी पा रहा है।

—इस महीने से बीस रुपये मिलने लगे हैं।

—खैर! अब लेकिन अपने घर की मरम्मत करा ले, जंगल साफ़ कर—शादी कर···मरने से पहले इन आँखों से देख लें। जो भी हो, तू गाँव छोड़कर निकल पड़ा था, इसलिए कुछ कर सका। आदमी बन सका। बाकी कोई कुछ नहीं करता। सब सिर्फ बीड़ी फूँका करते हैं और दशहरे पर नाटक खेलते हैं।

भूतनाथ ने पूछा—चाची मजे में हैं?

—ख़ाक मजे में हैं। रोग के मारे अपना फतेपुर ही वह न रहा। मलेरिया शुरू हो गया है। भले लोगों का वहाँ रहना मुहाल। बाम्हन-कायस्थों के कुछ घर थे, मर-खपकर घटते जा रहे हैं। ब्राह्मणों पर भक्ति न रही, दिन-दिन छोटे लोगों की ही प्रतिपत्ति बढ़ रही है।

नन्द काका और भी बहुत-सी बातें कहने लगे। बहुतेरे अभियोग। मानो वह भी समय के साथ मेल मिलाकर नहीं चल पा रहे हैं। गाँव में भी वंदेमातरम् पहुँचा है। जाने क्या करते हैं लोग! स्वदेशी की धुन। करघे चले हैं। कहते हैं, अंग्रेज़ों को देश से निकालना है। मैं सुनकर हँसता हूँ। जिसके राज्य में सूरज नहीं डूबता—भूगोल में पढ़ा है—उससे विरोध! यह तो कहो कि अंग्रेज़ आये कि मुल्क से खा-पहन रहे हैं। उससे पहले कैसी अराजकता थी, तुम क्या जानो! डकैतों के मारे रास्ता चलना मुहाल था। सती-प्रथा देखी। मेरी माँ की नानी को लोगों ने बाँधकर जला डाला था। इन अंग्रेज़ों ने ही तो सब बन्द कर दिया। अब वही अंग्रेज़ बुरे हो गए।

भूतनाथ चुपचाप सुनता रहा। लेकिन काका ने राधा का ज़रा भी ज़िक्र न किया, ज़रा भी नहीं! भूल गए शायद। मगर भूतनाथ उसे कहाँ भूल सका!

बेला बढ़ रही थी।

नन्द काका ने कहा—खैर अब तेरे ब्याह का प्रस्ताव—क्यों? स्वरूपगंज के भुवन चौधरी की लड़की बड़ी अच्छी है, दान-दहेज भी अच्छा देगा—वह शहरी दामाद भी चाहता है। बहुत पहले से कह रखा है मुझसे। भूतनाथ कह बैठा—उसी के बारे में आपसे बात करनी थी।

—ब्याह के बारे में?

भूतनाथ को शर्म-सी आने लगी। कुछ भी हो, आखिर तो गुरुजन हैं।

—बता, बता। लाज काहे की?

आगा-पीछा छोड़कर भूतनाथ ने पूछा—अच्छा, आपको पता है, मेरी क्या शादी हो चुकी थी ?

नन्द काका मानो आसमान से गिर पड़े। उसी दम वे कुछ बोल न सके। उसके बाद बोले—मगर तुझे कैसे मालूम हुआ ? किसने कहा ?

भूतनाथ ने कहा—मुझे मालूम हुआ है। सच है कि झूठ, सो बताइए।

नन्द काका को कैसी तो घबराहट होने लगी। आढ़त में उस टिन की छौनी के नीचे, जूट की गुदाम में उनकी तो साँस रुकने की नौबत। कपड़े के छोर से बार-बार अपनी छाती पोंछने लगे। फिर कहा—लेकिन वह बात तो तेरे जानने की नहीं—तब तू चार-पांच या छः साल का रहा होगा।

—शादी क्या बलरामपुर मे हुई थी ?

नन्द काका बोले—हाँ। उस बार बाबुओं ने नई जमींदारी खरीदी। तेरे बाप को लेकर मैं वहाँ रियायत बसाने गया था—तू साथ था।

—तो क्या रामहरि भट्टाचार्य की नतनी से ?

—हाँ। हमे पहले इसका पता न था कि···

—उस लड़की की उम्र सिर्फ़ दो महीने की थी ?

—हाँ।—नन्द काका और भी अवाक् हो गए।

—लड़की का नाम जवामयी था ?

—हाँ। लेकिन हम समझ नहीं सके—उतने बड़े पण्डित आदमी, बलरामपुर मे उनका इतना नाम-गाम, नामी नैयायिक—उस बार जो शोभा बाज़ार के राजभवन में अंग-बंग-कलिंग तमाम से लोग आये थे, दक्षिण तक के विद्वान् उस विचार-गोष्ठी मे शामिल हुए थे—उसमें रामहरि के दादा भी थे और अन्त तक विजय भी उन्ही की हुई थी, सुना—ऐसे पण्डित हमे इस कदर धोखा देंगे, यह कौन जानता था !

भूतनाथ ने फिर पूछा—उन्होंने फिर कभी हमारी खोज-पूछ की थी ?

—की क्यों नही, उन्होंने आदमी भेजा था—तुम्हारे पिता गुजर चुके थे, मेरे पास आते ही मैंने साफ कह दिया कि यह विवाह असिद्ध है।

—क्यों ?

नन्द काका बोले—वही तो कह रहा था मैं, तेरा बाप तो बडा भलामानुस था, भट्टाचार्जी ने आकर उन्हे पकडा—तू साथ ही था। मुझसे सतीश ने पूछा—आदमी तो बडे पण्डित हैं, ऐसे वश मे शादी करने मे क्या हर्ज हो सकता है ! जिन्दगी का क्या ठिकाना, आज है, कल नही—इससे मुक्त ही हो लिया जाये। उन दिनों शादियाँ ऐसी ही होती थी, समझ ले कि मैं जब छः साल का था, काकी पूरे साल-भर की भी न थी, हमारा विवाह हो गया था। तेरी काकी ससुराल आई, तो मेरे पिताजी की गोद मे घूमती-फिरती थी, मुझे याद है।

मैंने अपनी माँ से सुना है, जब मेरी दादी ससुराल आई थीं, तो उनकी कमर
कपड़ा नहीं रहता था, उनकी सास इसलिए कमर में डोरी बाँध दिया करती थीं

ज़रा रुककर नन्द काका ने कहा—तेरे बाप के कहने पर मैंने भी सोचा, लड़की को देख लिया जाए। मगर लड़की को देखें भी क्या, दो महीने की तो थी, फिर भी नाक-आँख से अच्छी ही लगी। कह दिया—हमें मंजूर है। रामहरि बोले—आज ही अच्छा दिन है—हो जाए। शुभस्य शीघ्रम्।

उत्कंठा से भूतनाथ ने पूछा—फिर ?

—फिर उस दिन जो अन्धड़-पानी आया कि पूछो मत ! सतीश ने कहा—शादी तो होगी, मगर मैं रुपया-पैसा तो कुछ लाया नहीं। मैंने कहा, मेरे पास वसूली के रुपये हैं, मैं दूँगा। और क्या तो ब्याह ! रात के डेढ़ बजे के बाद लग्न। उसी आँधी-पानी में तुझे जगाया, ले गया। एक बैलगाड़ी पहले से ही मँगवा रखी थी।

—फिर ?

—फिर क्या ? दूसरे ही दिन फतेहपुर लौट आया। सतीश ने कहा—बात किसी को मालूम न हो। रुपया-पैसा हो जाए, तो खान-पान के ही दिन एका-एक सबसे कह दिया जाएगा। लेकिन उसके पहले ही सब बँटाढार हो गया !

—बंटाढार क्या ?

—यही कि उन लोगों ने हमें ठग लिया है। लड़की के बाप हिन्दू नहीं ब्रह्मसमाजी हैं। उनके लड़के ने कलकत्ते में केशवचन्द्र सेन की जमात में शामिल होकर अपना धर्म छोड़ दिया है। गायत्री मन्त्र का जाप नहीं करता, मुर्गी खाता है, गो-मांस खाता है, सूअर खाता है, विधर्मी से ब्याह किया है—लड़की उसी की है। हमने सुना और आँखें थिर हो गयीं !

—उसके बाद ?

—उसके बाद सतीश ने कहा—भैया अब यह बात किसी से न कहना ही ठीक है। गनीमत है कि अपनी लड़की नहीं है। आखिर उस बार जब वारुणी का मेला लगा, तुझे ले जाकर थोड़ा-सा गोबर खिलाकर पवित्र कराया गया। हुआ-सो-हुआ। मगर यह सब तूने कैसे जाना ?

भूतनाथ ने कोई जवाब न दिया। पूछा—अच्छा, रामहरि पण्डित के लड़के का नाम क्या सुविनय बाबू था ?

—होगा। इतनी याद नहीं है। आज की बात है भला ?

भूतनाथ ने कहा—तो अब मैं चलूँ काका !—कहकर उसने उनके पाँव छुए।

काका ने कहा—बस, यही जानने के लिए आया था ?

भूतनाथ बोला—जी हाँ। यहाँ भेंट न होती, तो मैं गाँव तक जाने को

तैयार था।

—मगर बात क्या है, यह तो बता ?

कोई उत्तर न देकर भूतनाथ आढ़त से बाहर निकल पड़ा। अब तक थोड़ा-बहुत सन्देह था, आज वह भी हल हो गया। नहर के किनारे व्यापारियों की नावों पर हलचल हो रही थी। जूट, तीसी, लकड़ी, सरसों—ढेर-के-ढेर उतर रहे थे। नाव से किनारे तक एक लम्बा तख्ता डाल दिया गया था। मोटिये उसी पार से होकर माथे पर माल उतार रहे थे। धूप तेज हो रही थी। चलते-चलते भूतनाथ का सब-कुछ मानो गोलमाल हो गया। हाथ में जो टिन का बक्स था, वह भारी लगने लगा।

अब वह जाए कहाँ ? दफ्तर से सात दिन की छुट्टी ले रखी थी। दफ्तर न जाए, तो किसी को कोई सफ़ाई नहीं देनी पड़ेगी। फिर रूपचाँद बाबू की उस पर कृपा है।

एक रोज रूपचाँद बाबू ने कहा था—मेरे यहाँ तुम्हारी तरक्की भी कितनी हो सकेगी—अपनी जुर्रत भी क्या है !

भूतनाथ ने कहा—जी, आपकी मुझ पर असीम दया है।

उन्होंने कहा था—दया-क्या कुछ नहीं भूतनाथ बाबू, ईश्वर की दया हो, तो फिर क्या नहीं हो सकता ! धन्यवाद उन्हें दीजिए। उसी से काम होगा। फिर बोले—एक और नया दफ्तर खुलने की बात है, बना तो आपको वहीं बहाल करा दूँगा—लेकिन अभी देर है। वहाँ पहुँच जाएँ तो भविष्य में आपकी उन्नति होगी।

—जी, कौन-सा दफ्तर ?

—यहाँ इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट की बात चल रही है। नई राह-बाट बनेगी, पुरानी सँकरी सड़कें चौड़ी की जाएँगी, नये सिरे से शहर को बसाया जाएगा।

नहर के किनारे एक साफ़-सुथरी जगह में भूतनाथ ने टिन के बक्से को रखा और उसी पर बैठ गया। माल लिए नौकाएँ चली जा रही थीं। जाने कितनी-कितनी दूर से आई। यहाँ कच्चा माल बेचकर, यहाँ से मिट्टी का तेल, दिया-सलाई, नमक, मिल के कपड़े लेकर फिर गाँवों को लौट जाएँगी। अनमना-सा सब देखते-देखते एकाएक उसके जी में आया—आखिर वह यहाँ बैठा क्यों है ? जाने की जगह की कमी पड़ी है उसे ? चाहे तो वह अभी बड़े महल में जा सकता है। चोर-कमरे में उसकी जगह सुरक्षित पड़ी है। छोटी बहू को लेकर एक बार वरानगर जाने की बात है। खुद भी वहाँ मन्नत मान आएगा।

भूतनाथ उठ खड़ा हुआ। धीरे-धीरे चलने लगा। उसे देखकर वंशी हैरान रह जाएगा। पूछेगा—अरे, लौट आए आप ! घर नहीं गये ?

वह जवाब देगा—तुम लोगों को छोड़कर जाया नहीं गया वंशी। लौट

आया। और रहना भी कितने दिन है ! मकान तो खाली करना ही पड़ेगा। उस समय ?

लेकिन एक जने की बात को ज़बर्दस्ती भूले रहने की चेष्टा की उसने। यह कैसे मुमकिन हो सकता है ! प्रेम की बात नहीं। चाहने-पाने का भी सवाल नहीं। आखिर वह यह कैसे कहे कि मैं ही वह हूँ ! मैं अपने दावे के साथ आया हूँ, मुझे कबूल करो। दो मन्त्र और एक रात की साज़िश की सज़ा ! जवा के जीवन में वह रात क्या सदा विडम्बना ही बनी रहेगी ? और उसकी यही विडम्बना क्या भूतनाथ चाहता था ?

सोचते-सोचते वह फिर चलने लगा। टिन का बक्स क्रमशः भारी ही लगने लगा। जी में आया, उसका चलना मानो कभी खत्म न होगा। जाएगा भी कहाँ ? किसके पास ? रास्ते में लोग आ-जा-रहे थे। ट्राम, मोटर, बग्घी, साइकिल। सहसा ख़याल आया—इस दुनिया में कोई भी तो स्थिर नहीं है। लेकिन जा कहाँ रहे हैं सब ? सब क्या पेट के लिए अन्न की तलाश में हैं ? अपनी रोज़-रोज़ की ज़रूरतों के चारों ओर घूमकर जीवन बिता रहे हैं ?

बहुत दिन पहले की एक घटना उसे याद आई। फतेपुर की नदी के किनारे एक बाऊल[1] आकर टिका था। उसी के आस-पास भूतनाथ की फूफी का देहान्त हुआ था। कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा था उसे। घूमता-घामता एक दिन भूतनाथ वहाँ पहुँचा। एक पिंजड़े में एक मैना, एक झोला और एक इकतारा—इतनी ही उसकी पूँजी। उसी इकतारा से उस दिन कैसे-कैसे सुर निकले ! कितने अच्छे गीत सुने उससे !

भूतनाथ ने पूछा—बाबा आपकी जात ?

बाऊल बोला—बेटे हम बाऊल हैं।

—हमारी ही तरह हिन्दू ही तो हैं आप ?

बाऊल ने कहा—नहीं, हम बाऊल हैं।

भूतनाथ ने पूछा—आप हमारी तरह देवता को पूजते हैं ? भगवान् को मानते हैं ?

—बेशक !

—फिर हमसे आपका फर्क क्या है ?

बाऊल ने कहा था—फर्क बाहर का तो नहीं है, अन्दर का है। हिन्दू मन्दिर बनाते हैं, प्रचार करते हैं, हम न तो मन्दिर बनाते हैं, न प्रचार ही करते हैं। हिन्दू बाहर बिखेरा करते हैं, हम अन्दर सँजोया करते हैं। हमारे गुरु का कहना है, पहले अपने को जानो। अपने को जानने पर स्वयं में भगवान् मिलता है।

—लेकिन ये बातें आप औरों से क्यों नहीं कहते ? बिना जाने लोग आपके

---

[1]. एक प्रकार के साधु जो इकतारे [illegible] मांगते हैं।

पास आएँगे क्यों ?

बाऊल हँसा था। चिलम में दम लगाते-लगाते बोला था—लोग आएँगे, आएँगे, एक दिन जरूर आएँगे।

इतने दिनों के बाद मानो आज भूतनाथ को बाऊल की वह बात समझ आई। लगा, सब मानो अपने-आपको ढूँढ़ने के लिए ही निकल पड़े हैं। अपने को पाए बिना अपने से बड़े को पाने का कोई उपाय नहीं। छुटपन से हर आदमी अपने इसी लक्ष्य की ओर बढ़ रहा है। आदमी के अपने बनाए आचार उसे याद दिलाया करते हैं कि दैनंदिनी जीवन-यात्रा में ही उसकी परिसमाप्ति नहीं। वह एक ऐसी आत्मसत्ता की खोज में है, जो उसके वर्तमान और अतीत की प्रवृत्ति और वासना को पार करके बड़ी दूर निकल गई है।

याद आया, सुविनय बाबू भी यही कहा करते थे। आत्मानं विद्धि। अपने को जानो। वे अपने को जानने की ही साधना कर गए। ब्रजराखाल ने अपने को जानने की सिद्धि के लिए ही दीक्षा ली है। छोटी बहू इतने दिनों से अपने को ही जानना चाह रही है। छोटे बाबू, नन्हे बाबू, ननीलाल, चुन्नी, वंशी, विधु सरकार, सभी मानो अपने को जानने की ही साधना करते आ रहे हैं।

दोपहर हो चली। धूप तेज हो गई। फिर भी भूतनाथ को कोई तकलीफ नहीं महसूस हुई। हाथ का बक्स हल्का हो गया, हल्का हो उठा शरीर।

एक जगह वह और कुछ देर बैठा रहा। याद आया, सुविनय बाबू ने कहा था—यह कलकत्ता एक दिन नहीं था, भारतवर्ष नहीं था, यह धरती भी नहीं थी। थी सिर्फ भाप। भाप के परमाणु ताप के वेग से छिटककर चारों ओर चक्कर काटते रहे। उनकी न तो कोई सार्थकता थी, न था उनमें सौन्दर्य। जब वे सिमटकर एक हुए तो पृथ्वी बनी। भूतनाथ को लगा, वह भी आज तक प्रवृत्ति के ताप से, कामना-वासना के वेग से चारों ओर बिखरा हुआ था। न कुछ दिया, न कुछ पाया। अब एकाएक मन बड़ा संयत हो आया। मानो सारा बिखरा हुआ ज्ञान एक परम प्रज्ञा में घनीभूत हो उठा है। सारी विच्छिन्न वासना एक परम प्रेम में पूर्ण हो उठी है।

अपने मन की गहराई में उसने झाँका, वहाँ जवा नहीं थी।

सबसे बड़े अचरज की बात यह थी कि यह विछोह लगना चाहिए था, सो परम प्राप्ति प्रतीत हुई। लगा, जवा है। अब तक वह किसे चाहती रही है, कौन जाने ! जिसे भी चाहती रही हो चाहे, कभी गलती से, कभी भूल को समझकर असल में वह भी शायद अपने को पाने की साधना ही करती आई है। छोटे बाबू भी आजीवन अपने को ही चाहते आए हैं, चुन्नी भी, छोटी बहू भी···सभी। मानो सभी यह कह रहे हों—उस एक को जानो—अपनी आत्मा को पहचानो।

वनमाली सरकार लेन के पास पहुँचकर गड़बड़-सा लगा। बड़े महल के सामने खासी भीड़। बहुत-से लाल पगड़ी वाले खड़े। और-और लोग भी घेरे खड़े।

गेट खुला। अन्दर की बहुत-सी चीजें प्रांगण में निकालकर रखी गई थीं। बालटी, बर्तन, लकड़ियों के सामान पहाड़-से जमा थे।

भूतनाथ ने एक से पूछा—यह क्या ?

—पटलडांगा के बाबू घर दखल कर रहे हैं।

—क्यों ? परवाना है ?

—जी परवाने के साथ आये हैं। इतने कच्चे खिलाड़ी नहीं हैं वे।

—तुम्हारे वह मैनेजर कहाँ हैं ?

मैनेजर आस-पास कहीं नहीं दीखा।

दूर से वंशी ने भूतनाथ को देखा। वह रोता-पीटता दौड़ा आया—क्या होगा हुजूर ?

भूतनाथ ने पूछा—हो क्या रहा है यह ? छोटे बाबू का हुक्म ले लिया गया है ? किसके हुक्म से सामान निकाल रहे हैं ये ?

—हुक्म फिर किसका लेंगे हुजूर ?

—क्यों, जिसका घर है, उसका ?

—हुक्म तो नहीं लिया है।

—फिर तूने सामान निकालने क्यों दिया ?

पुलिस खड़ी-खड़ी देख रही थी। पटलडांगा के बाबुओं की तरफ के लोग माथे पर भारी-भारी सामान निकाल रहे थे।

वंशी ने कहा—इतने-इतने लोगों के सामने मैं कर क्या सकता था ?

भूतनाथ ने एक क्षण क्या तो सोचा। उसके बाद पूछा—छोटी बहू क्या कर रही हैं वंशी ?

वंशी तब भी रो रहा था। धीमे से बोला—आज सुबह से ही नशे में बेहोश पड़ी हैं···आज कुछ ज्यादती कर दी है।

—और छोटे बाबू ?

—वे खिड़की से बाहर टुकुर-टुकुर ताक रहे हैं, कुछ बोलते नहीं। मैं बहुत कहा, बहुत समझाया, लेकिन कोई जवाब नहीं।

भूतनाथ बोला—ज़रा मेरी साइकिल तो ले आ।

वंशी चोर कमरे से साइकिल ले आया।

भूतनाथ ने कहा—तू खयाल रखना, छोटी बहू या छोटे बाबू घर से निकलें, हर्गिज नहीं। मैं अभी आया।

वह साइकिल से बाहर निकल गया।

उस दिन भूतनाथ का एक ही उद्देश्य था—इस अपमान से छोटी बहू व बचाना। यह तिरस्कार बड़े महल के अतीत-गौरव का नहीं, उन लोगों का नहीं, उ

बीसवीं सदी की ताल पर चल नहीं सके। यह अपमान छोटी बहू का निजी है। छोटी बहू के भले-बुरे से अपने को कैसा तो जोड लिया था उसने! यह सिर्फ उसकी कृतज्ञता नही, कृपा के कर्ज को चुकाने की चेष्टा नही निरी। नीरस कर्त्तव्य भी नहीं। यह मानो किसी नितान्त अपने की रक्षा करना है। अपने परमात्मीय से भी यदि कोई बड़ा हो, तो उसकी।

छोटी बहू ने कहा था—मैं कहीं मर जाऊँ तो तू जरा रोना भूतनाथ। यह सोचते भी बड़ा भला लगता है कि मेरे लिए कोई रोएगा।

लेकिन रोने की नौबत अन्त तक आई नही। वास्तव मे वैसा दिन जब आया था, तो भूतनाथ को एक नई उपलब्धि का पता चला—एक नई आत्मानुभूति। उस समय भूतनाथ अपने-आपको पहचान चुका था। सुविनय बाबू की भाषा में—आत्मानं विद्धि। तब संसार में किसी के लिए रोने की जरूरत ही उसे नही रह गई थी। शुरू-शुरू जबा के घर के पास से गुजरते हुए अन्दर जाने का लोभ भी हुआ। जबा की लड़की का गाना सुनकर बहुत बार मन मे द्वन्द्व पैदा हुआ। लेकिन उसने अपने-आप पर विजय पाई। सबको खोकर उसने दुनिया को पा लिया था। खुद को जानकर उसने विश्व को पहचान लिया था।

मगर यह बात अभी रहे।

उस रोज उसने सोचा, जैसे भी हो, पटलडांगा के बाबुओं से यह परवाना रद्द कराना ही पड़ेगा। बाबुओं के पैरों पड़ेगा—यह हुक्म जिसमें रद्द कर ही दें।

हो सकता है, दरवान अन्दर न जाने दे। या तो बाबू लोग घर नही होंगे। लेकिन जो हो, भूतनाथ सदर दरवाजे पर अड़ा रहेगा। रद्द का हुक्म लिये बिना नही लौटने का। कहीं वह हुक्म न मिला, तो भी नहीं लौटने का। भूखा-प्यासा दरवाजे के सामने पड़ा रहेगा—दिनों।

जाते-जाते फिर जी मे आया—वह जा क्यों रहा है आखिर! यह भी शायद आत्मबोध का तकाजा है। छोटी बहू को बचाना खुद को बचाना है।

अभी वनमाली सरकार लेन पार नही हो सका था। उसे लगा कि मैनेजर इधर को आ रहा है। आवाज दी—मैनेजर साहब—

मैनेजर तेजी से आ रहा था। तेज चलना उसकी आदत थी। मानो धीरे-धीरे वह चल ही नही सकता। व्यस्त न रहे तो वह जी ही नही सकता।

भूतनाथ ने फिर पुकारा—मैनेजर साहब—

पलटकर खड़ा हुआ मैनेजर। एक बार भूतनाथ की तरफ ताका। लेकिन पहचान न सका। बोला—लगा, किसी ने मुझे पुकारा।

—मैंने ही पुकारा।

—क्यों? कौन है आप?

मैनेजर के हाथ में वही फूला-फूला-सा बैग। नुकीली मूँछें। पहचानने में

गेट खुला। अन्दर की बहुत-सी चीजें प्रांगण में निकालकर रखी गई थीं। बालटी, बर्तन, लकड़ियों के सामान पहाड़-से जमा थे।

भूतनाथ ने एक से पूछा—यह क्या ?

—पटलडाँगा के बाबू घर दखल कर रहे हैं।

—क्यों ? परवाना है ?

—जी परवाने के साथ आये हैं। इतने कच्चे खिलाड़ी नहीं हैं वे।

—तुम्हारे वह मैनेजर कहाँ हैं ?

मैनेजर आस-पास कहीं नहीं दीखा।

दूर से वंशी ने भूतनाथ को देखा। वह रोता-पीटता दौड़ा आया—क्या होगा हुजूर ?

भूतनाथ ने पूछा—हो क्या रहा है यह ? छोटे बाबू का हुक्म ले लिया गया है ? किसके हुक्म से सामान निकाल रहे हैं ये ?

—हुक्म फिर किसका लेंगे हुजूर ?

—क्यों, जिसका घर है, उसका ?

—हुक्म तो नहीं लिया है।

—फिर तूने सामान निकालने क्यों दिया ?

पुलिस खड़ी-खड़ी देख रही थी। पटलडाँगा के बाबुओं की तरफ के लोग माथे पर भारी-भारी सामान निकाल रहे थे।

वंशी ने कहा—इतने-इतने लोगों के सामने मैं कर क्या सकता था ?

भूतनाथ ने एक क्षण क्या तो सोचा। उसके बाद पूछा—छोटी बहू क्या कर रही हैं वंशी ?

वंशी तब भी रो रहा था। धीमे से बोला—आज सुबह से ही नशे में बेहोश पड़ी हैं···आज कुछ ज्यादती कर दी है।

—और छोटे बाबू ?

—वे खिड़की से बाहर टुकुर-टुकुर ताक रहे हैं, कुछ बोलते नहीं। मैंने बहुत कहा, बहुत समझाया, लेकिन कोई जवाब नहीं।

भूतनाथ बोला—जरा मेरी साइकिल तो ले आ।

वंशी चोर कमरे से साइकिल ले आया।

भूतनाथ ने कहा—तू खयाल रखना, छोटी बहू या छोटे बाबू घर से न निकलें, हर्गिज नहीं। मैं अभी आया।

वह साइकिल से बाहर निकल गया।

उस दिन भूतनाथ का एक ही उद्देश्य था—इस अपमान से छोटी बहू को बचाना। यह तिरस्कार बड़े महल के अतीत-गौरव का नहीं, उन लोगों का नहीं, जो

बीसवी सदी की ताल पर चल नही सके। यह अपमान छोटी बहू का निजी है। छोटी बहू के भले-बुरे से अपने को कैसा तो जोड लिया था उसने! यह सिर्फ उसकी कृतज्ञता नही, कृपा के कर्ज को चुकाने की चेष्टा नही निरी। नीरस कर्तव्य भी नही। यह मानो किसी नितान्त अपने की रक्षा करना है। अपने परमात्मीय से भी यदि कोई बड़ा हो, तो उसकी।

छोटी बहू ने कहा था—मैं कही मर जाऊँ तो तू जरा रोना भूतनाथ। यह सोचते भी बड़ा भला लगता है कि मेरे लिए कोई रोएगा।

लेकिन रोने की नौबत अन्त तक आई नही। वास्तव मे वैसा दिन जब आया था, तो भूतनाथ को एक नई उपलब्धि का पता चला—एक नई आत्मानुभूति। उस समय भूतनाथ अपने-आपको पहचान चुका था। सुविनय बाबू की भाषा में—आत्मानं विद्धि। तब संसार में किसी के लिए रोने की जरूरत ही उसे नही रह गई थी। शुरू-शुरू जवा के घर के पास से गुजरते हुए अन्दर जाने का लोभ भी हुआ। जवा की लड़की का गाना सुनकर बहुत बार मन मे द्वन्द्व पैदा हुआ। लेकिन उसने अपने-आप पर विजय पाई। सबको खोकर उसने दुनिया को पा लिया था। खुद को जानकर उसने विश्व को पहचान लिया था।

मगर यह बात अभी रहे।

उस रोज उसने सोचा, जैसे भी हो, पटलडाँगा के बाबुओ से यह परवाना रद्द कराना ही पड़ेगा। बाबुओ के पैरों पड़ेगा—यह हुक्म जिसमे रद्द कर ही दें।

हो सकता है, दरवान अन्दर न जाने दे। या तो बाबू लोग घर नही होंगे। लेकिन जो हो, भूतनाथ सदर दरवाजे पर अड़ा रहेगा। रद्द का हुक्म लिये बिना नहीं लौटने का। कही वह हुक्म न मिला, तो भी नही लौटने का। भूखा-प्यासा दरवाजे के सामने पड़ा रहेगा—दिनों।

जाते-जाते फिर जी मे आया—वह जा क्यों रहा है आखिर! यह भी शायद आत्मबोध का तकाजा है। छोटी बहू को बचाना खुद को बचाना है।

अभी वनमाली सरकार लेन पार नही हो सका था। उसे लगा कि मैनेजर इधर को आ रहा है। आवाज दी—मैनेजर साहब—

मैनेजर तेजी से आ रहा था। तेज चलना उसकी आदत थी। मानो धीरे-धीरे वह चल ही नही सकता। व्यस्त न रहे तो वह जी ही नहीं सकता।

भूतनाथ ने फिर पुकारा—मैनेजर साहब—

पलटकर खड़ा हुआ मैनेजर। एक बार भूतनाथ की तरफ़ ताका। लेकिन पहचान न सका। बोला—लगा, किसी ने मुझे पुकारा।

—मैंने ही पुकारा।

—क्यों? कौन हैं आप?

मैनेजर के हाथ में वही फूला-फूला-सा बैग। नुकीली आँखें। पहचानने के

ल नहीं हो सकती। लेकिन मैनेजर किसी को आसानी से नहीं चीन्ह सकता।
आसानी से किसी को चीन्ह जाना शायद कमज़ोरी है। ननी वावू के मैनेजर को
हज़ारों काम हैं। हज़ारों आदमी उनके पैरों धरना देते हैं। वे इस आसानी से किसी
को कैसे पहचानें ?

भूतनाथ ने कहा—मैं वड़े महल में रहता हूँ। आप ही के पास तो जा
रहा था।

मैनेजर ने कहा—खैर, ठीक ही है। मैं भी भागता हुआ वहीं जा रहा हूँ।
वही सवेरे का निकला हूँ—दोपहर हो गई। अव हुक्म हुआ—वह वाज़ार जाओ।
अजीव मुसीवत है !

भूतनाथ ने पूछा—कोई वावू घर में हैं ?

—क्यों ? घर पर क्या जाना ! सुवह से लोगों का तांता वंधा रहता है।
वावुओं ने विलकुल मना कर रखा है, कल मैंने सवको भगा दिया, दिनभर की
परेशानी के वाद आदमी ज़रा सुस्ताएगा, सो नहीं, रात-रात को भी फुरसत नहीं।
आ ही रहे हैं लोग।

भूतनाथ ने कहा—लेकिन पुलिस-प्यादा ले जाकर आखिर यही करना
था,—इतने दिनों का प्रतिष्ठित परिवार; फिर वेचारे वीमार आदमी—वावुओं
को क्या दया-माया छू नहीं गई है ? ननी वावू को तार भेजा ही गया है। वे क्या
जवाव देते हैं, यह देखे विना ही—

मैनेजर वोल उठा—वस वह तार ही तो आफत हुआ—मैनेजर जल-भुन
उठा।—मैंने कहा था कि साहव को खवर न दो; वे विगड़ उठेंगे—याद कर देखो,
मैंने कहा था या नहीं ! मुफ़्त में इतने रुपयों का नुकसान, मेरा क्या, मैं तो हुक्म
का वन्दा हूँ, अपना नुकसान आप समझें वे—वीच में मेरा वोलना वेकार।

वैग में हाथ डालकर मैनेजर कागज-पत्तर पलटने लगा। कहा—वही सवेरे
से तप-तपाकर दोपहर को लौटा, फिर दौड़ो वह वाज़ार···अव सुना भी दूंगा दो
वात ! फिर मामला-मुकदमा और कचहरी-अदालत की क्या ज़रूरत और इस बूढ़े
को इतना परेशान करने से क्या मतलव ?

मुश्किल से वह कागज मिला। विगड़कर उसे हाथ में लेकर मैनेजर वोला—
इसी कागज़ के लिए हैरानी है !

भूतनाथ ने पूछा—कैसा कागज़ ?

मैनेजर फिर तेज़ी से चल पड़ा। भूतनाथ उसके पीछे लगा। मैनेजर ने
पूछा—माल-असवाव सव अव तक उतार चुका होगा, क्यों ?

भूतनाथ वोला—हाँ, उतार तो हो चुका है। सामान क्या थोड़ा है ?

—खैर, निकाल चुका सो निकाल चुका, अव नहीं निकालेगा, लेकि
सामान तुम्हें अपने आदमी से उठवाना पड़ेगा, कहे देता हूँ। निकालें भी हम औ

उठाएँ भी हम, यह न होगा। नुकसान पर नुकसान—वह बड़े महल की ओर चला।

भूतनाथ साथ चला। बोला—तो सामान अब वे न निकालेंगे?

—अरे बाबा, नहीं, नहीं। कह तो दिया, नहीं निकालेंगे। एक ही बात एक सौ बार कहो—अजीब मुसीबत है। वहाँ पहुँचकर मैनेजर ने आवाज दी—अरे ए, क्या नाम लो है उसका—कैलाश—

कैलाश कहीं था। चीजें निकालने में सबसे ज्यादा उमंग उसी में थी। हो-हल्ला करके अब तक वही सारा कुछ कर-करा रहा था।

मैनेजर ने कहा—बस, काम रोक दो।

—ऐसा क्या मैनेजर साहब?

—कह रहा हूँ, सो करो। हम सब तो हुक्म के बन्दे हैं।

—और ये सामान?

—ये यों ही रहेंगे। जिनका है, वे सँभालेंगे अपना। हमीं निकालें, हमीं पहुँचाएँ—यह तो नुकसान उठाना है यह कहो, नहीं तो हाथीबगान के सरकार के यहाँ रातों-रात माल निकलवाया, नीलाम में बेच दिया, तब वहाँ से उठे। मगर मैं यह भी कहे देता हूँ, ऐसे रवैये से तो बन्धक का कारोबार चला!

भूतनाथ ने कहा—तो क्या ये लोग इस मकान में रह सकेंगे?

मैनेजर ने कहा—और नहीं तो क्या, साहब ने विलायत से तार भेजा है। उस हुक्म का एक इंच इधर-उधर नहीं हो सकता। तुम लोगों ने साहब को तार देकर ही सारा गुड़-गोबर कर दिया।

—सभी दिन रहेंगे ये?

—सभी दिन क्या? यह रहा हुक्मनामा। यह देखो—जब तक बाबू लोग रहेंगे, तब तक उनके कब्ज़े में रहेगा।

पास खड़ा वंशी भी सुन रहा था। पूछा—तो छोटे बाबू को ये रहने देंगे, क्यों हुजूर?

जवाब से पहले ही सदर दरवाजे से एक गाड़ी अन्दर आई। कोचबक्स पर बैठा इब्राहिम। घंटी बजाई। गाड़ी से मँझले बाबू उतरे।

वंशी ने झुककर उन्हें प्रणाम किया।

इन दिनों मँझले बाबू और भी काले हो गए थे। सेहत भी टूट गई थी। फिर भी धोती का चुनदार छोर जमीन तक लटक रहा था। पम्प जूता। सिर के बाल कहीं-कहीं उड़ गए थे। इत्र की खुशबू से वह जगह महमहा उठी।

—पटलडाँगावाले आदमी कहाँ गये रे?

सामने जाकर मैनेजर ने झुककर प्रणाम किया।

मँझले बाबू ने पूछा—तुम कौन हो? क्या नाम है तुम्हारा?

मँझले बाबू के आगे मैनेजर ने मानो अपना फन समेट लिया। नुकीली मूँछें मानो अचानक झुक गई। भिनभिनाकर उसने अपना नाम बताया।

मँझले बाबू ने कहा—अच्छा-अच्छा ! तुम लोगों के पास भी तार आया है और उसने मुझे भी तार भेजा है। ननी बाबू आदमी अच्छे हैं। खैर, अब तुम्हारा क्या काम रहा, तुम लोग जा सकते हो।

मँझले बाबू के साथ बेनी आया था। उसकी भी तन्दुरुस्ती खराब हो गई थी। इब्राहिम को भी अब वह वर्दी नहीं। बाल लेकिन वैसे ही सँवरे। लकड़ी की कंघी से कसे-कसाए, मूँछों में मोम लगा।

मँझले बाबू ने कहा—चल, जरा तेरे छोटे बाबू को देख लूं। कैसा है इन दिनों ?

उसके बाद इब्राहिम, बंशी, बेनी, सबने मिलकर सामान उठाना शुरू किया। भारी-भारी सामान। मानो वजनी न होता तो सोहता नहीं। लकड़ी का एक-एक पाटा ऐसा कि चार जने पकड़ो तो टस से मस हो। एक-एक सिल, बर्तन, चौकी, गद्दा, सन्दूक को कोई अकेले हिला दे क्या मजाल ! सब कम्पनी के जमाने का सामान। सस्ता समय। कम्पनी के जमाने में चालीस मन चावल पचहत्तर रुपए का आता था। पाँच मन घी सतहत्तर रुपए का, दो मन सरसों का तेल इक्यावन रुपए का। मन के हिसाब से सामान आता था बड़े महल में। दोनों वेला खाते भी बहुत-से लोग थे। आलू आया अंग्रेजों के साथ। धीरे-धीरे वह भी सस्ता हो गया। एक बन्दगोभी ही कुछ मँहगी थी। उसे साहब-सूबा खाया करते थे।

सामान ढोते-ढोते भी तीसरा पहर हो गया। दिन-भर किसी को भोजन नसीब नहीं हुआ। सवेरे से रसोई ही नहीं हुई। ऐसे में हो भी क्या ! किसी का दिमाग ही सही न था। उसके बाद अब चूल्हा सुलगा। मँझली चाची ने रसोई चढ़ाई। सब्जी के लिए बंशी बाजार गया। जाते-जाते कह गया—आप चल न दीजिएगा हुजूर—एकबारगी खा-पीकर ही जाइएगा।

भूतनाथ ने कहा—लेकिन मुझे एक बार बार-शिमले जाना था बंशी !

—जी नहीं, बिना खाए हर्गिज न जाएँ आप। छोटी माँ को मालूम होगा, तो खफ़ा होंगी।

—वह भी क्या यों ही हैं बंशी ?

—उनके खाने की न पूछिए हुजूर ! आज इतना कुछ जो हो गया—उन्हें पता भी है कुछ ! खाक भी खबर न हुई। सुबह ही एक बोतल पी गई। आज जिद कर बैठी थीं कि नहाऊँगी नहीं। कह-सुनकर चिन्ता ने उन्हें नहलाया, सजा-गुजा दिया। मैंने जाकर कहा—आज रसोई में देर होगी, जब तक यह जलपान कर लें। पहले तो वह सुन ही न सकीं। आँखें बन्द किए पड़ी रहीं। मैंने दुबारा कहा, तो बोलीं—नहीं खाती मैं—ले जा।

मैंने कहा—खाएँगी नहीं, तो जिएँगी कैसे ! सिर्फ शराब से पेट भरेगा ? छोटी माँ शायद बिगड़ गईं। आँखें खोलकर मेरी ओर जरा ताका। मैंने समझा, अब क्रोध ठंडा पड़ गया। मैंने पत्थर की तश्तरी उनकी तरफ बढ़ाई। उन्होंने लात से झटक दिया। तश्तरी गिरकर चूर-चूर हो गई।

मेरे मुँह से शब्द न निकला। वहाँ मैं मारे सोच के मरा जा रहा था। सुबह से ये लोग परेशान किए थे—सामान उतारो, घर खाली करो, इतनी मेहनत से घर बुहारा था—गर्द-गुबार से भर गया। तिस पर यह रवैया। पत्थर की तश्तरी टूटना क्या अच्छी बात है साले साहब ! अमंगल होता है। फिर तो मैं चुप नहीं रह सका हुजूर—चुप रहते-रहते मेरा कलेजा जलकर खाक हो चुका है।

—तो कहा क्या तुमने ?

—जी, जो मुँह में नहीं आता, वही कह बैठा, जबान की लगाम ढीली कर दी। होश-हवास तो नहीं रहा, गुस्से में क्या कह बैठा, खाक याद है ! लेकिन देखा, छोटी माँ रो रही हैं।

भूतनाथ ने पूछा—रो रही थी ?

एकाएक वंशी की आँखों से भी आँसू बह निकले। कपड़े के छोर से आँखें पोंछते हुए वंशी ने कहा—नजर पड़ी तो मैं आपे में आया। सोचा, कर क्या रहा हूँ मैं ! छोटी माँ तो होश में नहीं, नशे में जो-सो करती हैं, मगर मैं क्या कर रहा हूँ ? अपने अन्नदाता को मैंने इस तरह गालियाँ दी ! नरक में भी जगह न मिलेगी मुझे। मैं वहीं अपने गाल पर तड़ातड़ थप्पड़ मारने लगा, लेकिन उससे भी पराछित नहीं हुआ। दीवार पर कपाल पीटकर मैं मनाने लगा—मेरी मौत हो···मौत··· मौत होती क्यों नहीं मेरी ··और, वंशी वहीं खड़ा-खड़ा फफककर रोने लगा।

वंशी ने आँखें पोंछी। बोला—अच्छा चलूँ बाजार। बोतल नहीं है। शा की दूकान से एक बोतल लानी होगी। कहीं भूल गया तो गई जान !

जरा रुककर बोला—अपनी यही आफत है हुजूर—किससे कहूँ और कौन समझे ! चिन्ता तो छोटी माँ की निगरानी-भर से ही छुट्टी पा जाती है, मँझली काकी ने रसोई की और छुट्टी···बाकी सारा काम, छोटे बाबू के मल-मूत्र से लेकर अन्दर-बाहर का सारा काम वंशी को ही करना पड़ता है। मैं भी तो आदमी हूँ।

भूतनाथ ने कहा—अच्छा, अभी जरा छोटी माँ से भेंट करा दोगे वंशी ! बार-शिमले जाने के पहले भेंट कर लेता, दो बातें कर लेता।

वंशी अचानक गम्भीर हो गया। बोला—अब आप छोटी माँ से न मिलें हुजूर !

—क्यों ?

—जी, आपके भले के लिए कह रहा हूँ—कभी न मिलें आप।

—क्यों, ऐसा क्यों कह रहे हो ?

वंशी बिगड़ उठा—आपमें यही एक ऐब है। बड़े ज़िद्दी हैं आप। कह तो रहा हूँ कि उनसे न मिलें। आप ही के भले के लिए कह रहा हूँ न।

भूतनाथ को भी अकड़ आ गई। बोला—भेंट मैं उनसे ज़रूर करूँगा।

—कीजिए, मुझसे फिर क्यों पूछ रहे हैं? मैं कहता हूँ भेंट करने से आपका भला न होगा, न होगा, न होगा। तीन बार कह दिया, याद रहे।

भूतनाथ ने वंशी के चेहरे पर गौर किया। वंशी ने अपनी निगाह फेर ली थी। भूतनाथ बोला—लेकिन यह तो बताओगे कि भेंट आखिर क्यों न करूँ।

वंशी बोला—सब-कुछ सुनना ही चाहिए? नहीं सुनते तो अच्छा था। खैर। अभी बेनी आया था। वही मुझे यह सब बता गया।

—क्या बता गया?

—आप किसीसे कह न दें कहीं—बेनी चुपचाप बता गया है—मँझले बाबू को सब बातों का पता चल गया है। आपको मारने के लिए उन्होंने गुण्डा ठीक कर रखा है।

भूतनाथ अवाक् हो गया। बोला—मुझे मारने के लिए गुंडा?

—जी हाँ, मँझले बाबू को आप जानते कहाँ हैं, गुण्डा क्या उनके पास आज से है? शुरू से देखता आया हूँ, उनके पास गुण्डा है। जो लोग पीते हैं, औरतों के पीछे रहते हैं, उन्हें गुण्डा भी रखना पड़ता है। जान बाजार में छोटे बाबू के गुण्डे थे, छेनीदत्त के थे। सभी रखते हैं। गुण्डे न रखें तो कलकत्ते में इतनी रात को घूमना-फिरना कैसे चल सकता है?

—लेकिन गुण्डा मुझे मारेंगे क्यों?

—उस बार मँझले बाबू ने आपको छोटी माँ के कमरे में देख लिया था न, फिर खबर तो सब मिलती ही रहती है रोज़-रोज़। नौकर-दाई रहने से यहाँ की खबर वहाँ, वहाँ की यहाँ, आती ही जाती रहती है।

—लेकिन गुण्डे से मुझे मरवाएँगे क्यों?

—मैं क्या जानूँ बेनी ने जो कहा, आपसे बता दिया। वह बोला—साले साहब शायद रात को छोटी माँ के कमरे में जाया करते हैं, दोनों मिलकर शराब पीते हैं, गाड़ी पर घूमने जाते हैं। यह अच्छी बात तो नहीं। मँझले बाबू कहते हैं, हमारे खानदान की बहुओं ने कभी सूरज का मुँह नहीं देखा। और बात भी सही है हुज़ूर, मुझे याद है, उन दिनों हम नौकर भी अन्दर महल में नहीं जा पाते थे। दाई हुक्म सुना जाती थी, हम बजा लाते थे। लेकिन अब तो सब ब्रह्मसमाजी हो गए हैं। साहब-सूबों की दावत होती है, औरतें राह-बाट में घूमा करती हैं। मँझले बाबू इसीलिए आपसे खफ़ा हैं। कह रखा है, रास्ते में जब मौका लगे खात्मा कर दो।

भूतनाथ चुप रहा।

वंशी ने कहा—रात-बिरात अकेले न कहीं जाएँ तो क्या! गुण्डों की बात,

जानें कब क्या कर बैठें !

भूतनाथ जरा देर क्या तो सोचता रहा। उसके बाद बोला—मुझे अपने लिए कोई खौफ नहीं है वशी—देख तो रहा हूँ मैं कि कोई मेरा पीछा कर रहा है। जब जहाँ जाता हूँ, वहीं जाता है। एक दिन पूछने की सोची, पर खिसक पड़ा।

—जी हाँ, वही मँझले बाबू का आदमी है।

—मगर मुझे उसकी फिक्र नहीं—मैं तो छोटी बहू की सोचता हूँ। मेरी खातिर उनकी बदनामी होगी, उन पर आफत आएगी। उससे तो अच्छा है, मैं यहाँ से चल ही दूँ। बेकार ही यहाँ बैठा अन्न का श्राद्ध कर रहा हूँ।

वंशी ने कहा—ऐसा न कहें हुजूर, कोई जाने-न-जाने, मुझे तो पता है। छोटी माँ तक को मालूम नहीं है, लेकिन आप ही के रुपयों से तो अभी तक···

भूतनाथ ने कहा—खैर वह बात छोड़ो, तुमने गुण्डे की जो बात कही वह कोई जानता है ?

—जी नहीं। कोई नहीं जानता। होशियार कर देने के लिए ही बेनी ने मुझे बताया।

भूतनाथ बोला—लेकिन छोटी बहू को लेकर एक बार वरानगर तो जाना ही पड़ेगा।

—*वहाँ आप लोग कहाँ जाते हैं हुजूर ?*

—एक साधु के पास। छोटी बहू छोटे बाबू के लिए मन्नत मानेगी और मैं भी इनके भले के लिए मानता करूँगा। हाँ, बाजार ही तो जा रहे हो, हम दोनों के लिए एक-एक ढोली पान और पाँच-पाँच कोरी सुपारी ला दोगे ?

—क्यों नहीं ?

—ला दो तो आज ही हो आएँ। ये पैसे रख लो।

वंशी बोला—पैसे तो रहने ही दीजिए—मेरे जिम्मे कितना पैसा निकलेगा, पहले उसी का हिसाब कर लीजिए।

भूतनाथ बोला—तो मुझे छोटी बहू के कमरे में पहुँचा दो जरा।

सबेरे का झमेला खत्म होते-होते शाम हो आई। सुबह से न भोजन नसीब हुआ, न आराम। मँझले बाबू ने मिनट भर के लिए छोटे बाबू से भेंट की और बैरंग वापस चले गए। इब्राहिम अकेले ही गाड़ी हाँक ले गया। यासीन शायद हटा दिया गया। गेट पर अब बिरिजसिंह तो है नहीं कि गाड़ी की घण्टी सुनते ही चीख उठे—होशियार ! अस्तबल में अब घोड़ों की मलाई नहीं चलती, घड़ियाल नहीं बजता, वह ऐश्वर्य, विलास, रईसी—कुछ न रही। वहीं जो एक बार पेट में दर्द हुआ था, तब से मँझले बाबू ने शराब छोड़ दी। आश्चर्य ! मँझले बाबू, छोटे बाबू, सबने शराब छोड़ दी ! एक छोटी बहू से छोड़ते न बना ! अजीब-सी बात !

छोटी बहू के कमरे के पास जाते ही चिन्ता ने कहा—छोटी माँ पूजा कर रही हैं।—घूंघट के अन्दर से वह फिर बोली—आप अन्दर जाएँ—अब पूजा पर से उठेंगी।

यशोदादुलाल की मूर्ति अभी भी सोने से मढ़ी थी। सोने की मुरली। सोने का मुकुट। हीरे की आँखें। उनकी तरफ मुँह किये जमीन पर माथा टेककर छोटी बहू प्रणाम कर रही थी। कर रही थी, सो कर ही रही थी। अँचरा गले में पड़ा। जूड़ा बँधा था। जूड़े पर सोने की कंघी। कंघी पर मीनाकारी। बीच में हरूफ़ों में लिखा—पति परम गुरु। बार-बार माटी में माथा टेककर प्रणाम कर रही थी छोटी बहू। भूतनाथ प्रतीक्षा में रहा। आखिर छोटी बहू उठ खड़ी हुई।

भूतनाथ देखने लगा। देखने में अपूर्व लगा। स्थिति इतनी बदल गई, वह वैभव न रहा, वह नाम-यश न रहा, वह सुख-भोग न रहा, लेकिन गज़ब है, छोटी बहू के रूप में कोई परिवर्तन मानो होने का नहीं। पहले दिन जैसा देखा था, इतने वर्षों बाद आज भी वह रूप वैसा ही है। अटूट। उज्ज्वल। सिर में वैसे ही घने बाल। वैसा ही दूधिया रंग। वैसी ही बनावट, वैसी ही तन्दुरुस्ती। जगद्धात्री का रूप जो कहा था, उसमें जरा भी अत्युक्ति न थी। पाँव की उँगली से सिर के बाल तक क्या ज़रा भी परिवर्तन नहीं आना चाहिए? भगवान् ने मनुष्य की ऐसी निर्दोष रचना शायद यही पहली बार की है। लगा छोटी बहू की उम्र मानो और भी कम हो गई है, रूप निखरा पड़ रहा है। दुःख-कष्ट से खूबसूरती और खिल पड़ी है।

भूतनाथ ने कहा—मैं आया हूँ।

—अरे, तू?—चौंककर छोटी बहू मुड़कर खड़ी हो गई।

इतनी स्वस्थ दशा में भूतनाथ ने छोटी बहू को ज़माने से नहीं देखा।

—तू अपने गाँव नहीं गया भूतनाथ?

भूतनाथ ने कहा—नहीं।

—मगर तूने तो कहा था, जाना ही पड़ेगा। गये बिना काम नहीं चलने का?

छोटी बहू फ़र्श पर बैठ गई।

भूतनाथ भी सामने बैठ गया। बोला—वह काम यहीं हो गया, इसीलिए नहीं गया। लेकिन मैं दूसरी बात कहने आया हूँ बहू! सोचता हूँ, यहाँ से चला जाऊँ। काफ़ी दिन बोझ बनकर रहा।

छोटी बहू ने जाने क्या सोचा। फिर पूछा—जायेगा? कहाँ जायेगा?

भूतनाथ बोला—यह तो तय नहीं कर सका हूँ कि कहाँ जाऊँगा, लेकिन जाऊँगा। काफ़ी दिनों तक तुम लोगों को कष्ट पहुँचाया।

छोटी बहू कुढ़ गई। बोली—झूठ कहने में तेरी ज़बान नहीं हिचकी भूतनाथ?

—झूठ नहीं, अब यहाँ रहना ठीक नहीं दीखता।

छोटी बहू कुछ देर चुप रही। उसके बाद कहा—अब घर-गिरस्ती बसाने को जी चाह रहा है, क्यों ?

भूतनाथ बोला—वही हो, तो अन्याय होगा ?

—अन्याय क्या, लेकिन घर-गिरस्ती तो यहाँ रहकर भी बसा सकता है। इतने-इतने तो कमरे पड़े हैं, विवाह करके यहीं रह। मैं तुझे सजा-सँवारकर ब्याह करने को भेजूँगी, वह आएगी, परिछन कर उसे अन्दर लाऊँगी। यह तो जाने मेरी कब की हविस है भूतनाथ !

—लेकिन तुम्हारी यह हविस कभी पूरी नहीं होगी।

—क्यों ?

—नहीं होगी, इसलिए कि तुम्हें वह नसीब नहीं। खैर, जाने दो। मुझे जाना है, अब तुम मुझे न रोको, हँसकर जाने की इजाजत दो—नहीं तो फिर कभी जा ही न सकूँगा। तुम्हें रुलाकर स्वर्ग जाकर भी मैं सुखी न होऊँगा।

छोटी बहू हँसी। बोली—लेकिन न जाने दूँ तो ?

—ठीक नहीं जानता, लेकिन तुम अगर न जाने दो, तो शायद मेरा जाना ही न होगा कभी।

छोटी बहू ने कहा—तो फिर जा ही मत भैया, इतना तो समझूँगी कि मेरे मरने पर एक आदमी तो रोएगा। गुरुदेव ने कहा था—पट्टो, माँग में सिन्दूर लिये मरना। यदि ऐसा हो सके तो अच्छा। लेकिन होगा भी ऐसा ? मेरे नसीब को यह बर्दाश्त होगा ? रात-दिन इसीलिए तो अपने यशोदादुलाल से कहा करती हूँ कि अब अपने छोटे बाबू के जीते-जी जिसमें मैं मर सकूँ। तुझसे कह रखती हूँ, उस दिन तू मुझे अपने मन-माफिक सजाना; माँग में अच्छी तरह सिन्दूर भर देना, पाँवों में महावर, पिटारी से ब्याहवाली बनारसी साड़ी निकालकर मुझे पहना देना, गहने-जेवर से अंग-अंग सजाकर मुझे सोने से मढ़ देना, ताकि लोग यह कहें—सती बहू चली।

भूतनाथ ने चुपचाप सुना। बोला—खैर, मैं न जाऊँगा। लेकिन ··

—लेकिन क्या ?

—लेकिन मैं अगर ब्रह्मसमाजी लड़की से ब्याह करूँ, तो तुम उसे नहीं अपनाओगी ?

—ब्रह्मसमाजी लड़की क्यों ?

—क्यों क्या, समझ लो करूँ, तो घर में जगह नहीं दोगी ?

—क्यों न दूँगी जगह, अपनी बहू को जगह न दूँगी ? तू उससे ब्याह कर सकता है और मैं जगह नहीं दे सकती—कहता क्या है तू ?

—तो मैं बहू को लाऊँगा।

—तू सचमुच शादी करेगा भूतनाथ ?

—शादी मैंने कर ली है।

—कर ली है ? कब ? मुझे बताया तो नहीं ?

—तुम्हें क्या बताता, मैं खुद ही नहीं जानता था। उस समय मैं पाँच-छः साल का था···और भूतनाथ ने शुरू से आखिर तक सारी कहानी कह सुनाई। सब। सब। जरा भी न छिपाया। 'मोहिनी सिन्दूर' की नौकरी के बाद से कैसे घनिष्ठता हुई, सुविनय बाबू की मौत आदि सारी बातें कहीं।

छोटी बहू ने कहा—तो फिर आज ही ले आ भूतनाथ ! बड़े दिनों का अरमान है कि मैं भी बड़ी दीदी की तरह बहू लाऊँगी। बंशी से कह दे, सामान ठीक करे—धान, दूब, मिठाइयाँ, कपड़े, गहने···। अब नया जेवर बनाने का समय कहाँ, सास का दिया जो जड़ाऊ हार है, वही देकर मैं बहू का मुँह देखूँगी—है न—अरी ओ चिन्ता !

भूतनाथ बोला—आज बहू को न लाकर बरानगर चलें, तो कैसा ?

—नहीं, बरानगर रहे, आज मैं अपनी बहू का मुँह देखूँगी।

उस दिन चाँदनी के अस्पताल में पड़े-पड़े भूतनाथ ने वही सब बातें सोची थीं। शायद उस रोज छोटी बहू ने नए सिरे से बचने की कोशिश की थी। भूमिपति चौधरी से लेकर वंशानुक्रम से जमते-जमते जो पाप पहाड़-सा हो उठा था, उसके बारे में छोटी बहू को शायद जानकारी न थी। सन् अट्ठारह सौ पच्चीस में जब जहाज आया, देश की जमीन पर रेल की पटरी बिछी, तब उस नए जमाने से कदम मिलाकर न चल सका, इसलिए एक वंश इस तरह धीरे-धीरे पिछड़ गया। फिर से उठने की गुंजाइश न रही। अकेली छोटी बहू की कोशिश से क्या होता ! अस्पताल में पड़े-पड़े सारे इतिहास को दुहराते हुए बार-बार उसे छोटी बहू का चेहरा याद आता। अपने जीवन में भूतनाथ को इतना प्यार किसी से न मिला। कब कैसे छोटी बहू के मन के कोने में वह रत्ती-सी जगह बना ले सका था, इसकी याद नहीं। उसका सारा श्रेय छोटी बहू को ही है। भूतनाथ उस श्रेय का रत्ती-भर भी दावा नहीं कर सकता।

आज भी याद है, राह बंकिमचन्द्र ने दिखाई थी। अपनी जाति, अपने इतिहास और अपनी सभ्यता की विफलता के अभाव की उपलब्धि शायद सबसे पहले उन्होंने ही की थी। उन्होंने ही नए सिरे से गीता का आविष्कार किया। चारों ओर की निराशा तथा पराधीनता की ग्लानि के बीच गीता के श्लोकों में सबने विजय का आश्वासन देखा। कुरुक्षेत्र के दौरान जाने कब युद्ध-विमुख अर्जुन को उत्साह देते हुए श्रीकृष्ण ने शक्ति के मन्त्र का उच्चारण किया था—सदियाँ बीतीं, फिर भी उस मन्त्र ने सजीव होकर फिर से तरुण मनों में आश्वासन का

संचार किया। श्रीकृष्ण की वह वाणी आत्मबोध की, अपने को पहचानने की वाणी है। श्री अरविंद ने नए रूप से इसी गीता का सहारा लिया। बोले—यह युद्ध, यह मृत्यु, यह अस्त्र, यह धर्म, यह तीर और धनुष—यह भी ईश्वर की सृष्टि है। वे बोले—We do not want to develop a nation of woman who know only how to weep and how not to strike

उसके बाद अलीपुर बमकेस मे अरविंद को शायद अपनी महाजिज्ञासा का जवाब मिला—Man shall attain his Godhead

भूतनाथ की खाट खिडकी के पास ही थी। लेटे-लेटे खुला आसमान वहाँ से दीखता था। वही पड़े-पड़े जाने क्या आकाश-पाताल सोचा! उसी तरफ ताकते हुए बहुत बार उसने सोचा किया—आखिर कहाँ चली गई छोटी बहू! इतने दिन कहाँ गायब रही? आसमान की नीलिमा से बार-बार पूछने पर भी उस दिन उसका जवाब न मिला।

उस रोज जब वह बार-शिमले जा रहा था, बंशी ने पूछा—भोजन करके न जायेंगे साले साहब?

भूतनाथ ने कहा—आज मुझे खाने का वक्त नही है बंशी!

—रसोई मे देर नही है। बन गई। सब्जी उतरी नही कि—

—ठीक है। न होगा तो लौटकर खा लूँगा।

लाचार बंशी को मान ही जाना पडा था। लेकिन उसने बारम्बार ताकीद की—रात न हो लेकिन, बेनी की बात सुनने के बाद से मुझे बडा डर लगता है हुजूर!

—किस बात का डर?

बंशी ने कहा—कहा तो नही जा सकता, सुना है, मँझले बाबू ने गुण्डा लगा दिया है पीछे, गुण्डों के जरिए मँझले बाबू ने क्या-क्या नही किया! देखा नही आपने, नाटू दत्त ने उस बार छोटे बाबू की कैसी गत की, तब से छोटे बाबू उठ ही न सके।

—तू डर नही बंशी, मेरा कुछ न बिगडेगा, तू पान-सुपारी ले आया है न?

—ले आया हूँ। लेकिन आज अब कब जायेंगे बरानगर? बेला तो झुक आई।

—आज न बनेगा तो कल ही जाऊँगा।

बंशी ने कहा—जी हाँ, वही अच्छा होगा। आज सुबह से जो झमेले रहे, सोच देखिए। गनीमत कहिए कि हगामा चुक गया। बडी सोच मे था हुजूर! ननी बाबू मान गये, यही अच्छा हुआ, जाने कब से महाप्रभु की मन्नत मान रखी है। अब की गाँव जाऊँगा, तो पूजा कर आऊँगा।

उस रोज निकल तो पडा बड़े महल से, पर कदम मानो उठना नहीं चाह

रहे थे भूतनाथ के। आखिर जवा पर अपना अधिकार वह ज़ाहिर कैसे करेगा? यह कैसे कहेगा कि मैं ही तुम्हारा स्वामी हूँ। कैसे बताएगा कि अतुल और कोई नहीं, वह मेरा ही दूसरा नाम है। पिता का दिया हुआ नाम। उस नाम से उसे एक नन्द काका के सिवा कोई नहीं पुकारता! पिता के चल बसने के बाद वह नीलमणि पंडित की पाठशाला में दाखिल हुआ। लेकिन भूतनाथ के नाम से। इन सारी बातों को बताने में भी कैसी तो भिखमंगे-सी वृत्ति है! जवा इसे किस भाव से ग्रहण करेगी, कौन जाने! इन कुछ दिनों में अगर उसमें कुछ परिवर्तन हो गया हो!

मकान के सामने पहुंचकर भी उसकी हिचक जा नहीं रही थी। उस दिन बेलगछिया की नहर के किनारे उसने मन के जिस संयम का संयम किया था, आज मानो वह खो गया। यहीं खड़े-खड़े वह जान लेता तो अच्छा होता कि अन्दर जवा कैसी है? क्या कर रही है?

उसने चारों तरफ़ देख लिया, रास्ते पर कहीं सुपवित्र तो नहीं खड़ा है। अपने-अपने काम से लोग गली में से आ-जा रहे थे। पतली-सी गली। दोनों तरफ़ पनाला। भनभनाकर मच्छर उड़ रहे थे। कड़े खटखटाने को हाथ बढ़ाकर खींच लिया। कहीं जवा घर में न हो! भूतनाथ को इतने दिनों से लापता देखकर कहीं उसने अस्पताल में ही नौकरी कर ली हो! इधर कुछ दिन भूतनाथ यहाँ आया नहीं। सिर्फ़ सोचता रहा। सोचता रहा सिर्फ़ अपनी बात। बड़े महल के इतने झमेले, रूपचांद बाबू के दफ्तर का काम—सबके बीच ज़रा भी मौका मिला कि वह सोचने लगा। सोचता रहा अपनी और सुपवित्र की बात। जवा की बात।

उस रोज़ भी जब वह अन्दर जाने लगा तो देखा, जवा की नौकरानी एक टोकरी में बहुत-सी चीज़ें लेकर बाहर फेंकने जा रही है। ग़ौर करके वह रुक् रह गया। पूछा—टोकरी में क्या है सब?

नौकरानी बोली—जी, दीदीजी ने सब बाहर फेंक आने को कहा।

—देखूं-देखूं, क्या है उसमें?—और उसने जो देखा, अवाक् रह गया। कीमती चीज़ें थीं। एक फूलदानी थी, एक किताब, एक छोटी-सी घड़ी—काम की कई चीज़ें। टुकड़े-टुकड़े की हुई एक तस्वीर। सुपवित्र की तस्वीर।

जवा ने कहा था—इन चीज़ों को अब रखकर क्या होगा भूतनाथ बाबू, उसी ने समय-समय पर भेंट दी थी। अब अपने पास इन्हें न रखना ही अच्छा।

—तो क्या रास्ते पर फेंक दोगी?

—चाहे रास्ते पर फेंक दूं, चाहे किसी को दूं—अपने लिए दोनों एक ही बात है।

—लेकिन जी से भी क्या मेट सकोगी?

—उचित तो यही है।

—उचित-अनुचित की नहीं कहता, मेट सकोगी?

—पिताजी से सुना तो है कि मनुष्य के लिए असम्भव कुछ भी नहीं—कोशिश कर देखूं।

भूतनाथ ने कहा था—कोशिश से ही अगर भूलना सम्भव होता तो संसार में इतनी तकलीफ ही न रहती जवा ! इसीलिए हिन्दुओं में तो एक देवता का नाम ही है भोलानाथ। वे भंग पीकर सारी सृष्टि को भूले बैठे हैं। लेकिन उसी भोलानाथ ने अन्त में सती के लिए क्या किया, जानती हो न ?

बात चाहे जितनी भी कहे, लेकिन भूलने की उसकी आप्राण चेष्टा देखकर दंग रह गया था भूतनाथ। उस चेष्टा में कहीं कोई त्रुटि न थी, कोई शिथिलता नहीं।

जवा ने कहा था—शायद इसे आप मेरा संस्कार कहें, लेकिन जी जो चाहता है, वह तो पशु भी करता है, फिर आदमी की अपनी खासियत कहां है ! संयम, शृंखला, साधना—यह सब तो मनुष्य ही के लिए हैं।

भूतनाथ ने झटपट दरवाज़े के कड़े खटखटाए।

भीतर से नौकरानी ने पूछा—कौन ?

—मैं हूँ, मैं।

—भैयाजी, आप ?—उसने दरवाजा खोल दिया।

—दीदीजी कहां हैं ? अन्दर हैं ?

—वह तो बहुत बीमार हैं बाबू, इधर आप आये नहीं, अकेली मैं—

—बीमार हैं ? क्या हुआ है ?

नौकरानी बोली—अचानक कल तेज़ बुखार हो गया—सारा बदन आग—रात-भर बेहोश पड़ी रही, किसे बुलाऊँ, क्या करूँ—समझ न सकी। कँपकँपी के साथ बुखार आया। तभी से बोली बन्द है।

—फिर ?

—सुबह सोचती रही, किसे बुलाऊँ ! पहचानती ही किसे हूँ ! सो छोटे भैयाजी को बुला लाई।

—छोटे भैयाजी कौन ! सुपवित्र बाबू ?

—जी हां। उनका घर जानती थी। उन्होंने डॉक्टर को बुलाया। दवा चल रही है, मगर होश नहीं हुआ है। उसी तरह बेसुध पड़ी हैं। मैं तो सोच में पड़ गई। अकेली औरत में…

—सुपवित्र बाबू ऊपर है ?

—वे हैं, जभी तो काम-काज देख रही हूं, वरना सोच में पड़ गई थी।

उस दिन का दृश्य आज भी याद है। भूतनाथ दनदनाता हुआ ऊपर गया। देखा, जवा पलंग पर बेहोश पड़ी है। बदन पर
पर दवा की एक शीशी। और सामने की तरफ झुककर

है। भूतनाथ के पैरों की आहट से सुपवित्र चौंक उठा था। आँख मूँदते ही आज भी वह दृश्य भूतनाथ देख पाता है। सुपवित्र ने कुछ इस तरह देखा था, मानो उसने कोई बहुत बड़ा अपराध किया हो।

भूतनाथ पर नज़र पड़ते ही सुपवित्र ने बाहर निकलकर कहा—आप आ गए, मुझे बड़ा डर लग रहा था।

सुपवित्र के चेहरे पर उत्कण्ठा थी। बेचारा बड़ा असहाय-सा दीख रहा था। आपद-विपद में वह यों ही होश-हवास खो बैठता। कोई बड़ा-सा काम हो, तो ताल नहीं ठीक रख सकता। हर काम में भूल होती। पढ़ते-पढ़ते यथार्थ जगत् से उसका शुरू से ही वह सम्पर्क नहीं। अब तक उसे कोई किनारा नहीं मिल रहा था।

—किस डॉक्टर को बुलाया था?

—उन्होंने दवा कौन-सी दी?

—बीमाई क्या बताई?

एक ही साथ भूतनाथ ने अनेक सवाल किये। डॉक्टर ने बताया था—बहुत दिनों से बदपरहेज़ी, उपवास, सेहत पर ज़ुल्म करते रहने से कमज़ोर पड़ गई थीं। मौका पाकर सारे लक्षण दिखाई दे गए। यह ज़हर लेकिन बहुत दिनों से था, बाहर से दीख नहीं पड़ा। वह तो गनीमत कहिए कि समय पर दवा पड़ी।

—तीसरे पहर क्या डॉक्टर आयेंगे?

—उन्होंने कहा था, होश न आए तो खबर दीजिएगा। लेकिन बुखार शायद कम हो गया है, जरा देर पहले पसीना आ रहा था। छटपटा रही थीं। अब नींद आ गई है। नींद टूट न जाए, इसीलिए मैं पंखा झल रहा था।

भूतनाथ बोला—मैं डॉक्टर को बुला लाता हूँ, आप जबा के पास बैठें।

सुपवित्र ने कहा—मैं ही जाता हूँ, आप बैठें।

—नहीं-नहीं, आप बैठिए।

लेकिन सुपवित्र वहाँ बैठने को हर्गिज़ राजी न हुआ। डॉक्टर को बुलाकर बाहर ही खड़ा रहा। हरदम बचता-कटता रहा। डॉक्टर दूसरी दवा दे गए। वह रात कैसे कटी, आज भी याद है भूतनाथ को। सुविनय बाबू की बीमारी में इस घर में पहले भी कई रातें बितानी पड़ी थीं। रात के सन्नाटे में रेल की सीटी और गहरे अँधेरे में अचानक किसी निशाचर पक्षी का बोलकर चुप हो जाना—यह अभिज्ञता भूतनाथ को थी। लेकिन अबकी कुछ और ही बात थी। सूने घर के परिवेश में जबा निर्जीव-सी पड़ी। एकटक उसकी तरफ़ देखते रहने के सिवा और काम ही क्या था!

सुपवित्र बगल में खड़ा था। बोला—तो मैं जाऊँ, आप तो हैं ही?

डॉक्टर कह गए थे—नाड़ी की गति अब ठीक है, ख़तरा नहीं रहा। सुबह थोड़ा-सा दूध या चाय दे सकते हैं। दवा तो चलेगी ही।

रात गहरी हो आई। दीवार के कोने मे एक मकडी ने जाला लगाया था। भूतनाथ एकटक उसी तरफ़ देख रहा था। धुमैला-सा जाला। उसी पर थिर बैठी थी मकडी। न हिल न डुल। घर मे इतनी वडी एक बीमारी, लेकिन उस तरफ कोई खयाल ही नही। वहाँ से उसकी आँखें दिखाई नही पड रही थी। लेकिन वैसी एकाग्रता भी भूतनाथ ने अपने जीवन मे नही देखी थी। एकनिष्ठता भी कह सकते है। मानो ध्यान लगाए हो। भूतनाथ ने उधर से निगाह हटा ली। कमरे की दीवार का सब-कुछ देखने की उसे इच्छा हुई। कहाँ कालिख का कोई धुँधला-सा दाग पड़ा था, कोई कीड़ा हिल रहा था—और समय होता तो यह सब इस तरह नजर ही नही आता। आज उसे अपनी छाया अजीव दीखी। हल्की रोशनी मे छाया पड़ रही थी। कुछ दीवार पर, कुछ फर्श पर आड़ी-टेढ़ी छाया। मनुष्य की छाया ऐसी घिनौनी क्यो लगती है! पास ही सुपवित्र की छाया पड रही थी। लेकिन वह छाया सीधी दीवार पर पड़ रही थी पूरी-पूरी। टूटी-फूटी-सी नही। बिलकुल बगल मे पड रही थी। सुपवित्र की नाक मानो कुशल रेखाओं में सुन्दर-सी निखरी थी। सुपवित्र बड़ा सुन्दर जँचा। सच ही सुपवित्र बड़ा सुन्दर है। जवा के बगल मे वह खूब फबता है। उसने और एक बार छाया को देखा। सुपवित्र चित्र-लिखित-सा खड़ा था। पलकें भी नही गिर रही थी शायद। शायद जवा को एकटक देख रहा था। अब तक उसे रास्ते पर खड़ा रहना पडता था। आज जवा की बीमारी की वजह से अन्दर आने का मौका मिला है। छाया मे सुपवित्र के वाल फुर-फुर उड़ रहे थे। घने वाल। नियम से वाल बनवाने की शायद याद नही रहती। मगर वाल अच्छे लगते। शायद सुपवित्र कुशल दुनियादार नहीं। नही तो क्या हुआ? सुन्दर तो है! समुद्र की लहर न सही, इन्द्रधनुप तो है वह! काले आसमान के कोने मे इस तरह सात रंगों की चमक दिखा सकता है, यही क्या कम है! इन्द्रधनुप के रंग से जब दुनिया रंगीन हो उठती है, तो उससे सुन्दर और क्या होता है? एकाएक भूतनाथ को लगा—दीवार की वह एकनिष्ठ मकडी, कालिख का वह छोटा-सा दाग और सुपवित्र को छाया अचानक सजीव हो उठी। एकाएक सब हिलने लगे। पलक मारते सारी दीवार काली हो उठी। वह मकडी अपना जाला छोडकर पागल-सी चक्कर काटने लगी। और सुपवित्र की छाया गायब हो गई।

इतने में सुपवित्र बोल उठा—भूतनाथ बाबू, मेरे रहने की अब ज़रूरत है?

—क्यो?

सुपवित्र बोला—नही, कही आँखे खोलने पर जवा मुझे देखे, तो गुस्सा हो सकती है—आने को मना किया था।

—अरे नही-नही, आप बीमार की सेवा करने आये हैं, गुस्सा क्यों होगी? अभी तक उसने क्या आपको देखा नही है?

सुपवित्र ने कहा—मेरे आने की उसे कतई खबर नहीं···बुखार में बेखबर

पड़ी है न !

—दवा पिलाते वक्त भी नहीं देखा ?

सुपवित्र बोला—बड़ी मुश्किल से होंठ दबाकर दवा पिलानी पड़ी थी—ठीक-ठीक होश नहीं था उसे ।

भूतनाथ ने कहा—अच्छा । आप जाएँ नहीं । बग़ल के कमरे में ज़रा बैठें। ज़रूरत होगी, तो बुला लूंगा ।

सुपवित्र चला गया ।

भूतनाथ ने जवा को देखा । जवा को पता भी नहीं कि सुपवित्र आया है । लगा, वह बुखार की तेज़ी में सपना देख रही है । वह जवा को अपलक देखने लगा । बड़ी असहाय-सी लगी वह । सारे संसार में मानो उसका कोई नहीं । अजीब बात । भूतनाथ-जैसे असहाय व्यक्ति से जिन दो का घनिष्ठ परिचय हुआ, वे दोनों-की-दोनों असहाय ! एक छोटी बहू, दूसरी जवा । इतनी घनिष्ठता कर लेना शायद ठीक न हुआ । उससे न तो छोटी बहू का भला हुआ, न जवा का, न उसका अपना । मोहिनी सिन्दूर कार्यालय में नौकरी की क्या ज़रूरत थी ! किसी दूसरे दफ्तर में भी तो मिल सकती थी जगह ! ब्रजराखाल के दफ्तर में भी मिल सकता था काम । शुरू से ही रूपचाँद बाबू के यहाँ हो सकता था । तब इस बुरी तरह भूतनाथ को घनिष्ठ न होना पड़ता । इस तरह उसे उपन्यास का नायक नहीं बनना पड़ता । एक बार लगा—सपने में जवा जाने क्या बुदबुदा रही है । भूतनाथ जवा के मुंह के करीब झुक गया । सुनने की कोशिश की । लेकिन बड़ा अस्पष्ट । ज़रा देर बाद ऐसा लगा कि कुछ समझ में आया । बुखार की तेज़ी में मानो लटपटाकर उसने सुपवित्र का नाम लिया । कान लगाकर भूतनाथ ने फिर सुना । भूल न थी । लगा, सुपवित्र से कुछ बात कर रही है । उसने फिर कान लगाया । अब कुछ नहीं बोल रही थी । बेहोश पड़ी थी । लम्बी सांस । चेतना का कोई लक्षण नहीं ।

इस तरह बैठे-बैठे एकाएक उसके जी में आया, वह यहाँ बैठा क्यों है ? सुपवित्र और जवा, इन दोनों के बीच वह अब तक एक बहुत बड़ी बाधा-सा है । क्यों अपने अस्तित्व के बोझ से वह इन लोगों को दुखा रहा है ? अपने को वह सहज ही गायब तो कर सकता है । जवा के जीवन में भूतनाथ तो एक आकस्मिकता है । यों कहो कि कभी, किसी मौके पर उसने अपने मन-प्राण को किसी के हाथ बेचा नहीं है । उनको जीवन-सम्बन्ध की किसी गांठ से जोड़ा नहीं गया । इसे सच मान लेने से ही तो सब चुक जाए । जो उसकी दुराशा ही थी, मुट्ठी में आने के बाद भी उसे दुराशा समझकर खिसक पड़े, बस । कोई कुछ कहनेवाला नहीं, शिकवा-शिकायत करनेवाला नहीं । किसी को चोट नहीं पहुंचेगी । पहुंचेगी भी तो खुद उसी को । सोच ले कि यह पानी पर का निशान है । पानी के निशान को जो स्थायी मानते हैं, वे अनजान हैं । अपने जीवन में उसने बहुत देखा, बहुत-बहुत राह तै करके तब

आज यहाँ आकर खड़ा हुआ है। उसे मालूम है, दुःख क्या होता है, जानता है, चोट कैसी भयानक होती है, आश्रय की जरूरत जब सबसे ज्यादा होती है, तब आश्रय कितना दुर्लभ होता है। लेकिन उसे यह भी मालूम है कि सच्चा सुख पाने में नहीं है। मनुष्य की आत्मा सत्य को ज्ञान से उपलब्ध करती है। वह जब अपने आत्मीय-स्वजन, बन्धु-बान्धवों से मिलता है, तो उसे अपनी सार्थकता का एक रूप दिखाई पड़ता है। इसीसे सुविनय बाबू कहा करते थे—आत्मा का जो परिपूर्ण सत्य है, वह परमात्मा में है। अपना 'मैं' एकमात्र उस महा 'मैं' में ही सार्थक होता है। ठीक इसी तरह जब हम सत्य को जानते है, तो उस अखड सत्य मे ही सारी खडता को जानते है। उन्होंने यह भी कहा था—जिसने खड मे से अखड की उपलब्धि की है, सुखी वही है। वह जो आनन्द होता है, वही प्रेम है। वह प्रेम बाँधकर नहीं रखता। उसी प्रेम मे मुक्ति है—सभी आसक्तियों की मुक्ति। उसी मृत्यु के सत्कार का मन्त्र है—

'मधुवाता ऋतायते—
मधुक्षरन्ति सिन्धवः'

जवा के कमरे में बैठे-बैठे भूतनाथ को लगा, वह अभी, इसी क्षण सब त्याग सकता है। कहीं कोई आकर्षण नहीं। जवा को चूँकि वह प्यार करता है, इसीलिए उसे इतनी आसानी से खो सकता है। खड को वह नए सिरे से अखड मे प्राप्त करेगा। नए सिरे से महाजीवन को पाएगा।

सहसा मानो जवा जग गई। हिली जरा। होंठ जरा काँप उठे। एक बार आँखें खोलने की कोशिश की। चेहरे से ऐसा प्रतीत हुआ, मानो एकाएक वह स्वस्थ और स्वाभाविक हो उठी।

भूतनाथ धीरे-धीरे जवा की मेज पर जा बैठा। कागज-कलम उठाकर एक चिट्ठी लिखने लगा।

तन्द्रा में जवा इधर-उधर करवट बदल रही थी। चेतना लौट रही थी। आँखें खुल रही थीं। थोड़ी-थोड़ी रोशनी में उसकी नजर ठीक जगह पर टिक नहीं रही थी।

बगल के कमरे में सुपवित्र सो रहा था। करीब जाकर भूतनाथ ने जल्दी से पुकारा—सुपवित्र बाबू, सुपवित्र बाबू—

हड़बड़ाकर सुपवित्र उठा—क्या बात है? कैसी है जवा? भूतनाथ ने कहा—जवा आपको बुला रही है।

—मुझे बुला रही है?—सुपवित्र ने आँखें पोंछ ली थीं, फिर भी मानो अच्छी तरह जगा न था। मानो जवा का ही सपना देख रहा था अब तक। लगा, गलत सुना। पूछा—मुझे?

—हाँ, आपको।

—लेकिन ठीक सुना आपने, मुझको ?

—मैंने ठीक सुना है।

—लेकिन यह हो कैसे सकता है ! मुझे देखने से उसकी बीमारी बढ़ जा सकती है भूतनाथ बाबू ! बार-बार उसने मुझे आने को मना किया था। मैं आया हूँ, यह भी तो मालूम नहीं उसे !

—जो भी हो, मैं कह रहा हूँ, आप जाइए।

सुपवित्र को मानो इतनी ज़्यादा उम्मीद न थी। आशा से कहीं अधिक मिला मानो। विश्वास नहीं हो रहा था। नन्हे बच्चे-जैसा मुखड़ा रँग गया शर्म से। नये अनुराग की शर्म। वह रूमाल से अपना मुँह पोंछने लगा फिर से। जाते हुए भी हिचक होने लगी। बोला—और आप नहीं जायेंगे ?

—नहीं, अकेले आपको बुलाया है।

—अकेले ?

—हाँ। घबराएँ नहीं, अब वह ठीक है। बने तो सवेरे ज़रा दूध दीजिएगा। बहुत कमज़ोर लग रही है।

सुपवित्र जा रहा था।

भूतनाथ ने पुकारा—सुनिए।

सुपवित्र लौटकर खड़ा हुआ। भूतनाथ ने कहा—जबा की तबीयत ठीक हो तो यह चिट्ठी उसे दे दीजिएगा। भला !

—आपकी चिट्ठी ?

—हाँ। मुझे ज़रूरी काम है, इसलिए जा रहा हूँ। कल फिर आऊँगा। कुछ दिन आप उसकी बराबर निगरानी रखें। वह बड़ी स्वाभिमानिनी है, पता है न ? सभी बात का बाहरी अर्थ लेकर उसका विचार न कीजिएगा, उसे मैं आपके हाथों सौंपकर जा रहा हूँ।

दरवाज़ा खोलने गई तो नौकरानी ने पूछा—फिर कब आयेंगे भैयाजी ?

—मैं अब नहीं आऊँगा। लेकिन कहते-कहते अपने को सँभाल लिया। बोला—कल ही आऊँगा।

नौकरानी ने अन्दर से दरवाज़ा बन्द कर लिया।

रात काफ़ी बाकी थी। कलकत्ते का प्राण-समुद्र थिर, तरंगहीन पड़ा था। भूतनाथ ने उस अदृश्य अपरूप को मन-ही-मन प्रणाम किया। बोला—हे अमृत, मेरा प्रणाम लो। तुम्हारे अनोखे आनन्दरूप के बीच उस अपरूप अरूप को मैं प्रणाम करता हूँ। मैंने तुम्हीं को पाया—पाया तुम्हारे अनन्त प्रेम को। सुख-दुःख, विपदा-सम्पदा लोक-लोकान्तर में मैंने तुम्हें पाया। यह संसार अब मुझे पीड़ा और थकावट नहीं दे सकता। यह विश्व-संसार ही मेरा प्रेम है। यहीं नित्य से अनित्य का योग है, आनन्द से अमृत का। यहीं विरह-मिलन के बीच, पाने-खोने की अनेक अड़चनों के बीच,

तरह-तरह से तुम्हें पाया है, पाया है तुम्हे पाकर भी, खोकर भी—मेरी यह प्राप्ति विभिन्न रसो, विभिन्न रगों में अक्षय, अव्यय रहे। नमस्तेऽस्तु…

चाँदनी के अस्पताल मे पड़ा-पडा भूतनाथ अपनी ही चिन्ता मे डूब जाता। बीच-बीच मे नर्स आकर माथे की पट्टी बदल दे जाती। यही कुछ दिन हुए, होश हुआ है। ये दिन कैसे कटे, दिन-रात के जुलूस एक-एक कर कैसे, किधर से गुजर गए, खाक भी खबर नही। अब मानो पहले की एक-एक घटना सोची जा सकती है। कलकत्ते से बेशक उसका परिचय घनिष्ठ है। एक प्राचीन वंश का उत्थान न सही, पतन तो उसने अपनी आँखो देखा है। किसी और दिन की बात याद आ जाती। मुगल-शासन के बीचो-बीच की बात। सुबह से आसमान घनी घटाओं से घिरा। सप्तग्राम का पतन हो चुका था। हुगली सनसनाती बढ रही थी। पाल ताने कई जहाज़ साकरेल घाट से चले जा रहे थे। साथ में कुछ डोंगियाँ, बोट। उन दिनों साँझ को सूतानूटी, गोविन्दपुर और कलकत्ते मे उतरे, ऐसा साहस किसे था! कहने को सूतानूटी मे टिमटिमाती-सी एक हाट थी। वहाँ सेठ और बसाक रहा करते थे। वहाँ उनका सूता और कपडे का कारोबार था। बाहर से खरीदने के लिए बहुत-से लोग आते थे। अँग्रेज, पुर्तगाली, दिनेमार। वर्षा की उस रात में सांकरेल के घाट से चले हुए वे जहाज खिदिरपुर के पास से होकर सूतानूटी के घाट में आ लगे। डोंगियो से किनारे आकर लोगों ने देखा—सत्यानाश हो गया है! उनकी कोठियाँ, उनके छप्परवाले घर कहाँ हैं? आँधी सबको उठा ले गई थी। नाम-निशान तक नही। जॉब चार्नक फिर जहाज़ पर लौटा। बोला—आज की रात जहाज़ पर ही बितानी पड़ेगी। उस दिन सूतानूटी की भूमि पर जॉब चार्नक के पाँव रखने जितनी भी ज़मीन न थी। परन्तु दूसरे दिन किराये पर एक कोठी ली गई। सेठो और बसाकों ने उन लोगों को सादर बसाया। रुपये कर्ज़ दिये, ज़मीन दी, घर दिया और शुरू हो गया इतिहास का नया अध्याय।

यह कहानी सन् सोलह सौ नब्बे, चौबीस अगस्त की है।

उन दिनों की बात जाने कबके भूल चुके हैं लोग! पहले घर खोदने से पुराने पेडों की जड़ें, सुन्दर लकडियों का ढेर मिला करता था। कही पानी निकलता और कही आदमी की ठठरी! जाने कब डकैतो ने मारकर उन्हें गाड दिया था। ये बातें भूल चुके हैं लोग। उसके बाद हुई शोभासिंह की बगावत, औरंगजेब के दरबार में ईस्ट इंडिया कम्पनी का प्रतिनिधि—विलियम मॉरिस—पहुँचा। उसके बाद मुर्शिद कुली खाँ का जमाना, कम्पनी द्वारा पहली ज़मीदारी की नींव, बर्गियों का हंगामा, नवाब सिराजुद्दौला, प्लासी की लडाई, वारेन हेस्टिंग्स, लार्ड कार्नवालिस और लार्ड बेंटिक के बाद लार्ड कर्ज़न, लार्ड हार्डिंज। उधर कांग्रेस मे दलबन्दी शुरू हो गई। कुली कानून पास हुआ। मुसलमानों के लिए अलग आसन की

व्यवस्था हुई। दिल्ली दरबार हुआ। बंग-भंग टूटा। दिल्ली के बड़े लाट लार्ड हार्डिंज पर बम फेंका गया। शायद वह सन् उन्नीस सौ बारह का तेईस दिसम्बर था। और उधर भूमिपति चौधरी से सूर्यमणि चौधरी, उसके बाद वैदूर्यमणि, हिरण्यमणि और कौस्तुभमणि, उसके छोर पर शायद चूड़ामणि !

बहुत-बहुत रास्ता पार कर चुका भूतनाथ।

अस्पताल की खाट पर सारी बातों को सोचते-सोचते डूब जाता भूतनाथ।

उस दिन जबा के यहाँ से लौटकर ज्योंही बड़े महल में कदम रखा, बंशी ने कहा—किस फ़िक्र में डाल दिया था आपने हुज़ूर—कहाँ रहे रात-भर ?

भूतनाथ ने पूछा—छोटी बहू ढूंढ़ रही थी क्या ?

—ढूंढ़ती नहीं ? रात-भर मैं करवटें बदलता रहा, साँझ-भर घर और बाहर करता रहा—आप अजीब हैं, छोटी माँ से शायद कह गए थे कि बहू को लाने जा रहा हूँ।

भूतनाथ ने पूछा—पान-सुपारी लाकर रखा या नहीं ?

—वह तो कल से सूख रहा है हुज़ूर !

भूतनाथ बोला—तो फिर कोई किराये की गाड़ी ले आ बंशी !

बंशी ने पूछा—अभी ही जायेंगे क्या ?

—हाँ, सवेरे-ही-सवेरे चल देना अच्छा।

—ठीक ही है। बेनी से वह जो सुना, तब से कुछ अच्छा नहीं लग रहा है। जो बिगड़े हैं मँझले बाबू···तो रसोई हो जाए, खा-पीकर चल दीजिए, यही दो-तीन बजे तक।

भूतनाथ बोला—लेकिन छोटी बहू से कह दे, पहले से ही तैयार रहें।

भूतनाथ के मन में भी आया था कि कहीं कल की बात छोटी बहू पूछ बैठे। पूछे कि भूतनाथ, बहू कहाँ है ? तो क्या जवाब देगा ?

बंशी बोला—पहले यह देखें कि छोटी माँ आज जा भी सकेंगी कि नहीं। जो हालत है उनकी।

भूतनाथ अवाक् हो गया—क्यों ?

—बार-बार लाने जाना पड़ता था, इसलिए कल मैं एक साथ ही दो बोतल उठा लाया। लेकिन रात ही दोनों बोतल चढ़ा गईं। आज सवेरे भी पी। थोड़ी देर पहले देख आया—पड़ी हैं—कपड़ों का भी होश नहीं। बेकाबू। ऐसे में उन्हें लेकर बरानगर तक आप जायेंगे कैसे ?

भूतनाथ जब कमरे में पहुंचा, तब भी हाल वही था। ज़रा-सा अच्छा। आप ही उठ खड़ी हुईं। कल की बात कुछ याद न थी।

छोटी बहू ने पूछा—साड़ी कौन-सी पहनूं ?

आज कहीं का कोई ख़याल न था।

चिन्ता ने उन्हें पहना-ओढ़ा दिया। गले में चेन-हार। जूड़ा बाँधा। जूड़े में खोंस दी वही 'पति परम गुरु' वाली सोने की कंघी। कान में इत्र का फाहा। कमर में मीनावाली सोने की लड़ें।

भूतनाथ ने पूछा था—ठीक चल तो सकोगी ? न हो तो आज रहने दें।

छोटी बहू ने कहा—बखूबी जा सकूँगी।

सीढ़ी से उतरते वक्त भी थोड़ा-बहुत लड़खड़ा रही थी छोटी बहू। बोली—मियाँजान से कह देना—गाड़ी खूब तेज ले जाए। गई और आई। छोटे बाबू यहाँ अकेले ही रहे—देखना बंशी ! फिर बोली—अगर पूछें तो कह देना, मैं यहीं हूँ।

बंशी ने कान के पास मुँह ले जाकर पूछा—साले साहब, दुहाई आपकी, ज्यादा रात न हो, यहीं तो साँझ हो गई, कहें तो मैं साथ चलूँ ?

—न। तुम जाओगे तो छोटे बाबू को कौन देखेगा ?

पान-सुपारी की पोटली बंशी ने गाड़ी के एक कोने में रख दी थी। पिछले दरवाज़े पर गाड़ी आकर खड़ी हुई। सीढ़ी से उतरकर छोटी बहू उसमें जा बैठी। कहा—मियाँजान से कह दे बंशी, तेज चलाए, छोटे बाबू अकेले रहे···

मगर मियाँजान कहाँ ! बंशी इतना बोला—आप कुछ सोचें नहीं छोटी माँ !

छोटी बहू ने फिर कहा—चिन्ता से कह देना, शाम को मेरे कमरे में धूप जलाए, गंगाजल छिड़के···

उसके बाद छोटी बहू ने गाड़ी के अन्दर से कहा था—घर में कोई आहट—आवाज नहीं है, लगता है। रात ज्यादा हो गई, सब सो गए शायद।

गाड़ी ज्यों ही चली, एक झटका लगा। गिर ही पड़ती छोटी बहू। ऐन मौके पर भूतनाथ ने थाम लिया।

छोटी बहू बोली—मियाँजान, आजकल गाड़ी चलाना भूल गया क्या ?

भूतनाथ कुछ न बोला। छोटी बहू को देखकर आज उसे मानो डर लगने लगा। आँखें लाल। सर्वाङ्ग शिथिल। दोनों हाथों भूतनाथ ने पकड़ रखा था। मानो छोड़ते ही गिर पड़ेगी। गाड़ी विभिन्न रास्तों में चली जा रही थी। कहाँ बहू बाजार, कहाँ बैठकखाना ! समझ नहीं आया, किधर से जा रही है। गाड़ी की खिड़कियाँ और दरवाज़े बन्द। बाहर रात। अब-अब करते-करते छोटी बहू के चलते ही रात हो गई। सीधी खड़ी ही नहीं हो पा रही थी। अन्त में नहाकर, माथे पर बर्फ रखकर, तब खड़ी हो सकी। लेकिन आज अगर न होता, तो आना हो सकता फिर कभी ! दिन-दिन छोटे बाबू की हालत और बिगड़ रही है। घर में तंगी भी बढ़ रही है। ऐसे में कब तक रखा जा सकता है ! कब तक [illegible] बढ़ाई जा सकती है। छोटी बहू भी कब से कहती आ रही थी ! आज तो [illegible]

भरोसा। अचानक छोटी बहू भूतनाथ की गोद में लुढ़क पड़ी। कहा—तेरी ही गोद में सोती हूँ भूतनाथ!

छोटी बहू को गोद में लिये भूतनाथ पंगु-सा बैठा रहा। बोला—सो जाओ। बरानगर पहुँचने पर जगा दूँगा।

छोटी बहू ने कहा—बड़ी नींद आ रही है रे भूतनाथ!

भूतनाथ बोला—तो सो जाओ न!

—नींद न खुले तो पुकार लेना तू।

याद आने पर आज भी भूतनाथ सोचता है, उस रोज की वह नींद अन्तिम होगी, कौन जानता था! कौन जानता था, वह नींद तोड़ने की जिम्मेवारी भूतनाथ की न थी। थी मँझले बाबू के गुंडों की। गाड़ी जब काफ़ी दूर निकल गई, तो बहुत-से लोगों का शोर सुनाई पड़ा। हो-हल्ला। डकैती होने पर जैसा शोर-गुल होता है। गाड़ी अचानक रुक गई। और उसी अन्धकार में दोनों तरफ़ के दरवाजे खोल-कर कौन लोग तो अन्दर घुस आए! भूतनाथ शायद रोकना चाहता था, लेकिन किधर से आकर किसी अलक्षित हाथ ने ज़ोरों के एक आघात से सुला दिया—उसके बाद कुछ भी याद नहीं।

उसके बाद जाने कितने दिनों पर इस अस्पताल में उसे होश आया है। धीरे-धीरे सारी बातें याद आ रही हैं। कहाँ गई छोटी बहू! कैसी है वह! समाचार पाकर वंशी लेकिन एक दिन आया था।

वंशी बोला—साले साहब!

वंशी को देखकर भूतनाथ अवाक् रह गया था। कहा—वंशी, तुम!

—जी। कोई खबर थोड़े ही मिलती थी! रात-भर बैठा रहा। पता नहीं आपका। गाड़ी भी न लौटी। कैसा डर लगने लगा! ऐसा तो नहीं होता। छोटे बाबू वैसे ही निश्चेष्ट पड़े थे। फिर आँगन में निकला। निकलकर रास्ते पर दूर तक नजर दौड़ाई। गाड़ी का कहीं पता नहीं। रास्ते में सन्नाटा हो गया। ऊपर और नीचे में। दोनों रात-भर बैठे रहे। सुबह शायद जरा आँख लगी थी। नींद में ऐसा लगा, आसपास सब्बल से कुछ लोग मिट्टी कोड़ रहे हैं, ईंट उखाड़ रहे हैं—ठंग-ठंग, धप्प-धुप्प आवाज़। लग रहा था कोई शायद···

वंशी रुका। अचानक दोनों हाथों से अपनी आँखें छिपा लीं। उसके बाद कोई बात नहीं। रोने लगा।

भूतनाथ को कैसा तो शक हुआ। बोला—वंशी, वंशी···

वंशी ने फिर भी गरदन न उठाई।

भूतनाथ ने पूछा—छोटी बहू कैसी है वंशी, बता, बता···

रोते-रोते वंशी बोला—छोटी माँ नहीं रहीं हुज़ूर!

—छोटी बहू नहीं रही!

—नहीं हुजूर, छोटी माँ कहीं न रहो। कोई डेढ़ बजे खाली गाड़ी और घोड़ों को लेकर पुलिस के लोग बड़े महल के प्रांगण में पहुँचे। कोचवान को किसी अस्पताल में भेज दिया था। गाड़ी को देखते ही मैं दौड़ा-दौड़ा गया। सोचा, आप और छोटी माँ अन्दर होंगे। जाकर देखा, गाड़ी के भीतर तमाम लहू—देखते ही मुझ पर जैसे गाज गिरी। पूछा—साले साहब कहाँ हैं? छोटी माँ कहाँ हैं?

—फिर?

—भला नौकर को कुछ बता सकते हैं वे लोग? पूछा—तुम्हारे बाबू कहाँ हैं?

मैंने कहा—हमारे छोटे बाबू क्या अब आदमी हैं हुजूर! मैंने ले जाकर दिखा दिया। देखकर समझ गए वे। मँझले बाबू को खबर दी, नन्हे बाबू को समाचार भेजा। मँझले बाबू ने जाने पुलिस से क्या फुस-फुस बातें कीं—मैं खाक समझूँ! दरोगा को मँझले बाबू ने क्या-क्या समझा दिया। कापी में दर्ज करके वह सिपाहियों को लेकर चला गया। मैंने जाकर मँझले बाबू से पूछा—हमारी छोटी माँ का क्या हुआ हुजूर? मँझले बाबू ने फटकार बताई—हट्, भाग यहाँ से!

फिर किससे पूछूँ और कौन तो बताए! मैं और चिन्ता, दोनों भाई-बहन छोटी माँ के यशोदादुलाल के सामने सिर पीटते रहे। देवता क्या, पत्थर! इसी तरह दिन कटने लगे। उसके बाद एक दिन मँझले बाबू की चिट्ठी लेकर बेनी आया। उसीसे मालूम हुआ कि आप इस अस्पताल में हैं।

—और छोटी बहू?

—वे कहाँ हैं, यही जानने के लिए तो आया। सोचा, आपको जरूर उनका पता होगा। आप मुझे बता दें हुजूर, कहाँ जाऊँ कि मुझे छोटी माँ मिलें? मुझे अपनी माँ न थी, अपनी माँ को इन आँखों कभी नहीं देखा—जब एक महीने का था, तभी उसे खो बैठा। अब क्या होगा हुजूर?

उसके बाद बहुत दिन बीत गए। नखतों से भरे आसमान की तरफ देखते हुए भी भूतनाथ ने बहुत-से प्रश्न पूछे। दिन के सुनील आकाश की तरफ देखकर भी सवाल किया। पूछा रात के घने अँधेरे से। पूछा अदृश्य अन्तरात्मा से। अस्पताल की चारदीवारी के अन्दर पड़े-पड़े जहाँ जितने देवता हैं, सबसे पूछा। प्रार्थना की कि छोटी बहू चाहे जहाँ भी हो, वह स्वस्थ रहे, सुखी रहे, उसका कल्याण हो, मंगल हो।

उसके बाद से वंशी बीच-बीच में आता। उसकी खाट के पायों के पास बैठकर चुपचाप रोता। मुँह से कुछ बोलता नहीं। मानो उसे किसी पर कोई अभियोग नहीं था। फिर घण्टा बजते ही चुपचाप चला जाता।

अस्पताल से निकलने के कुछ दिन पहले एक रोज अचानक फिर आया वंशी। उसकी शक्ल देखकर भूतनाथ भी अवाक् रह गया था। बदन में कुरता। छोर झुलाकर धोती पहने था। हाथ में रंग उखड़ा हुआ एक टिन का बक्सा। जोर-

जोर से रोता हुआ अन्दर आया। उसके पाँव के पास माथा टेककर बोला—चल दिया हुजूर!

—कहाँ चले बंशी?

उसी तरह रोते-रोते वह बोला—जी, अपने गाँव जा रहा हूँ।

—गाँव?—सुनकर भूतनाथ को कुछ कम अचरज न हुआ। पूछा—तो छोटे बाबू को कौन देखेगा?

बंशी का गला जैसे रुँधता आ रहा था। बोला—छोटे बाबू नहीं रहे हुजूर!

—नहीं रहे?

बंशी से ही यह सुना।

उस रोज सुबह से ही बारिश हो रही थी। काई पड़ी दीवार पर एक कौआ लगातार काँव-काँव करता ही जा रहा था। बंशी गुस्से से आग हो उठा। बोला—चुप भी रह कम्बख्त—और कहीं जगह नहीं मिली चीखने की!

बंशी को तब भी पता न था, पता न था कि वह कौआ कौन-सा दुःसंवाद ले आया है। वह चुपचाप काम-काज करता जा रहा था। काम भी क्या! चिन्ता ऊपर का काम करती। देवता का नियमित भोग। साड़ियों को सम्हालकर रखना। अलमारी और पलंग की धूल झाड़ना। छोटी माँ को धूल नहीं बर्दाश्त होती। कभी आ जाएँ तो कहेंगी—मैं नहीं रहूँ तो मेरा कमरा इतना गन्दा रखेगी तू? मैं क्या मर गई?

मँझली चाची रसोई में वैसी ही व्यस्त। एक ही तो खाने वाला। उसे भी कुछ रुचता नहीं। मुँह में कौर रखते ही थू-थू।

परसी थाली ले जाकर बंशी आवाज देता—छोटे बाबू—छोटे बाबू—जगे हों तो ठीक। न जगे हों तो मुसीबत। जगाने में एक घंटा। बदन में हाथ लगाकर ठेलना पड़ता। जगकर भी नेग निभाना। लेकिन उसी जरा-सा के लिए बंशी की दुर्गत का अन्त नहीं।

छोटे बाबू बिगड़ उठते। कहते—नहीं खाऊँगा। भूख नहीं है। जा।

बंशी कहता—खा लीजिए हुजूर, नहीं खाने से सेहत कैसे टिकेगी।

वास्तव में उनका शरीर टिका ही हुआ था। हँसते नहीं कभी। दो कौर मुँह में देकर बंशी उन्हें तकिये के सहारे लिटा देता। कहता—खाने के बाद सोइए न हुजूर, बात होता है।

उस रोज भी रोज की तरह बंशी भोजन लेकर गया।

जाकर पुकारा—भोजन ले आया हुजूर, उठिए—

कोई जवाब नहीं।

फिर पुकारा—भोजन ठंडा हो गया हुजूर, उठिए—

हुजूर का फिर भी जवाब नहीं। वंशी हाथ लगाकर उन्हें उठाने गया। बदन पर हाथ रखना था कि वह दस हाथ पीछे हट आया। सारा शरीर बर्फ हो गया था—ठंडा। फिर नजर पड़ा, एक चींटी उनके होठ पर चल रही थी। वंशी के हाथ से थाली छूट गई। उस आवाज से वह और भी चौंक उठा। सारा घर भूकम्प-सा कांप रहा था। वंशी को होश न रहा।

रोते-रोते वंशी ने जो कुछ सुनाया, बड़ा दर्दनाक था वह। वह बोला—अन्त तक मुझे पता भी न चला हुजूर···अपना नसीब। वह और न कह सका। रो पड़ा।

भूतनाथ भी बड़ी देर तक कुछ बोल न सका। वंशी ने कहा—कल पटलडांगा के बाबू लोग आये थे, मँझले बाबू भी आये थे, नन्हे बाबू भी आये थे। सारा सामान उन्हें बताकर मैंने कुंजी दे दी। मँझली चाची को दत्त बाबू के यहाँ काम मिल गया। वह वहीं चली गई। मैं अपने गाँव चला।

उसने एक बार और प्रणाम करके कहा—अब चलूँ हुजूर, गाड़ी का टैम हो रहा है। चिन्ता को बाहर ही छोड़ आया हूँ···

भूतनाथ ने फिर उसे पुकारा—वंशी···

—जी।

वंशी लौटा। बोला—मुझे कह रहे थे?

भूतनाथ ने पूछा—तुम्हारी छोटी माँ की फिर कोई खबर मिली?

—कहाँ मिली हुजूर! इतने दिन हो गए। कोई कुछ नहीं जानता। छोटे बाबू से भी पूछा था, कुछ न मालूम हो सका। छोटे बाबू भी गजब के आदमी हुजूर! जरा भी न रोए। किसी से पूछा तक नहीं कि आखिर वह गई कहाँ?

जरा रुककर फिर बोला—सुख के लिए कलकत्ता आया था, लेकिन अपने नसीब में सुख बदा नहीं था हुजूर! माँ-बाप दोनों को खोया। मैं एक बदनसीब हूँ, इसके सिवा और क्या···

वंशी चला गया। भूतनाथ ने अस्पताल से बाहर निगाह दौड़ाकर देखा—बहुत नीचे, रास्ते पर काफी भीड़ थी। महाकाल का बिखरा-बिखरा जुलूस चल रहा था। जाने कौन अदृश्य हाथ महाकाल के रथ को हाँक रहा था। कितने कल-कारखाने, युद्ध-विग्रह, कितनी अजीब हलचल आसमान को मथ रही थी। इन सबकी भीड़ में चिन्ता और वंशी कहाँ खो गए, पता न चला। लगा, उन्हीं में कहीं तो एक पल में सब खो गए। मगर बात तो महज उस दिन की है। एक लड़का निरा असहाय-सा स्यालदा स्टेशन पर आकर उतरा था। उसके बाद मिलन और विरह से, जीवन और मृत्यु से कितनी बार आकाश उज्ज्वल हो उठा। कितनी बार जीवन कड़वा हो उठा, प्राण उज्ज्वल हुए, दिन दमके और फिर कभी रात की तरह मलिन हो आया प्राण का क्षितिज, क्षीण हो आया कण्ठ का गीत। लगा.

फिर भी उसने मनुष्य के सत्य को ढकने नहीं दिया। उसकी सारी कामना-वासना, भूख-प्यास, अर्जन-वर्जन में वह सत्य समुज्ज्वल रहा है। कितनी भाषा वह बोलता है, कितने देशों में, कितने रूपों और युगों में वह मनुष्य के प्रयोजनों पर जाग्रत होकर जीवन्त है। कितने तर्क उसे चोट पहुँचाते हैं, कितने संशय उसे स्वीकारते नहीं, फिर भी वह है। सभी मनुष्यों में वह जीवित है। वह कहता है—अपने को पहचानो, अपने-आपको खोजो—आत्मानं विद्धि—

भूतनाथ बड़ी देर तक उसी तरह नीचे देखता रहा। सुबह से साँझ हो गई। आज उसे निवारण की बात याद नहीं आई। ब्रजराखाल, ननीलाल, नन्हे बाबू—आज विशेष रूप से इनमें से किसी की याद नहीं आई। याद नहीं आये मँझले बाबू, छोटे बाबू, बेनी, शशि, गिरि, सिधु—कोई भी। और भी असंख्य अनेक आदमियों की याद नहीं आई। याद आई सिर्फ़ दो जनों की। जिस दिन उन्हें वह मानव की महायात्रा के जुलूस में मिला दे सकेगा, उसकी असली सिद्धि उसी दिन होगी। उसी दिन उसका भूतनाथ नाम सफल होगा, भोलानाथ नाम सार्थक होगा।

देखते-देखते कलकत्ते के आकाश की आभा बुझ गई। एक दल कबूतर उड़कर आया और एक छत पर उसने बसेरा लिया। किसी की छत पर सीझ की डालें ऊपर को फैली थीं। एक पतंग उड़कर रास्ते पर गिर रही थी। उसके बाद शहर के ऊपर जहाँ तक नज़र जाती—हरियाली की भीड़। हरे पेड़, हरे पत्तों का घेरा। वहाँ पर शहर शायद खत्म हो गया है। नीले आसमान पर इंजन का मुट्ठी-भर धुआँ अटक गया था। उधर ताड़ के कई पेड़ सिर ऊँचा किये चौकन्ने पहरेदार-से शायद पहरा दे रहे थे। कुछ निसाचर चिड़ियाँ शहर से जंगल की तरफ़ उड़ी जा रही थीं। दिन को फिर शायद लौट आयेंगी। उसके बाद आकाश में एक तारा उगा। उसके बाद फिर एक। उसके बाद फिर एक। धरती की हलचल थमती आ रही थी। प्रशान्त आकाश। एक टुकड़ा आवाज़। एक दल नींद। उसके बाद और कुछ नहीं···

उपकहानी

भूतनाथ की कहानी खत्म हो गई। खत्म हो गया उन्नीसवीं और बीसवीं सदी के एक परिच्छेद का भग्नांश। खत्म हो गया बहुतेरे चढ़ाव-उतार, बहुतेरे बनने-बिगड़ने का इतिहास। फिर भी मानो सब-कुछ समाप्त नहीं हो गया। तब भी वनमाली सरकार गली से दफ्तर के बाबू लोग पान चबाते हुए जल्दी में जाया करते। गली-भर पार की कि सीधा रास्ता। बहू बाजार से चलकर वनमाली सरकार लेन में घुस जाइए—आड़े-टेढ़े सीधे पश्चिम को बड़ा रास्ता मिलेगा। बाईं तरफ को बड़ा महल और दाईं ओर छोटी-छोटी दूकानों की कतार। टिन के छोटे चलिए के नीचे वांछा की पकौड़ी की दूकान। वांछा नहीं रहा। उसका बेटा अधर। अधर का बेटा अक्रूर अब दूकान पर बैठता है। अक्रूर की पकौड़ियों की इस इलाके में शोहरत है। सर्दियों में सुबह से ही दूकान पर भीड़ जम जाती है। कड़ाह में बैंगनी डालने तक का मौका नहीं देते खरीदार। घेरे लेते चारों तरफ से—पहले मुझे दे—मुझे—चाय का पानी घर में उबल रहा है। उसके आगे गुरुपदो दे की दूकान—स्वदेशी बाजार। विदेशी चीज़ दूकान की चौहद्दी में नहीं आ सकती—ऐसा ही नियम है उसका। मोटी खादी का कुरता और धोती पहने गुरुपदो अपने हाथों सामान बेचता। कहता—आप लोग प्रतिज्ञा करें कि आज से विलायती सामान नहीं खरीदेंगे, नहीं छुएँगे, प्रतिज्ञा करें। इसके बिना स्वराज्य नहीं आ सकता!

उसके बाद त्रिकालदर्शी राजज्योतिषी श्रीमत् अनन्त हरि भट्टाचार्य का 'श्री श्रीमहाकाली आश्रम'। इस घोर कलयुग के मिलावट के ज़माने में भी एक असली नवग्रह कवच वे कैसे जो सिर्फ़ तेरह रुपये साढ़े पन्द्रह आने में देते हैं, यही ताज्जुब है! उसके आगे है मुहल्ले के छोकरों का 'सबुज सघ'। उसके बाद 'पवित्र खद्दर भण्डार' खादी तो बाज़ार में बहुत क़िस्म की मिलती है। लेकिन आपको शुद्ध खादी चाहिए, तो वहीं जाना पड़ेगा। उसके आगे है बेनी सुनार की सोने-चाँदी की दूकान। उसके आगे मोड़ पर भड़भूजे का कोठा। होली के महीने-भर पहले से झाल बजाकर मुहल्ले को गुँजा देता है।

यह हुई रास्ते की दाईं तरफ़ की कहानी।

बाईं तरफ़ का वह बड़ा महल तब भी था। पटलडाँगा के बाबुओं ने छोटे-छोटे कमरे बनाकर किरायेदार बसाए थे। दो कमरे और एक रसोई। इन्तज़ाम अच्छा ही था। नल पर धूप आती। किरायेदारों की हलचल से मुहल्ला रात-दिन गुलज़ार रहता। बाहर की तरफ़ भी थोड़ा-बहुत रद्दोबदल करके कुछ किरायेदारों को दिया गया था। वहाँ कभी-कभी शाम को गाना-बजाना जमता। नन्हे बाबू जैसी जमी-जमाई महफ़िल नहीं। परदे की आड़ में भंग-ठंडाई का इन्तज़ाम नहीं। लेकिन मियाँ की मल्हार-जैसी कठिन रागिनी की चर्चा होती। गीत के साथ विलम्बित लय में मध्यमान ठेका चलता। और बहुत हुआ तो पान-तम्बाकू-किमाम। इससे ज्यादा नहीं।

यह रही बनमाली सरकार लेन की कहानी—जिसके नाम की गली का किस्सा सुन रहा हूँ।

लेकिन उस समय तक बहुत हेर-फेर हो चुके थे। दिल्ली की गद्दी पर आसीन होने के दिन किसी ने लार्ड हार्डिंज पर बम फेंका। सबने कहा—करतूत किसी बंगाली की है। बंगाली के सिवाय यह काम कौन करेगा! पर बड़े लाट बच गए। मरा उनका महावत। दस करोड़ रुपये की लागत पर दिल्ली में नई राजधानी बनी। नया इन्द्रप्रस्थ। कब्रों पर खड़ा हुआ नया इन्द्रप्रस्थ! इस बीच लार्ड सिन्हा ने इस्तीफ़ा दे दिया। बिहार के सर अली इमाम आगे आये। लार्ड सिन्हा के खाली जूते में उन्होंने पाँव डाला। बिहार उनका अपना प्रदेश था। बिहार को अलग करने की धुन सवार हुई। बिहार के लिए अलग लाट, अलग विश्वविद्यालय, अलग हाई-कोर्ट चाहिए। खैर। बंग-भंग लेकिन रद्द हुआ। लोग इसी में खुश हो गए।

विलायत के टाइम्स ने लिखा—

'Bengal differs more from other Indian provinces than they differ from one another. Economic temperamental and social causes account for this difference. Caste is less powerful; a common literary language unites over forty million Bengalis. Even the Muslim community, who from a narrow majority of population are indisputable less divided both socially and politically from their Hindu countrymen than they are in other parts of India. The Bengali temperament, atonce calculating and emotional, critical and enthusiastic, battles other Indians almost as much as it puzzles British administrators.'

जो हो, नये लाट कारमाइकेल साहब आदमी बड़े भले थे। भला होने से क्या हो! आते-न-आते छिड़ गई लड़ाई और एक फ्रान्स के मोरचे पर ही भारत से चौबीस हजार लोग लड़ने गये।

बड़े-बूढ़े बरामदे पर बैठे 'हितवादी' पढ़ते और बातें करते। कहते, अबकी लड़ाई में चावल का भाव आठ रुपये मन हो जाएगा, देख लेना, मैं कहे देता हूँ।

—अब जीने के लाले पड़ जाएँगे—रुपए में पाँच सेर दूध ! दिन-दहाड़े डाका।

सच ही, चीजों का दाम आग हो गया। चावल का भाव छ: रुपये, आठ रुपये, फी रुपये पाँच सेर दूध, दस आने सेर गोश्त, तीन आने सेर दाल, तीन आने सेर सरसों का तेल, क्या खाएँ लोग ? क्या खाकर जिएँ ?

गोआबगान के मेस मे भी चर्चा होती। यह सन् उन्नीस सौ चौदह के बीचोंबीच का ज़िक्र है।

इसी मेस मे ओवरसियर भूतनाथ चक्रवर्ती से मेरी जान-पहचान हुई। जो कहानी मैंने—इस उपन्यास के लेखक ने—लिखी, उसके बहुत बाद मेरा जन्म हुआ। मैंने यह सब देखा नही, जानता भी नहीं। मेरे जानने की बातें भी नही हैं ये। भूतनाथ बाबू बूढ़े हो गये थे। नौकरी से रिटायर हो चुके थे। तिमंज़िले के एक छोटे-से कमरे में अकेले ही रहते थे। खूब तड़के उठते। क्या सरदी, क्या गरमी, सुबह पैदल गंगा नहाने जाया करते। लौटकर अन्दर से कमरे को बन्द कर लेते और क्या सब पूजा पाठ करते। दोपहर को सीधे बैठकर गीता-पाठ करते, रामायण बाँचते। तीसरे पहर मुहल्ले की हरिसभा में जाकर कथा सुनते। जहाँ तक मुझे पता था, उनका यही रोज़ का काम था।

पता नहीं क्यों, मुझे वे चाहते थे। उन्होने मुझसे कहा था, मेरी कहानी क्या किसी को अच्छी लगेगी ?

मैंने कहा—आप इजाज़त दें तो मैं लिखूँ ?

वे बोले—उस कहानी का यही तो अन्त नही, और भी है। न हो तो शेष भी जोड़ दीजिएगा उसमें।

बाकी मैंने उन्ही से सुनी थी। शेष घटना का मेल कहानी से बैठेगा या नही, समझ नही सका, इसीलिए उसे उपकहानी में जोड़ दिया।

और वह वनमाली सरकार लेन ? भूतनाथ बाबू से यह सुनने के बाद एक दिन देखने भी गया था वह बाज़ार। पहचानना मुश्किल। कहाँ डेवढी, कहाँ बगीचा, कहाँ खजांचीखाना, तहखाना, भिस्तीखाना, नाचघर और पूजाघर ! बड़े महल की एक ईंट का भी पता न चला। रास्ते के दोनों किनारे बड़ी-बड़ी इमारतें खड़ी हो गई हैं। सौ फुट चौड़ा रास्ता। बिजली के खम्भों की कतार। विराट् व्यापार ! किसी में मोटरों का शो-रूम, किसी में बीमा का दफ्तर। लोगों की ठेल-पेल। व्यस्तता। मिनट-भर में लाखों की बेची-खरीदगी। शाम को सौ-सौ चलती मोटरें। कोई किसी की शक्ल नहीं पहचानता, नाम नहीं जानता गोकि अगल-बगल रहते हैं। लिफ्ट से चढ़ते-उतरते हैं लोग। देखकर लगा, बड़े महल की मद्धिम ताल और

जीवन-यात्रा के बाद ज़िन्दगी का आर्केस्ट्रा अचानक बड़ी तेज़ी में शुरू हो गया है। समय की गति बढ़ गई है—दिन मानो यहाँ छोटा हो आया है। वैदूर्यमणि कहने से अब कोई पहचान नहीं सकता। हिरण्यमणि का परिचय किसी को मालूम नहीं। कौस्तुभमणि की किसी ने परछाईं भी न देखी। यह हाल। पटलडांगा के बाबुओं के हाथ से दस हाथों की हेरा-फेरी से बनमाली सरकार गली एक दूसरी ही दुनिया में बदल गई है।

और बार-शिमले के उस मकान को भी एक दिन देख आया मैं। दो-मुहानी पर खासा बड़ा मकान बनवाया है सुपवित्र बाबू ने। वास्तव में बड़ा सुन्दर मकान है। अन्दर के लोग भी बेशक सुन्दर होंगे। साँझ हो चुकी थी। दुमंज़िले पर आर्गन बजाकर किसी लड़की को गाते सुना—

जीवन के कुंज में तुम्हारी ही रागिनी सदा गुंजित हो।

एक दिन भूतनाथ बाबू से पूछा था—उस रोज़ उस चिट्ठी में आप क्या लिखकर छोड़ आए थे?

भूतनाथ बाबू बोले—जीवन में वही एक बार झूठ की शरण ली। बार-बार सोचा, उसके अलावा दूसरा कोई चारा भी न था। मैंने लिखा था—हर प्रकार से छान-बीन के बाद मुझे पता चला कि अतुल चक्रवर्ती मर चुका है। उसके वंश में और कोई कहीं नहीं। तुम सुपवित्र से ब्याह करने में आपत्ति न करना···जल्दी में जाने और भी ऐसा ही क्या-क्या लिखा था, अब याद नहीं—और उसके बाद तो भेंट ही न कर सका। दुर्घटना का शिकार होकर जाने कितने दिन अस्पताल में पड़ा रहा।

पूछा था—बाद में फिर कभी जबा से भेंट नहीं हुई आपकी?

भूतनाथ बाबू बोले—हुई थी, सुनिए वह किस्सा।

उनकी ज़बानी सुनी हुई कहानी को मैं अपनी भाषा में कहूँ।

अचानक एक दिन साँझ को अस्पताल से भूतनाथ को छुट्टी मिल गई। रास्ते पर आकर चलने में पहले कैसा-कैसा तो लगा उसे। कहाँ जाए आखिर? किसके यहाँ ठहरे? सारी दुनिया उसे सूनी लगी। बड़े महल में अब कहाँ जाय? कोई नहीं है। अन्त तक वंशी और चिन्ता थी। वे दोनों भी कलकत्ते की चौहद्दी छोड़कर चल दिए। जी में आया, एक बार बड़े महल में जाकर वह छोटी बहू को ढूँढ़ देखे। लगा, छोटी बहू ज़रूर वहीं किसी कमरे में छिपी हुई है। पकड़ में नहीं आ रही। वरना उस दिन की दुर्घटना के बाद वह कहीं भी मिल क्यों नहीं रही है—यह कैसी बात! यह भी मुमकिन है भला!

चाँदनी के अस्पताल से पैदल चलते-चलते भूतनाथ बड़े महल के सामने आकर खड़ा हुआ। लगा, सारा मकान एक विराट् सरीसृप की तरह कुण्डली बना-कर सो रहा है। उसके सर्वांग में मौत की अवसन्नता। सारी आबहवा में अन्धकार

की विवर्णता।

कहीं कोई नहीं। ताला लगे गेट को कूदकर भूतनाथ अन्दर पहुँचा। प्रांगण में काफ़ी घास उग आई थी। कदम रखने में डर लग रहा था। आहट पाकर कहीं कोई मेंढक थप्प से उछल पड़ा। सभी कमरों में ताले पड़े थे। केवल पिछले दरवाज़े की तरफ़ बगीचे के आमने-सामने चोर-कमरे में जाने की सीढ़ी खुली थी। भूतनाथ धीरे-धीरे ऊपर पहुँचा। चोर-कमरे के सामने बरामदा। बरामदे के उत्तर तरफ़ वह दरवाज़ा—उसमें ताला बन्द था। झाँककर देखने से भीतर अँधेरा दिखाई दे रहा था। उधर बहुओं के महल में जाने का कोई उपाय न था। भूतनाथ बड़ी देर तक कान लगाये खड़ा रहा। अगर कुछ सुनाई पड़े। कोई आभास मिल सके। लेकिन कुछ नहीं। सब मानो मौत-सा बहरा पड़ा था। अँधेरे-सा गूँगा। उसने चुपचाप आवाज़ दी—छोटी बहू···

फिर बड़ी देर तक कान बिछाए खड़ा रहा। किसी ने आवाज़ न दी। फिर ज़रा ज़ोर से पुकारा—छोटी बहू···मैं भूतनाथ हूँ। अन्दर की दीवारों से टकराकर सिर्फ़ प्रतिध्वनि लौट आई। एक गमगमाहट हुई। काँपती हुई अर्थहीन आवाज़।

भूतनाथ ने फिर पुकारा—छोटी बहू···

फिर वैसा ही हुआ। उसके बाद वहीं फ़र्श पर ही बैठ गया भूतनाथ। सिर झिमझिमाने लगा। इतने दिनों अस्पताल में रहते-रहते सारे शरीर में जड़ता-सी आ गई थी। दीवार से सिर पीटने लगा वह। कहाँ गई छोटी बहू! कौन बता देगा उसे! कहाँ जाने से मिलेगी वह!

फिर उठ खड़ा हुआ। सारी दुनिया पर गुस्सा आने लगा उसे। सारे संसार से विराग। आज उसका कोई नहीं। मनुष्यों से भरे इस ससार मे आज वह अकेला है। एकबारगी बेआसरा, बेसहारा,। जी में आया, यह कारस्तानी ज़रूर मँझले बाबू की है। उनके गुण्डे ही उसे उठा ले गए कहीं। बड़े महल की बहू का ऐसा बेलीक चलना उन्हें बर्दाश्त नहीं हो सकता। शायद इसलिए भूतनाथ का खात्मा कर देना चाहा था। लेकिन जब छोटी बहू ही न रही, तो भूतनाथ जीकर क्या करेगा!

वह फिर उसी रास्ते से उतरा। सूना महल। चारों ओर सन्नाटा। ड्योढ़ी से निकल कर फिर उसी बनमाली सरकार लेन मे पहुँचा। कहाँ जाए, कुछ ठिकाना नहीं! कहाँ पनाह मिलेगी! किससे मनुहार करे, आवेग बताए! किस पर बक-झक करे! किससे करे अनुरोध, अभियोग।

सारा शहर उदास हो रहा था। कम-से-कम भूतनाथ को ऐसा लगा कि छोटी बहू की वेदना से सारा शहर आज उदास है। धीरे-धीरे कब जो बार-[illegible] जा पहुँचा, उसे मालूम नहीं। लौट जाने को जी चाहा। आखिर होगा [illegible] जाकर! चिट्ठी तो वह दे ही आया है। चरम बात तो वह उस [illegible] आया है। इस बीच जवा ने ज़रूर ही सुपवित्र को अपना लिया है।

भी क्या !

फिर भी दरवाज़े पर धक्का दिए बिना रहा न गया।

दरवाज़ा खोलकर नौकरानी भी अवाक् रह गई—भैयाजी, आप !

भूतनाथ ने पूछा—तुम्हारी दीदीजी कहाँ हैं।

जीने से ऊपर जाकर उस रोज़ जवा को देख भूतनाथ अवाक् हो गया था। वह अपने पिता की तस्वीर के नीचे वैसी ही निश्चल बैठी थी। उसमें कोई परिवर्तन न था। जवा भी भूतनाथ को देखकर कुछ कम अवाक् न हुई। बोली—भूतनाथ बाबू, आप ?

भूतनाथ ने पूछा—सुपवित्र कहाँ है ?

उस सवाल का कोई उत्तर न देकर जवा बोली—लेकिन इतने दिनों तक आप थे कहाँ ?

एक पल के लिए विभ्रान्त-सा हो गया था भूतनाथ। कहा—मैं तो चिट्ठी छोड़ गया था जवा, नहीं मिली तुम्हें ?

—मिली थी, लेकिन···

—मैंने तमाम खोज-पूछ की, नदिया जिला तक गया—वे मर चुके हैं, उनके परिवार का कोई नहीं—यकीन करो।

—किन्तु···

—मैं तुम्हारी एक नहीं सुनने का। छुटपन का ब्याह तो वाक्दान के ही समान है; अपनी बात के मुताबिक 'अन्यपूर्वा' होकर तुम बेखटके सुपवित्र से विवाह कर सकती हो।

जवा ने फिर पूछा—सच ही क्या उनका कोई पता न चला ?

भूतनाथ ने कहा—उनकी प्रेतात्मा शायद है, लेकिन उसका करोगी क्या तुम ? तुम्हें यह बताने के लिए मैं बहुत दिन पहले आता, पर नहीं आ सका सिर्फ़···।

जवा चुपचाप सब सुनती रही। बोली—आप इतने दिनों तक अस्पताल में रहे, खबर तक न दी; मैंने लेकिन आपकी खोज की थी, मालूम है ?

भूतनाथ के सारे शरीर में कैसा तो रोमांच हो आया। बोला—खोज की थी, सचमुच ?

—क्यों, आदमी खोज नहीं लेता ?

—क्यों नहीं, फिर भी तुमने मेरी खोज की थी, यह बात अच्छी लगती है।

जवा ज़रा देर चुप बैठी रही। अचानक उसका मुखड़ा बड़ा लाल हो उठा। उसके बाद आख़िरी ज़ोर लगाकर बोली—अब आप ब्याह कर लें। शायद उससे आप सुखी हों।

इतने में भूतनाथ ने अपने को सम्हाल लिया था।

हँसते-हँसते बोला—मैं दुःखी हूं, तुमसे यह किसने कहा जवा···फिर ब्याह अब मैं कर भी नही सकता, एक बार कर चुका हूं।

—यानी ?—जवा भी जैसे चौंक उठी।

भूतनाथ परेशान हो उठा। बोला—वह बात रहने दो···पहले यह कहो कि सुपवित्र को तुम अपनाओगी कि नही—तुम्हारे पिताजी का अन्तिम अनुरोध !

—सच ही आपका व्याह हो चुका है ?

—बता तो दिया, हो चुका है।

—कहाँ ? कब ?

भूतनाथ ने कहा—इसका जवाब फिर कभी दूंगा। उसका अभी समय नही हुआ और अभी शायद समय भी नही; मैं समझता हूं सुपवित्र अभी सो नही गया होगा, उसे मैं बुला लाता हूँ, मेरे सामने ही तुम्हें वचन देना पड़ेगा—और मैं ही उसका गवाह रहूँगा।

जवा कुछ प्रतिवाद करने जा रही थी। रोकते हुए भूतनाथ बोला—तुम अब ना न करो जवा, मैं सिर्फ़ तुम्हारे दायित्व से मुक्त होना चाहता हूँ। इस हालत मे तुम्हें छोडकर मैं जा नही सकता और तुम्हारी शादी हुए बिना मेरा इस तरह यहाँ आना अच्छा भी नही लगता।

उसके बाद उसी रात को सुपवित्र को बुलाकर कैसे वे सारे भार से मुक्त हुए, भूतनाथ बाबू ने यह भी बताया था।

मैंने पूछा था—फिर कभी आप जवा के यहाँ नही गये ?

वे बोले—गया था, उसके विवाह के दिन। उसके बाद शायद मेरी जरूरत भी नही पडी, कभी बुलाहट नहीं आई—कभी बुलाहट आई तो जाऊँगा।

—और छोटी बहू ? उससे कभी मुलाकात हुई ?

भूतनाथ बाबू ने कहा—हुई थी, लेकिन न हुई होती, वही अच्छा था।

—वह कहानी भी कह दें।

भूतनाथ बाबू बोले—बड़े महल को तोडने का आदेश दे आया था, यह तो आपसे कह ही चुका हूँ। यह उसके दूसरे दिन का जिक्र है। वह मुलाकात भी अजीब मुलाकात ! सोचा भी नही था कि अन्तिम भेंट ऐसी होगी। छोटी बहू ने कहा था—मेरे मरने पर तू रोना भूतनाथ, मेरे लिए दो बूंद आँसू बहाना—ब्याहवाली बनारसी साड़ी पहनाकर मुझे सजा देना—लेकिन कुछ भी न हो सका।

भूतनाथ बाबू प्रशान्त हँसी हँसने लगे।

इस उप-कहानी मे वही सुनाऊं।

इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट कायम हुआ सन् उन्नीस सौ ग्यारह मे। शुरू से ही [illegible] को उसमे बहाली हो गई। रूपचाँद बाबू की चेष्टा से पहले ही दिन से [illegible] हो गया उसमे।

इदरिस ने कहा—खुदा आपका भला करेगा ओवरसियर साहब !

जो सरकार बाबू उससे जलता था वह भी अन्त में नरम हो आया। बोला—भाग्यवान का बोझा भगवान् ढोते हैं, आपको देखकर ही इस सत्य का सबूत मिला।

नये दफ्तर में काम शुरू हो गया। रास्ता चौड़ा करना। मकान तोड़कर बराबर करना। ये काम भूतनाथ के लिए पुराने थे। लेकिन तो भी जिस दिन बनमाली सरकार लेन के बड़े महल को तोड़ने का आदेश हुआ, वह एक दिन ही था। उसे लगा, उसे अपने पंजर की हड्डियाँ तोड़कर चूर-चूर कर देने का हुक्म मिला है। बड़े महल को छोड़ देने के बाद कभी उस रास्ते की छाया भी नहीं छुई थी उसने। उधर जाने से जाने कौन तो खींचता उसे ! लेकिन नौकरी की बात ! हुक्म बजाना ही पड़ेगा। जिस रोज वह नाप-जोख के लिए गया था, उसी दिन जाने क्यों बार-बार अनमना हो उठता था। लगा था जाने कहाँ से कोई अदृश्य शक्ति बारम्बार उसे खींच रही है। वह बड़ा महल अब पहचाना नहीं जाता था। पूजाघर का कुछ हिस्सा फिर भी साबित था। टुकड़ों में सब बँट गया था। एक कमरे से आती मछली की बू—दूसरे से मांस की गन्ध। एक में मेज़-कुर्सी-पंखा, दूसरे में चटाई, टाट का परदा, इना मेल के कप। कैसे-कैसे अजीबोग़रीब लोग आ बसे थे बड़े महल में ! वह रसोईघर, भिश्तीखाना कहाँ ! नामोनिशान भी न रहा। उस रोज भूतनाथ तिमंज़िले पर नहीं गया। इच्छा थी, पर ज़रूरत न महसूस हुई जाने की।

लेकिन जिस दिन सारा मुहल्ला खाली कराकर वह चरित्तर मण्डल को मकान तोड़ने का हुक्म देकर लौट रहा था, उस दिन वह सीढ़ी से टूटे मकान के ऊपर गया। ऊपर न गया होता, वही अच्छा था। उन पुराने परित्यक्त कमरों में कौन-सा जादू था, क्या जाने ! उसे ऐसा लगा था कि ऊपर की रेलिंग से उसे किसी ने एकबारगी नीचे ढकेल देना चाहा था। साँझ के धुँधले में ऐसा लगा, शराब लाने के लिए छोटी बहू ने हीरे की बाली खोलकर उसे दी।

और रास्ते पर का वह कुत्ता ! बड़ा डर गया था भूतनाथ। मगर तब भी उसे मालूम न था कि यह जादू काहे का है। कैसा आकर्षण ! पता चला दूसरे दिन अजीब घटना !

नन्हे बाबू भी कभी-कभी दीख जाते थे। काला कोट पहने ट्राम से जाते होते। भूतनाथ को लगता, वह कोट बहुत कालिख लगने से काला है। समय की कालिख, कलंक की कालिख। धोने से भी वह कालिख नहीं धुल सकती।

और मँझले बाबू वही सिर्फ़ आखिरी दिन तक घोड़ागाड़ी पर चढ़ते रहे। शाम को इडेन गार्डेन के पास खड़े रहने से नज़र आता था कि इब्राहिम धीमे-धीमे गाड़ी हाँकता आ रहा है। दोनों हाथों से गाड़ी के दोनों तरफ़ की झूलती चमोटी

को पकड़े अन्दर चुपचाप बैठे मँझले बाबू। आँखो की दृष्टि सूनी। फिर भी चुनन-दार मलमल का कुरता। हीरे की बड़ी-सी अँगूठी। इडेन गार्डेन के पास गंगा के किनारे गाड़ी रोज एक बार खड़ी होती आकर। मँझले बाबू उस पर से उतरते नही। इब्राहिम घोड़ों को घास खिलाने के लिए नीचे उतरता। घोड़े दो-एक मुट्ठी घास खाते और खीझकर पैर पीटते। सूखी घास जँचती नही शायद। लेकिन मँझले बाबू गाड़ी के अन्दर ही बैठे-बैठे थोड़ी देर हवा खाते और गोरो के बैंड की ताल पर धीरे-धीरे ताल देते। साइकिल से जाते-आते यह दृश्य भूतनाथ ने बहुत बार देखा।

सुपवित्र ने शायद मोटर खरीदी। कौन-सी नौकरी करता है, कौन जाने! बेशक कोई बड़ी नौकरी है। कई बार सुबह कोट-पेंट डाटे उसे जाते देखा है भूतनाथ ने। गाड़ी ड्राइवर चलाया करता। अन्दर ओठंग कर सुपवित्र अखबार पढा करता।

उस रोज लौटने मे ज्यादा रात हो गई थी। बडे महल की आखिरी निशानी देखकर साइकिल से आते-आते मानो अनेक युग पार कर आया भूतनाथ। कल उस घर का कोई चिह्न न रह जाएगा। और उस मकान के साथ ही गायब हो जाएगी बनमाली सरकार गली। इतिहास से बनमाली सरकार का नाम मिट जाएगा। इसका भी कोई ग़म नही। ग़म था सिर्फ़ इस बात का कि नामोनिशान मिटाने के इस काम की निगरानी उसे ही करनी पड़ेगी। एक दिन जिसने आश्रय दिया था, शान्ति और सान्त्वना दी थी, उसी को अपने हाथो निश्चिह्न करना पड़ेगा।

तमाम रात एक असह्य अनुभूति मे कटी।

सुबह रोज जैसे उठता है, वैसे ही उठा। मेस के तिमंजिले वाले उस कमरे की खिड़की से सूर्योदय देखा जाता था। गगा-नहान से लौटकर उसने पूर्व दिशा को नित्य की तरह प्रणाम भी किया। प्रातःकालीन पूजा-पाठ, गायत्री आदि उस दिन भी कुछ न छूटा। समय पर दफ्तर भी गया। कही कोई व्यतिक्रम नही। लेकिन दफ्तर की घड़ी मे दो बज रहे थे···

बड़े साहब ने बुलवाया। जाते ही बडे साहब ने कहा—सरकार लेन मे जो मकान टूट रहा है, वहाँ जरा जल्दी जाइए, आकर मुझे रिपोर्ट दीजिए कि वहाँ क्या हुआ है।

भूतनाथ ने पूछा—कोई दुर्घटना हुई है?

साहब बोले—दुर्घटना नही, लेकिन मजूरो ने काम करना बन्द कर दिया है—कहते हैं, वे अब वहाँ काम न करेंगे, हाथ समेटे सब बैठे हैं।

उस रोज भी ठीक उसी जगह पर जाकर खड़ा हुआ भूतनाथ। लेकिन आज दोपहर में बड़े महल की शक्ल ही बदल गई थी एकबारगी। एक ईंट भी खड़ी न थी। जमीन चौरस हो गई थी। दूर से कुछ देखा नहीं जाता। करीब जाने से चारो तरफ़ बड़े-बड़े गड्ढे नजर आने। ईंट-सीमेंट के अन्दर से माटी निकल आई थी।

दीवार तक को उखाड़ फेंका था। सारी गली रेगिस्तान-सी धू-धू।

लेकिन करीब पहुँचते ही लगा, खासी भीड़ लगी है। जाने किसे घेरकर लोग जमा हुए हैं।

भूतनाथ के पहुँचते ही चरित्तर मण्डल आगे आया। उसका संकोची भाव जाता रहा था। बोला—हम काम नहीं करेंगे हुजूर!

—क्यों, क्या बात हुई?

चरित्तर मण्डल को नहीं बताना पड़ा कि क्या हुआ है। खुद भूतनाथ ने देखा, बगल में बैजू निर्जीव-सा पड़ा है। सब्बल की चोट से लहूलुहान। बहू बाजार का डॉक्टर पट्टी बाँध गया था। पट्टी भी लहू से रंग गई थी।

चरित्तर ने फिर कहा—हम लोग अब यहाँ काम नहीं करेंगे हुजूर!

—काम क्यों बन्द करोगे? खैर, बन्द ही करोगे तो दूसरे मजूरे बुलवाऊँगा।

चरित्तर बोला—कोई मजूर यहाँ काम नहीं करेगा···यह कब्रगाह है हुजूर, वह देखिए—उसने हाथ के इशारे से दिखाया—वह देखिए···

बहुत-से लोग उत्सुक होकर उधर देख रहे थे। चरित्तर अपने साथ भूतनाथ को उधर ले गया। बड़े महल की दीवार को मजूरों ने खोदा था। जगह-जगह गड्ढे किये थे। एक गड्ढे में भूतनाथ को साफ़ नजर आया। कोई सन्देह नहीं। आदमी का एक समूचा कंकाल था। खोपड़ी से पाँव की उँगली तक। पट पड़ा था। कब का, कितने दिन का—कौन जाने! लेकिन जरा भी विकृत न हुआ था। कुछ हिस्सा तब भी मिट्टी में ही गड़ा था। पास ही क्या तो झकमक कर रहा था। सोने-जैसा। मीना किया हुआ सोना।

भूतनाथ ने पूछा—और वह क्या है?

अब तक किसी की नजर नहीं पड़ी थी। सभी उधर झुक पड़े। लेकिन भूतनाथ ठीक पहचान गया।

कोई बोल उठा—सोने का कोई जेवर है, किसी औरत का···सोने की करधनी···। लेकिन भूतनाथ कुछ और ही सोचने लगा था। उसे लगा, इतिहास का पट-परिवर्तन अब जाकर पूरा हुआ।

उसके बाद कंकाल की तरफ़ देखता हुआ बड़ी देर तक भूतनाथ अभिभूत बना खड़ा रहा। उसे लगा, एक पल के अन्दर आँखों के सामने जीवन का एक महा अर्थ खुल गया। मृत्यु मानो अब महज़ मृत्यु नहीं रही। लगा, वह जीवन का ही एक दूसरा महाप्रकाश है। मृत्यु से ही जीवन को पूर्ण रूप से प्राप्त करना पड़ता है। मृत्यु से ही सार्थकता के चरम लक्ष्य तक पहुँचा जा सकता है। उसी में जीवन का चरम उत्सर्ग पूर्ण होता है। किसी सांसारिक प्रयोजन की तुच्छता से नहीं, किसी लौकिक सम्बन्ध की क्षुद्रता से भी नहीं—जीवन की चरम सार्थकता

एक ही योग में है वह योग है अमृत का। मौत के आमने-सामने खड़े होकर भी इसलिए एक अनहोने उपाय से भूतनाथ अमृत का एकात्म हो गया।

उसके बाद वहां खड़े होकर उसने उस दिन अपनी परम प्रार्थना की—जिस देवता ने सभी मनुष्यों का दुःख ग्रहण किया है, जिनकी वेदना का अन्त नहीं, जिनके प्रेम का भी अन्त नहीं, उनके प्रेम की वेदना को हम सभी मानव-सन्तान जिसमें मिलकर ग्रहण कर सकें। ओं शान्तिः शान्तिः शान्ति।